हिन्दी में क्रिया

पराग प्रकाशन, दिल्ली-३२



डॉ० ओ० गे० उलत्सिफ़ेरोव

नेहरू पुरस्कार विजेता

# हिन्दी में क्रिया

## एक व्याकरणिक अनुसंधान

मूल्य : पचास रुपये/ प्रथम संस्करण, १९७९/ आवरण-शिल्पी : हरिपाल त्यागी/
प्रकाशक : पराग प्रकाशन, ३/११४, कर्ण गली, विश्वासनगर, शाहदरा, दिल्ली-११००३२/ मुद्रक : भारती प्रिंटर्स, दिल्ली-११००३२

HINDI MAIN KRIYA *by* Dr. O.G. Ultsiferov : Rs. 50.00

कामताप्रसाद गुरु को
और उन सभी गुरुओं को
जिनके महाकार्यों के प्रकाश ने
इस पुस्तक का मार्ग
आलोकित किया

# प्रस्तावना

हिन्दी के विकास और प्रसार के साथ उसके व्याकरण-लेखन की समस्याएँ भी क्रमशः कठिन और जटिल होती जा रही हैं। एक ओर भाषा के अन्तर्गत होने वाले नित्य नये प्रयोगों का आकलन और दूसरी ओर इन नये प्रयोगों के वैज्ञानिक वर्णन और विश्लेषण के लिए उपयुक्त नयी संकल्पनाओं का निर्माण करते हुए व्याकरण की उपलब्ध पद्धति में उन सबका समाहार—आज हिन्दी वैयाकरण के लिए मुख्य चुनौती है। हिन्दी भाषा में रुचि लेने वाले देश-विदेश के अध्येता, निस्सन्देह, हिंदी व्याकरण की इन नयी समस्याओं के प्रति जागरूक हैं और अनुसन्धान की इस दिशा में प्रयत्नशील भी। इस दृष्टि से हिंदी भाषा के विविध पक्षों पर प्रकाशित हाल के शोध-निबंधों में सोवियत संघ के हिंदी भाषाविदों के शोध-प्रयास विशेष रूप से उल्लेखनीय प्रतीत होते हैं। डॉ० ओलेग गे० उलत्सिफ़ेरोव का प्रस्तुत शोध-ग्रंथ सोवियत हिन्दी-अनुशीलन की उस समृद्ध परम्परा की एक महत्त्वपूर्ण और मौलिक उपलब्धि है।

'क्रिया' हिंदी का केन्द्रीय शब्द-भेद है; इसे हिंदी व्याकरण का सबसे प्रमुख अंग भी कह सकते हैं। रूप-निर्माण और अर्थ-भेद की विविधताओं को देखते हुए 'क्रिया' को हिंदी व्याकरण का सबसे जटिल शब्द-भेद भी कहा जा सकता है। इसके साथ ही यह भी उल्लेखनीय है कि हिंदी में सबसे अधिक विकासशील भी यही व्याकरणिक कोटि है। वर्णन और विश्लेषण को लेकर भाषाविदों और वैयाकरणों के बीच विवाद और मतभेद भी सबसे ज्यादा 'क्रिया' के ही क्षेत्र में है। डॉ० उलत्सिफ़ेरोव ने अपने अध्ययन के लिए इस चुनौती भरे विषय को चुनकर निस्सन्देह साहस का परिचय दिया है। ग्रंथ में प्रस्तुत प्रचुर उदाहरणों को देखकर विश्वास हो जाता है कि उन्होंने हिंदी क्रिया के यथासम्भव समस्त प्रयोगों के संग्रह के लिए अथक श्रम किया है और आधुनिक हिंदी साहित्य की सभी प्रतिनिधि कृतियों तथा नयी से नयी रचनाओं का इस दृष्टि से आलोड़न किया है। तथ्य-संग्रह की यह अनुभववादी अथवा व्यवहारवादी पद्धति ही व्याकरण-लेखन की सही

पद्धति है। संस्कृत में इस प्रकार के प्रयोगधर्मी वैयाकरण को 'लक्ष्यैकचक्षुष्क' कहा गया है। इस पद्धति का अनुसरण करने के कारण डॉ० उलत्सिफ़ेरोव हमारे सम्मुख हिंदी क्रियाओं के प्रयोग का जीवंत और प्रामाणिक स्वरूप प्रस्तुत करने में समर्थ हो सके हैं।

प्रयोग-संग्रह के बाद प्रश्न उठता है उसके वर्णन, विश्लेषण, वर्गीकरण आदि का। इस कार्य के लिए सम्प्रति देशी-विदेशी अनेक व्याकरणिक पद्धतियाँ प्रचलित हैं। कुछ हिंदी वैयाकरणों ने संस्कृत व्याकरण की पद्धति अपनायी है तो कुछ ने अंग्रेजी व्याकरण की और सोवियत हिन्दी-अध्येताओं ने संभवत: स्लाव व्याकरण की परम्परित प्रणाली का सहारा लिया है। इधर कुछ भाषाविज्ञानियों ने संरचनात्मक और विश्लेषणात्मक — यहाँ तक कि कुछ ने रूपान्तरणपरक विधि भी अपनायी है।

कहने की आवश्यकता नहीं कि उपर्युक्त पद्धतियों में प्रत्येक का अपना-अपना महत्त्व है और उपयोग भी, किन्तु जैसा कि डॉ० उलत्सिफ़ेरोव ने इस ग्रंथ के प्राक्कथन में कहा है, वर्णन की प्रामाणिक पद्धति वह है "जिसका आधार हिंदी के विकास के अपने आन्तरिक नियम हैं और जो हिंदी भाषा के आधुनिक साहित्य के आधार पर उसकी समकालिक स्थिति को प्रतिबिम्बित करता है।"

मुझे यह देखकर प्रसन्नता हुई कि प्रस्तुत ग्रंथ में आधुनिक भाषा-वैज्ञानिक पद्धतियों के आकर्षण तथा अपनी मातृभाषा के पूर्वग्रह से भरसक मुक्त होकर हिंदी भाषा के अपने आन्तरिक नियमों के अनुरूप वर्णन की व्यावहारिक पद्धति का विकास किया गया है। इस प्रसंग में विद्वान् अध्येता ने अनेक नवीन पारिभाषिक संकल्पनाओं का भी निर्माण किया है, जिनका परिचय परिशिष्ट में दी गयी लगभग चार सौ शब्दों की 'पारिभाषिक शब्दावली' से प्राप्त हो सकता है। कहने की आवश्यकता नहीं कि इससे हिंदी व्याकरण की भाषा समृद्ध हुई है। ये संकल्पनाएँ अन्य हिंदी अध्येताओं के लिए भी वर्णन-विश्लेषण में उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं। प्रसंगवश यह भी उल्लेखनीय है कि व्यावहारिक व्याकरण की दृष्टि रखते हुए भी डॉ० उलत्सिफ़ेरोव ने वर्णन-क्रम में यथास्थान व्याकरणिक कोटियों और संकल्पनाओं का सैद्धान्तिक निरूपण भी किया है और तत्संबंधी अन्य मान्यताओं का निराकरण करते हुए अपनी निजी मान्यताएँ भी प्रस्तुत की हैं।

हिंदी क्रिया-प्रयोगों के वर्णन की सबसे बड़ी समस्या यह है कि प्राय: काल, वृत्ति, प्रकार और पक्ष संबंधी प्रयोगों के बीच पाये जाने वाले सूक्ष्म भेदों को अलगा पाना कठिन होता है। जिनकी दृष्टि केवल क्रिया की रूप-तालिका तक ही सीमित रहती है, वे भेद-निरूपण में समर्थ नहीं हो पाते। इसके लिए विविध क्रिया-रूपों के प्रकार्यात्मक पक्ष के साथ ही समूचे वाक्य-विन्यास में उनकी अवस्थिति पर दृष्टि डालना आवश्यक है। मुझे यह देखकर हर्ष हुआ कि इस ग्रंथ

में क्रिया-प्रयोगों का विवेचन समूचे वाक्य-विन्यास के संदर्भ में विभिन्न रूपों के प्रकार्य को ध्यान में रखते हुए किया गया है, जो असंदिग्ध रूप से सर्वथा वैज्ञानिक और व्यावहारिक है।

मुझे यह कहने में तनिक भी संकोच नहीं है कि हिंदी क्रियाओं पर अब तक जो शोध-कार्य हुआ है उन सब की उपलब्धियों से लाभ उठाते हुए प्रस्तुत ग्रंथ हिंदी क्रिया संबंधी अध्ययन को एक मंजिल और आगे बढ़ाता है और इस प्रकार इस प्रयास को हम हिंदी व्याकरण के क्षेत्र में एक महत्त्वपूर्ण अवदान कह सकते हैं।

डॉ० उल्सिफ़ेरोव विगत बीस वर्षों से हिंदी के व्यावहारिक व्याकरण पर कार्य कर रहे हैं और मुझे यह कहते हर्ष होता है कि उन्होंने 'हिंदी का व्यावहारिक व्याकरण' का प्रारूप पूर्ण कर लिया है। क्रिया प्रकरण संबंधी प्रस्तुत ग्रंथ उस विशाल ग्रंथ का एक अंश है — निस्संदेह प्रधान अंश। मुझे आशा है कि वे शीघ्र ही 'हिंदी का व्यावहारिक व्याकरण' भी प्रकाशित करेंगे।

भारत-स्थित सोवियत दूतावास के सांस्कृतिक विभाग के अध्यक्ष की हैसियत से डॉ० उल्सिफ़ेरोव ने दोनों देशों के सांस्कृतिक संबंधों को सुदृढ़ करने की दिशा में जो मूल्यवान कार्य किया है, उनका यह शोध-प्रयास भी उसी का एक वैज्ञानिक आयाम है जो हर वैज्ञानिक कार्य के समान कहीं अधिक स्थायी और सुदृढ़ है। उन्होंने अपने वैदुष्य और मधुर-व्यवहार से अनेक भारतवासियों—विशेषतः हिंदी-भाषियों तथा विद्वानों का हृदय जीत लिया है। ऐसे मित्र और विद्वान् के लिए हार्दिक शुभाशंसा के जितने भी शब्द कहे जायें, कम हैं।

**नामवर सिंह**

भारतीय भाषा केन्द्र
भाषा संस्थान
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय
नयी दिल्ली

# अनुक्रम

**परिशिष्ट**

हिन्दी में क्रिया

# हिन्दी में क्रिया

# प्राक्कथन

जब से भारतवर्ष स्वतंत्र हुआ है, तब से न केवल भारतवर्ष में, बल्कि समस्त संसार में हिन्दी भाषा के प्रति रुचि बढ़ गयी है। हिन्दी भाषा बोलने वालों की संख्या संसार में तीसरे स्थान पर है। आजकल हिन्दी पर शोध-कार्य न केवल भारत के विभिन्न शिक्षा सम्बन्धी और वैज्ञानिक संस्थाओं में हो रहा है, बल्कि यूरोप, एशिया और अमरीका के बहुत से देशों में हो रहा है। विभिन्न भाषिक अध्ययन-शाखाओं के प्रतिनिधियों के लिए आधुनिक साहित्यिक हिन्दी अध्ययन तथा गहन विचार का विषय बन गयी है।

हिन्दी भाषा की परम्परागत वर्णनात्मक रचनाओं के अलावा ऐसी रचनाएँ भी हैं जो कि रचनान्तरणपरक तथा संरचनात्मक विश्लेषण के आधार पर लिखी गयी हैं। ये रचनाएँ भाषा के हर प्रकार के पक्ष पर प्रकाश डालती हैं और उनके वर्णन के किसी-न-किसी रचनात्मक पक्ष का अध्ययन करती हैं।

भारतीय लेखकों की रचनाओं में परम्परावाद के स्पष्ट पदचिह्न दिखाई पड़ते हैं। इसका कारण यह है कि संस्कृत तथा उसके व्याकरण का प्रभाव अभी भी है, हालाँकि भारत में कुछ-एक ऐसे लेखक भी हैं जो कि विश्लेषण की दूसरी विधियाँ अपनाते हैं, विशेषकर संरचनात्मक तथा वर्णनात्मक भाषा-विज्ञान की विधियाँ। पश्चिमी लेखकों की रचनाओं में अधिकतर संरचनात्मक तथा वर्णनात्मक भाषा-विज्ञान की विधियाँ पायी जाती हैं। सोवियत लेखकों की रचनाओं में स्लैव भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन-शाखाओं का प्रभाव है जो कि भाषा के विवरण की परम्परागत विधियों को अपनाते हैं।

हिन्दी भाषा की क्रियार्थक पद्धति के वर्णन के समय उल्लिखितसभी विशेषताएँ देखी जा सकती हैं जो कि आधुनिक साहित्यिक हिन्दी की भाषिक पद्धति में अगर सबसे मुख्य नहीं, तो मुख्य पद्धतियों में से एक है। इसीलिए हिन्दी व्याकरण के इस अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भाग के वर्णन को किसी प्रकार प्रमाणित करना आवश्यक हो जाता है जिसका आधार उसके विकास के आन्तरिक नियम हैं, और जो हिन्दी

भाषा के आधुनिक साहित्य के आधार पर उसकी एककालिक स्थिति को प्रतिबिम्बित करता है।

स्पष्ट है कि एक भी ऐसा शोध-ग्रन्थ नहीं होगा जिसने अपने से पहले अनुभव को ध्यान में न रखा हो। इसीलिए इस ग्रन्थ को लिखने से पहले हिन्दी भाषा की क्रियार्थक प्रणाली के अध्ययन में जो कुछ भी काम किया गया था, उसको भी ध्यान में रखा गया है। हमने क्रिया के ऊपर लिखे गए लगभग सभी ग्रन्थों तथा हिन्दी व्याकरण के समस्त ग्रन्थों का अध्ययन किया है। सन् १६९८ में जोहन्नस कतेलायर द्वारा लिखे गये तथा १७४५ में प्रकाशित हुए प्रथम हिन्दी व्याकरण से लेकर पिछले सालों में छपी युवा लेखकों की रचनाओं सहित सभी ग्रन्थों का अध्ययन किया है। ये सब रचनाएँ तीन श्रेणियों में बाँटी जा सकती हैं जो कि विभिन्न भाषिक अध्ययन-शाखाओं से सम्बन्ध रखती हैं। पहली रचनाएँ वे हैं जो कि यूरोपीय लेखकों द्वारा रची गयी हैं, दूसरी रचनाएँ भारतीय लेखकों के द्वारा रची गयी हैं तथा तीसरी रचनाएँ सोवियत लेखकों द्वारा रची गयी हैं। हम पाठकों को इन सब रचनाओं के विश्लेषण के झंझट में न डालकर, सिर्फ़ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण तथा मौलिक रचनाओं का वर्णन करेंगे जिन्होंने किसी न किसी मात्रा में इस रचना के अलग-अलग नियमों की व्याख्या पर प्रभाव डाला।

## यूरोपीय लेखकों की रचनाएँ

इनमें से लन्दन के भाषाशास्त्री जो० ब्योर्टन-पेज की कृतियाँ जो संरचनात्मक दृष्टिकोण के आधार पर रची गयी हैं, एक विशेष स्थान रखती हैं। अपने 'हिन्दी के कृदन्तपरक रूपों का वाक्य-विन्यास' शीर्षक लेख में (१५८, ९४-१०४),* जो० ब्योर्टन-पेज किसी विशेष शब्द के साथ कृदन्तों (अन्वित तथा अनान्वित) के सम्बन्धों के पाँच ढाँचों का वर्णन करते हैं, जिनमें कृदन्त पूर्वस्थान तथा पार्श्व स्थान पर होते हैं (१५८, ९७-९९)। पाँच ढाँचों की संकल्पना आपत्तिरहित नहीं है। पहले, उनमें क्रिया की विभिन्न रूपनिर्माणात्मक श्रेणियों का साथ-साथ वर्णन किया गया है : अर्थात् कृदन्त और क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त। क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त को कृदन्तों से एस. एच. केलॉग (१८७, २७०) ने ही भिन्न किया था। इस दृष्टिकोण से दूसरे व्याकरणाचार्य भी सहमत थे जैसे जी. सी. पिन्कॉट (२०५,

*कोष्ठक में पहला नम्बर भाषा-वैज्ञानिक कृतियों की सूची में क्रम को व्यक्त करता है, और दूसरा पृष्ठ की संख्या को बताता है। उदाहरणों में जो किसी साहित्यिक रचना से लिये गये हैं, पहला नम्बर साहित्यिक रचनाओं की सूची में क्रम बताता है, दूसरा पृष्ठ की संख्या बताता है।

७८), एडविन ग्रीव्स (१७५, २५७), कामताप्रसाद गुरू (१७, ३४८-३४९), वि. पोरझीज्का (२०९, १७२-१७५, २५७) आदि। दूसरे, प्रकार्य में समान घटनाएँ अलग-अलग ढाँचों से सम्बन्ध रखती थीं : 'साड़ी पहने हुए लड़की अपनी पुस्तक पढ़ रही थी'—ढाँचा-२ और 'चौकीदार शराब पीए हुए एक दरवाज़ा खटखटा रहा था'—ढाँचा-३। तीसरे, प्रकार्य में भिन्न घटनाएँ एक ही ढाँचे से सम्बन्ध रखती हैं : 'उन्होंने हँसते हुए उत्तर दिया' और 'तुमको ऐसे करते हुए लाज नहीं आती ?' यहाँ पहली स्थिति में क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त वाक्य के उद्देश्य के साथ सम्बन्ध रखता है और संयोजक होता है, और दूसरे में—कर्ता से सम्बन्ध रखता है जो कि वाक्य के उद्देश्य से मेल नहीं खाता अर्थात् निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के साथ मेल खाता है जो निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक पदबन्ध बनाता है। चौथी बात, प्रस्तुत ढाँचे कृदन्तों और क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तों के प्रयोगों की समस्त स्थितियों को व्यक्त नहीं करते।

अपने दूसरे लेख 'हिन्दी में जटिल तथा संयुक्त क्रियाएँ' में जो० ब्योर्टन-पेज ने संरचनात्मक विश्लेषण की पद्धति की मदद से हिन्दी की सभी जटिल क्रियाओं का न केवल वर्णन करने बल्कि उनको सारणीबद्ध भी करने एवं संयुक्त क्रियाओं तथा प्रत्यक्ष कर्म के साथ प्रयुक्त क्रिया की संरचना के आधार पर उनके संयोगों के बीच अन्तर भी बताने का प्रयत्न किया। उन्होंने १६ ऐसे विशेषकों को जो कि संयुक्त क्रियाएँ बनाने के काम आते हैं प्रस्तुत किया और दिखाया कि किन-किन क्रियाओं के अविधेय रूपों के साथ कौन-सा विशेषक आ सकता है। लेख में प्रसंग-वश वह बताते हैं कि संयुक्त क्रियाओं के उल्लिखित रूप, यानी सरल (क्रिया का अविधेय रूप तथा एक विशेषक) तथा बहुघटकीय (क्रिया का अविधेय रूप तथा दो या अधिक विशेषक) व्यापार के व्याकरणिक पक्ष को व्यक्त कर सकते हैं जो कि हिन्दी के शाब्दिक अर्थ में नहीं होता, बल्कि ज़्यादा ठीक यह कहना होगा कि शाब्दिक-व्याकरणिक अर्थ में नहीं होता जैसा कि रूसी भाषा में होता है (१५७, ४७१, पादटिप्पणी २)।

जो. ब्योर्टन-पेज ने लेख के दूसरे भाग में संयुक्त क्रियाओं तथा प्रत्यक्ष कर्म के साथ क्रिया के रूप में समान संयोगों के बीच भिन्नता को बताया। जो. ब्योर्टन-पेज का तरीका पूर्णतः वही था जो कि रूसी वैज्ञानिकों ने क्रियार्थक-नामिक पदबन्धों तथा नामबोधक संयुक्त क्रियाओं में भिन्नता दिखाने के लिए अपनाया था।

जो. ब्योर्टन-पेज का लेख रोचक तथा मौलिक है, लेकिन दुर्भाग्य से उसमें कई त्रुटियाँ हैं। इसी कारण जर्मनी के वैज्ञानिक पाउल हाक्केर ने एक अत्यन्त कटु लेख लिखा। लेख का शीर्षक था : 'हिन्दी भाषा की संयुक्त तथा यौगिक क्रिया के वर्णन के तरीकों का सवाल' (१८१,४८४-५१६)। पी. हाक्केर ने, जो कि संयुक्त क्रियाओं के ऊपर रचे गए शोध-ग्रन्थ के लेखक हैं, संयुक्त क्रियाओं के ब्योर्टन-पेज

के प्रस्तावित वर्गीकरण की बहुत-सी त्रुटियों की ओर ध्यान आकर्षित किया है और दिखाया कि समान संरचनात्मक रूपों के पीछे बिलकुल विभिन्न विषय छिपे हैं (१८१, ४८६-४८७)। पी. हाक्केर ने जो. ब्योर्टन-पेज की अवधारक क्रियाओं की छिछली व्याख्या की भी आलोचना की। पी. हाक्केर की राय में जो. ब्योर्टन-पेज की व्याख्या ठीक तरह से बात के सार को प्रस्तुत नहीं करती और हर रूप को कोई-न-कोई सारार्थ दे देती है और यह नहीं देखती कि भाषा में वैसा सारार्थ होता है या नहीं (१८१, ४८८-४९७)। पी. हाक्केर यह भी बताते हैं कि १६ विशेषक जिनका जो. ब्योर्टन-पेज ने हवाला दिया है, अपनी प्रकृति में और भाषा के प्रकार्य में अधिकतर असमान हैं क्योंकि उनमें से कुछ-एक ने तो अपने शाब्दिक अर्थ को खो दिया है (जैसे 'बन बैठना'), दूसरों ने आंशिक रूप से अपने शाब्दिक अर्थ को खो दिया है (जैसे 'जाना' तथा 'आना' के साथ अपूर्ण कृदन्त का मिलन), और कइयों ने अपने शाब्दिक अर्थ को सुरक्षित रखा है ('सकना', 'चुकना', 'रहना' के साथ मिलन) (१८१, ५०५)। पी. हाक्केर ने बहुत-से क्रियार्थक पदबन्धों का हवाला दिया है जो बाह्य रूप से अवधारक क्रियाओं के समान हैं, लेकिन जो 'संक्षिप्त निरपेक्षिक क्रियार्थ' (अर्थात् क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त, जो रूप में क्रिया की धातु के बराबर है—ओलेग उलत्सिफ़ेरोव) तथा पर्यायवाची क्रिया या निकट अर्थ की क्रिया के साथ स्वतंत्र संयोग हैं। यह कहना उचित होगा कि पी. हाक्केर अवधारक क्रियाओं को दूसरा नाम देते हैं—'व्याख्यात्मक' क्रियाएँ और 'अवधारक' क्रियाएँ की परिभाषा उन क्रियाओं को देने का सुझाव रखता है जो 'देना', 'लेना', 'डालना' और 'जाना', 'आना', 'पड़ना' क्रियाओं के साथ पूर्ण कृदन्त (अन्वित तथा अनान्वित) का मिलन है ('कहे देना', 'मरा जाना' आदि) (१८१, ४८६)।

जैसा कि मालूम है यौगिक तथा संयुक्त क्रियाओं का प्रश्न कभी से नया नहीं है। यौगिक क्रियाओं के बारे में एस. एच. केलॉग ने लिखा (१८७, २५७) तथा जोन प्लात्स ने भी लिखा (२०८, १६९)। ए०पी० बारान्निकोव ने भी यौगिक क्रियाओं के बारे में लिखा (२७२, ६३-११०)। हम इस समस्या के प्रति अपना सम्बन्ध तब बताना चाहेंगे जब हम हिन्दी में विश्लेषणात्मक क्रिया के बारे में बतायेंगे, ताकि इसके वर्णन में पुनरावृत्ति नहीं हो।

बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में जर्मन तथा चेकोस्लोवाकियन वैज्ञानिकों की ऐसी कृतियाँ आधुनिक हिन्दी भाषा पर आने लगीं (१७२; १९२; ९६; २०९; २१०; २११), जो कि मुख्यत: हिन्दी भाषा की क्रियार्थक पद्धति के बारे में थीं। इनमें से कुछ के बारे में हम यहाँ जिक्र करेंगे।

उल्लिखित लेखों में से सबसे पहले हम वि. पोरझीज्का के दो लेखों के बारे में वर्णन करेंगे, जिनका शीर्षक है: 'हिन्दी के कृदन्त, जो संज्ञा के रूप में आते हैं'

(२०६, १६६-१८७), तथा 'हिन्दी वाक्यों में विशेषणात्मक तथा क्रिया-विशेषणात्मक कृदन्त' (२११, ५२४-५३८), जिनमें लेखक ने न केवल विस्तार-पूर्वक शोधकार्य किया और कृदन्तों के बारे में एस. एच. केलॉग, वि. सी. क्लेरटिस्डाल, एडविन ग्रीव्स, जोन प्लात्स ने जो वर्णन किया था, उसे अपनाया, बल्कि बहुत से नये नियमों का सूत्रपात्र किया जो कि इन प्रतिष्ठित लोगों की निगाह से बच गए थे। वि. पोरझीज्का ने ही सबसे पहले हिन्दी विद्वानों में से अनान्वित कृदन्त को क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त कहा और पुरानी परिभाषा 'निरपेक्ष' या 'स्थैतिक' कृदन्त जिनका प्रयोग हिन्दी भाषा में शोधकार्य करने वाले अंग्रेज़ लोग करते थे, उसको ठुकराया और हिन्दी में क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के प्रयोग की सभी स्थितियों का अध्ययन किया। इसके अलावा, उन्होंने कर्ता सम्बन्धी कृदन्तपरक तथा क्रियाविशेषणात्तक पदबन्धों का भी अध्ययन किया और उनको सम्बन्धकारक समेत कृदन्तपरक पदबन्ध बताया और नामिक कृदन्तपरक विधेय तथा पूर्णतावाची काल-रूपों के बीच भिन्नता बतायी।

जर्मन वैज्ञानिकों के निबन्धों में से दो निबन्ध ध्यान देने लायक हैं—'आधुनिक हिन्दी में कालों का प्रयोग और व्यापार के पक्षों की रचना' (१९२), जो ज़िगफ़्रीड लायनहार्ड द्वारा लिखा गया था और पीटर हायेफ़्फ़के द्वारा लिखा गया निबन्ध—'हिन्दी वाक्य-विन्यास के ऊपर शोधकार्य'।

ज़िगफ़्रीड लायनहार्ड की रचना जो कि १९६१ में प्रकाशित हुई, आधुनिक हिन्दी के काल-रूपों तथा व्यापार के पक्षों के साथ इनके अटूट सम्बन्ध पर गम्भीर शोधकार्य है। ज. लायनहार्ड ने सब कालों में पक्षों का अध्ययन किया। ज. लायनहार्ड की रचना दो खण्डों में विभाजित है: (१) निश्चयार्थ तथा (२) दूसरे अर्थ। निश्चयार्थ विभाजित होता है: १. वर्तमान (सामान्य तथा वास्तविक)—'आता है' और 'बोल रहा है' जिसमें व्यापार के छह पक्षों का अध्ययन किया जाता है: (१) वह बोलता रहता है; (२) वह बढ़ जाता है; वह बढ़ जा रहा है; (३) वह बढ़ता जाता/जा रहा है ('बढ़'जाता है' रूप का अर्थ हमवार संतत प्रक्रिया तथा 'वह बढ़ता जाता है' रूप क्रमिक व्यापार व्यक्त करता है (१९२,७२); (४) वह करता आता है, वह करता आ रहा है' ('पढ़ता आता' रूप का अर्थ उक्ति के क्षण तक व्यापार का विकास, 'पढ़ता रहता' का अर्थ उक्ति से पहले और बाद के रूप में भी व्यापार का विकास, लेकिन 'पढ़ता जाता' का अर्थ है उक्ति के क्षण के बाद व्यापार का विकास (९२,७६); (५) वह देखता रह जाता है और (६) वह बोल-कर रह जाता था। २. अपूर्ण (सामान्य और वास्तविक) काल उन्हीं व्यापार के पक्षों के साथ। ज. लायनहार्ड इसके अलावा नियमित आवर्ती प्रक्रम का अपूर्ण काल को भी भिन्न करते हैं और उसकी सामान्य अपूर्ण काल के साथ चार भिन्नताओं का हवाला देते हैं (१९२, ११२)। ३. सामान्य भूत में व्यापार के

उल्लिखित पक्षों के अलावा एक और जोड़ा जाता है अर्थात् सातवाँ : 'आता हुआ', इसका प्रमाण निम्नलिखित उदाहरण द्वारा मिलता है : 'परन्तु जो वाणी मैंने सुनी, वह बहुत दूर से आती हुई और साथ ही बहुत समीप की भी प्रतीत हुई'। ४. पूर्ण वर्तमान जो कि एक समान नहीं होता क्योंकि दशासूचक तथा व्याख्यात्मक क्रियाएँ ('कहना,' 'लिखना') पूर्ण वर्तमान में वर्तमान अर्थ रखती हैं और जिसमें व्यापार के छह पक्ष होते हैं : (१) 'होता रहा है'—जो संतत पौन: पुन्य अर्थ में आता है; (२) 'फैलता (चला) गया है' ; (३) 'करता आया है' (व्यापार के आखिरी दो पक्ष संतत घटमान अर्थ में आते हैं) ; (४) 'आ चुका है'; (५) 'देख गया है' ; (६) 'आया हुआ है' (व्यापार के आखिरी तीन पक्ष पूर्णता व्यक्त करते हैं) (१६२,१८२)। ५. व्यापार के पाँच पक्षों के साथ पूर्णभूत ('जाना' क्रिया के साथ उपरोक्त रूप नहीं है), जिसमें व्यापार का आखिरी, पाँचवाँ पक्ष 'रखा हुआ था' व्यापार के परिणाम पर ज़ोर देता है। 'बने हुए अर्थों' के नाम के खंड में अध्ययन होता है : **संभावनार्थ** के तीन रूप : सरल, अपूर्ण और पूर्ण—'आये', 'आता हो', 'आया हो' ; **आज्ञार्थ** ; **भविष्यत्** के तीन रूप : सरल, अपूर्ण, पूर्ण—'आयेगा', 'आता होगा', 'आया होगा' जिसमें व्यापार के चार पक्ष हैं : 'वह देख रहा होगा', 'वह देखता रहेगा', 'वह देखता जायेगा', 'वह देखता रह जाएगा' ; **संकेतार्थ** के तीन रूप—सरल, अपूर्ण तथा पूर्ण—'आता', 'आता होता', 'आया होता'। परिशिष्ट में अवधारक क्रियाओं का विश्लेषण होता है।

जैसा कि रचना के संक्षिप्त वर्णन से प्रतीत होता है, यह हिन्दी में क्रिया की समस्त व्यापक रूपावली को शामिल करती है लेकिन उसकी व्याख्या की शैली सर्वस्वीकृत शैली से भिन्न है। सबसे पहले यह बात तब लागू होती है जब अर्थ की पद्धति में भविष्यत् काल शामिल किया जाता है, और हिन्दी में व्यापार के पक्षों की मौलिक व्याख्या दी जाती है जिनमें ऐसे भी पक्ष हैं जिनका सम्बन्ध पहले किसी ने भी व्यापार के पक्ष के साथ नहीं बताया था, उदाहरणार्थ : 'बोलकर रह जाता', 'आता हुआ' 'वह जा रहा', 'देख गया'। लेखक की पक्ष-सम्बन्धी कालवाचक रूपों की सुरचित पद्धति को बनाने की इच्छा को समझा जा सकता है, लेकिन यह इच्छा भाषा के वास्तविक तथ्यों के विरोध में है जिनमें यह बात स्पष्ट निकलती है कि हिन्दी भाषा में व्यापार के पक्षों तथा काल-रूपों में कोई भी सम्बन्ध नही है चूँकि व्यापार के सभी पक्ष विश्लेषणात्मक तौर पर व्यक्त होते हैं और मुख्य क्रियाकाल के रूपों की रचना में हिस्सा नहीं लेती और काल के प्रति निरपेक्ष रहती है—'**बढ़ता** जाता है', '**बढ़ता** गया था', '**बढ़ता** जाएगा'। जहाँ तक वर्तमान तथा भूत के काल-रूपों के वर्णन का सम्बन्ध है तो वह बहुत ही कुशलता से किया गया है और उसके ऊपर ज़रा-सी भी गम्भीर टिप्पणी करने की ज़रूरत नहीं।

पेटेर हाएफ़्फ़्के की रचना के तीन खण्ड हैं: १. 'निषेधात्मक वाक्यों में सहायक क्रियाएँ (१७२, १३-३८); २. 'हिन्दी भाषा में कर्मवाच्य' (१७२, ३९-८४) तथा ३. 'यौगिक क्रिया' (१७२, ९५-२०७)। आख़िरी दो खण्ड, हमारे दृष्टिकोण से सबसे ज़्यादा महत्त्व के हैं।

कर्मवाच्य का वर्णन करते समय पे. हाएफ़्फ़्के प्राचीन हिन्दी भाषा में उसकी उत्पत्ति तथा प्रयोग का विश्लेषण करते हैं, वे पुराने कर्मवाच्य और उन्नीसवीं सदी में 'जाना' क्रिया के साथ कर्मवाच्य के ऊपर गौर करते हैं तथा आधुनिक हिन्दी भाषा में कर्मवाच्य के उपर काफ़ी प्रकाश डालते हैं। लेकिन पे. हाएफ़्फ़्के की कर्म-वाच्य की व्याख्या करने के ढंग में नयापन या मौलिकता नहीं है।

यौगिक क्रियाओं के खण्ड में उन्होंने अच्छी तरह अध्ययन की गयी नामिक धातुओं के साथ 'करना', 'होना' और दूसरी क्रियाओं के मेल पर खोज की है। उन्होंने क्रियाओं तथा क्रिया-नामिक वाक्यांशों के बीच भेद बताया है। अन्त में उन्होंने नामधातुज क्रियाओं का विश्लेषण किया है जो काफ़ी विस्तृत है (१७२, १४४-२०७)।

यह प्रमाणित बात है कि इंग्लैण्ड के प्राच्यवेत्ता-भाषाविज्ञों ने न केवल हिन्दी भाषा के अध्ययन के ऊपर बहुत बड़ा प्रभाव डाला है वरन् मुख्यतः उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध तथा बीसवीं सदी के शुरू में भारत में वैज्ञानिक विचार के निर्माण पर प्रभाव डाला है। इंग्लैण्ड के व्याकरणाचार्यों के बनाये गए नमूनों तथा उदाहरणों के आधार पर ही भारतीयों ने हिन्दी व्याकरण के ऊपर रचनाएँ लिखीं। उन्होंने हिन्दी भाषा के ऊपर अनाश्रित सैद्धान्तिक खोज करने का प्रश्न अपने सामने नहीं रखा। उन्होंने प्राथमिक स्कूलों के लिए प्रारम्भिक पाठ्य-पुस्तकों को लिखा (देखिए : १७, प्राक्कथन, पृ० ९ ; ४४, ४६-९२)

## भारतीय लेखकों की रचनाएँ

जब हम भारतीय लेखकों की रचनाओं का विश्लेषण करते हैं तो कामता-प्रसाद गुरु के लिखे व्याकरण को भूल नहीं सकते। यह व्याकरण बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध में हिन्दुस्तानी व्याकरणिक स्कूल के व्याकरणिक विचार का चरमोत्कर्ष था जिसमें पहली बार हिन्दी भाषा में हिन्दी भाषा का वैज्ञानिक ढंग से वर्णन करने का प्रयास किया गया था। कामताप्रसाद गुरु ने अपने व्याकरण में क्रिया की पद्धति का विस्तारपूर्वक तथा सम्पूर्ण वर्णन किया है जिसमें पुरुषवाचक तथा अविधेय रूप शामिल हुए हैं। हालांकि कामताप्रसाद गुरु ने पक्ष-सम्बन्धी तथा विश्लेषणात्मक रूपों की भिन्नता जैसे प्रश्नों को नहीं छेड़ा और उन सब रूपों को

एक ही संकलपना 'संयुक्त क्रियाएँ' से जोड़ दिया, हालांकि उन्होंने प्राकारिक रूपों तथा पक्ष-सम्बन्धी रूपों के बीच अन्तर नहीं दिखाया और कृदन्तों को 'वर्तमान काल के कृदन्तों' तथा 'भूतकाल के कृदन्तों' में बाँटा, और हालांकि उन्होंने क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तों का अलग से वर्णन नहीं किया और उनको क्रियार्थक अविकारी कृदन्त-निपात कहा, आदि, तिस पर भी उन्होंने क्रियार्थक पद्धति का वर्णन वास्तविक सामग्री के गहन ज्ञान के आधार पर किया, जिसमें हिन्दी भाषा के किसी भी अनुसन्धानकर्त्ता को हिन्दी का विश्लेषण करने में काफ़ी सहायता मिलती है।

'आधुनिक हिन्दी का प्रारंभिक व्याकरण' जिसको आर्येन्द्र शर्मा ने लिखा है और जो सन् १९५८ में निकला है, वास्तव में हिन्दी भाषा का वर्णन करने की मौलिक तथा स्वतन्त्र पद्धति की हैसियत से आया। 'प्रारम्भिक व्याकरण' पहली बार क्रिया में व्यापार के पक्ष की व्याकरणिक श्रेणी को भिन्न करता है (१५१, ५६), जहाँ मुख्यतः व्यापार के दो मुख्य पक्ष भिन्न किए जाते हैं : समापक पक्ष तथा अपूर्णकालिक पक्ष। इसके अलावा, हिन्दी भाषा में व्यापार को पौनः पुन्य पक्ष, अवधारण पक्ष, प्रभावी पक्ष, आरंभमाण पक्ष आदि को भी अलग किया जाता है (१५१,५६)। 'प्रारम्भिक व्याकरण' हिन्दी में सहायक क्रियाओं के दो भेदों को भिन्न करता है। पहला भेद काल तथा वाच्य के रूपों की रचना के काम आता है जिसमें सिर्फ़ तीन क्रियाएँ आती हैं—'होना', 'था' ('था' क्रिया 'होना' क्रिया के भूतकाल के रूप में समझी जाती है) तथा 'जाना' क्रिया। दूसरा भेद क्रिया के पक्ष-सम्बन्धी रूपों के बनाने के काम आता है (१५१,५६,८६), यहाँ २२ अर्थपूर्ण क्रियाएँ तथा एक वृत्तिवाचक क्रिया 'चाहिए' आती हैं (१५१,८७-९२)। 'प्रारम्भिक व्याकरण' हिन्दी भाषा में विधेय के तीन तरह के समानाधिकरणों को पक्की तरह से निश्चित करता है : कर्त्ता-सम्बन्धी जब विधेय व्यापार के कर्ता के साथ समानाधिकृत होता है (वाक्य की कर्ता-सम्बन्धी रचना), कर्म-सम्बन्धी जब विधेय व्यापार के कर्म के साथ समानाधिकृत होता है (वाक्य की कर्म-सम्बन्धी रचना) तथा भाववाचक जब विधेय न तो कर्ता, न कर्म से समानाधिकृत होता है और अन्य पुरुष, पुलिंग, एकवचन के निरपेक्ष रूप में आता है (वाक्य की भाववाचक रचना) (१५१, ५९-६०, १२६-१२८)। 'प्रारम्भिक व्याकरण' के अनुसार हिन्दी में तीन अर्थ होते हैं : आज्ञार्थ, निश्चयार्थ तथा सम्भावनार्थ (१५१-५८)। स्वयं सम्भावनार्थ बाँटा जा सकता है : (१) इच्छार्थक वृत्ति ('मैं चाहता हूँ कि वह आए') ; (२) विध्यर्थक वृत्ति ('संभव है, वह आया हो', जिसमें 'आता हो' तथा 'आया हो' के रूप आते हैं) ; (३) संकेतार्थ ('यदि मेरा भाई यहाँ होता, तो तुम ऐसा न कहते', जिसमें 'आता होता' तथा 'आया होता' के रूप आते हैं) ; (४) सन्देहार्थ ('वह आता होगा', जिसमें 'आता होगा' तथा

'आया होगा' के रूप आते हैं) (१५१,५८)। तब वे रूप जिनमें वर्तमान काल का कृदन्त होता है तो वर्तमान काल से सम्बन्ध रखते हैं और जिनमें भूतकाल का कृदन्त होता है तो भूतकाल से सम्बन्ध रखते हैं, और इच्छार्थ वृत्ति के रूप भविष्यत् काल से सम्बन्ध रखते हैं (१५१, ७३)।

आधुनिक हिन्दी के 'प्रारम्भिक व्याकरण' के साथ-साथ किशोरीदास वाजपेयी की, जो भारतवर्ष के एक अत्यन्त मशहूर भाषाविद् हैं, पुस्तक 'हिन्दी शब्दानुशासन' प्रकाशित हुई। इस पुस्तक में पहली बार हिन्दी व्याकरण का वर्णन करने के लिए सामान्य भाषा-विज्ञान की विचार-पद्धति का सहारा लिया गया (२३)।

किशोरीदास वाजपेयी समस्त क्रियार्थक काल-रूपों को शुद्ध क्रियार्थक, कृदन्तपरक तथा क्रिया-कृदन्तपरक रूपों में बाँटते हैं (२३, १४२)। इसलिए वे समस्त कृदन्तों को उनके प्रकार्यात्मक प्रयोग के आधार पर कृदन्त विशेषण तथा कृदन्त क्रिया में बाँटते हैं (२३, २२६)। किशोरीदास वाजपेयी ने पहली बार हिन्दी भाषा में विश्लेषणात्मक काल की संकल्पना का प्रयोग किया जिसमें विधेय-कृदन्त वस्तुवाचक भार को रखता है और क्रियार्थक रूप सहायक होता है और व्यापार की काल-पृष्ठभूमि को बताता है (२३,२७५)। कृदन्तों के इस प्रकार के भेद का तार्किक अन्त कृदन्तपरक एकारांत क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त की एक श्रेणी को भिन्न करना था जिसको श्री वाजपेयी ने भावप्रधान 'त' प्रत्यय क्रियार्थक रचना को बताया, उदाहरणार्थ : 'काम करते-करते बुढ़िया थक गयी' (२३, २७५)।

हिन्दी में क्रिया की व्यापक भूमिका समझते हुए, और क्रियार्थक रचनाओं के भिन्न प्रकारों की विशेषताओं तथा क्रियार्थक कालरूपों की बहुतायत समझते हुए, किशोरीदास वाजपेयी ने अपनी पुस्तक का दूसरा भाग क्रिया के ऊपर लिखा है। जैसा कि पता है, किशोरीदास वाजपेयी की पुस्तक तीन हिस्सों में विभाजित है—'पूर्व-पीठिका', 'पूर्वार्द्ध' तथा 'उत्तरार्द्ध'। पुस्तक के उत्तरार्द्ध में किशोरीदास वाजपेयी उन शब्दों को जो वाक्य के उद्देश्य से सम्बन्ध रखते हैं ('पूर्वार्द्ध' में इस पर ही प्रकाश डाला गया है), ऐसे शब्दों के विरोध में रखते हैं जो कि वाक्य के विधेय से सम्बन्ध रखते हैं। पुस्तक को ऐसे बाँटने से ही पता चल जाता है कि व्याकरणिक रचना जो किशोरीदास वाजपेयी द्वारा दी गयी है, एक नये ढंग की है। उत्तरार्द्ध में किशोरीदास वाजपेयी 'सिद्ध' तथा 'साध्य' की संकल्पना देते हैं जिससे कि वाक्य के वास्तविक पृथक्करण को समझने और उस पर अमल करने में आसानी होती है (२३, ३८५)। 'सिद्ध' तथा 'साध्य' की संकल्पना श्री वाजपेयी न केवल उद्देश्य तथा विधेय के लिए लागू करते हैं बल्कि समापक कृदन्त तथा शुद्ध क्रिया अर्थात् कृदन्त तथा तिङन्त के रूपों के लिए भी लागू करते हैं। इस

प्रकार वह समापक कृदन्त को 'सिद्ध' करते हैं तथा क्रिया को 'साध्य' (२३, ४०३-४०४)। किशोरीदास वाजपेयी हिन्दुस्तानी विद्वानों में से पहले विद्वान हैं जिन्होंने विधेय विशेषण की संकल्पना दी और जिसको वह बहुत व्यापक रूप से समझते हैं (२३, ३८७)।

किशोरीदास वाजपेयी ने प्रेरणार्थक क्रिया की भी नये ढंग से व्याख्या की, उन्होंने इन क्रियाओं को द्विकर्तृक बताया (२३, ४५६), क्योंकि 'माँ बच्चे को दूध पिलाती है' वाक्य में किशोरीदास वाजपेयी के अनुसार दो कर्ता होते हैं : मुख्य कर्ता—'बच्चा' जो व्यापार करता है अर्थात् 'दूध पीता है' तथा गौण कर्ता—'माँ' जो 'दूध पीने' में प्रत्यक्ष रूप से हिस्सा नहीं ले रही (२३,४५७)। दूसरी तरफ़ उल्लिखित वाक्य किशोरीदास वाजपेयी के अनुसार द्विकर्मक है जहाँ 'दूध' श्री वाजपेयी के शब्दों में—'असली' कर्म है तथा 'बच्चा' गौण कर्म है। किशोरीदास वाजपेयी त्रिकर्मक वाक्य में भी भिन्नता बताते हैं जैसे, 'माँ नौकर से बच्चे को दूध पिलवाती है' अर्थात् नौकर की मदद से बच्चे को माँ दूध पिलवाती है (२३, ४६६)। इस वाक्य में दो कर्ताओं के अलावा—'असली'—'बच्चा' तथा प्रेरक—'माँ', दो गौण कर्म हैं—'नौकर' तथा 'बच्चा' तथा एक मुख्य कर्म है—'दूध' (२३, ४६६)।

भोलानाथ तिवारी द्वारा लिखी गयी पुस्तक 'हिन्दी भाषा' (७६) न केवल भाषा के इतिहास पर प्रकाश डालती है, बल्कि आधुनिक साहित्यिक हिन्दी की कुछ समस्याओं पर भी टिप्पणी करती है। उदाहरणार्थ, तिवारी जी हिन्दी की यौगिक क्रियाओं की अपनी तरह से व्याख्या करते हैं। उनके अनुसार यौगिक क्रियाएँ अपनी रचना के आधार पर बाँटी जा सकती हैं : (१) संज्ञावाचक ('दर्शन देना'); (२) विशेषणात्मक ('अच्छा होना'); (३) संख्यावाचक ('एक होना'); (४) सार्वनामिक ('अपना करना'); (५) ध्वनि-अनुकरणीय ('धक-धक करना'); (६) दृश्यात्मक ('जगमग करना'); (७) क्रियाविशेषणात्मक ('आगे करना'); (८) क्रियार्थक जिनको निम्नलिखित प्रकारों में बाँटा जा सकता है : (क) धातु से बनी ('गिर पड़ना'); (ख) कृदन्तपरक ('लिखा करना'); (ग) तुमर्थ से बनी ('गाने लगना'); (९) पुनरुक्त जिनमें निम्न शब्दों की द्विरुक्ति होती है : (क) संज्ञाओं की ('मरहमपट्टी करना'); (ख) विशेषणों की ('साफ़-सुथरा होना'); (ग) क्रियाविशेषणों की ('आगे-पीछे करना'); (घ) क्रियाओं की ('मारना-पीटना') (७९, दूसरा खंड, २६३)।

अर्थ के अनुसार भोलानाथ तिवारी यौगिक क्रियाओं की बीस से ऊपर श्रेणियाँ प्रस्तुत करते हैं, जिनमें से, उनकी राय में, सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण निम्नलिखित हैं : (१) अवधारणसूचक ('गिर पड़ना'); (२) पूर्णतासूचक ('कर चुकना'); (३) संभावनासूचक ('कर पाना'); (४) इच्छाबोधक ('किया चाहना'); (५)

पौनः-पुन्य सूचक ('किया करता है'); (६) सांतत्यताबोधक ('किये जाना', 'करते रहना'); (७) नित्यता [illegible] ('दाम बढ़ता चला जा रहा है'); (८) प्रक्रियात्मक ('वह जा रहा है'); (६) पूर्णप्रायताबोधक ('पाठ याद हो चला है'); (१०) स्थैतिक ('पकड़े रहना', 'बैठे रहना'); (११) यत्रतत्रताबोधक ('करते फिरना'); (१२) आनुषंगिकताबोधक ('उससे मिलते जाना'); (१३) बाध्यता-बोधक ('उधार लिये बिना नहीं चलता'); (१४) असमर्थताबोधक ('करते नहीं बनता'); (१५) [illegible] ('प्रोफेसर बनना चाहते थे, मास्टर बनकर रह गए'); (१६) प्रयोगबोधक ('खाकर देखिये', 'पूछ देखिये') (७६, दूसरा खंड, २६३-२६४)।

भोलानाथ तिवारी द्वारा किये गए क्रियाओं के शब्दार्थक बँटवारे के ऊपर टिप्पणी करने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि उदाहरणों से ही लेखक की अप्रासंगिकता तथा यौगिक क्रियाओं के वर्गीकरण के लिए कोई भी एक निश्चित आधार नहीं होने का पता चलता है। हम विश्लेषणात्मक क्रियाओं की व्याख्या उचित स्थान पर करेंगे।

चतुर्भुज सहाय द्वारा लिखा गया निबन्ध 'हिन्दी की क्रियाएँ, प्रयोग आवृत्ति और रचना' (३३), जयकृष्ण विद्यालंकार द्वारा लिखा गया लेख 'हिन्दी क्रिया संरचना' (४१, ६६-११४) तथा जगदेव सिंह द्वारा लिखा गया लेख 'हिन्दी क्रिया पद' (४०, २७-४२) ऐसी कृतियाँ हैं जो विशेष रूप से क्रिया के ऊपर लिखी गयी हैं।

चतुर्भुज सहाय अपने निबन्ध में हिन्दी भाषा की सभी क्रियाओं को इस तरह बांटते हैं : (१) साधारण, (२) संयुक्त, (३) कालबोधक तथा (४) वृत्तिबोधक क्रियाएँ (३३)। क्रियाओं के इस वर्गीकरण के आधार पर उन्होंने अपनी कृति को पाँच खंडों में बाँटा है।

पहले खंड में वह विभिन्न क्रिया-रूपों के प्रयोग की आवृत्ति के ऊपर आँकड़े देते हैं। ये आँकड़े प्रेमचन्द द्वारा लिखित 'मानसरोवर' कहानी-संग्रह के तृतीय खंड तथा हजारीप्रसाद द्विवेदी के निबन्ध संग्रह 'अशोक के फूल' के आधार पर जमा किए गए हैं। इन आँकड़ों को तीन भागों में बाँटा गया है : (१) काल-रूपों में सरल क्रियाओं का प्रयोग, (२) संयुक्त क्रियाओं का प्रयोग अर्थात् विशेषक क्रियाओं के प्रयोग की आवृत्ति तथा (३) वृत्ति-रूपों में सरल तथा संयुक्त क्रियाओं का प्रयोग (३३, [illegible])।

पुस्तक के दूसरे खंड में प्रत्ययों का वर्णन है जो कि क्रियाओं की धातुओं के साथ जोड़ते हैं। इन प्रत्ययों में न केवल विभिन्न प्रकार के रूपिम बल्कि वे स्वतंत्र शब्द 'है', 'था' भी शामिल होते हैं जो कि काल-रूपों के प्रत्यय समझे जाते हैं (३३, २६)। लेखक की राय में कृदन्तों के रूपिम 'ना' और 'या' काल-सूचक नहीं

होते। वे सिर्फ़ व्यापार के विकास के सूचक होते हैं अर्थात् व्यापार समाप्त होगा या अनन्त होगा। एक ही रूप, उदाहरणार्थ : 'जाता', वर्तमान काल के रूपों को बनाने के काम आता है—'जाता है', और भूतकाल के रूप के बनाने के काम भी आता है—'जाता था' (३३, २०)। दूसरी तरफ़ काल-सूचक (काल प्रत्यय) प्रत्यक्ष रूप से क्रिया की धातु के साथ सम्बन्ध नहीं रखते। कारण यह है कि धातु के साथ प्रत्यक्ष रूप से प्रत्यय ही लगते हैं जो कि व्यापार के विकास का स्तर बताते हैं। कोई भी व्यापार पूर्ण हो सकता है, अपूर्ण हो सकता है, अभ्यस्त हो सकता है। व्यापार के विकास के प्रत्येक स्तर के लिए क्रमशः 'या', 'ता', 'रहा' प्रत्यय हैं ('रहा' रूप भी प्रत्ययों में सशर्त शामिल किया जाता है)। इस तरह क्रिया में काल की अभिव्यक्ति हमेशा व्यापार के विकास के स्तर पर निर्भर होती है जबकि व्यापार के विकास का स्तर काल-सूचक के बिना भी आ सकता है, उदाहरणार्थ : 'वह रास्ते भर रोता गया' (३३, २०)।

इस सिलसिले में चतुर्भुज सहाय हिन्दी में छह काल-रूपों को भिन्न करते हैं : वर्तमान अभ्यास—'जाता है', वर्तमान अपूर्ण—'जा रहा है', वर्तमान पूर्ण—'गया है', भूत अभ्यास—'जाता था', भूत अपूर्ण—'जा रहा था', भूत पूर्ण—'गया था'। चतुर्भुज सहाय की राय में भविष्यत् काल का रूप उल्लिखित काल-रूपों से संरचना में भिन्न होता है, क्योंकि वह कालसूचक एवं व्यापार के विकास के स्तर से भी सम्बन्ध नहीं रखता। भविष्यत् काल का 'गा' प्रत्यय धातु से नहीं जुड़ता बल्कि दूसरे प्रत्यय से मिलता है : 'जा-ऊँ-गा' आदि।

श्री सहाय की राय में शुद्ध कृदन्तपरक रूप, उदाहरणार्थ : 'गया', नियमित नहीं हैं। उनकी राय में हिन्दी भाषा में यह रूप अपवाद है (३३, २१)।

चतुर्भुज सहाय हिन्दी में चार अप्रत्यक्ष वृत्तियाँ निश्चित करते हैं :

१. विधि अर्थ, जिसमें वृत्ति के सर्वस्वीकृत रूपों के अलावा 'ए' रूप भी आता है जिसका 'आप' सर्वनाम के साथ प्रयोग होता है।

२. संभावनार्थ जिसमें विभिन्न काल-रूप शामिल होते हैं जो 'शायद', 'होगा' शब्दों से चिह्नित होते हैं। इस अर्थ के निम्नलिखित रूपों में भेद जानना चाहिए : (क) संभावना वर्तमान पूर्ण—'आपने यह बात शायद सुनी हो', (ख) संभावना वर्तमान अपूर्ण—'शायद आप जा रहे हों'; (ग) संभावना वर्तमान अभ्यास—'शायद वह आता हो' (३३, २४-२५)। भूत तथा भविष्यत् काल के रूप, चतुर्भुज सहाय की राय में, 'शायद' शब्द भूत और भविष्यत् काल के शुद्ध काल-रूपों के साथ जोड़कर बनते हैं, उदाहरणार्थ : 'शायद वह आता था', 'शायद वह आया था', 'शायद वह आयेगा' (३३, २५)। 'शायद' शब्द के अलावा 'होगा' शब्द का भी प्रयोग करते हैं जो कि संभावनार्थ के निम्नलिखित रूपों को बनाता है : (क) वर्तमान अभ्यास अपूर्ण—'वह आता होगा', (ख) वर्तमान अपूर्ण—'वह आ रहा

होगा', (ग) भूत अभ्यास अपूर्ण—'वह आता रहा होगा', (घ) भूत पूर्ण—'वह आया होगा' और 'वह आया रहा होगा' (३३, २६)। चतुर्भुज सहाय की राय में 'होना' सम्बन्धी रूपों का कालवाचक वर्णन प्रसंग से निश्चित होता है, उदाहरणार्थ : 'भविष्य में हम यहाँ रहते होंगे' (३३, २६)।

३. शर्त, जिसमें व्यावहारिक तौर पर सभी काल-रूप शामिल हैं जो 'यदि' और 'तो' संयोजकों से निर्दिष्ट हैं, उदाहरणार्थ : '(यदि) मैं जाऊँ तो', '(यदि) वह आया है तो', '(यदि) उसने बुलाया होता तो'—आदि (३३, २६-२७)। चतुर्भुज सहाय संभावनार्थ तथा शर्त-अर्थ का वर्णन करते समय यह टिप्पणी करते हैं कि वे सिर्फ़ वाक्य विन्यास के माध्यम से प्रकट होते हैं, रूप-प्रक्रिया के तौर पर हिन्दी की क्रिया यह अर्थ व्यक्त नहीं करती (३३, २७)।

४. संकेतार्थ जो अपने नियमित रूपों द्वारा बनता है जो 'कहीं', 'चाहे', 'क्यों', 'तो' शब्दों द्वारा निर्दिष्ट होते हैं। संकेतार्थ के रूपों के अलावा यहाँ निश्चयार्थ रूप तथा शर्त-अर्थ के रूप भी प्रयोग हो सकते हैं (३३, २७-२८)।

चतुर्भुज सहाय की राय में हिन्दी में कर्मवाच्य बनाने के लिए एक भी प्रत्यय नहीं है। कर्मवाच्य हिन्दी में चार स्वतंत्र क्रियाओं की मदद से बनता है, 'जाना', 'देना', 'पड़ना', 'बनना', उदाहरणार्थ : 'गाना गाया जाता है', 'तारे रात में दिखाई पड़ते हैं', 'उल्लू को दिन में कुछ भी दिखाई नहीं देता', और 'मुझसे ये सब बातें कहते नहीं बनतीं' (३३,२८-२९)। इसके अलावा, चतुर्भुज सहाय की राय में वाच्य को भूतकाल के कृदन्त के रूप में सकर्मक क्रियाएँ व्यक्त करती हैं, उदाहरणार्थ : 'उसने किताब पढ़ी'—कर्मवाच्य (३३,२९)। 'जाना' क्रिया कर्मवाच्य के अलावा कर्तृगामी कर्मवाच्य भी बनाती है—'पढ़ा नहीं जाता'।

निबन्ध का तीसरा अध्याय एक ही धातु का अलग-अलग प्रसंगों में प्रयोग बताता है अर्थात काल-रूपों में और साथ-साथ अर्थ तथा वाच्य के रूपों में भी सरल तथा विश्लेषणात्मक क्रियाओं की विभिन्न संयोजन-क्षमता को बताता है (३३,३१-४२)।

चौथा अध्याय प्रत्ययों तथा विशेषक (रंजक) क्रियाओं का पूर्ण समुच्चय है जो कि विभिन्न विभक्ति वाली धातुओं के साथ मिल सकते हैं (३३,४४-४७)।

कृति का पाँचवाँ तथा अन्तिम अध्याय हिन्दी में संयुक्त क्रियाओं का वर्णन करता है जो बाँटी जा सकती हैं (१) क्रियाएँ जो मुख्य क्रिया के साथ विभिन्न रंजक क्रियाओं के जोड़ने से बनती हैं और (२) क्रियाएँ जो नामिक घटक के साथ क्रिया लगाने से बनती हैं। लेखक के अनुसार संयुक्त क्रियाओं तथा संरचना में उनसे मिलते-जुलते क्रिया-नामिक वाक्यांशों के बीच अन्तर जानना चाहिए (३३, ४८-६६, ६५-६८)।

चतुर्भुज सहाय ने उन विशेपक क्रियाओं की संख्या जो कि धातु क्रिया से मिल सकती हैं, चार में सीमित की है, उदाहरणार्थ :

| १ | २ | ३ | ४ | ५ |
|---|---|---|---|---|
| चलता | है | | | |
| चलता | रहता | है | | |
| चला | दिया | करता | है | |
| चला | दिया | जा | सकता | है |

इस सम्बन्ध में चतुर्भुज सहाय ने विशेपक क्रियाओं को चार चरणों में बाँटा है। दूसरे चरण में (मुख्य क्रिया के बाद) २२ क्रियाओं का प्रयोग हो सकता है (३३,५०), तीसरे चरण में—१० क्रियाओं (३३,५१), चौथे चरण में सिर्फ़ ३ क्रियाओं (३३,५२) तथा पाँचवें में सिर्फ़ २ क्रियाओं ('होना' तथा 'था' क्रियाओं के सभी रूप) (३३,५२)।

चतुर्भुज सहाय की कृति के संक्षिप्त वर्णन से जैसा कि प्रतीत होता है, यह कृति किसी भी शोधकर्ता के लिए निस्सन्देह रुचिकर है क्योंकि उसमें विशिष्ट तथा मौलिक सामग्री है। किसी भी व्यापार को पूर्ण, अपूर्ण तथा अभ्यास में बाँटना ध्यान देने लायक है जो कि हिन्दी में क्रिया के रूपों की विशेपता तथा स्तर को भली-भाँति व्यक्त करता है। काल-रूपों को तथा अप्रत्यक्ष अर्थों के रूपों के बीच भेद स्थापित करना भी बहुत महत्त्वपूर्ण है जो कि कभी भी एक-दूसरे से मिलते नहीं। लेखक द्वारा दिये आँकड़े भी बहुत महत्त्वपूर्ण तथ्यपूर्ण सामग्री हैं। उस अध्याय में जो कि संयुक्त क्रियाओं से सम्बन्धित है कई-एक टिप्पणियाँ देख सकते हैं।

फिर भी चतुर्भुज सहाय की कृति में हमारे दृष्टिकोण से गम्भीर त्रुटियाँ भी हैं। सबसे पहले चतुर्भुज सहाय क्रियार्थक प्रत्ययों की सीमा को गलत ढंग से बढ़ाते हैं, जिनमें स्वतंत्र शब्द भी शामिल हैं। 'चलता है' रूप हर हालत में विश्लेषणात्मक है, न कि संश्लेषणात्मक क्योंकि यहाँ घटक एक-दूसरे से अलग स्थित हो सकते हैं। दूसरे, चतुर्भुज सहाय ने कृत्रिम रूप से हिन्दी भाषा के काल-रूपों की संख्या को सीमित किया है, फिर उसमें सामान्य भूत को छोड़ ही दिया गया है जिसके बारे में कहा गया कि वह अपवाद है। तीसरे, कृति में अप्रत्यक्ष अर्थों का रूपप्रक्रियात्मक वर्णन वास्तविक रूप में वाक्य की रूपावली द्वारा बदला गया जिसमें वाक्यात्मक पद्धति को अर्थों को भिन्न करने का आधार माना गया है। इसका अर्थ यह हुआ कि एक ही वृत्ति में सब अप्रत्यक्ष वृत्तियों के रूप में आ सकते हैं सिर्फ़ इस आधार पर कि उनका संकेतवाचक वाक्य में प्रयोग होता है, बस 'यदि···तो' लगाने की ही बात है। चौथी बात, उनके द्वारा प्रस्तावित वाच्य की रचना के प्रकार किसी भी हालात में आलोचना हुए बिना नहीं रह सकते, जहाँ कर्मवाच्य के रूपों तथा

कर्तृवाच्य के विश्लेषणात्मक रूपों को वे परिभ्रमित करते हैं। पाँचवीं बात विभिन्न क्रियार्थक रूपों की रचना जिसे चतुर्भुज सहाय ने लिखा है अर्थविज्ञान से पूरी तरह से अलग हुई है। यही कारण है कि रूप को उन्होंने प्रथम महत्त्व दिया है, लेकिन वह किसलिए है, उसके निकास का स्रोत क्या है, उसके बारे में उन्होंने लगभग पर्दा ही डाले रखा।

जयकृष्ण विद्यालंकार, चतुर्भुज सहाय के विपरीत अपने निबन्ध 'हिन्दी क्रिया में रचना' में क्रिया विशेषकों की संख्या छह तक पहुँचाते हैं और इस तरह वे सप्तचरण की क्रिया-संरचना को देखते हैं, उदाहरणार्थ : लिखता चला जा रहा बताया जाता है (४१,९९)।

जयकृष्ण विद्यालंकार समझते हैं कि हिन्दी की क्रिया के ऊपर शोधकार्य क्रिया के तीन स्तरों के आधार पर करना चाहिए : (१) धातु स्तर या कोशीय स्तर, (२) पद स्तर और (३) वाक्यांश स्तर (४१,१००)।

जयकृष्ण विद्यालंकार धातुओं या कोशीय क्रियाओं के आठ प्रकारों में भिन्नता बताते हैं : (१) साधारण क्रियार्थक धातुएँ, जहाँ वे सब क्रियाएँ आ सकती हैं जो कि अन्य निम्नलिखित वर्गों में नहीं आतीं, उदाहरणार्थ : 'पढ़ना', 'लिखना', 'हँसना'; (२) अपर्याप्त क्रियार्थक धातुएँ जिनकी पूर्ण रूपतालिका नहीं होती। यहाँ पर सिर्फ़ दो क्रियाएँ 'है' तथा 'था' आती हैं। 'है' तथा 'होना' क्रियाओं के बीच अन्तर जानना चाहिए क्योंकि 'होना' साधारण क्रियार्थक धातुओं में आती है ; (३) प्रेरणार्थक क्रियार्थक धातुएँ ; (४) समस्त धातुएँ जो कि बन सकती हैं : (अ) 'और' संयोजक को हटाने से, जैसे : 'रोगी अब उठ-बैठ लेता है' ; (आ) 'के लिए' परसर्ग हटाने से, उदाहरणार्थ : 'मुन्ना खेलने गया है' ; (ई) 'हुआ' हटाने से, जैसे : 'लड़की रोती (हुई) जा रही थी' (जयकृष्ण विद्यालंकार की राय में यहाँ 'जाना' मुख्य क्रिया है क्योंकि उसका प्रयोग अपने मुख्य अर्थ में हो रहा है)। 'जाना' के इस प्रयोग तथा 'जाना' के उस प्रयोग में जब यह क्रिया-विशेषक होता है, भिन्नता जाननी चाहिए, उदाहरणार्थ : 'वह तो मना करने पर भी हँसता ही जा रहा था' (४१,१०१) ; (ई) 'कर' परप्रत्यय को हटाने से, उदाहरणार्थ : 'तुम यह पत्र पढ़ देखो' ; (५) संयुक्त क्रियार्थक धातुएँ, जो कि संज्ञा या विशेषण के साथ 'करना' लगाने से बनती हैं ; (६) क्रियार्थक धातुएँ जो दो धातुओं से बनती हैं, जैसे : 'फड़फड़ाना', 'जगमगाना' ; (७) पुनरुक्त क्रियार्थक धातुएँ : 'देखना-भालना', 'करना-धरना' ; (८) नामधातुज क्रियार्थक धातुएँ : 'स्वीकारना', 'फ़िल्माना' (४१,१००-१०२)।

पद स्तर पर क्रियार्थक रूपों के चार प्रकार हैं—(१) अविकारी रूप, उदाहरणार्थ : 'उठ सकना' ; (२) लिंग तथा वचन के अनुसार विकारी रूप, जैसे : (अ) रूप जिसमें 'ना' धातु से जुड़ता है (क्रियार्थक कृदन्त) ; (आ) रूप

जिसमें 'ता' धातु से जुड़ता है (वर्तमान काल का कृदन्त) ; (उ) रूप जिसमें 'आ' धातु से जुड़ता है (भूतकाल का कृदन्त) और (ई) 'था' वाला रूप ; (३) पुरुष तथा वचन के अनुसार विकारी रूप जिनमें आज्ञार्थ, संभावनार्थ के रूप तथा 'है' क्रिया के रूप शामिल हैं (४१,१०२-१०३)।

वाक्यांश के स्तर पर वाक्य विधेय में दो प्रकार की क्रिया के साथ आता है—सरल क्रिया तथा संयुक्त क्रिया, जो कि कई-एक क्रियार्थक शब्द-रूपों से बन सकती है (४१,१०३)। हिन्दी की समस्त क्रियाएँ 'सकना' क्रिया के अलावा स्वतन्त्र रूप से विधेय में आ सकती हैं, इसीलिए उनको 'मुख्य क्रिया' कह सकते हैं। दूसरी तरफ़ संयुक्त क्रिया में पहली क्रिया मुख्य क्रिया की हैसियत से आती है, बाकी प्रयुक्त क्रियाएँ सहायक क्रियाओं की हैसियत से आती हैं। मुख्य क्रिया तथा सहायक क्रिया के बीच निश्चित सम्बन्ध होता है। पहली बात तो यह है कि मुख्य क्रिया का हिन्दी में बिना किसी सहायक क्रिया के भी प्रयोग हो सकता है। इसीलिए उसका प्रयोग आवश्यक है तथा सहायक क्रिया का प्रयोग ऐच्छिक होता है। दूसरी बात यह है कि सहायक क्रिया हमेशा मुख्य क्रिया के बाद आती है, अर्थात् मुख्य क्रिया हमेशा पूर्वस्थित होती है। तीसरी बात यह है कि मुख्य क्रिया हमेशा अपने कोशीय अर्थ में आती है (सिवाय जब उसका प्रयोग पदबन्ध मुहावरेदार संरचना में होता है), जबकि सहायक क्रिया कोशीय अर्थ के विपरीत प्रयोग में आती है, और प्रयोग के आधार पर दूसरे शुद्ध व्याकरणिक अर्थ अपना लेती है (४१,१०४)। सहायक क्रियाओं को रूप में समान रचनाओं में आने वाली मुख्य क्रियाओं से भिन्न करना चाहिए, उदाहरणार्थ : 'सरला क्रुद्ध होकर कुर्सी पर जा बैठी और न जाने क्या-क्या लिख बैठी'। यहाँ 'जा बैठी' समस्त क्रियार्थक धातु है जहाँ 'कर' परप्रत्यय को हटा दिया गया है और दोनों क्रियाएँ अपने कोशीय अर्थों में आ रही हैं। 'लिख बैठी' एक संयुक्त क्रिया है जहाँ 'बैठना' सहायक क्रिया की हैसियत से आ रही है (४१,१०४-१०५)। जयकृष्ण विद्यालंकार तथा चतुर्भुज सहाय इसी बात पर भिन्न हैं। चतुर्भुज सहाय 'जा बैठना' जैसी रचना को संयुक्त क्रिया बताते हैं (३३,५३)।

जयकृष्ण विद्यालंकार ने हिन्दी में २९ सहायक क्रियाओं के ऊपर विचार किया। मुख्य क्रिया के प्रति जिस स्थान पर सहायक क्रियाएँ हैं उसके आधार पर उन्होंने सहायक क्रियाओं को यों बाँटा : (१) रंजक क्रियाएँ ; (२) वाच्य के चिह्नक 'जा' और 'हों' ; (३) उपांत्य क्रियाएँ : 'सकना', 'चुका', 'रहा', 'चाहिए' तथा (४) चरम क्रियाएँ : 'है' और 'था' (४१,१०५)। सहायक क्रियाओं का ऐसा अधिक्रम व्यावहारिक तौर पर वही है जो चतुर्भुज सहाय ने बताया है (देखिए ३३,४९)। ये २९ सहायक क्रियाएँ क्रियार्थक धातुओं के सभी आठों प्रकारों से मिलती हैं और इस तरह वे दो प्रकार की विधेयवाचक रचनाएँ बनाती हैं : (१)

सरल विधेय (सामान्य क्रिया संरचना) तथा (२) जटिल विधेय (संश्लिष्ट क्रिया संरचना)। सामान्य क्रिया संरचना में एक मुख्य क्रिया आती है तथा संश्लिष्ट क्रिया संरचना में दो मुख्य क्रियाएँ आती हैं। सामान्य क्रिया संरचना बाँटी जा सकती है : (१) विस्तृत और (२) अविस्तृत। अविस्तृत विधेय एक क्रियापद से बना होता है और विस्तृत विधेय दो या ज़्यादा पद-रूपों से बनता है जिनमें से सिर्फ़ एक ही मुख्य क्रिया से सम्बन्ध रखता है। विस्तृत विधेय भी दो प्रकार का होता है : (१) ऐच्छिक विस्तार का तथा (२) आवश्यक विस्तार का (४१,१०५)। ऐच्छिक विस्तार का विधेय कृदन्तों के तथा तुमर्थ के रूपों (अप्रत्यक्ष रूपों को भी मिलाकर) से बनता है। आवश्यक विस्तार का विधेय विभिन्न प्रकार के रंजक क्रियाओं से बना होता है (४१,१०६-११२)।

संयुक्त विधेय जो कि दो स्वतन्त्र क्रियाओं से बनता है, उनमें से आम तौर पर एक क्रिया 'सकना' की होती है और 'उक्ति' की तथाकथित क्रियाएँ : 'कहना', 'सुनना', 'समझना' आदि, उदाहरणार्थ : 'वह घर चला गया हो सकता है', 'पुलिस ने डाकुओं का सफ़ाया कर दिया बताया जाता है'। ऐसी रचनाएँ आसानी से मिश्र वाक्यों में बदली जा सकती हैं, उदाहरणार्थ : 'हो सकता है कि वह घर चला गया हो' (४१, ११३)।

जयकृष्ण विद्यालंकार का लेख हिन्दी की क्रिया पद्धति के अध्ययन के लिए एक बड़ा और गम्भीर योगदान है। हमारी राय में, उनके लेख में कोई खास त्रुटि नहीं है। हो सकता है कि हम लेखक की क्रिया धातुओं की सारी बातों से सहमत न हों, मिसाल के तौर पर [illegible] 'सम्पन्न धातु क्रिया', जैसे : 'खेलने गया' और 'रोती जा रही थी', लेकिन इसके अलावा लेख निष्कलंक है।

जगदेव सिंह का लेख 'हिन्दी क्रिया पद', जो कि उल्लिखित कृतियों से कुछ साल पहले ही छप गया था, एक तरफ़ से हिन्दी भाषा की संयुक्त क्रियाओं को वर्णनात्मक व्याकरण की परिभाषाओं का सहारा लेते हुए अच्छी तरह से समझने का और दूसरी तरफ़ उनका काल-रूपों में प्रयोग दिखाने का एक प्रयत्न था।

जगदेव सिंह ने हिन्दी की क्रिया में निम्नलिखित व्याकरणिक श्रेणियों के बीच भिन्नता बताई : चार पुरुष (प्रथम, मध्यम, अन्य तथा मान्य), दो काल (वर्तमान और भूतकाल) और क्रिया पदरूपों की रचना के लिए ६ रूपात्मक प्रकार (४०, २७)। क्रिया पदरूपों की रचना के लिए ये ६ रूपात्मक प्रकार जब 'है' क्रिया के रूपों से मिलते हैं तो हिन्दी में विधेय को बनाने में हिस्सा लेते हैं।

जगदेव सिंह ने हिन्दी में समस्त क्रियार्थक धातुओं को सरल तथा संयुक्त धातुओं में बाँटा। सरल धातुएँ एक पदरूप के बराबर हैं जबकि संयुक्त धातुएँ दो या ज़्यादा पदरूपों से बनती हैं, उदाहरणार्थ : 'पढ़ते रहा करो' (४०,२९)। संयुक्त धातुएँ, जगदेव सिंह की राय में, मुख्य तथा रंजक क्रिया से बनती हैं, रंजक क्रियाएँ

तब अपने कोशीय अर्थ को खो बैठती हैं और शुद्ध व्याकरणिक फ़ार्मेन्ट की हैसियत से आती हैं। जगदेव सिंह ने हिन्दी की २५ रंजक क्रियाएँ बतायीं (४०, २६)। जब बहुत-सी रंजक क्रियाएँ एक साथ आती हैं, जैसे कि 'पढ़ लिया जाता रहा है' वाक्य में, तो मुख्य क्रिया सभी रंजक क्रियाओं से सम्बन्ध नहीं रखती, बल्कि सबसे निकट क्रिया से सम्बन्धित है। बाकी रंजक क्रियाएँ भी सिर्फ़ अपने से पहली और बाद की क्रिया से ही सम्बन्ध रखती हैं, अर्थात् 'पढ़' रूप सिर्फ़ 'ले' रूप से सम्बन्धित है, वह प्रत्यक्ष 'या' को जोड़ता है; 'लिया' रूप 'जा' रूप को जोड़ता है, वह 'ता' प्रत्यय को जोड़ता है; 'जाता' रूप 'रह' रूप को जोड़ता है, वह प्रत्यय 'या' को जोड़ता है और इस तरह हर स्थिति में एक नयी संयुक्त धातु बनती है : 'पढ़ ले', 'पढ़ लिया जा', 'पढ़ लिया जाता रह'। 'है' रूप के साथ 'रहा' रूप समस्त संयुक्त धातु को काल का वर्णन प्रदान करता है (४०, ३०-३१)। सब शब्दरूप जो संयुक्त धातु में आते हैं उन्हें घटकांश कहते हैं। इन रूपों की शब्दार्थ अनुकूलता तथा प्रत्यय-समानाधिकरण की आवश्यकता होती है।

जगदेव सिंह संयुक्त क्रियाओं को शब्दार्थ वर्गों में बाँटने की वर्तमान परम्परा के खिलाफ़ हैं जब ये क्रियाएँ अवधारक, संभाव्य, समापक, पौन: पुन्य, आरंभमाण आदि में बाँटी जाती हैं। वह सोचते हैं कि संयुक्त क्रियाओं को उनकी रूप-रचना के आधार पर बाँटना चाहिए अर्थात् 'पढ़ने लग जाना चाहता रहा करता होगा' जैसी संयुक्त क्रिया को निम्नलिखित तरह से बाँटना चाहिए : पढ़ + ने लग + जा + ना चाह + ता रह + आ कर + ता हो (४०, ३६-३७)। जगदेव सिंह के अनुसार ऐसी क्रियार्थक रचना का अर्थ, सिर्फ़ प्रसंग में से निकाल सकते हैं, वाक्य के विश्लेषण से निकाल सकते हैं, जहाँ संयुक्त क्रियाओं के विभिन्न शब्दार्थक तथा स्थानाश्रित परिवर्तन हो सकते हैं।

जैसा कि जगदेव सिंह के लेख से पता चलता है, उन्होंने हिन्दी की क्रियार्थक पद्धति का व्यापक वर्णन न कर व्यावहारिक तौर पर सिर्फ़ क्रियार्थक रचनाओं के बारे में लिखा। इस अर्थ में यह लेख अत्यन्त रुचिकर है क्योंकि हिन्दी भाषा की संयुक्त क्रियाओं की जटिल समस्या को नये ढंग से अध्ययन किया। संयुक्त क्रियार्थक धातु की संकल्पना भी रुचिकर है जो कि सरल धातु का विस्तार है। लेख की त्रुटि यह है कि संयुक्त क्रियाओं के शब्दार्थ पहलू की उपेक्षा की गयी, जो कि, निस्सन्देह, मौजूद है क्योंकि बहुघटकीय संयुक्त क्रियाएँ जो चार-सात घटकों से बनी हैं, एक आम घटना नहीं हैं। बहुत अकसर शब्दार्थ दृष्टिकोण से अत्यन्त सरल रचनाएँ आती हैं जिनका वर्गीकरण होता ही है।

एक समय था जब हिन्दी साहित्य में आर०एन० वले की कृति की बहुत चर्चा थी। कृति का नाम था 'भारतीय आर्यभाषा में क्रिया समास-रचना' (२२७) जो सन् १९४८ में प्रकाशित हुई। आर०एन० वले ने अपनी कृति में क्रियार्थक समास-

रचनाओं का शब्दार्थक वर्गीकरण करने का प्रयास किया, जिन्हें उन्होंने १६ विभिन्न वर्गों में बाँटा जो अपनी प्रकृति तथा संरचना के अनुसार विभिन्न क्रियार्थक रचनाओं को अपना लेते हैं अर्थात् क्रियाप्रधान शब्द-समुदायों (ऐच्छिक तथा उद्देश्यवाचक क्रियाओं) से लेकर विभिन्न रूपप्रक्रियात्मक तथा रूपस्वन-प्रक्रियात्मक रचनाओं (कर्मवाच्य तथा प्रेरणार्थक क्रियाओं) तक (२२७, २)।

क्रिया के ऊपर लिखी गयी दूसरी कृतियाँ कुछ खास प्रश्नों का अध्ययन करती हैं। इस तरह चतुर्भुज सहाय का लेख 'हिन्दी क्रिया की काल रचना' (३४, ४५-५०) तथा जयकृष्ण विद्यालंकार का लेख 'हिन्दी की क्रिया-पदों की रचना' (४२, २०-२५), इन लेखकों की ऊपर अध्ययन की गयी कृतियों के संक्षिप्त रूप हैं। ज्ञानशंकर पांडेय का लेख 'हिन्दी की 'बनना' क्रिया' (४५, ४०-४३) और श्री प्रकाश कुर्ले का लेख 'चाहिए' (११७, ५०, ५४) हिन्दी की दो उल्लिखित क्रियाओं की विशेषताओं का वर्णन करते हैं, एक ('बनना') को शब्दार्थक तौर पर और दूसरे का वर्गीकरण के आधार पर, जिसके अनुसार 'चाहिए' 'अर्द्ध-सहायक अर्द्ध-अर्थपूर्ण क्रिया' है (११७, ५४)।

## सोवियत लेखकों की कृतियाँ

वास्तव में, अकादमीशियन आ. पे. बारान्निकोव सोवियत संघ में आधुनिक हिन्दी भाषाओं के अध्ययन के संस्थापक थे। उन्होंने पहला हिन्दी व्याकरण लिखा—'हिन्दुस्तानी (उर्दू और हिन्दी)', जो एक तरफ़ परम्परागत सर्वभाषा व्याकरण के आधार पर और दूसरी तरफ़ क्लासिकी वाङ्मीमांसा के आधार पर लिखा है। दूसरी बात क्रियार्थक काल रूपों का वर्णन करते समय अधिक स्पष्ट प्रकट होती है। श्री बारान्निकोव ने सोवियत संघ में पहली बार हिन्दी भाषा के अध्ययन में क्रियार्थक पक्ष की संकल्पना के बारे में लिखा, जो कि हिन्दी भाषा में विभिन्न क्रियार्थक रचनाओं द्वारा व्यक्त होता था जिनमें पहले स्थान पर कृदन्त रहे हैं। उन्होंने संयुक्त क्रियाओं की श्रेणी से तुमर्थ क्रिया तथा अधिकारी तुमर्थ (सुपाइन) को अलग किया जो 'लगना', 'देना', 'पाना', 'जाना', 'आना', 'चलना', 'होना', 'पड़ना' तथा वृत्तिवाचक क्रिया 'चाहिए' के साथ आते हैं और उनको वाक्य-विन्यास में सम्मिलित किया जहाँ तुमर्थ उल्लिखित क्रियाओं के साथ कर्म की हैसियत से आता है।

आ. पे. बारान्निकोव के व्याकरण के अन्य संस्करणों में कुछ आधुनिक चीजें आयीं। जैसे 'निरपेक्षिक क्रिया' की जगह अधिक समझ में आने वाली संकलपना 'क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त' आयी। क्रिया की पद्धति में से 'क्रियाविशेषणात्मक

कृदन्त' को निकाला गया और 'संयुक्त रचनाओं की जगह जिनमें कृदन्त पहले स्थान पर आता है' ऐसी क्रियाएँ आयीं जो 'असंभवता को व्यक्त करती हैं', जैसे : 'हमसे चला न गया'।

त. ई. कातेनीना की कृति 'हिन्दी भाषा' में 'संतत', 'पूर्णतात्कालिक' तथा 'कर्मवाच्य' कृदन्तों की संकल्पनाएँ दी गयी हैं। इनको संयुक्त कृदन्त बताया गया है। त. ई. कातेनीना ने वर्तमान काल के रूपों का विस्तार किया, और उनको 'वर्तमान आभ्यासिक' तथा 'वर्तमान संतत' में बाँटा। 'भूत संतत काल' को भूत-काल के रूपों की पद्धति में लिया गया। इस प्रकार संयुक्त क्रियाओं की पद्धति से 'संतत' क्रियाओं को निकाल दिया गया।

लेकिन दुर्भाग्य से त. ई. कातेनीना की कृति त्रुटियों से स्वतंत्र नहीं रही जो कि हिन्दी भाषा का परम्परागत वर्णन करने के लिए स्वाभाविक है, यह बात विशेषकर हिन्दी भाषा की क्रिया-पद्धति के लिए लागू होती है।

पहली बात यह है कि 'हिन्दी भाषा' में जिरनडिव (क्रियार्थक विशेषण) की कोटि सुरक्षित है, जिसका, ऐसा लगता है, जोन प्लाट्स ने सूत्रपात किया (२०८, ३२७-३२८) और जो सोवियत संघ में हिन्दी भाषा के अध्ययन के लिए आ. पे. बारान्निकोव ने लिया। श्रीमती कातेनीना के अनुसार जिरनडिव को क्रियार्थक विशेषण कहा गया, जो उस व्यापार की आवश्यकता, औचित्यता व्यक्त करता है जो क्रिया की धातु द्वारा व्यक्त होता है। जिरनडिव के अन्तर्गत उसके प्रयोग की ऐसी स्थितियाँ बताई गयीं जब वह 'आवश्यकता' तथा 'उपयुक्तता' व्यक्त नहीं करता, उदाहरणार्थ : 'उसने किताब पढ़नी शुरू की'। तुमर्थ का विशेषण के तौर पर प्रयोग, अर्थात् जब वह संज्ञा के साथ विकारी विशेषण के तौर पर अन्वित होता है, यह सब एस. एच. केलॉग ने भी लिखा है, लेकिन तब उन्होंने तुमर्थ में जिरनडिव के 'आवश्यकता' और 'उपयुक्तता' के चिह्नों को नहीं देखा (१८७, ४४३-४४४), हालांकि उन्होंने तुमर्थ का ऐसा प्रयोग भविष्यत् कर्मवाच्य कृदन्त से निकाल दिया, जिसके आधार पर, एस. एच. केलॉग की राय में, तुमर्थ का विकास हुआ (१८७, ४४४)।

दूसरी बात यह है कि 'कार्यकर्ता' की संकल्पना का नाम सुरक्षित है जो कि विशेषण के तौर पर 'अपूर्णतावाची कृदन्त के अनुकूल होता है', और 'धातु के रूप में प्रस्तुत किसी व्यापार को करने की तत्परता व्यक्त करते हुए वह...भविष्यत् काल के कृदन्त या इच्छाबोधक कृदन्त की हैसियत से आता है'। यहाँ बात उस कृदन्त की है जिसके साथ 'वाला' रूपिम आता है जिसके कर्तृवाच्य तथा कर्म-वाच्य रूप हैं, उदाहरणार्थ : 'भेजी जाने वाली लड़कियाँ' (९६,९०)। विपरीत स्थिति में 'कर्मवाच्य कार्यकर्ता' के बारे में कहना ही पड़ेगा जो शायद ही सम्भव है। कोई भी कृदन्त नामिकीकृत रूप में हो सकता है तब 'पढ़ने वाला' पुलिंग में

होगा और 'पढ़ने वाली' स्त्रीलिंग में; नहीं तो पुलिंग के तथा स्त्रीलिंग के कार्यकर्ता का नाम बताना पड़ता। 'वाला' रूपिम के साथ कृदन्त द्रव्य के नित्यताबोधक प्रक्रियात्मक लक्षण को बताने के अलावा वर्तमान, भूत या भविष्यत् काल में व्यापार के करने के लिए इच्छा को भी व्यक्त करता है। इस कृदन्त की ये दोनों विशेषताएं कृदन्त के विशेषणवाचक तथा विधेयवाचक प्रकार्य के लिए स्वाभाविक होती हैं।

तीसरी बात यह है कि 'संदिग्ध वृत्ति' को अलग करना और उसे 'व्यापार के करने की अधिकतम संभावना' का विशेष अर्थ देना उन बह्वर्थक रूपों के अर्थों को संकुचित कर देता है जो कि अर्थों की वास्तविक छाया भी बता सकते है।

चौथी बात यह है कि 'हिन्दी भाषा' में 'प्रकार' की परिभाषा बिलकुल स्पष्ट नहीं है। श्रीमती कातेनीना कृदन्तों को 'अपूर्णतावाची प्रकार' और 'पूर्णतावाची प्रकार' के कृदन्तों में बाँटती हैं, संयुक्त क्रियाओं में 'संतत' तथा 'संतत-घटमान प्रकार' के कृदन्तों पर विचार करती हैं 'पौन-पुनिक प्रकार', जो आ. पे. बारान्निकोव ने बताया, नहीं है, उसकी जगह वे 'पौन-पुनिक क्रियाएँ' लेती हैं। इस तरह प्रकार की श्रेणी गोल-मटोल तथा रूपप्रक्रियात्मक तौर पर अनिश्चित मालूम पड़ता है।

पाँचवीं बात यह है कि अवधारक क्रियाओं में जिनमें 'लेना' तथा 'देना' रंजक क्रियाएँ आती हैं, वाच्य के अर्थ भी मिलते हैं, लेकिन यह नहीं बताया गया कि किन वाच्यों की बात है।

छठी बात यह है कि 'नामबोधक संयुक्त क्रियाओं' की श्रेणी सुरक्षित है जिसमें विभिन्न क्रियार्थक रचनाएँ आती हैं जिनके रूपप्रक्रियात्मक लक्षण अलग-अलग होते हैं—विश्लेषणात्मक क्रियाओं से लेकर, जिनका पहला घटक रूपात्मक स्वतंत्रता खो बैठा है, उदाहरणार्थ : 'स्वीकार करना', नाम-क्रिया शब्द-समुदाओं तक, जिनमें संज्ञा अपने रूपप्रक्रियात्मक गुण को पूर्णतः सुरक्षित रखती है, उदाहरणार्थ : 'तैयार करना', 'ख़रीद करना'।

'उर्दू भाषा के व्याकरण की रूपरेखा' तथा 'उर्दू भाषा' नाम की कृतियाँ जिन्हें ज. म. दिमशित्स ने लिखा है और जो त. ई. कातेनीना की कृतियों के साथ लगभग एक ही समय पर प्रकाशित हुई, प्रायः सभी मुद्दों पर उन त्रुटियों से स्वतन्त्र हैं जो श्रीमती कातेनीना की कृति में बतायी गयी थीं।

'कार्यकर्ता' के स्थान पर ज. म. दिमशित्स 'वाला परप्रत्यय समेत कृदन्त' का नाम प्रस्तुत करते हैं और कृदन्त की पद्धति से पूर्णतावाची कृदन्त हटाते हैं। वह सब वास्तविक कृदन्तों कर्मवाच्य कृदन्तों के विरोध में रखते हैं। ज. म. दिमशित्स पहले आदमी हैं जो सोवियत संघ में हिन्दी के अध्ययन में हिन्दी भाषा में प्रकार के अस्तित्व को न केवल घोषित करते हैं बल्कि उसका विशदीकरण करने का

प्रयत्न करते हैं। इसलिए वह व्याकरण में से 'संयुक्त क्रिया' के खण्ड को निकाल देते हैं और अवधारक क्रियाओं को क्रियार्थक रचनाओं के खण्ड में ले जाते हैं और संभाव्य तथा पूर्णतावाची क्रियाओं को स्वतन्त्र वाक्यात्मक क्रियाप्रधान शब्द-समुदायों में ले जाते हैं, जिनमें 'उर्दू भाषा की रूपरेखा' की क्रियार्थक रचनाएँ भी शामिल हैं जो क्रियाप्रधान शब्द-समुदाय हैं जिनकी मुख्य क्रिया सरल कृदन्त तथा अप्रत्यक्ष तुमर्थ के रूप में आती है। ज. म. दिमशित्स हिन्दी में चार प्राकारिक अर्थ भिन्न करते हैं: (१) संतत प्रकार; (२) नित्यताबोधक प्रकार; (३) नित्यता घटमानबोधक प्रकार तथा (४) पौनः पुनिक प्रकार। इस तरह त. ई. कातेनीना के विपरीत वह संतत क्रियाओं को प्राकारिक अर्थों में ले जाते हैं न की काल की रचनाओं में।

ज. म. दिमशित्स ने हिन्दी व्याकरण पर की खोज अपनी पुस्तक 'हिन्दी व्याकरण की रूपरेखा' में जारी रखी, जो भारतवर्ष में हिन्दी भाषा में प्रकाशित हुई थी (४६)। 'उर्दू भाषा' की संरचना को सुरक्षित रखते हुए, उन्होंने व्याकरण की रूपरेखा में कई-एक नयी चीज़ें प्रस्तुत कीं, इस प्रकार उन्होंने पहली कृतियों के कई खण्डों को बढ़ाया।

इस तरह निश्चयार्थ के ८ काल-रूपों के स्थान पर, जिनका उन्होंने पहली कृतियों में अध्ययन किया था, ज. म. दिमशित्स १५ काल-रूपों का वर्णन करते हैं, चार वर्तमान काल में, चार भविष्यत् काल में तथा ७ भूतकाल में। ये हैं: (१) सामान्य वर्तमान; (२) जटिल वर्तमान; (३) सांतत्यबोधक वर्तमान तथा (४) जटिल सांतत्यबोधक वर्तमान ('पढ़ता है, पढ़ता होता है, पढ़ रहा है, पढ़ रहा होता है'); (५) सामान्य अपूर्ण भूतकाल ('पढ़ता था); (६) जटिल अपूर्ण भूतकाल ('पढ़ता होता था'); (७) सांतत्यबोधक भूतकाल ('पढ़ रहा था'); (८) जटिल सांतत्यबोधक भूतकाल ('पढ़ रहा होता था'); (९) सामान्य भूतकाल ('पढ़ा'); (१०) आसन्न भूतकाल ('पढ़ा है'); (११) पूर्ण भूतकाल ('पढ़ा था'); (१२) प्रथम भविष्यत् काल ('पढ़ेगा'); (१३) द्वितीय भविष्यत् काल ('पढ़ता होगा'); (१४) तृतीय भविष्यत् काल ('पढ़ा होगा'); (१५) सांतत्य-बोधक भविष्यत् काल ('पढ़ रहा होगा') (४६,१२७-१५६)। इसके अलावा संतत रूपों में सम्भावनार्थ (४६,१६७) तथा संकेतार्थ (४६,१७३) भी जोड़े गए। क्रिया की पद्धति में दशा की श्रेणी भी प्रस्तुत की गयी जो कि भूतकाल के कृदन्तों तथा 'पड़ना', 'रहना' और 'होना' क्रियाओं के संयोग के आधार पर बनती है, या अप्रत्यक्ष कृदन्त के रूप के समान होती है (४६,९४-९८)।

क्रिया के ऊपर के अध्याय का काफ़ी विस्तार किया गया, विशेषकर उन खण्डों को जिनका सम्बन्ध कृदन्तों तथा क्रिया के काल-रूपों एवं सभी अप्रत्यक्ष अर्थों के रूपों की रचना तथा प्रयोग से है।

क्रिया के ऊपर लिखी गयी दूसरी कृतियों में से, निस्सन्देह, व. प. लिपेरोव्स्की की पुस्तक 'आधुनिक साहित्यिक हिन्दी में वृत्ति की श्रेणी' तथा उनके द्वारा हिन्दी में वृत्ति के ऊपर लिखे अनेक लेख काफ़ी महत्त्वपूर्ण हैं जो सोवियत संघ तथा भारत दोनों जगह प्रकाशित हुए (देखिए १०१ ; १०२; १०३)। व. प. लिपेरोव्स्की ने अप्रत्यक्ष अर्थों का एवं निश्चयार्थ के कई असामान्य रूपों का भी व्यापक वर्णन किया है।

जैसा कि मालूम है, हिन्दी भाषा में कृदन्त क्रियार्थक श्रेणियों में से एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण श्रेणी है, क्योंकि वह न केवल विभिन्न काल-रूपों के बनाने के काम आती है, बल्कि विभिन्न प्रकार की रचनाओं का भी अंग होती है।

इसलिए, कृदन्त कई बार सोवियत संघ के हिन्दीविदों के लिए खोज का विषय बना। हमने आम कृतियों में कृदन्तों की व्याख्या का वर्णन किया। अब हम यह उचित समझते हैं कि कृदन्त पर लिखी दो विशेष कृतियों के बारे में बताएँ। एक तो ए. ए. दवीदोवा द्वारा लिखा गया 'उर्दू भाषा में संयुक्त कृदन्तों के मुख्य वाक्यात्मक प्रकार्य' और दूसरा ज. म. दिमशित्स का लेख 'हिन्दी भाषा में सरल कृदन्तों के स्वतन्त्र प्रयोग की विशेषताएँ' हैं। दोनों लेख ही विस्तृत विश्लेषण के आधार पर कृदन्तों के वाक्यात्मक प्रकार्यों पर रोशनी डालते हैं जब वे विशेषक की हैसियत से, विधेयवाचक विशेषक की हैसियत से, विधेय के विधेयवाचक घटक के रूप में, क्रियाविशेषण की हैसियत से और गौण विधेय की हैसियत से (या कर्म के विधेयवाचक विशेषण के रूप में) आते हैं।

हिन्दी भाषा की रूपप्रक्रिया पर लिखी गयी अन्य कृतियों में ओ० दे० झ्मोतोवा द्वारा तुमर्थ पर लिखा गया शोध-निबन्ध तथा लेख हैं, जहाँ तुमर्थ का परम्परागत ढंग से अध्ययन किया गया है, लेकिन बहुत व्यापकता से। उनकी कृतियों में सबसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण बात, हमारी राय में, यह है कि उन्होंने तुमर्थ में जिरनडिव (कृदन्त विशेषण) के लक्षणों को मानने से इनकार किया और आवश्यकता की विभिन्न वृत्तिवाचक छायाओं को अकेले तुमर्थ में नहीं माना बल्कि तुमर्थ का विभिन्न क्रियाओं के साथ मेल होने से इनको देखा जो मिलकर आवश्यकता की छाया देती हैं।

रूपप्रक्रिया तथा वाक्यविन्यास की सीमा पर ल. ग. लोज़ोवोई, ए. ए. दवीदोवा तथा व. ए. चेर्नाशेव की कृतियाँ हैं।

ल. ग. लोज़ोवोई ने अपने शोध-निबन्ध तथा बाद के लेख में हिन्दी में संकेतार्थ तथा संकेतवाचक वाक्यों पर पूरा विश्लेषण किया जहाँ हिन्दी की सभी वृत्तियों के रूपों का अध्ययन किया गया है। श्री लोज़ोवोई की कृति ने बाद की सभी कृतियों पर अपना प्रभाव डाला जिनमें संकेतार्थ तथा संकेतवाचक वाक्यों का प्रश्न उठता था।

ए. ए. दवीदोवा ने अपने शोध-निबन्ध तथा बाद के लेख में कुछ संयुक्त क्रियाओं के प्रयोग तथा रचना का वर्णन करते समय क्रिया-नामिक वाक्यात्मक वाक्यांशों से रूपप्रक्रियात्मक संयुक्त क्रियार्थक रचनाओं को अलग किया और निश्चयपूर्वक बताया कि वे स्वतंत्र व्याकरणिक तत्त्वों के शब्द-समुदाय क्यों हैं। हालांकि लेखक की राय से इस बात पर शायद ही सहमत हो सकता हूँ कि "हिन्दुस्तानी में क्रियार्थक शब्द-रचना का सबसे अधिक प्रचलित तरीका संयुक्त क्रियापरक क्रियाएँ हैं जो क्रिया से बनी क्रिया हैं", क्योंकि इस स्थिति में कोई भी नयी क्रिया नहीं बनती है, इसीलिए शब्द-रचना तथा रूप-रचना के बीच कोई भी सम्बन्ध नहीं है क्योंकि व्यापार का पक्ष हिन्दी में रूप-रचना द्वारा नहीं, बल्कि विश्लेषणात्मक तरीके से बनता है। अवधारक क्रियाओं के साथ, संभाव्य तथा पूर्णतावाची क्रियाओं को भी क्रियाओं की एक ही श्रेणी में लाना अनावश्यक है क्योंकि वे सामान्य शब्दार्थक झुकाव में ही नहीं बल्कि रचना में भी भिन्न होती हैं: क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु पहली स्थिति में होती है और दूसरी स्थिति में शुद्ध धातु जो इन क्रियाओं के कर्मवाच्य के रूप से साबित है। पहली स्थिति में वह रंजक क्रिया से बना है और दूसरी स्थिति में क्रिया की धातु से। इन रूपों की रचना में भिन्नता दिखाते हुए ए. ए. दवीदोवा उनका ठीक स्पष्टीकरण नहीं कर सकीं। श्री चेर्नीशोव की कृतियों में जो सोवियत संघ तथा भारतवर्ष (३६) दोनों जगह ही प्रकाशित हुई, क्रियार्थक शब्द-रचना के प्रश्नों के साथ, क्रिया-नामिक शब्द-समुदायों के आधार पर नामबोधक संयुक्त क्रिया की उत्पत्ति तथा रूप-रचना के तरीके का अनुसन्धान किया गया था। लेखक ने यहाँ स्वतंत्र शब्द-समुदायों तथा मुहावरेदार पदबन्धों के बीच भिन्नता बताने का प्रयास किया, उन दोनों के बीच समान वाक्यात्मक सम्बन्धों के बारे में भी उन्होंने वर्णन किया।

क्रिया पर जो कुछ भी अभी तक लिखा है, उस पर संक्षिप्त विश्लेषण समाप्त करते हुए हम इस बात पर ज़ोर देंगे कि इस रूप की व्याख्या करने के विभिन्न दृष्टिकोण इस बात को बताते हैं कि यह अत्यन्त जटिल विषय है और अन्य भारोपीय भाषाओं में इसकी कोई समानता नहीं। दूसरी तरफ़ आधुनिक हिन्दी भाषा में क्रिया की कृदन्तपरक 'विकारी' प्रकृति भी बेजोड़ है जहाँ मुट्ठी भर संश्लेषणात्मक रूप विकारी, विश्लेषणात्मक, पक्ष-सम्बन्धी रूपों के समुद्र में डूब रहे हैं।

हमने आधुनिक हिन्दी भाषा में क्रियार्थक पद्धति का वर्णन करने का प्रयास किया है। इसके लिए हमने बहुत से तथ्यसहित सामग्री का विश्लेषण किया है। यह सामग्री हमने बीसवीं सदी के आधुनिक हिन्दी साहित्य से, प्रेमचन्द की कृतियों से लेकर युवा लेखकों की कृतियों तक से, ली है जो कि हाल ही में छपी हैं। हमारे

शोधकार्य का आधार भाषा-विज्ञान के आम नियम थे जो कि भाषा के व्याकरणिक तत्त्वों को समझने में मदद देते हैं जो कि उसकी आन्तरिक प्रकृति से निकले हैं, न कि बाह्य जगत से लाये हुए हैं। इसलिए हमने इस कृति में हिन्दी भाषा-विज्ञान की बहुत-सी परिभाषाओं को प्रस्तुत किया है, जिनकी सूची पुस्तक में दी गयी है। ऐसी संकल्पनाओं जैसे व्यापार के 'प्रकार' तथा 'पक्ष' को भिन्न करने में भी कठिनाइयाँ आयीं। प्रकार शुद्ध कृदन्तों के लिए स्वाभाविक है (सरल तथा विश्लेषणात्मक, अर्थात् सरल प्रथम कृदन्त, सरल द्वितीय कृदन्त तथा संतत कृदन्त)। व्यापार का पक्ष हमेशा विश्लेषणात्मक होता है क्योंकि वह दो या ज़्यादा क्रियाओं के मेल से बनता है। उनमें से एक तो अर्थ को व्यक्त करती है, और दूसरी व्याकरणिक भार को व्यक्त करती है।

वर्णन में आसानी के लिए हमने 'अपूर्णतावाची कृदन्त', 'पूर्णतावाची कृदन्त' या 'वर्तमान काल का कृदन्त', 'भूतकाल का कृदन्त' का प्रयोग नहीं किया है। ऐसे ही हमने 'अपूर्ण कृदन्त', 'पूर्ण कृदन्त' के शब्दों का प्रयोग भी नहीं किया जो कि व्याकरण के ऊपर लिखी गयी कृतियों में अकसर होते हैं क्योंकि ये सारी परिभाषाएँ कृदन्तों की विभिन्न छायाओं और अर्थों को व्यक्त नहीं करतीं। हमने नयी तथा सार्वभौमिक परिभाषा व्यक्त की है 'प्रथम कृदन्त' उन रूपों के लिए जो 'ता' में समाप्त होते हैं तथा 'द्वितीय कृदन्त' जो 'आ' ('या') में समाप्त होते हैं। यहीं से इन परिभाषाओं का तार्किक क्रम 'संयुक्त कृदन्त—प्रथम या द्वितीय', 'क्रिया-विशेषणात्मक कृदन्त—प्रथम या द्वितीय' आदि।

स्वाभाविक है कि यह कृति क्रिया का पूर्ण वर्णन करने का दावा नहीं करती, क्योंकि यह बात एक अनुसन्धानकर्ता के लिए संभव नहीं, विशेषकर जब उसकी कृति विदेशी भाषा में हो। चूँकि यह कृति व्यावहारिक है, इसीलिए यह दूसरे अनुसन्धानकर्ताओं को आगे बढ़ने में सहायक होगी, ऐसी हमारी आशा है।

नयी दिल्ली
मई, १९७९

**—ओ. गे. उलत्सिफ़ेरोव**

# विषय-प्रवेश

क्रिया का मुख्य कोटिबद्ध लक्षण यह है कि वह व्यापार या स्थिति जैसी उस प्रक्रिया को बोध कराती है जो पुरुष, वचन, काल, अर्थ, प्रकार की व्याकरणिक कोटियों में तथा लिंग, पक्ष व वाच्य की शाब्दिक-व्याकरणिक कोटियों में व्यक्त होती है।

आधुनिक हिंदी में क्रिया एक मुख्य शब्द-भेद है, यह एक विविध और विकासमूलक कोटि है। "व्यापार, प्रक्रिया को सूचित करते हुए वह प्रारंभिक शब्द के समज्जन से संज्ञा और विशेषण के बाद निकलती है और कृदन्त व तुमर्थ (क्रिया का साधारण रूप, जो कि संज्ञा और क्रिया के मध्य का रूप है) की अवस्था से होते हुए पुरुष, प्रकार, काल, अर्थ तथा वाच्य की कोटियों को अपना लेती है" (३४४, ३३८)। अनेक भारोपीय भाषाओं के प्रतिकूल आधुनिक हिंदी की क्रिया अपने अधिकांश प्रयोगों में विश्लेषणात्मक, बहुधा कृदन्तपरक होती है। क्रिया का एक ही कृदन्ती रूप सहायक क्रिया के साथ जुड़ने के कारण क्रिया की प्रायः सभी व्याकरणिक और शब्दिक-व्याकरणिक कोटियों को सूचित कर सकता है। प्रथम (अपूर्ण) कृदन्त 'पढ़ता' वर्तमान, भूत तथा भविष्यत् काल, संभावनार्थ तथा संकेतार्थ, कर्मवाच्य तथा व्यापार के विभिन्न पक्षों के रूपों में आ सकता है। द्वितीय (पूंर्ण) कृदन्त 'बैठा' उपरोक्त रूपों के अतिरिक्त आसन्न भूत में भी आ सकता है। यह कहा जा सकता है कि आधुनिक हिंदी के निश्चयार्थ में क्रिया के संश्लेषणात्मक तिङन्ती रूप नहीं हैं। यह सब रूप या तो शुद्ध विकारी या विकारी तिङन्ती (तिङन्ती विकारी) होते हैं। आधुनिक हिंदी में वाच्य तथा व्यापार के पक्ष की कोटि में भी केवल विश्लेषणात्मक रूप आते हैं। संभावनार्थ और संकेतार्थ के आठ रूपों में से केवल एक ही रूप तिङन्ती है और एक संश्लेषणात्मक विकारी है, बाकी सब रूप विकारी या विकारी तिङन्ती है। सभी १२ या १३ कर्तृवाच्य तथा कर्मवाच्य के कृदन्तों में से केवल प्रथम सरल कृदन्त या द्वितीय सरल कृदन्त

संश्लेषणात्मक हैं, बाकी सब कृदन्त विश्लेषणात्मक हैं। क्रिया का तथाकथित साधारण रूप एक अन्तर्विरोधी व विजातीय कोटि है जो अपने मूल संश्लेषणात्मक रूप में विकारी तथा अन्वित होता है। इसकी कारक रचना Singularia tantum संज्ञा के समान होती है और वह विशेष्य शब्द से प्रथम या द्वितीय सरल कृदन्त के समान अन्वित होता है। मूल संश्लेषणात्मक रूप के अतिरिक्त इसमें विश्लेषणात्मक वाच्य तथा पक्ष संबंधी रूप भी हैं।

ऊपर में जो लिखा है उससे यह प्रमाणित होता है कि आधुनिक हिंदी की क्रिया रूप-प्रक्रियात्मक सूचकों तथा वाक्यविन्यासात्मक प्रयोगों के कारण अनेक तथा विभिन्न रूपों की एक प्रणाली है जिनके नीचे दिये भेद हैं: (१) मूल (प्रारंभिक) रूप—क्रिया के धातु; (२) अनिश्चित विकारी रूप—तुमर्थ, (३) अनिश्चित अविकारी रूप—[illegible] (अविकारी तुमर्थ); (४) विशेषणात्मक रूप—कृदन्त; (५) क्रियाविशेषणात्मक रूप—क्रियाविशेषणात्मक; कृदन्त तथा (६) विधेयवाचक रूप (संश्लेषणात्मक तथा विश्लेषणात्मक), जो सूचित करते हैं कि (क) एक निश्चित कर्ता (व्यक्ति) कोई व्यापार करता है या यह व्यापार किसी निश्चित कर्ता (व्यक्ति) द्वारा किया जाता है या यह व्यापार बिना किसी कर्ता (व्यक्ति) के चलता है—तुम आओगे ? मैंने कहा, सूसन उसे एक नौकर से पिटवा रही थी (१०३, ५५३), रमेश के द्वारा की गयी अपनी इस गहरी खुशामद से...(१, १८०), दिल्ली सल्तनत गद्दारों से घिर गयी है (११३, ९१), कहीं ऐसी बात कही जाती होगी (१०३, १८८), मकान बने अभी मुश्किल से महीना हुआ होगा...(१०, २७); (ख) व्यापार नियत काल में हो रहा है—वह आया, वह आ रहा है, वह आयेगा; (ग) व्यापार वास्तविक या अवास्तविक है—आओ, मैं आऊं, अगर मैं आता, मैं आ रहा हूं; (घ) व्यापार के विभिन्न पक्ष हैं—देर तक बहस होती रही (७१, १३०), जज साहब की स्थिति बिगड़ती चली गयी (८७, २९८), बैठने की जगह मैं अभी बनाये देती हूं (५२, १३७), पानी आया ही चाहता था... (६५, ३८), नीलो से कुछ बोलते नहीं बना (१९, १३२)।

क्रिया के सब उपरोक्त रूप सकर्मक और अकर्मक में विभक्त होते हैं। सकर्मक के रूप हैं जो सरल द्विघटकीय शब्द-समुदाय के स्तर पर प्रधान कर्म ले सकते हैं तथा वाक्य के स्तर पर कर्मणि रचना बना सकते हैं या योजक कर्म उपवाक्य जोड़ सकते हैं।

आधुनिक हिंदी में सब संश्लेषणात्मक अकर्मक क्रियाएं मूल धातु वाली हैं। सकर्मक क्रियाएं (क) मूल धातु वाली, (ख) साधित धातु वाली, तथा (ग) साधित प्रेरणार्थक धातु वाली होती हैं। साधित धातु वाली क्रियाओं की रूप-प्रक्रियात्मक विशेषता यह है कि उनके धातु मूल अकर्मक और सकर्मक धातुओं से बने हैं। साधित सकर्मक प्रथम प्रेरणार्थक धातु 'आ' व 'ला' प्रत्यय जुड़ने से (कभी-कभी

आद्य स्वर को गुण करने से) तथा सकर्मक द्वितीय प्रेरणार्थक साधित धातु 'वा' (ल्वा) प्रत्यय जुड़ने से बनते हैं।

अपने रूपप्रक्रियात्मक लक्षणों के अनुसार अकर्मक क्रियाओं में तथाकथित भाववाच्य क्रियाएं आ जाती हैं, जिनके धातु अंत्यलुप्त प्रथम प्रेरणार्थक धातु के समाकार हैं।

उल्लेखनीय है कि कभी-कभी मूल क्रियाओं की सकर्मकता या अकर्मकता प्रयोग मात्र के आधार पर निश्चित की जाता है क्योंकि एक ही क्रिया वाक्य-विन्यासात्मक स्थान के आधार पर सकर्मक या अकर्मक हो सकती हैं, जैसे, किसानों के बेटों ने जापानियों और नाजियों से युद्ध लड़ा था (११६, ५०), दोनों अपने भाइयों से लड़ती थीं (६६, ३)। उन क्रियाओं में 'ऐंठना', 'उलटना', 'खेलना', 'खोना', 'घबराना', 'ठगना', 'पलटना', 'बदलना', 'भूलना', 'मसोसना', 'सहना' जैसी प्रचलित क्रियाएं तथा कुछ अनुकरणवाचक 'कड़कड़ाना', 'घबराना', 'छनछनाना', 'ठनठनाना' आदि जैसी क्रियाएं आती हैं।

उल्लेखनीय है कि अधिकांश उपरोक्त क्रियाएं मूल रूप से अकर्मक हैं। सकर्मक क्रियाओं के समान इनका प्रयोग शब्दगत अर्थ के संकुचन के कारण होने लगा है, वे इने-गिने कर्मों से जुड़ा करते हैं तथा 'करना' क्रिया के समानार्थी व्यापार के सूचक के अर्थ में आती हैं (तुलना कीजिये—'युद्ध लड़ना', तथा 'युद्ध करना', 'नाच नाचना' तथा 'नाच करना')। मूल रूप से सकर्मक क्रियाएं बिना अपने अर्थ संकुचित किये आती हैं, जैसे, मैंने किताब खोयी तथा किताब खो गयी; हमने उसको बदला तथा वह बदला। यह भी उल्लेखनीय है कि कुछ क्रियाओं से जुड़ने वाली परसर्गहीन संज्ञाओं में से सब-की-सब इन क्रियाओं के प्रधान कर्म नहीं होतीं। बाहरी रूप से पूरक प्रधान कर्म के समाकार हो सकता है लेकिन वह वाक्य के स्तर पर भूत के पूर्ण कालवाचक रूपों में क्रिया के साथ कर्मणि रचना नहीं बना सकता, जैसे, वह एक खोखली, बनावटी हँसी हँसा (७, १०७), वे गहरी नींद सो गये (९७, १०)।

मूल धातु वाली अकर्मक और सकर्मक क्रियाओं के अतिरिक्त मौलिक क्रियाओं में वे साधित धातु वाली सकर्मक क्रियाएं भी आती हैं जिनको परंपरागत रूप से प्रथम प्रेरणार्थक क्रियाओं में सम्मिलित किया जाता है (उदाहरणार्थ देखिये, २३, ४५६-४७६)। उनमें 'उठाना', 'बनाना', 'दबाना', 'लटकाना', 'निकालना' आदि जैसी क्रियाएं आती हैं क्योंकि इनका कर्ता व्यापार का प्रत्यक्ष करने वाला है, जैसे, स्त्री ने रामशरण के हाथ थाली में धुला दिये और बरतन उठाकर चली गयी (९६, ५४), वे सोने-चाँदी का कोई जेवर बनाते होते (१९, ४२)।

दूसरी ओर कुछ सकर्मक क्रियाएं भी कर्मणि रचना नहीं बनातीं क्योंकि पूर्ण

कालवाचक रूपों में उद्देश्य को साधक कारक में आने पर विवश नहीं करतीं, जैसे, इस वाक्य को शिविर नहीं भूला (३, ७८)।

व्यापार के कर्ता से होने वाले संबंध के कारण आधुनिक हिंदी की सब क्रियाओं के नीचे दिये भेद होते हैं : (१) **मौलिक क्रियाएं**, जिनमें व्यापार का कर्ता स्वयं ही इसका करने वाला है ('मैंने पानी पिया', 'वह आया', 'बढ़ई ने मेज बनायी')। मूल धातु वाली अकर्मक और सकर्मक क्रियाओं के अतिरिक्त मौलिक क्रियाओं में वे साधित धातु वाली सकर्मक क्रियाएं भी आती हैं जिनको परंपरागत रूप से प्रथम प्रेरणार्थक क्रियाओं में सम्मिलित किया जाता है (उदाहरणार्थ देखिये, २३, ४५६-४५७)। उनमें 'उठाना', 'बनाना', 'दबाना', 'लटकाना', 'निकालना' आदि जैसी क्रियाएं आती हैं क्योंकि इनका कर्ता व्यापार का प्रत्यक्ष करने वाला है, जैसे, स्त्री ने रामशरण के हाथ थाली में धुला दिये और बरतन उठाकर चली गयी (६६, ५४), वे सोने-चांदी का कोई जेवर बनाते होते (१६, ४२)। (२) **प्रथम प्रेरणार्थक क्रियाएं** जिनमें व्यापार का कर्ता इसका प्रेरक है और गौण कर्ता के साथ इस व्यापार में भाग लेता है (स्त्री ने रामशरण के हाथ थाली में धुला दिये (६६, ५४), यानी स्त्री ने रामशरण के हाथ धोने में लगाये; रामशरण को दूध पिलाकर लड़की की मां उससे रोटी खाने का आग्रह कर रही थी (६६, ५३), यानी लड़की की मां रामशरण को दूध पीने में लगाये थी। (३) **द्वितीय प्रेरणार्थक क्रियाएं** जिनमें कर्ता व्यापार के प्रत्यक्ष प्रेरक के रूप में नहीं आते बल्कि दूसरे कर्ता के ज़रिये यह प्रेरणा देता है और परोक्ष रूप से इस व्यापार में भाग लेता है [उसने चेतन द्वारा दादा से पुछवाया...(१७, ६१), यानी उसने कहा कि चेतन दादा से पूछे; शोभा...एक सेविका से अपने नाखून रँगवा रही थी...(२८, १७१), यानी शोभा ने सेविका से कहा कि वह (तूली से) उसके नाखून रंगे]। (४) **भाववाच्य क्रियाएं** जिनमें व्यापार बिना किसी कर्ता के भाग लेने से चलता है (हमारे ही नहीं बीवी-बच्चों तक के कपड़े बन जाते थे (१०, १४), गाय पीछे बंधी थी छप्पर में (१०२, २२), रावत लुट तो गये ही थे (६६, ८३)। जैसा कि उदाहरणों से स्पष्ट है, यहां पर व्यापार का फल कर्म पर पड़ता है जो वाक्य में उद्देश्य के कार्य में आता है। इससे उन क्रियाओं को संश्लेषणात्मक कर्मणि प्रयोग की क्रियाओं का नाम दिया जा सकता है जिनके साथ सदा परसर्गहीन कर्म—वाक्य का उद्देश्य आता है। यहां पर बहुधा अप्राणि-वाचक संज्ञाएं व्यापार के कर्ता के समान आ सकती हैं, जैसे, दाढ़ी उसकी न मुँड़ासा से बँधी थी, न डोरे से कसी थी (१५, १०), तालाब बड़े-बड़े पहाड़ों से घिरा हुआ था (६६, १८६)। प्राणिवाचक (व्यक्तिवाचक) संज्ञा व्यापार के कर्ता के समान बहुत कम आती है, जैसे...वह अपने क्रूर पिता के हाथों बुरी तरह पिटा था (१६, ८३)। कर्मवाच्य की विश्लेषणात्मक क्रियाएं इन क्रियाओं से इसमें

भिन्न हैं कि वे भाववाचक रचना बना सकती हैं, जैसे, बड़े-बड़े शामियाने लगाकर उनमें शरणार्थियों को ठहराया जा रहा था (१, २६८), जबकि भाववाच्य क्रियाएं सदा कर्मणि रचना में आती हैं।

इसी तरह कर्ता और कर्म से होने वाले संबंध के आधार पर हिंदी में निम्नलिखित तालिका बनायी जा सकती है (तालिका में क्रिया के साधारण रूप दिये जाते हैं) :

| **मौलिक क्रियाएं** | | | **साधित क्रियाएं** | | |
|---|---|---|---|---|---|
| मूल धातु वाली | | साधित | प्रथम | द्वितीय | भाववाच्य |
| अकर्मक | सकर्मक | सकर्मक | प्रेरणार्थक | प्रेरणार्थक | |
| उठना | | उठाना | उठवाना | | उठना |
| बनना | | बनाना | बनवाना | | बनना |
| | लादना | | लदाना | लदवाना | लदना |
| | देखना | दिखाना | दिखवाना | | दीखना |
| | पीना | | पिलाना | पिलवाना | |
| | खाना | | खिलाना | खिलवाना | |
| खेलना | खेलना | | खिलाना | खिलवाना | |
| खिलना | | | खिलाना | खिलवाना | |
| | बाँधना | | बँधाना | बँधवाना | बँधना |
| | तोड़ना | | तुड़ाना | तुड़वाना | टूटना |
| | बेचना | | बिकाना | बिकवाना | बीकना |
| लेटना | | | लिटाना | लिटवाना | |
| रोना | | | रुलाना | रुलवाना | |
| निकलना | | निकालना | निकलवाना | | |
| सोना | | | सुलाना | सुलवाना | |
| | बोलना | | | बुलवाना | |
| | बुलाना | | | बुलवाना | |
| | लिखना | | लिखाना | लिखवाना | |
| पढ़ना | पढ़ना | पढ़ाना (?) | पढ़ाना (?) | पढ़वाना | |
| | सीखना | सिखाना (?) | सिखाना (?) | सिखवाना | |
| छूटना | छोड़ना | | छुड़ाना | छुड़वाना | छूटना |

इस तालिका के सिलसिले में कुछ टिप्पणियां करना आवश्यक है: (१) आधुनिक हिन्दी में एक भी ऐसी क्रिया नहीं है जो सभी प्रस्तुत किये हुए कालमों में आये यानी जो अकर्मक, सकर्मक, साधित सकर्मक, प्रथम प्रेरणार्थक,

द्वितीय प्रेरणार्थक, और भाववाच्य हो। (२) कुछ क्रियाओं में केवल एक ही प्रेरणार्थक रूप है क्योंकि प्रथम प्रेरणार्थक रूप का प्रयोग साधारण साधित सकर्मक क्रिया (बनाना, उठाना) के समान होता है। (३) कुछ अकर्मक क्रियाओं के समनाम के रूप में भाववाच्य क्रियाएं आती हैं जो कुछ भारतीय विद्वानों के मतानुसार (दे० २३, ६७३) प्रेरणार्थक क्रिया का साधित रूप है (तुलना कीजिए, लल्ला उठता है और माल उठता है)। (४) कुछ क्रियाओं के प्रेरणार्थक रूप समाकार होते हैं, हालाँकि प्रयोग में वे भिन्न होते हैं (दे० 'खाना', 'खेलना' तथा 'खिलना' क्रियाओं के प्रेरणार्थक रूप)। (५) कुछ क्रियाएं साधित सकर्मक क्रियाओं तथा प्रथम प्रेरणार्थक जैसी समझी जा सकती हैं जो कि 'पढ़ाना', 'सिखाना', जैसी भावार्थक क्रियाओं के विषय में विशेष रूप से सही है। कुछ क्रियाओं के सिर्फ़ दो रूप यानी मौलिक या द्वितीय प्रेरणार्थक हैं। यहां भी उल्लेखनीय है कि आधुनिक हिन्दी में कुछ ऐसी क्रियाएं हैं जिनके सिर्फ़ एक सरल रूप होते हैं उनमें 'होना', 'आना', 'जाना', 'रहना', 'पाना', 'खोना', 'गंवाना', 'रखना', 'सकना' तथा शायद कुछ और क्रियाएं आती हैं।

अकर्मक क्रियाएं कर्महीन क्रियाएं हैं। मौलिक और साधित सकर्मक क्रियाएं सबल नियंत्रण में नियम के रूप में केवल एक ही प्रधान कर्म अपना लेती हैं। प्रेरणार्थक क्रियाएं दो कर्म अपना सकती हैं जिनमें से हरएक अलग-अलग से प्रधान होता है, जैसे, मां ने बच्चे को पिलाया और मां ने दूध पिलाया—मां ने बच्चे को दूध पिलाया। अन्तिम वाक्य में गौण कर्म—'को' परसर्ग सहित संज्ञा—गौण कर्ता के समान आता है जो कि प्रत्यक्ष रूप से व्यापार करता है, यानी बच्चा दूध पीता है। 'मां बच्चे को दूध देती है' के उदाहरण में 'बच्चे को' भी गौण कर्म है परन्तु वह गौण कर्ता नहीं है। भाववाच्य क्रियाएं एक (या अनेक सजातीय) कर्म अपना लेती हैं जो वाक्य का उद्देश्य होता है। भाववाच्य क्रियाओं सहित रचना केवल विश्लेषणात्मक भाववाच्य क्रिया की कर्मणि रचना में रूपान्तरित होती है (मकान बना और मकान बनाया गया)।

विश्लेषणात्मक क्रियाओं की सकर्मकता या अकर्मकता दूसरे, व्याकरण की दृष्टि से प्रधान घटक के आधार पर निश्चित की जाती है। यहां अपवाद के रूप में वे ही क्रियाएं आती हैं जो व्यापार के अवधारण-पक्ष में प्रयुक्त होती हैं जो सिर्फ़ तब सकर्मक होती हैं जब इनके दोनों घटक सकर्मक भी हैं। अगर इन अवधारक क्रियाओं का कोई भी घटक अकर्मक है तो पूरी विश्लेषणात्मक क्रिया भी अकर्मक होती है। यहां भी 'ले आना', 'ले जाना' और 'ले चलना' जैसी क्रियाएं अपवाद के रूप में आती हैं जो सकर्मक हैं हालांकि पूर्ण कालवाचक रूपों में कर्मवाच्य की कर्मणि रचना बना न सकतीं, जैसे, उनका कुर्ता, बंडी और जूते भी वे लोग ले गये (६६, ८२), उसने झपटकर मुझे अपने पंजों में दबोचा और बच्चों को खिलाने के

लिए ले चला घोंसले की तरफ (१०७, २९), हातिम को भी महल में ले जाया गया...(२५, ४५)।

अपने अर्थ और प्रयोग के अनुसार आधुनिक हिन्दी की सब क्रियाएं निरपेक्ष और सापेक्ष में विभक्त होती हैं। निरपेक्ष क्रियाएं अर्थपूर्ण होती हैं तथा सापेक्ष क्रियाएं आंशिक रूप से अर्थवान् होती हैं जिनका शब्दगत अर्थ निश्चित विश्लेषणात्मक रचनाओं में पूरी तरह या आंशिक रूप से खो जाता है। इन रचनाओं से बाहर ये क्रियाएं अर्थपूर्ण के समान आ सकती हैं।

अर्थ-लोप की अवस्था के कारण आधुनिक हिन्दी की सापेक्ष क्रियाओं के नीचे दिये भेद होते हैं :

(१) **सहायक क्रियाएं**—जिनका अर्थ पूरी तरह से नष्ट हुआ और जो काल, अर्थ और वाच्य के विश्लेषणात्मक रूपों के बनाने में भाग लेती हैं। इनमें आती हैं : (क) 'है' तिङन्त क्रिया जो 'होता है' के अपने यौगिक रूप में, 'हुआ है' के आसन्न भूत के रूप में तथा 'होगा' के भविष्यत् काल के रूप में तिङन्ती विकारी और 'होता' संकेतार्थ के रूप में विकारी बन जाती है; (ख) 'था' विकारी क्रिया जिसके 'होता था' यौगिक रूप तथा 'हुआ था' के पूर्ण भूत के रूप भी विकारी होते हैं और (ग) 'जाना' की विकारी तिङन्ती क्रिया।

(२) **संयोजक क्रियाएं**—जो नामिक विधेय के संयुक्त रूपों को बनाने में लगती हैं जिनका शाब्दिक अर्थ पूरी तरह से नष्ट हुआ और जो काल और अर्थ के सूचक के समान आती हैं। इनमें आती हैं : (क) 'है' तिङन्त क्रिया जो 'होता है' के अपने यौगिक रूप में, 'हुआ है' के आसन्न भूत के रूप में तथा 'होगा' के भविष्यत् काल के रूप में तिङन्ती विकारी और 'होता' संकेतार्थ के रूप में विकारी बन जाती है; (ख) 'था' विकारी क्रिया जिसके 'होता था' यौगिक रूप तथा 'हुआ था' के पूर्ण भूत के रूप भी विकारी होते हैं।

(३) **सहकारी क्रियाएं**—जो नामबोधक संयुक्त क्रियाओं को बनाने में लगी हैं, जिनका शाब्दिक अर्थ पूरी तरह से नष्ट है और जो प्रक्रिया (व्यापार या स्थिति) के शुद्ध सूचक के समान आती हैं। इनमें 'करना', 'देना', 'रखना', 'होना', 'पड़ना' तथा 'रहना' क्रियाएं आती हैं। काल, अर्थ तथा वाच्य के रूपों को बनाते वक्त सहकारी क्रियाओं का प्रयोग सहायक क्रियाओं के साथ हो सकता है जिससे उनकी निश्चित व्याकरणिक स्वतंत्रता अधिक स्पष्ट होती है।

(४) **रंजक क्रियाएं**—जो पक्ष सम्बन्धी विश्लेषणात्मक रूपों को तथा आवश्यकताबोधक विश्लेषणात्मक रूपों को बनाने में लगती हैं, जिनका शाब्दिक अर्थ कुछ रचनाओं में पूरी तरह नष्ट हुआ तथा कुछ रचनाओं में आंशिक रूप से सुरक्षित रहा। इनमें 'आना', 'उठना', 'करना', 'चलना', 'चला आना', 'चला जाना', 'चाहना', 'चाहिए', 'चुकना', 'छोड़ना', 'जाना', 'डालना', 'देना', 'निकलना', 'पड़ना',

'पाना', 'बनना', 'बैठना' 'मारना', 'रखना', 'रहना', 'ले जाना', 'लेना', 'सकना' तथा 'होना' क्रियाएं आती हैं। 'होना', 'चाहिए' तथा 'पड़ना' क्रियाओं का प्रयोग आवश्यकताबोधक विश्लेषणात्मक रूपों को बनाने के लिए होता है। शेष सभी क्रियाओं का प्रयोग (जिनमें 'पड़ना' क्रिया भी शामिल है) पक्ष सम्बन्धी विश्लेषणात्मक रूपों को बनाने के लिए होता है। ऐसा करते हुए ये मुख्य क्रिया के व्यापार को न्यूनाधिक विशेष रंजन या विशेष वृत्तिवाचक अर्थ प्रदान करती हैं।

(५) **अर्द्धसंयोजक क्रियाएं**—जो नामिक विधेय के संयुक्त तथा जटिल रूपों को बनाने में लगती हैं, जिनका शाब्दिक अर्थ न्यूनाधिक सुरक्षित रहता है, जिसके कारण वे काल तथा अर्थ के विश्लेषणात्मक रूपों को बना सकती हैं। इनमें 'बनना', निकलना', 'रहना', 'खड़ा होना', 'दिखना', 'लगना', 'मालूम पड़ना' (होना), 'ठहरना', 'जान पड़ना', 'दिखाई देना' ('पड़ना'), 'देख पड़ना', 'नजर आना', 'प्रतीत होना' जैसी सरल तथा विश्लेषणात्मक क्रियाएं आती हैं। हम गतिवाचक, स्थितिदर्शक तथा कुछ दूसरी अर्थपूर्ण क्रियाओं को अर्द्धसंयोजक क्रियाओं से काट देते हैं क्योंकि वे क्रियाएं वाक्य के उद्देश्य तथा विश्लेषणात्मक पूरक के मध्य योजक तत्त्व के समान आते हुए क्रिया विधेय बनाती हैं, जैसे, आंखें पूरी खुली हुई हैं (१४२, १), नीलो को भी वह अकेली छोड़ देती...(५३, १३), वहां से एक भी म्लेच्छ जीता न लौटेगा (४, १३८)।

सहायक, सहकारी तथा रंजक क्रियाओं सहित आधुनिक हिन्दी की सब विश्लेषणात्मक रचनाएं उत्पत्ति की दृष्टि से स्वतंत्र शब्द-समुदायों से निकली हैं जिनके व्याकरणिकीकरण के परिणामस्वरूप इन रचनाओं के अंत्य घटक का प्रयोग सहायक कार्य में होने लगा। भाषाई प्रयोग में यह कार्य इस घटक से जुड़ा रहा और इस तरह पूरा शब्द-समुदाय वाक्यविन्यास के क्षेत्र से रूप-प्रक्रिया के क्षेत्र में आ पहुंचा। उत्पत्ति की दृष्टि से आधुनिक हिन्दी में ऐसी विश्लेषणात्मक रचनाओं की तीन श्रेणियां निकाली जा सकती हैं :

(१) काल, अर्थ तथा वाच्य के विश्लेषणात्मक रूप जो प्रथम तथा द्वितीय कृदन्तों के सरल रूपों के तथा 'है', 'था' तथा 'जाना' की तीन सहायक क्रियाओं के रूपों के मेल से बने हैं। आधुनिक हिन्दी में इन रूपों के शब्द-समुदायों में सादृश्य-मूलक रूप नहीं होते। काल और अर्थ के रूप लौकिक संस्कृत तथा प्राकृत से निकले हैं (७६, भाग २, २५६) तथा ये पूरी तरह उत्तर अपभ्रंश में गठित होते हैं (५८, ७०)। कर्मवाच्य तथा भाववाच्य के रूप उत्तर अपभ्रंश से निकले हैं (५८, १४८-१४६)।

(२) नामबोधक संयुक्त क्रियाओं के विश्लेषणात्मक रूप जो नाम तथा सहकारी क्रिया के मेल से बने हैं। ये रूप स्वतंत्र नाम-क्रिया शब्द-समुदायों के आधार पर उत्पन्न हुए, जब नाम के सब रूप-प्रक्रियात्मक तथा वाक्य-विन्यासात्मक

लक्षण नष्ट हो गये और यह नाम व्यापार के अर्थसूचक के समान प्रयुक्त होने लगा। कुछ शोधकर्ता यह बात फ़ारसी भाषा के प्रभाव से जोड़ते हैं (७६, भाग २, २६२), दूसरे यह समझते हैं कि यह रूप अपभ्रंश में ही माजूद थे (५८, ८८)।

(३) क्रिया के पक्ष सम्बन्धी विश्लेषणात्मक रूप जो अनुकूल रंजक क्रियाओं के साथ धातु, पूर्वकालिक अविकारी कृदन्त (जो धातु के समाकार हैं) प्रथम व द्वितीय सरल कृदन्त, प्रथम तथा द्वितीय सरल क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त तथा क्रिया-साधित नाम के मेल से बने हैं। इन पक्ष सम्बन्धी क्रियाओं की संख्या, संयुक्त 'वर्णनात्मक' रचनाओं में से इनका निकालना विभिन्न विद्वानों के मतानुसार एक जैसा नहीं होता। भाषा के शोधकर्ताओं द्वारा इन रचनाओं का भिन्न-भिन्न विवेचन किया जाता है। कुछ विद्वान प्रायः इन सब रचनाओं को संयुक्त समझते हैं, कुछ इनको विश्लेषणात्मक और संयुक्त में विभक्त करते हैं। यह इसलिए होता है कि ये रचनाएं एक विश्लेषणात्मक कोटि हैं जो अपने तमाम लक्षणों में स्वतंत्र वाक्य-विन्यासात्मक शब्द-समुदायों से पृथक नहीं हुई। इन रचनाओं को उत्पन्न होने के समय के ऊपर जो विवेचन प्रस्तुत किये गये हैं उनमें यह समय भी अलग-अलग दिया जाता है। कुछ समझते हैं कि वे आधुनिक भाषा में बनी हैं (५७, ३०६), कुछ मानते हैं, कि अपने आरम्भिक (भ्रोणिक) रूप में ये विश्लेषणात्मक क्रियाएं संस्कृत में भी मिलती थीं तथा उन्होंने पाली, प्राकृतों तथा अपभ्रंश से होकर अपने विकास का मार्ग पूरा कर दिया (७६, भाग-२, २६१). कुछ इस पर जोर देते हैं कि ये क्रियाएं उत्तर अपभ्रंश में बनने लगीं (५८, १४२)। जो भी हो, परन्तु पूरी तरह अर्थलुप्त सहायक क्रियाओं के विपरीत रंजक क्रियाओं का शाब्दिक अर्थ कुछ पक्ष सम्बन्धी रचनाओं में पूरी तरह नष्ट नहीं हुआ।

(४) आवश्यकताबोधक विश्लेषणात्मक रूप जो 'होना', 'पड़ना' तथा 'चाहिए' की वृत्तिवाचक ढंग की रंजक क्रियाओं के साथ तुमर्थ के मेल से बने हैं और जो मानो विश्लेषणात्मक रचनाओं तथा स्वतंत्र क्रिया-प्रधान शब्द-समुदायों के संगम पर हैं।

उन विश्लेषणात्मक रचनाओं के साथ-साथ जो शब्द-समुदाय के घटकों के सम्मिश्रण के आधार पर उत्पन्न हुई थीं आधुनिक हिन्दी में ऐसी विश्लेषणात्मक रचनाएं (शब्द) हैं जो निरपेक्ष और सापेक्ष शब्दों के सम्मिश्रण के फलस्वरूप पैदा हुई थीं। हमारे विचार में इन विश्लेषणात्मक शब्दों में आते हैं: (क) प्रथम व द्वितीय संयुक्त कृदन्त, (ख) संतत कृदन्त, (ग) 'वाला' प्रत्यय सहित कृदन्त, (घ) प्रथम व द्वितीय संयुक्त क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त, (च) तात्कालिक अविकारी कृदन्त ('ही' निपात समेत क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त), (छ) अनुमतिवाचक कृदन्त ('भी' निपात सहित कृदन्त), (ज) अनुमतिवाचक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त ('भी' निपात सहित क्रियाविशेषणवाचक कृदन्त), (झ) साधक तथा अप्रत्यक्ष परसर्गीय

कारकों के रूप, तथा (ट) उत्तरावस्था व उत्तमावस्था के रूप।

आधुनिक हिन्दी में विश्लेषणात्मक रचनाओं को स्वतंत्र वाक्यविन्यासात्मक शब्द-समुदायों से अलग करना आवश्यक है। ऐसा करने में 'करना' तथा 'होना' सहकारी क्रियाओं समेत नामबोधक विश्लेषणात्मक संयुक्त क्रियाएं और कुछ रंजक क्रियाओं समेत पक्ष सम्बन्धी रचनाएं सबसे बड़ी कठिनाई प्रस्तुत करती हैं।

नामबोधक विश्लेषणात्मक संयुक्त क्रियाओं के नामिक घटक में संज्ञा के लिए स्वाभाविक लिंग, वचन तथा कारक की व्याकरणिक कोटियां नष्ट हो गयी हैं, इन नामिक घटक के पूर्व विशेषणात्मक शब्द नहीं आ सकते और वह अन्य नामों का नियंत्रण नहीं कर सकता है। उसने सहकारी क्रिया से संलग्न होने का एक ही वाक्यविन्यासात्मक कार्य बचाये रखा। इसके कारण यह विश्लेषणात्मक क्रियाएं 'संज्ञा+करना क्रिया' स्वतंत्र वाक्यविन्यासात्मक शब्द-समुदायों से भिन्न होती हैं क्योंकि स्वतंत्र शब्द-समुदाय में संज्ञा ने अपने सब व्याकरणिक लक्षणों को बचाये रखा और वह प्रधान क्रियावाचक घटक से अलग प्रयुक्त हो सकती है। यह धारणा नीचे दी गयी तालिका से और स्पष्ट होगी।

| **विश्लेषणात्मक क्रिया** | **नाम-क्रिया शब्द-समुदाय** |
| --- | --- |
| चन्द्रगुप्त ने सेल्युकस को मित्रता के नाते ५०० हाथियों का दस्ता भेंट किया (२, ४१), | इन्द्र ने बहुत-से यज्ञ किये (८४, ४७), |
| उन्होंने कई रूप एक साथ धारण किये (८४, १६), | भाइयों की जो मदद हो सकती है करता हूं (१७, २६८), |
| ...एक जर्मन भूवेत्ता ने १८७४ में जमीन की खुदाई आरम्भ की...(IV, २३.८.१९६०), | वह अपने काम को सेवा और त्याग की भावना से करेगा (१४३, २५), |
| ...आर्थिक योजनाएं आरम्भ की गयी हैं (IV, ३०.७.१९५८)। | इस भीष्म प्रण के करने से ही देवव्रत का नाम भीष्म पड़ा (८४, १३८)। |

जैसा कि उदाहरणों से स्पष्ट है विश्लेषणात्मक रचनाओं में सहकारी क्रिया अपने नामिक घटक से नहीं परन्तु किसी तीसरे घटक से अन्वित होती है जो पूरी विश्लेषणात्मक क्रिया का प्रधान कर्म है। नाम-क्रिया शब्द-समुदायों में क्रिया अपने नामिक घटक से अन्वित होती है जो प्रधान कर्म के समान आता है।

उल्लेखनीय है कि विश्लेषणात्मक क्रिया के अकर्मक द्वित्तक का यानी, अकर्मक क्रिया के साथ रूप-प्रक्रिया की दृष्टि से 'नष्ट' नाम का संयोग, स्वतंत्र शब्द-

समुदायों में सादृश्यमूलक रूप नहीं होता क्योंकि जब क्रिया का प्रयोग विधेय के समान होता है उसका नामिक खण्ड उद्देश्य के रूप में आता है। यह भी तालिका से स्पष्ट किया जा सकता है :

| विश्लेषणात्मक क्रिया | उद्देश्य—विधेय |
|---|---|
| देश में राष्ट्रीय जागरण का युग आरम्भ हुआ (११५, ५१), | उनमें उन्हीं गुणों का विकास हुआ... (८४, ४०), |
| उसे नाती-पोते याद आये (४४, ६७)। | उसे अपने विवाह की याद आयी (६६, १३७)। |

नामबोधक विश्लेषणात्मक संयुक्त क्रियाएं जिनका नामिक घटक एक ग्रहित (नियमतः फ़ारसी) कृदन्तपरक विशेषण है, जिसके तमाम रूप-प्रक्रियात्मक लक्षण नष्ट हैं उन विकारी क्रियात्मक समास से यानी 'विकारी विशेषण + करना क्रिया' वाले नाम-क्रिया शब्द-समुदायों से आसानी से अलग की जा सकती हैं :

| विश्लेषणात्मक क्रिया | क्रियामूलक समास |
|---|---|
| ...सेना सीमा-प्रदेश को रवाना हुई (१३९, १८४), | ऐसी योजनाओं से कई उद्देश्य पूरे होते हैं (१३४, १०१), |
| गठबंधन ने फूट पैदा कर दी थी (IV, ३०·७·१९५८)। | धीरे-धीरे उन्होंने यात्रा के लिए काफ़ी रुपये इकट्ठे किये (११९, १८)। |

रूप-प्रक्रिया की दृष्टि से 'नष्ट' कृदन्तपरक विशेषण समेत विश्लेषणात्मक नामिक संयुक्त क्रियाएं जब कभी क्रियावाचक घटक के रूप में 'करना' क्रिया अपना लेती हैं इन्हें वाक्याविन्यासात्मक स्तर पर उन क्रियामूलक समासों से अलग नहीं किया जा सकता जिनके नामिक घटक के रूप में वे अविकारी विशेषण या कृदन्तपरक विशेषण आते हैं जिनका प्रयोग ग्रहित कृदन्तपरक विशेषण के विपरीत स्वतंत्र रूप में विशेषणात्मक तत्व के समान हो सकता है। विश्लेषणात्मक क्रिया तथा क्रियामूलक समास के घटक एक-दूसरे से अलग-थलग नहीं आते और वाक्य में उनका प्रयोग न केवल एक शाब्दिक इकाई के समान बल्कि एक व्याकरणिक इकाई के समान भी होता है क्योंकि उनके अविधेय क्रिया-प्रयोग में कोई भी परसर्ग समस्त विश्लेषणात्मक क्रिया या क्रियामूलक समास से सम्बद्ध होता है और वह सदा पुल्लिंग के रूप में आता है। अविधेय क्रिया-प्रयोग में क्रियामूलक समास का विकारी विशेषण वाला नामिक खंड इसके पीछे परसर्ग भी आने के बावजूद अविकारी रहता है। उदाहरणार्थ :

| विश्लेषणात्मक क्रिया | क्रियामूलक समास |
|---|---|
| मैंने व्यापार आरम्भ किया था (१३६, १३६), | टेलर और मेजर आयर ने विद्रोह शान्त किया (२. २६५), |
| खुदा ने हर कौम में नेक अफ़राद पैदा किये हैं (७८, ४२), | उसने पशुबलि वाले यज्ञ भी बंद करवा दिये थे (२. ४६), |
| निर्मला ने सारी घटना बयान कर दी...(६६, १७१), | ...उन्होंने शासन की नयी योजना तैयार की (२. ३०८), |
| ...उसने उस आधिपत्य को अस्वीकार किया था (७१, ११६), | मैंने साड़ी को सिर पर ठीक कर लिया (१३६. ७६), |
| ...विपिन...मां के मना करने पर भी ...(१०६, ५४), | ...अपने कर्तव्य को पूरा करने का संतोष (७२. २०७), |
| ...दशमलव प्रणाली के स्वीकार कर लिये जाने के पश्चात् (११५, ४३६)। | ...भारत के स्वाधीन कर देने का समाचार...(६७. ५६)। |

अकर्मक विश्लेषणात्मक क्रियाओं का प्रयोग जिनका क्रियात्मक घटक 'होना' क्रिया है विधेय के रूप में सदा की तरह 'होना' के कृदन्त रूप में तथा 'है' व 'था' सहायक क्रियाओं के साथ होता है। ऐसे प्रयोग में ये क्रियाएं न तो व्यापार की अभ्यासता न उसका पुनरावर्तन व्यक्त करती हैं जबकि 'होना' क्रिया समेत क्रियामूलक समास 'है' व 'था' सरल व यौगिक संयोजकों समेत नामिक क्रियावाचक विधेय बनाते हैं। इसमें 'है' व 'था' संयोजकों समेत क्रियामूलक समास उद्देश्य की गुणात्मक विशेपता तथा वर्तमान या भूतकाल में उद्देश्य की पूर्णावस्था को सूचित करते हैं और 'होना' के कृदन्त रूप समेत क्रियामूलक समास व्यापार की अभ्यासता तथा उसके पुनरावर्तन को प्रकट करते हैं। शुद्धता की दृष्टि से विधेय के रूप में प्रयुक्त 'होना' क्रिया समेत क्रियामूलक समास अभिन्नतामूलक शब्द-समुदाय नहीं है क्योंकि इसमें क्रिया शब्द-समुदाय के प्रधान घटक के समान नहीं बल्कि संयोजक के समान आती है, जैसे :

| विश्लेषणात्मक क्रिया | संयुक्त नामिक विधेय |
|---|---|
| फिर से पकने की क्रिया शुरू होती है (५०, ३१), | हमें यह अधिकार प्राप्त है (११५, ३०३), |
| | ...प्रत्येक व्यक्ति को कुछ मानिक अधिकार प्राप्त होते हैं (११५, ३०६), |
| ...काफ़ी धन खर्च होता था (२, ३०२) | राजपूत बहुत कम थे (४, २००), |
| | इस कारण अपराध भी बहुत कम होते थे (२, ३७)। |

उल्लेखनीय है कि अकर्मक विश्लेषणात्मक क्रियाओं तथा क्रियामूलक समासों के पक्ष सम्बन्धी विधेयवाचक रूपों को रूप-प्रक्रिया तथा वाक्यविन्यास की दृष्टि से संयुक्त नामिक विधेय में एक-दूसरे से भिन्न करना असम्भव है जो इन दो उदाहरणों की तुलना करने से स्पष्ट हो जाता है : आंखों में चमक बार-बार ऐसे पैदा होती रहती है...(१५१, १५)—विश्लेषणात्मक क्रिया—और धूप में बसों का इंतज़ार करना असहनीय होता जा रहा था (१५१, २६)—संयुक्त नामिक विधेय।

अकर्मक विश्लेषणात्मक क्रियाओं तथा क्रियामूलक समासों के अविधेय रूपों को भी एक-दूसरे से भिन्न करना असम्भव है, जैसे :

| **विश्लेषणात्मक क्रिया** | **क्रियामूलक समास** |
|---|---|
| उनकी आँखें...चाँदनी में काले दिखायी देते ऊँचे वृक्षों...पर घूम रही थीं (१२६, ६९), | देखती रहती...उसकी बंद होती धड़कनों को (१०७, ७३), |
| पहली पंचवर्षीय योजना के आरम्भ होने के बाद...(II, २६·१·१९६७, ४८)। | कुछ इस आँधी के शान्त होने का अवसर देख रहे हैं (६९, १७६) |

इस बात के बावजूद कि विश्लेषणात्मक क्रियाएं तथा अविकारी नामिक खंड समेत क्रियामूलक समास प्रकार्यात्मक दृष्टि से एक-दूसरे के निकट हैं तिस पर भी वे उन लक्षणों के कारण एक-दूसरे से भिन्न हैं : (१) क्रियामूलक समास के नामिक खण्ड का प्रयोग एक स्वतंत्र विशेषणात्मक शब्द के रूप में होता है—चाँदनी से भी साफ़...औरत (१०३, ८१); (२) क्रियामूलक समास अपने नामिक खण्ड के लिए स्वाभाविक परसर्गीय नियंत्रण सुरक्षित रखते हैं—सब जहाज़ युद्ध के लिए तैयार हो जायें (११६, ५९-६०); (३) आभ्यासिक वर्तमान तथा अपूर्ण भूत में 'होना' क्रिया समेत क्रियामूलक समास का प्रयोग 'है' व 'था' संयोजकों तथा 'होना' के कृदन्त रूप के साथ हो सकता है जबकि इन्हीं कालों में विश्लेषणात्मक क्रिया का प्रयोग केवल 'होना' के कृदन्त रूप के साथ होता है; (४) क्रियामूलक समास तथा विश्लेषणात्मक क्रियाएं भिन्न-भिन्न विधेय बनाती हैं। विश्लेषणात्मक क्रियाएं सरल व संयुक्त क्रिया-विधेय को बनाती हैं, जबकि क्रियामूलक समास संयुक्त व जटिल नामिक विधेय को बनाते हैं ('करना' क्रिया के साथ—जटिल नामिक विधेय और 'होना' क्रिया के साथ—संयुक्त नामिक विधेय)।

विश्लेषणात्मक क्रियाओं तथा नाम-क्रिया शब्द-समुदायों के बीच में कुछ ऐसी संक्रमणात्मक रचनाएं हैं जिनको प्रकार्यात्मक विश्लेषणात्मक क्रियाओं के वर्ग में सम्मिलित किया जा सकता है क्योंकि इनके नामिक घटक अपने रूप-प्रक्रियात्मक

लक्षणों को सुरक्षित रख सकते हैं और इनका प्रयोग साधारण [illegible] शब्द-समुदाय के समान हो सकता है, जैसे :

| विश्लेषणात्मक क्रिया | नाम-क्रिया शब्द-समुदाय |
|---|---|
| वह पीड़ा, भय तथा उत्तेजना भी अनुभव कर रहा था (६६, ५६). | सुजाता... उस क्षणिकता का अनुभव कर रही थी...([illegible]). |
| वह उस सन्नाटे की बात स्मरण कर सकता है...(३६, ८१). | उनके उस प्रेम का स्मरण करता हूँ...([illegible]). |
| ...साहित्यकार...जीवन की सच्चाइयाँ वर्णन कर सकता है (६६, ६)। | [illegible] ...सी कई स्थितियों का वर्णन किया है ([illegible])। |

# भाग १

# क्रिया का अविधेय रूप

## क्रिया की धातु

आधुनिक हिन्दी में क्रिया की धातु क्रिया के सब विधेय तथा अविधेय रूपों को बनाने का मूल रूप है। अपने शब्द-रचनात्मक सम्बन्धों के अनुसार धातु क्रियापरक और नामजात में विभक्त होती है। अपनी तरफ से क्रियापरक धातु मूल धातु में जिससे प्रचलित उत्पादक प्रत्यय निकाले नहीं जा सकते, तथा साधित (सकर्मक व प्रेरणार्थक) धातु में विभाजित है जो प्रचलित उत्पादक प्रत्ययों के ज़रिये मूल धातु से बनती है। नाम धातु भी मूल धातु में जो नाम से परिवर्तन के ज़रिये बनी है तथा साधित धातु में जो नामधातु से प्रचलित उत्पादक प्रत्ययों के ज़रिये बनी है विभाजित है। परिवर्तित धातु और साधित नामधातु क्रियापरक धातुओं के सब क्रियावाचक लक्षण अपना लेती हैं।

| मूल क्रियापरक धातु | प्रत्यय | साधित धातु |
|---|---|---|
| कर | आ | करा |
| कर | वा | करवा |
| पी | ला | पिला |
| पी | ल्वा | पिलवा |
| देख | आ | दिखा |
| देख | ला | दिखला |
| देख | वा | दिखवा |

| नाम/संज्ञा | [illegible] | [illegible] नामधातु | [illegible] नामधातु |
| --- | --- | --- | --- |
| शुरू | — | शुरू | |
| मगीद | — | मगीद | |
| बदल | — | बदल | |
| शर्म | आ | | शरमा |
| गहर | आ | | गहरा |
| अलग | आ | | अलगा |
| अपन | आ | | अपना |
| मोल | आ | | मोला |
| झूठ | ला | | झुठला |
| हाथ | इया | | हथिया |
| गालि | इया | | गरिया |
| जल्द | इया | | जल्दिया |

ये मूल क्रियापरक नामधातुएँ साधित (सकर्मक या प्रेरणार्थक) धातु बना सकती है, जैसे, बदल — बदला — बदलवा, शुरू — शुरा — शुरवा।

अपनी रचना के अनुसार धातु संश्लेषणात्मक (मूल या साधित) तथा विश्लेषणात्मक होती है जिनमें दो और ज्यादा पदक हो सकते हैं। विश्लेषणात्मक धातु कर्मणि, पक्ष सम्बन्धी तथा संयुक्त नामिक हो सकती है। कर्मणि धातु द्वितीय सरल कृदन्त और 'जाना' सहायक क्रिया के मेल से बनी है, पक्ष सम्बन्धी धातु रंजक क्रियाओं के साथ प्रथम तथा द्वितीय सरल कृदन्तों, प्रथम और द्वितीय सरल क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तों, क्रियार्थक नामों तथा स्वतंत्र धातु के मेल से बनी है; संयुक्त नामिक धातु सहकारी क्रिया के धातु के साथ [illegible] दृष्टि से 'नष्ट' नाम के मेल से बनी है। विश्लेषणात्मक धातु सम्मिश्रित हो सकती है यानी वह कर्मणि तथा पक्ष सम्बन्धी धातुओं के मेल से तथा पक्ष सम्बन्धी और नामिक धातुओं के मेल से बन सकती है, जैसे :

| धातु/धातु | कर्मणि | पक्ष सम्बन्धी | संयुक्त नामिक |
| --- | --- | --- | --- |
| कर्मणि | लिखा जा | लिखा जा सक | शुरू किया जा |
| पक्ष सम्बन्धी | लिखा जा चुक | लिखता आ | शुरू किया कर |
| संयुक्त नामिक | शुरू किया जा | शुरू किया कर | शुरू कर |

यदि कर्मणि तथा संयुक्त नामबोधक धातुएँ एकरूपी है यानी समान पुनरावर्ती,

अर्थ की दृष्टि से प्रधान तत्वों से बनी हैं (कर्मणि धातु में यह द्वितीय सरल कृदन्त तथा संयुक्त नामिक धातु में यह रूप-प्रक्रिया की दृष्टि से 'नष्ट' नाम है) तो पक्ष सम्बन्धी धातुएँ बहुरूपी हैं क्योंकि मुख्य अर्थपूर्ण घटक के रूप में क्रिया के विभिन्न अविधेय रूप आते हैं, जैसे :

| रंजक क्रिया धातु धातु | पूर्वकालिक कृदन्त अव्यय | प्रथम कृदन्त | द्वितीय कृदन्त | प्रथम क्रिया-विशेषण कृदन्त | द्वितीय क्रियाविशेषण कृदन्त | क्रियामूलक नाम | तुमर्थ |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| आ | + | + | + | | + | | |
| उठ | + | | | | | | |
| कर | | | | | | + | |
| चल | + | + | | | | | |
| चाह | | | | | | + | |
| चुक | + | | | | | | |
| छोड़ | + | | | | | | |
| जा | + | + | + | + | + | | |
| डाल | + | | | | + | | |
| दे | + | | | | + | | |
| निकल | + | | | | | | |
| पड़ | + | | + | | | | + |
| पा | + | | | | | | |
| बन | | | | | + | | |
| बैठ | + | | | | | | |
| मार | + | | | | | | |
| रख | + | | + | | + | | |
| रह | + | + | + | | + | | |
| ले | | + | | | | + | |
| सक | + | | | | | | |
| हो | | | | | | | + |

अविधेय क्रिया रूपों के साथ रंजक क्रिया के सभी सम्भव संयोगों की इस दी गयी तालिका का यह मतलब नहीं है कि धातु का प्रयोग सभी शाब्दिक श्रेणियों के अविधेय क्रिया रूपों के साथ हो सकता है क्योंकि यहां रंजक क्रिया तथा अविधेय रूप की शाब्दिक तथा व्याकरणिक अनुरूपता प्रथम स्थान लेती है। अनुरूपता के नियम रूप-प्रक्रिया में नहीं, वरन् शैली विज्ञान में आते हैं जो इस पुस्तक की

सीमाओं से बाहर है।

कुछ क्रियापरक धातुओं से परिवर्तन के बिना भाववाचक संज्ञाएँ बनती हैं जो भाषाई प्रयोग के अनुसार स्त्रीलिंग समझी जाती हैं, जैसे, मार, रोक, लूट, समझ, माँग।

सरल क्रियापरक नामधातु द्वारा परिवर्तित नहीं होती, वे नामिक धातु का लिंग सुरक्षित रखती है, जैसे, डर – पुल्लिंग का शब्द, खरीद – स्त्रीलिंग का शब्द।

क्रियापरक तथा क्रियापरक नामधातुओं से इनके समाकार क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त अलग करना चाहिए जो भाषाई प्रयोग के परिणामस्वरूप पूर्वकालिक कृदन्त अव्यय द्वारा 'कर' के 'करके' रूप-निर्माण विषयक प्रत्ययों के लोप से बने हैं। धातुओं के विपरीत उनसे समाकार क्रिया-विशेषणात्मक कृदन्तों का स्वतंत्र प्रयोग होता है, जैसे...तीन घंटे में काम खत्म कर वापस लौट भी गया था (९६, १८)।

धातुओं से उनके समाकार आज्ञार्थ के मध्यम पुरुष का रूप भी अलग करना चाहिए जिसका स्वतंत्र प्रयोग भी हो सकता है, जैसे, आ ... लगाई आ, मेरे आगन में से जा! (१०, ९३)।

इसी तरह आधुनिक हिन्दी में धातु एक रूपात्मक सहायक तत्व है जो क्रिया के विभिन्न रूपों के निर्माण का मूल रूप है। इसीलिए उसके कोई भी वाक्यविन्यासात्मक लक्षण नहीं है।

## तुमर्थ (क्रिया का साधारण रूप)

आधुनिक हिन्दी में तुमर्थ एक क्रियावाचक नामिक अविकारी रूप है जिसमें क्रिया, संज्ञा तथा कृदन्त के लक्षण सन्निहित हैं। व्युत्पत्ति की दृष्टि से तुमर्थ एक तरफ से 'ईय' ('अनीय') प्रत्यय वाले संस्कृत भविष्यत् (संस्कृत 'करणीय', प्राकृत 'करनीया' 'कराना', हिन्दी 'करना') तथा दूसरी तरफ 'अनन' प्रत्यय वाले संस्कृत क्रियापरक नाम से (कथनम – कहना, बननम – बनना) निकाला जाता है (दे० ७९, भाग-२, २८४)। इससे हिन्दी में तुमर्थ की निगुनी प्रकृति समझी जा सकती है।

आधुनिक हिन्दी में तुमर्थ सरल होता है जो क्रियावाचक या क्रियावाचक नामधातु से 'न' प्रत्यय तथा 'अ' विभक्ति की सहायता से बनता है तथा साधित (यौगिक) होता है जो सहायक, रंजक या सहकारी क्रिया के कार्य में आने वाले सरल तुमर्थ तथा मुख्य क्रिया के कृदन्त या क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के मेल से बनता है। साधित तुमर्थ कर्मणि, पक्ष संबंधी तथा संयुक्त नामिक में विभक्त होता है। कर्मणि तथा संयुक्त नामिक तुमर्थ अनुकूल धातुओं की भांति एकरूपी हैं क्योंकि इनके अर्थ की दृष्टि से प्रधान घटक में एक ही समान रूप (द्वितीय सरल कृदन्त या रूप-प्रक्रिया की दृष्टि से 'नष्ट' नाम) प्रयुक्त होते हैं। पक्ष संबंधी तुमर्थ

बहुरूपी हैं क्योंकि यहां पर प्रधान घटक के कार्य में विभिन्न अविधेय रूप आते हैं हालांकि धातुओं के रूपों की तुलना में विश्लेषणात्मक रूपों की संख्या कुछ कम होती है ('करना', 'चाहना', 'बनना', 'होना' रंजक क्रियाओं समेत पक्ष संबंधी तुमर्थ रूप प्रयुक्त नहीं होते तथा 'आना', 'चलना', 'डालना', 'देना', 'पड़ना', 'लेना' रंजक क्रियाओं के तुमर्थ रूप भी कम हैं), जैसे :

| तुमर्थ | धातु | पूर्वकालिक कृदन्त अव्यय | प्रथम कृदन्त | द्वितीय कृदन्त | प्रथम क्रिया-विशेषण वाचक कृदन्त | द्वितीय क्रिया विशेषण वाचक कृदन्त |
|---|---|---|---|---|---|---|
| आना | | + | + | + | | |
| उठना | | + | | | | |
| चलना | | + | | | | |
| चुकना | | + | | | | |
| छोड़ना | | + | | | | |
| जाना | | + | + | + | + | + |
| डालना | | + | | | | |
| देना | | + | | | | |
| निकलना | | + | | | | |
| पड़ना | | + | | | | |
| पाना | | + | | | | |
| बैठना | | + | | | | |
| मारना | | + | | | | |
| रखना | | + | | | + | + |
| रहना | | + | + | + | + | + |
| लेना | | + | | | | |
| सकना | + | | | | | |

सरल और साधित तुमर्थ में निम्नलिखित क्रियावाचक लक्षण हैं :

(१) वाच्य की कोटि। सब अकर्मक तुमर्थ में कर्तृ वाच्य रूप हैं। सब सकर्मक तुमर्थों में कर्तृ वाच्य तथा कर्मवाच्य के रूप हैं। सब भाववाच्य (पुरुष शून्य) तुमर्थों में कर्मवाच्य या निजवाचक (कर्तृगामि) भाववाच्य का अर्थ निहित है, जैसे, (क) उस समय उसके मुंह से आवाज़ निकलना भी मुश्किल हो जायेगी (५६, ७२),...वे चलने को तैयार हुए...(१०, १०); (ख)...प्रेमपत्र भेजना एक बड़ी समस्या रही है (१४३, ५२), उसके पैरों से रौंदे जाने में सेठी को सुख अनुभव हो रहा था (६६,

१२); (ग) बक्स खुलने के समय मायों का दिल धड़क उठा ([illegible], ८७-८८), ...जैसे टांग का कट जाना हर रोज की बात थी ([illegible])।

(२) पक्ष की कोटि। (क) नित्यताबोधक पक्ष — रोज़ मैं अधिक देर तक घूमते रहना सम्भव नहीं था (१४८, १४३), (ख) नित्यताबोधक [illegible] पक्ष — ...दल के लिए तुम्हारा बने रहना अधिक उपयोगी होगा (६७, ६२); (ग) घटमान पक्ष — सेठी उसे मिलाने आना चाहता था (६८, [illegible]), (घ) घटमान पूर्णपरिणामी पक्ष — ...वे...अपने घोड़ाओं को थके आने को ललकार रहे थे (४, १७६); (च) विधार्थक (समाप्य) पक्ष — इस प्रस्ताव का पास हो सकना ही असंभव जान पड़ रहा था (६७, १५८)...उसे कहानी में ला पाना बड़ा मुश्किल लगता था (१३, १०६); (छ) समापक (प्रभावी) पक्ष — देवताओं के पी चुकने के बाद शायद उनकी बारी आये ([illegible], २२)। (ज) अवधारण पक्ष — ...आदमी की मौत का सुन लेना या कह देना एक भारी नैतिक अपराध लगता है (११६, ३७), अब पान्ना सिंह ने लौट आना ही उचित समझा (७५, ५२)।

(३) सापेक्ष कालसूचक अर्थ की कोटि। सरल परसर्गरहित तुमर्थ क्रिया विधेय के साथ सहायक व्यापार की समकालिकता व्यक्त करता है, जैसे, तीस की नौकरी बताना अपमान की बात थी (६५, २६), कर्मों के द्वारा जीवन में जो गुफाओं का जाल है, उनका नाश करना, शुद्ध-पवित्र बनना, आनन्द में मग्न रहना, ईश्वर में भक्ति रखना इत्यादि में ही शिक्षा का आयोजन, देश-सेवा तथा समाज का मंगल निर्भर है (१००, ११३), क्या बीच में उसे छोड़ देना कापुरुषता ही नहीं हो जायेगी (४४, ४४-४५)।

विभिन्न परसर्गों के साथ तुमर्थ क्रियाविधेय के व्यापार की पूर्वकालिकता तथा परकालिकता प्रकट कर सकता है, जैसे, (क) मंत्री-पद पर आने के बाद उनकी लोकप्रियता और प्रभाव और बढ़ा (II, २०,११,१९६५, १२), ...यह दस्तावेज़ नौकर के तनख्वाह माँगने पर पहले भी कई बार [illegible] चुका है (११६, ५३) और (ख)...शायद जाने के पहले बच्ची को देखने...के लिए आवें (६६, १०१), वैद्यों के बुलाये जाने के पहले ही उनकी मृत्यु हो गयी (८४, ८८)।

(४) सकर्मकत्व तथा अकर्मकत्व की कोटि। सकर्मक तुमर्थ के साथ न केवल प्रधान कर्म बल्कि दूसरा परसर्गरहित या सहित तुमर्थ और सुपाईन का प्रयोग हो सकता है, जैसे, इसके लिए मुसलमानों में लड़के-लड़कियों को परस्पर घृणा करना सीखना चाहिए (१४३, २६), वह जिन जंजीरों को तोड़कर चला आया है, उनको टूटी ही पड़ी रहने देना चाहता है (११६, ७४)। अकर्मक तुमर्थ के साथ व्यापार के कर्ता तथा सुपाईन का प्रयोग हो सकता है, जैसे, इसका मूल कारण... जनसंख्या-वृद्धि न रुक पाना बताया गया है (II, ५.४.१९६६, ४), अगर आपको मेरा खेलने जाना पसन्द नहीं...(६६, ६१)। भाववाच्य तुमर्थ के साथ कर्म का भी

प्रयोग हो सकता है, पर सकर्मक क्रियाओं के प्रतिकूल में भाववाच्य क्रियाएं वाक्य के स्तर पर पूर्ण कालवाचक रूपों में कर्मणि अथवा भाववाच्य रचनाओं को बना न सकतीं परन्तु अकर्मक क्रियाओं की तरह केवल कर्तृवाचक रचना को बनाती हैं।

(५) अर्थ की कोटि। तुमर्थ आज्ञार्थ का मतलब अपना सकता है जो 'तुम' या 'तू' सर्वनामों के साथ आज्ञार्थ रूपों के समान हैं, जैसे, देखो, रुपये की ज़रूरत पड़े, तो मुझे तार देना (६५, २३१), तो बस, तेरी ही ज़िद है, तू ही जाना (६६, ७६)।

(६) विधेयन की कोटि, जो इसमें अपने को व्यक्त करती है कि तुमर्थ का अपना ही कर्ता हो सकता है और वह तार्किक विधेय भी सूचित कर सकता है। इसमें तुमर्थ अनाश्रित निरपेक्ष रचना बनाता है या उद्देश्यवाचक तुमर्थ वाक्यांश में आ सकता है। सकर्मक तुमर्थ का कर्ता 'का' परसर्गसहित आता है और अकर्मक या भाववाच्य तुमर्थ का कर्ता परसर्गसहित या रहित हो सकता है, जैसे, कृष्णा का यह सुनना था कि...(८४, ११७), लड़के मां के मना करने की परवाह न करते (६६, २१३), अपने पिता का मारना भूल न सके थे (८४, ६६), बाल्टी के टूट जाने से रस्सी उतने ही ज़ोर से ऊपर को फिरी थी...(१७, ३८६-३८७), तभी उसने हाल-कमरे का दरवाज़ा बन्द होने...की आवाज़ सुनी (१३, १५५), बक्स खुलने का समय माधो का दिल...धड़क उठा...(१०२, ८७-८८), जूते पड़ने रुक गये। (१०३, ३७६)।

(७) वृत्ति (प्रकारता) तथा पक्ष संबंधी कोटियां जो अपने को इसमें व्यक्त करती हैं कि तुमर्थ कुछ रंजक क्रियाओं के साथ व्याकरणीकृत तथा संयुक्त रचनाओं को बना सकता है। इसके अतिरिक्त आधुनिक हिन्दी में तुमर्थ कुछ रंजक क्रियाओं के साथ व्याकरणीकृत तथा वर्णनात्मक कालवाचक रचनाओं को बना सकता है जो वाक्य में संयुक्त या जटिल विधेय के रूप में आती हैं। इनमें वे रचनाएं आती हैं :

(क) आवश्यकताबोधक रचनाएं जो तुमर्थ के साथ 'होना' व 'पड़ना' तथा 'चाहिए' वृत्तिवाचक क्रिया के मेल से बनी हैं;

(ख) कालवाचक रचनाएं जिनसे यह प्रकट होता है कि व्यापार निकट भविष्य में पूरा किया जायेगा;

(ग) वृत्तिवाचक रचनाएं जो तुमर्थ द्वारा सूचित व्यापार को पूरा करने की सामर्थ्य प्रकट करती हैं;

(घ) पक्ष संबंधी रचनाएं जो तुमर्थ द्वारा सूचित आरम्भ हुए व्यापार की विभिन्न प्रकार की पूर्णता प्रकट करती हैं;

(च) पक्ष संबंधी रचनाएं जो तुमर्थ द्वारा सूचित व्यापार का आरम्भ प्रकट करती हैं;

(छ) पक्ष संबंधी रचनाएं जो तुमर्थ द्वारा सूचित व्यापार की समाप्ति प्रकट करती हैं।

आधुनिक हिन्दी में तुमर्थ की नामिक प्रकृति इसमें व्यक्त होती है कि उसका नामिकीकरण तथा कृदन्तीकरण हो सकता है।

आधुनिक हिन्दी में तुमर्थ का पूर्ण तथा आंशिक नामिकीकरण होता है।

आधुनिक हिन्दी में तुमर्थ का पूर्ण नामिकीकरण प्रायः नहीं मिलता जिसमें बहुवचन की कोटि समेत जो कि संज्ञाओं की श्रेणी में तुमर्थ के पूर्ण संक्रमण का सबसे मुख्य लक्षण है तुमर्थ संज्ञा के सब रूप परिवर्तनात्मक लक्षण अपना लेता है। आधुनिक हिन्दी में इन पूर्ण नामिकीकृत तुमर्थों में 'खाना', 'गाना' और कुछ दूसरे शब्द आते हैं जो एक तरफ़ से बहुवचन में प्रयुक्त हो सकते हैं और दूसरी तरफ़ उनके समनाम क्रिया के पुरुषवाचक रूपों से संलग्न हो सकते हैं, जैसे,...कुछ थियेटर के गाने आ जायें और बस...(७३, ६१), उसने गाना नहीं गाया (४८, १००), खाना खा लिया (४८, १०६)। इसी तरह पूर्ण नामिकीकरण में तुमर्थ दूसरी शाब्दिक-व्याकरणिक श्रेणी संज्ञाओं की श्रेणी में आ जाता है।

आंशिक नामिकीकरण में तुमर्थ के नामिक लक्षण उनके क्रियावाचक लक्षणों के साथ-साथ मौजूद हैं और इसी तरह तुमर्थ केवल विशेष परिस्थितियों में संज्ञा के कार्य में आता है लेकिन इसमें वह अपने विशिष्ट क्रियावाचक लक्षण सुरक्षित रखता है।

नामिकीकरण में तुमर्थ निम्नलिखित नामिक लक्षणों को सूचित करता है :

(१) नामिकीकृत तुमर्थ में पुल्लिंग की कोटि है जो उससे विशेषणवाचक शब्दों की अन्विति में तथा विशेषणवाचक शब्द से व्यक्त क्रिया विधेय के साथ उसके समानाधिकरण में प्रकट होती हैं, जैसे, गांव वालों के लिए कोदई का पकड़ लिया जाना लज्जाजनक मालूम हो रहा था (७१, १५८), कुछ देर बाद गोलियों का चलना बन्द हुआ (११६,, ७२), अगर आपको मेरा खेलने जाना पसन्द नहीं... (६६, ६१),...मेरे मिटते जाने से उन पर प्रभाव पड़ता है...(२०, ५०)।

(२) नामिकीकृत तुमर्थ में साधक कारक समेत कारकों की कोटि है, जैसे, जोगों का आना आरम्भ हुआ (६१, ४७)—प्रत्यक्ष कारक; राम के वन भेजने में भरत का हाथ था (८४, ८६)—अप्रत्यक्ष परसर्गीय कारक; लगातार भूखा रहने ने उसे कठोर और बेईमान-सा बना दिया था (२८, १२१)—साधक कारक।

(३) नामिकीकृत तुमर्थ में एकवचन और बहुवचन का विरोध नहीं है और वह नियम के अनुसार Singularia tantum संज्ञाओं के समान आता है। अपवाद के रूप में यहां कुछ पूर्ण नामिकीकृत तुमर्थ आते हैं, जो संज्ञाओं की श्रेणी में पूरी तरह से आ चुके थे और जो तुमर्थ के शाब्दिक समनाम बन चुके हैं। इन शब्दों की चर्चा ऊपर की गई है।

(४) नामिकीकृत तुमर्थ के पूर्व विशेषण या 'का' परसर्ग समेत संज्ञा आ सकती है, जैसे, उसका चलना कठिन होता जाता (३०, ९१),...दल के लिए तुम्हारा बचे रहना अधिक उपयोगी होगा (९७, २२), रामा को इस वक्त रतन का आना बुरा मालूम हुआ (६५, ८३),...इस प्रस्ताव का पास हो सकना ही असम्भव जान पड़ रहा था (९७, १५८)।

(५) नामिकीकृत सकर्मक तुमर्थ के साथ 'का' परसर्ग समेत संज्ञा से व्यक्त कर्म का प्रयोग हो सकता है, जैसे, इस भीष्म प्रण के करने से ही देवव्रत का नाम भीष्म पड़ा (८४, १३४), जेलर के गिनती पुकारते जाते पर भीगी...बेंत को... अभियुक्त के शरीर पर मारता है (९७, १५३),...अगले महीने के अन्तिम सप्ताह में यूरोपीय सम्मेलन का किया जाना काफी असम्भव है (IV, २०.५.१९७३)।

(६) नामिकीकृत तुमर्थ के साथ प्रायः सब परसर्गों का प्रयोग हो सकता है, जैसे, मेरे मित्र मिट रहे हैं और इस मिटने में उनकी ममता है आधार (२०, ५०), बराबर लड़ाई होती रहने के कारण सिक्खों को तीन लाभ हुए (२, २०९), हाथ रोकने पर भी बीस हज़ार से कम खर्च न होंगे (६६, ४), गुलसुम के पाने की उसे इतनी प्रसन्नता थी...(३०, ८८), रमा ने उसे लेने से साफ़ इनकार कर दिया (६५, १५९), न खाने को कोई चीज़ मिली, न पीने को चाय-काफ़ी (९९, १७२), भाभा ने रुपये भेजने पर ज़ोर दिया...(७२, १०२), खेती को व्यावसायिक आधार पर चलाने के लिए किसानों में एकाउंट रखने के प्रति जागरूकता उत्पन्न करने की आवश्यकता है (II, ५.१२.१९६७, २१)।

(७) नामिकीकृत तुमर्थ वाक्य के स्तर पर संज्ञा के लिए स्वाभाविक सब प्रकार्य पूरा कर सकता है :

(क) उद्देश्य—आधे पेट खाने ने समय से पहले उसके चेहरे पर लकीरें बना दी थीं...(१५, ११), पूरे वर्ष-भर वस्तु का मिलते रहना उसकी सेवा का फल है (१०१, २०३),...लोगों का आना आरम्भ हुआ (६१, ४७), गांव वालों के लिए कोदई का पकड़ लिया जाना लज्जाजनक मालूम हो रहा था (७१, १५८)।

निरपेक्ष तुमर्थ वाक्यांश अंशतः उद्देश्य के रूप में आता है क्योंकि वाक्य का क्रियार्थक संयोजक विधेय के नामिक अंग से समानाधिकृत होता है, जैसे, तीस की नौकरी बताना अपमान की बात थी (६५, ३९), सहारनपुर की बम-फ़ैक्टरी का पकड़ा जाना हमारे दल के लिए बड़ी भारी चोट थी (९७, ६),...उसका न चुना जाना मेरी पराजय थी (८, ६८)

(ख) प्रधान कर्म—अन्त में ऋषि ने पत्नी का कहना किया (८४, ३५), जूली लैम्प बुझाना भूल गयी (५२, १२७), उनका चलना और हँसना देखकर लगता था...(१०८, १५६),...उसका चोर समझा जाना वह नहीं सह सकती (४४, २१)।

'कहना' क्रिया के साथ प्रधान कर्म के रूप में परसर्ग सहित तुमर्थ आता है,

जैसे, खैर, इन दिनों तुम्हारी तनख्वाह न काटने को कह देना (६४, ११८)... भैया ने...भाभी को लेने जाने को कह दिया...(३, ११०)।

(ग) गौण कर्म—(१) संज्ञा सम्बन्धी : मालती को उसके जाने में विलम्ब समझ पड़ा (३६, ४८), उसने चन्दा देने से इनकार किया...(७३, ८);(२) विशेषण सम्बन्धी : ...मैं आज उसे देने को तैयार हूँ (७१, ११८), बड़ी मुश्किल से कुछ गहने लौटाने पर राजी हुआ (६५, १५), वह कुछ कह सकने में असमर्थ हो गयी (१०३, १०७); (३) क्रिया सम्बन्धी : अंग्रेजी पढ़ा [illegible] मन्दिर में जाने में झेंपता था...(१०३, ५१६), ऐसी है कौन जो मुरराम को मेरे पास आने से रोक लेगी (१०१, १५४),...जैसे किसी भयानक वस्तु से बचने के लिए कोई बालक को रोकता हो (३६, ५२)।

(घ) विशेषण—आखिर यही तो खाने पहनने और जीवन का आनन्द उठाने के दिन हैं (६५, ७३)...निरन्तर सहायता मिलती रहने की आशा थी... (II, ५.४.१९६६, ६),...छत पर जाने को सीढ़िया थी (१०७, १२१)....वह... एक प्रदर्शनी में भेजने के लिए कुछ चित्र बना रहा था (९६, १०१)।

(च) क्रिया-विशेषण—(१) कालवाचक : वैद्यों के बुलाये जाने के पहले ही उनकी मृत्यु हो गयी (८४, ८८), दल के भंग हो जाने पर मुझसे आजाद ने कहा...(९७, ११८); (२) कारणवाचक : बराबर लड़ाई होते रहने के कारण सिक्खों के तीन लाभ हुए (२, २०९), ...दो दिन लगातार [illegible] रहने से मेरे हाथों ने जवाब दे दिया था (१०७, ३०); (३) उद्देश्यवाचक :...तुम मुझे लेने को अपने भाई को भेज दो (३, ११३), कहीं जलवायु बदलने के लिए जाना ज़रूरी है...(६६, ११९); (४) अनुमतिवाचक : हाथ रोकने पर भी बीस हज़ार से कम खर्च न होंगे (६६, ४), पर यह निश्चय करने पर भी उसके पैर आगे बहुत धीरे-धीरे उठते थे (६६, १८१)।

(छ) पूरक (बहुत कम)—...बहस की जगह उन कामों को करना कुछ करना कहला सकता है (४४, ४३)।

(ज) संयुक्त नाभिक विधेय का नामिक अंग—...उस दिन सूल्हे के सामने जाना अपनी मौत बुलाना है (७१, ४७), उसकी अवज्ञा करना तो मनुष्यता को कुचलना है (११६, ३९), मेरी इच्छा तो अभी जाने की न थी (७१, १२९)।

शब्द-समुदाय के स्तर पर नामिकीकृत तुमर्थ निम्न सम्बन्ध व्यक्त करता है : (क) कर्मवाचक—उन्होंने इधर का आना-जाना बहुत कम कर दिया (३०, ९५), अपने को रोके रहने में भी सन्तोष था (९६, ११०); (ख) विशेषणवाचक पढ़ने की इच्छा थी (३९, ५२), मांस के भूने जाने की सुगन्ध आ रही थी (३०, १००); (ग) क्रियाविशेषणवाचक—नागफनी ने...एक किताब पढ़ने को मँगाई (१४३, ५४),...उसके मिटाने से बदनामी अवश्य होती है (७२, १५७), प्रधानमंत्री

पद पर आने के बाद उनकी लोकप्रियता और प्रभाव और बढ़ा

(II, २०.११.१९६५, १२)।

जैसे कि ऊपर दिये उदाहरणों से स्पष्ट है नामिकीकृत तुमर्थ के प्रायः सब क्रियावाचक लक्षण सुरक्षित रखे हुए हैं यानी : (क) वाच्य की कोटी—...कोदई का पकड़ लिया जाना...(७१, १५८),...टाँग का कट जाना...(३०, ३१३); (ख) पक्ष सम्बन्धी कोटि—...वस्तु का मिलते रहना...(१०१, २०३), शत्रुओं के बढ़ते चले आने की फ़िक्र...(७०, ७०),...मेरे मिटते जाने से...(२०, ५०), देवताओं के पी चुकने के बाद...(८४, २३); (ग) सापेक्ष कालवाचक अर्थ की कोटि—रघुवरसिंह के मरने के बाद (१, १२५),...सब अस्त्र चला चुकने पर... (१६, २८); (घ) सकर्मकत्व व अकर्मकत्व की कोटि—इस भीष्म प्रण के करने से... (८४, १२४), खरदूषण का मारा जाना सुनकर...(८४, ९२), बाल्टी के टूट जाने से...(१७, ३८६), आज सराफ़े का जाना...(६५, ६०); (च) विधेयन की कोटि—बाल्टी के टूट जाने से...(१७, ३८६),...मां के मना करने की परवाह... (६९, २१३), (छ) वृत्ति की कोटि—जाने रात बढ़ने को थी ढलने को थी (४४, ६५)। इसी तरह नामिकीकृत तुमर्थ में केवल अर्थ की कोटि नहीं है जो सिर्फ़ शुद्ध तुमर्थ के लिए स्वाभाविक है।

आधुनिक हिन्दी में तुमर्थ का नामिकीकरण शब्द-निर्माण का एक उत्पादक रूप-प्रक्रियात्मक तथा वाक्य-विन्यासात्मक ढंग है जिसके कारण 'आव', 'न', 'ती' आदि प्रत्ययों वाली क्रियार्थक संज्ञाएं हटाई जाने लगीं। इसका कारण यह भी हो सकता है कि नामिकीकृत तुमर्थ न केवल व्यापार बल्कि अपनी द्विगुण प्रकृति के फलस्वरूप व्यापार के साथ-साथ वाच्य तथा पक्ष के लक्षणों को, काल के विभिन्न सहायक अर्थों को व्यक्त कर सकता है तथा व्यापार के कर्ता और कर्म को सूचित कर सकता है यानी उनकी ओर संकेत कर सकता है। नामिकीकृत तुमर्थ की ये सब विशेषताएं और लक्षण एकांगी तुमर्थ वाक्यों में खास तौर से साफ़-साफ़ देखने में आते हैं, जैसे, फिर वही लाश घसीटना, कगार तक ले जाना, हाथ-पाँव पकड़कर झुलाना और अनन्त आकाश की ओर फेंक देना। उसका पानी में छपाक् से गिरना और फिर बह जाना। मटमैले पानी का उभरना। गर्मी के मारे पसीनों का टपकना (१०२, ९२)।

नामिकीकृत तुमर्थ के साथ आधुनिक हिन्दी में कृदन्तीकृत या कृदन्तपरक तुमर्थ भी हैं, जो शुद्ध तथा नामिकीकृत तुमर्थ के विपरीत लिंगों और वचनों के अनुसार बदल सकता है तथा विशेषणात्मक स्थिति में कारकों के अनुसार भी बदल सकता है।

कृदन्तपरक तुमर्थ में कुछ क्रियावाचक लक्षण निहित हैं : (क) वाच्य की कोटि—इसके मायने हैं कि ब्याज की अदायगी निर्यात वस्तुओं के रूप में की

जानी स्वीकार कर लेना (II, २६.७.१९६७, १९); (ख) पक्ष सम्बन्धी कोटि—बुढ़िया ने अपनी डलिया छीन लेनी चाही (४४, ८०); (ग) सकर्मकत्व और अकर्मकत्व की कोटि—भिखारी ने मिन्नत करनी शुरू की (६५, ९४)...प्लेटें आनी शुरू हुई (६१, ११२); (घ) विधेयन की कोटि—जूते पड़ने रुक गये (१०३, ३७९); (च) वृत्ति की कोटि—कल या तो रुपये देने पड़ेंगे, या गहने लौटाने पड़ेंगे (६५, १७)।

इसके साथ-साथ कृदन्तपरक तुमर्थ में कुछ नामिक लक्षण निहित है : (क) वह लिंगों व वचनों के अनुसार बदल जाता है (वचन के अनुसार बदलना पुल्लिंग संज्ञाओं के साथ अन्वित होने में मिलता है)—जूते पड़ने रुक गये (१०३, ३७९)....प्लेटें आनी शुरू हुई (६१, ११२); (ख) वह पूर्व स्थानीय विशेषण के रूप में आ सकता है—(उसने) और भी न जाने कितने ऐसे अनहोने अत्याचार किये (१०८, २१); (ग) 'नी' कारान्त संज्ञापरक रूप बना सकता है—होनी को कौन रोक सकता है (१, ४८८), तुम मुझे अनहोनी को होनी करने के लिए कहते हो (१०८, ११)।

मगर नामिकीकृत तुमर्थ के प्रतिकूल में कृदन्तपरक तुमर्थ के पूर्व विशेषण या 'का' परसर्ग सहित संज्ञा नहीं आ सकती और वह आश्रित शब्दों के बिना विधेय में आ न सकता तथा उद्देश्य के रूप में प्रयुक्त न हो सकता। कृदन्त के विपरीत कृदन्तपरक तुमर्थ परस्थिति में आते हुए परसर्ग सहित विशेष्य शब्द से अन्वित नहीं हो सकता और इसी तरह भाववाच्य रचना नहीं बना सकता।

कृदन्तपरक तुमर्थ मुख्यत: आवश्यकताबोधक रचनाओं में तथा आरामबोधक व समाप्तिबोधक क्रियाओं के साथ, 'चाहना' क्रिया के साथ तथा विधेय के नामिक अंग के कार्य में आने वाले विशेषणों तथा 'बात' शब्द समेत कुछ रचनाओं में प्रयुक्त होता है। उल्लेखनीय है कि कृदन्तपरक तुमर्थ के साथ-साथ यहां पर शुद्ध तुमर्थ भी आ सकता है, जैसे,

| **कृदन्तपरक तुमर्थ** | **शुद्ध तुमर्थ** |
|---|---|
| आवश्यकता बोधक रचनाएं | |
| ...अमीर की राह रोकनी है (४, ८७), मनुष्य को उससे मुक्ति पानी चाहिए (३९, १२६); | उसे अभी दूर की मंजिल तय करना है (४४, २६), युवती के सामने खूब प्रेम की बातें करना चाहिए (६६, ४३); |
| आरामबोधक व समाप्तिबोधक क्रियाएं | |
| और उसने...दुआएं करनी आरम्भ कर दीं (११३, ७), | लोगों ने भी उँगलियां उठाना शुरू कर दिया (५२, ३३-३४), |
| ...शिरीष भाई की बात सुनाई देनी बन्द हो गई (१०८, १७), | ...खर्च-वर्च देना बन्द कर दिया जाये (६६, ७५), |

साँवले पर लातों-जूतों के प्रहार होने शुरू हुए (११३, २४);

बादल जल्दी घुमड़ना शुरू हो गये थे (४४, ७४);

'चाहना' क्रिया

...लड़के ने कफ़नी उठा लेनी चाही (४४, १०४);

उसने पाँच रुपये दक्षिणा भी देना चाहा...(६५, १५९);

अन्य रचनाएं

बात मुँह से निकलनी मुश्किल है... (४, १४),

उनके बारे में कोई राय बनानी अनुचित बात होगी (११६, ९७)।

...उसके मुँह से आवाज़ निकालना मुश्किल हो जायेगी (५९, ७१),

तीस की नौकरी बताना अपमान की बात थी (६५, ३९)।

वाक्य के स्तर पर कृदन्तपरक तुमर्थ निम्न कार्यों में प्रयुक्त होता है: (क) संयुक्त व जटिल क्रियामूलक विधेय का क्रियावाचक अंग—पहले तो केशव को इस पर दस्तखत करने होंगे (२८, १७९), उन्होंने स्वयं गाड़ी देखनी शुरू की (१३, ६६),...बुढ़िया ने अपनी डलिया छीन लेनी चाही (४४, ८०); (ख) उद्देश्य (मुख्यतः जटिल)—...दो महीने की छुट्टियां भी काटना दूभर हो जाती हैं (५२, ११०), फ़ाइल तो आज ही चलनी शुरू हो जायेगी (२७, ३७)।

शब्द-समुदाय के स्तर पर आरामबोधक व समाप्तिबोधक तथा 'चाहना' क्रिया के साथ कृदन्तपरक तुमर्थ कर्मवाचक सम्बन्धों को व्यक्त करता है।

## तुमर्थ रचनाएं

तुमर्थ रचनाएं व्याकरणीकृत तथा संयुक्त में विभक्त होती हैं।

व्याकरणीकृत तुमर्थ रचनाएं तुमर्थ के साथ सहायक या रंजक क्रियाओं के मेल से बनी हैं जो पूरी तरह या आंशिक रूप से अपने स्वतंत्र अर्थ को खो गयी हैं। सहायक क्रिया व्यापार को वृत्ति तथा काल सम्बन्धी नये गुण प्रदान करती है। सारी रचना का शाब्दिक अर्थ तुमर्थ में निहित है। वाक्य में व्याकरणीकृत तुमर्थ रचनाएं क्रियामूलक विधेय के समान आती हैं और सहायक क्रिया के रूप के आधार पर यह विधेय संयुक्त या जटिल हो सकता है।

आवश्यकताबोधक **वृत्तिवाचक रचना** तुमर्थ के साथ (शुद्ध तुमर्थ या कृदन्तपरक तुमर्थ) 'होना' तथा 'पड़ना' रंजक क्रियाओं और 'चाहिए' वृत्तिवाचक क्रिया के मेल से बनी है जो आवश्यकता के विभिन्न सहायक अर्थ प्रदान करती है। इस रचना का मुख्य अर्थ व्यापार की वस्तुगत आवश्यकता प्रकट करना है। इसमें कर्ता के साथ जो 'को' परसर्गसहित अप्रत्यक्ष परसर्गीय कारक में (सार्वनामिक संज्ञा इसके अतिरिक्त कर्मकारक में) आता है, सह-सम्बन्ध की ओर

संकेत दिया जा सकता है या नहीं दिया जा सकता। आवश्यकता को प्रकट करने के विभिन्न सहायक अर्थ सहायक क्रियाओं द्वारा प्रदान किये जाते हैं।

'पड़ना' क्रिया के साथ तुमर्थ के मेल से विवशतापूर्ण आवश्यकता का अर्थ मुख्य रूप से दिया जाता है, यह आवश्यकता बनने वाली परिस्थितियों के कारण उत्पन्न होती है, जैसे, गजनी से चलकर उसे यह पहली बड़ी लड़ाई लड़नी पड़ी थी (४, ८५), बड़ी मुश्किल और पशोपेश में पड़ जाना पड़ता है मुझे (७६, ३६), कल या तो रुपये देने पड़ेंगे, या गहने लौटाने पड़ेंगे (६५, १७)।

'होना' क्रिया के साथ तुमर्थ के मेल से चरमावस्था की आवश्यकता का अर्थ आता है, जैसे, जाने आज क्या-क्या करना होना है। कैसे करना होता है! (१०८, १२),...उसे आज की यथार्थता के अनुकूल अपने आपको ढालना होगा (II, १०.१२.१९६६, ५)....देश की जनता को गुलामी की नयी बेड़ियां पहनना था (११६, ६९), इन्हें काम भी करना हुआ (७, ९७)।

'होना' क्रिया के साथ तुमर्थ के मेल से कर्तव्य की जैसी आवश्यकता का अर्थ भी आ सकता है, जैसे, पिछले दिनों चीन जाना हुआ (१०७, ६), अब मुझे चक्की पीसनी है, तो जितनी जल्दी पीस लूं उतना ही अच्छा (६५, २१८), वहां बाहर को आना ही होगा (३०, ३४)।

'होना' क्रिया के साथ तुमर्थ के मेल से विवशतापूर्ण आवश्यकता का-सा अर्थ भी आ सकता है जो 'पड़ना' क्रिया समेत रचनाओं से मिलता-जुलता है, जैसे, उन्हें अत्यधिक किराया अदा करना होता है और अपनी भू-धारण स्थिति के बारे में भी अनिश्चित रहना पड़ता है (II, १०.१२.१९६६, ८), सेठी जब चाहें उसे बिना बाँह और बिना पीठ का ब्लाउज़ पहनना होगा (९६, २३)।

विवशतापूर्ण आवश्यकता का अर्थ 'रहना' क्रिया के साथ तुमर्थ के मेल से पैदा हो सकता है जो 'होना' क्रिया के स्थानाश्रित समानार्थी के रूप में आता है, जैसे, रोज़ का काम वहीं चार इंच वाली तोप पर गोली भरना रह गया (११६, ५७), कभी किसी को घर का काम पूछना रहता था तो किसी को टोस्ट की तैयारी करनी रहती थी (१०९, ८२)।

'चाहिए' वृत्तिवाचक क्रिया के साथ तुमर्थ के मेल से व्यापार को पूरा करने की अपेक्षित आवश्यकता का अर्थ आता है, जैसे, जब उसे नट का रोल अदा करना है तो नेताओं की भाषा बोलनी चाहिए (१०७, ७), प्रस्तावित आयोग को अपराधी जेल में डालने का अधिकार दे देना चाहिए (II, १०.११.१९६६, ११)।

**कालसूचक रचना** 'होना' सहायक क्रिया के रूपों के साथ 'को' परसर्गसहित विकारी तुमर्थ के मेल से बनी है। उसका मतलब यह है कि व्यापार निकट भविष्य में पूरा किया जाने वाला है, जैसे, लड़ाई शुरू को हुई (८४, १५२), उसकी आँखों में आये हुए आँसू नीचे गिरने को हो रहे थे (५२, १५८), दिन चढ़ने को हो रहा है

(६६, ५७)।

'होना' सहायक क्रिया अविधेय रूप में आ सकती है, जैसे, वह रोने को होती हुई-सी बोली...(१०८, १६०)। तुमर्थ पुनरुक्त रूप में आ सकता है, जैसे, वह गिरने-गिरने को हो जाता (१७, ६०)।

इस रचना में 'कोई भी व्यापार आरम्भ करने जा रहना' पक्ष सम्बन्धी सहायक अर्थ आ सकता है, जैसे, यह कहकर वह रोने को हो आया, पर रोया नहीं। (४४, ५३), इस बार गुसलखाने में जो पहुँची और पानी डालने को हुई तो दिखा कि जगह पर साबुनदानी नहीं है (४४, ११०), यह तो भगवान का दण्ड है। जिस पर गिरने को होता है, उस पर गिरता है (१०२, ७७)।

व्यापार के पक्ष-सम्बन्धी तथा वृत्तिवाचक लक्षण को व्यक्त हुई संयुक्त तुमर्थ रचनाएं तुमर्थ के साथ सहायक (अर्द्धसहायक) क्रिया के रूपों के मेल से बनी हैं जो आंशिक रूप से अपने शाब्दिक अर्थ खो सकती हैं या उसे लगभग पूरी तरह से सुरक्षित रख सकती हैं। वाक्य के स्तर पर ऐसी रचनाएं जटिल क्रियात्मक विधेय के कार्य में आती हैं।

'आना' क्रिया के रूपों के साथ 'को' परसर्ग समेत विकारी तुमर्थ के मेल से व्यापार की समाप्ति का अर्थ आता है, तुमर्थ में नियम के अनुसार 'होना' क्रिया प्रयुक्त होती है, जैसे,...उसकी उम्र अब चालीस की होने को आयी थी (१३, ८३), गोली खतम होने को आ गयी (१०३, २२४), आँखें उसकी भीगने को आ गयीं, और वह उन्हें पोंछ नहीं सकी (४४, ७६)।

'आना' क्रिया के रूपों के साथ परसर्ग रहित तुमर्थ के मेल से तुमर्थ से व्यक्त व्यापार करने की सामर्थ्य का बोध होता है। इस रचना में व्यापार का कर्ता अप्रत्यक्ष परसर्गीय कारक में आता है (सार्वनामिक संज्ञाएं इसके अतिरिक्त कर्म कारक में आ सकती हैं), जैसे,...मुझे माँगना नहीं आता (७२, १२३), उसे कठिनाइयों से टकराना आता था (४७, ३७), गोरों को तो लड़ना तक नहीं आता है (११६, ६०), हमें क्या बोलना आता है (१२५, २२४)।

'जानना' क्रिया के रूपों के साथ परसर्ग रहित तुमर्थ के मेल से तुमर्थ द्वारा व्यक्त व्यापार करने की सामर्थ्य का बोध होता है, जैसे, मैं पहाड़ पर चढ़ना-उतरना जानती हूं (१०३, ४६८),...कजरी तैरना जानती है, घर में बैठकर बातें बताना जानती हो (१०३, १२७)। जैसे कि उदाहरणों से स्पष्ट है इन रचनाओं में व्यापार का कर्ता प्रत्यक्ष कारक में आता है।

'आना' क्रिया के रूपों के साथ 'में' परसर्ग समेत विकारी तुमर्थ के मेल से तुमर्थ द्वारा व्यक्त आरम्भ हुए व्यापार की विभिन्न प्रकार की पूर्णता का बोध होता है, जैसे, क्या कोई नयी बात देखने में आयी? (४, ३८),...विद्या से आदमी की बुद्धि ठीक हो जाती है पर यहां उल्टा ही देखने में आता है (६७, २), यह भी सुनने

में आया था कि...(६६, १२१), यह बात तो पिछले दस सालों से सुनने में आ रही है (५२, ९२)। जैसा कि उदाहरणों से स्पष्ट है यहां पर तुमर्थ के रूप में बहुधा 'देखना' व 'सुनना' क्रियाओं का तुमर्थ प्रयुक्त होता है।

'लगना' क्रिया के रूपों के साथ 'में' परसर्ग सहित विकारी तुमर्थ के मेल से तुमर्थ द्वारा व्यक्त व्यापार के आरम्भ का बोध होता है, जैसे,...मैं एलजबरा का सवाल निकालने में लग गया (४४, ७५)....मैंने जो काम बताया, करने में लग गयी (४४, ८६)।

## निरपेक्ष तुमर्थ वाक्यांश

निरपेक्ष तुमर्थ वाक्यांश तुमर्थ (शुद्ध तुमर्थ या [illegible] तुमर्थ) और उससे उस आश्रित शब्द के मेल से बना है जो अंशतः उद्देश्य के रूप में उस नामिक विधेय के साथ आता है जिसका संयोजक संज्ञा द्वारा व्यक्त नामिक अंग से समानाश्रित है, जैसे,...प्रेम-पत्र भेजना एक बड़ी समस्या रही है (१४२, ५२), वह बीच में उसे छोड़ देना कापुरुषता ही नहीं हो जायेगी ? (४, ४४-४५)....जैसे टांग का कट जाना हर रोज़ की बात थी (३०, ११३), सहारनपुर की [illegible] का पकड़ा जाना हमारे दल के लिए बड़ी भारी चोट थी (९७, ६)। निरपेक्ष तुमर्थ वाक्यांश तब अलग किया जा सकता है, जब विधेय के नामिक अंग में स्त्रीलिंग की संज्ञा आती है। अगर विधेय के नामिक अंग में एकवचन पुल्लिंग संज्ञा आती है तो संयोजक देखने में तुमर्थ तथा नामिक अंग दोनों से समानाश्रित होता है, जैसे, पूरे वर्ष-भर वस्तु का मिलते रहना उसकी सेवा का फल है (१०१, २०३), ऐसी जगह...सम्मानित वेशभूषा की महिला का पहुंचना सन्देह का ही कारण होता है (९७, १७)।

नामिक अंग के रूप में प्रयुक्त विशेषण समेत क्रियापरक व नामिक विधेय तथा तुमर्थ, जो वाक्य का उद्देश्य है नियमित रूप से एक-दूसरे से समानाश्रित होते हैं, जैसे, हमारे विचार से आपके यहां एक बार आना हमारे और आपके सम्बन्धों को सदैव के लिए दृढ़ बना देगा (९२, ३७८), इशारों में सब कुछ कहते रहना मुझे दिन-रात खाये जाता है (१०८, ३६),...उसके चंचल हँसमुख स्वभाव के लिए चुपचाप लेटे रहना कठिन हो गया (१०, १२८)।

## सुपाईन (अविकारी तुमर्थ)

आधुनिक हिन्दी में सुपाईन रूप-प्रक्रियात्मक दृष्टि से विलुप्त [illegible] कोटि है जिसमें कोई भी नामिक लक्षण नहीं है। इसी कारण [illegible] के स्तर पर सुपाईन क्रिया-प्रधान शब्द-समुदायों के आश्रित घटक के रूप में आता है और वाक्य के स्तर पर जटिल क्रियामूलक विधेय में आता है। शब्द-समुदाय और

वाक्य दोनों के स्तर पर कुछ क्रियाओं के साथ सुपाईन प्रकार्यात्मक ढंग से समान तुमर्थ रचाओं से मिलता-जुलता है मगर कुछ दूसरी क्रियाओं के साथ सुपाईन के स्थान पर तुमर्थ का प्रयोग असम्भव होता है।

गतिवाचक, स्थानान्तरणवाचक तथा कुछ दूसरी क्रियाओं के साथ सुपाईन और तुमर्थ एक-दूसरे के स्थान पर प्रयुक्त हो सकते हैं :

| **सुपाईन** | **तुमर्थ** |
|---|---|
| गर्मी में तैरने जाता हूं (१, २४८), | ...बीसों विद्यार्थी भाषा पढ़ने के लिए काशी गये...(६४, १०४), |
| वह जलसा देखने आयेंगे (७२, १५६), | शायद जाने से पहले बच्ची को देखने के लिए...आवें (६६, २०१), |
| आया बल्लू को सड़क पर टहलाने ले जाती है (६६, २२), | ...बच्चों को खिलाने के लिए ले चला (१०७, २६), |
| वे सभी...कपिल मुनि को मारने दौड़े (८४, ५३), | (निर्मला) छुड़ाने को दौड़ी (६६, ४८), |
| (रमानाथ) खत लिखने बैठे (६५, ३२), | मैं बिना खाये-पीये पढ़ने को बैठ गई (१६, ६७), |
| उन्हें वह...धूप में सूखने डाल देती (१७, ६२), | ...रंगरेज़ ने...पगड़ियां सूखने को डाल रखी थीं (१७, ७४), |
| किसी वैद्य-हकीम को बुलाने भेजना चाहते होंगे (६६, २११)। | ...तुम मुझे लेने को अपने भाई को भेज दो (३, ११३)। |

'देना' व 'पाना' क्रियाओं समेत रचनाओं में, 'आरम्भ करना ('होना')' के अर्थ में 'लगना' क्रिया तथा 'इच्छा रखना, इरादा रखना' के अर्थ में संतत कृदन्त के रूप में प्रयुक्त 'जाना' क्रिया समेत रचनाओं में नियम के अनुसार सुपाईन के स्थान पर तुमर्थ नहीं आ सकता। इन रचनाओं पर आगे भी विचार किया जायेगा।

सुपाईन में निम्नलिखित क्रियामूलक लक्षण निहित हैं :

(१) वाच्य की कोटि : सब अकर्मक सुपाईनों में कर्तृवाच्य के रूप हैं। सब सकर्मक सुपाईनों में कर्तृवाच्य तथा कर्मवाच्य के रूप हैं, जैसे, सुबह धूप निकलने पर घूमने निकला (६६, २८), हुकुम मिलते ही लड़कियां चुनी जाने लगीं (२५, १३३),...खिल्ली उड़ाई जाने लगी (५८, ७)।

(२) पक्ष की कोटि : (क) नित्यताबोधक—बरामदे की बत्ती मैंने जलती रहने दी (५२, १५३); (ख) घटमान—वह अपना सब कुछ खो देने को तैयार होती जाने लगी (४४, ८८)।

(३) सकर्मकत्व और अकर्मकत्व की कोटि : सकर्मक सुपाईन के साथ न केवल प्रधान कर्म वरन् तुमर्थ का भी प्रयोग हो सकता है, जैसे, मैं मुग लेने ही तो गई थी...(३६, १२४),...जब तुम गंगा जी में तैरना सीखने जाती हो...(१२३, १२)। अकर्मक सुपाईन के साथ इससे आश्रित दूसरे सुपाईन का प्रयोग हो सकता है, जैसे...जब वह खेलने जाने लगते हैं...(६६, ६४), कृष्णा...ग्वालों के साथ गाय चराने जाने लगे (८४, १११)।

(४) वृत्ति तथा पक्ष की कोटियां जो इसमें व्यक्त होती हैं कि सुपाईन कुछ क्रियाओं के साथ संयुक्त रचनाएं बना सकता है जो वाक्य में संयुक्त अथवा जटिल क्रियामूलक विधेय के रूप में आती हैं। ये ऐसी रचनाएं हैं :

(१) वे रचनाएं जिनका अर्थ 'सुपाईन द्वारा व्यक्त व्यापार पूरा करने की अनुमति देना या न देना है' ('देना' क्रिया के साथ सुपाईन का संयोग);

(२) वे रचनाएं जिनका अर्थ 'सुपाईन द्वारा व्यापार को पूरा करने का अवकाश देना या न देना है' ('पाना' क्रिया के साथ सुपाईन का संयोग);

(३) वे रचनाएं जिनका अर्थ है 'सुपाईन द्वारा व्यक्त व्यापार का आरम्भ करना है' ('लगना' क्रिया के साथ सुपाईन का संयोग);

(४) वे रचनाएं जिनका अर्थ 'सुपाईन द्वारा व्यक्त व्यापार को पूरा करने का इरादा करना है' ('जाना' क्रिया के संतत रूपों के साथ सुपाईन का संयोग);

कुछ शर्तों के साथ यहां पर 'होना' क्रिया के सुपाईन का तथा 'आना' क्रिया के रूपों से बनी व्याकरणीकृत रचना आ सकती है जो निकटतम भविष्य में व्यापार की पूर्ति व्यक्त करती है। यह रचना विकारी तुमर्थ के साथ बनने वाली समानार्थी रचना के स्थान पर प्रयुक्त हो सकती है।

शब्द-समुदाय के स्तर पर सुपाईन का प्रयोग तुमर्थ से आश्रित अंग के समान और कहीं कम अन्य अविधेय रूपों से आश्रित अंग के समान होता है, जैसे, किसी वैद्य-हकीम को बुलाने भेजना चाहते होंगे (६६, २११), वे ही मिस 'रोज़रेम' मेरी माता को...पढ़ाने आने लगीं (१, ५८-५६), ...वह अनुभवी दूतों को अमीर की खोज-खबर लेने भेजकर...(४, ६६), मां बनने जा रही वह ...(५, विशेषांक, १६६२, ३४)।

वाक्य के स्तर पर सुपाईन बहुधा जटिल क्रियामूलक विधेय में तथा अपेक्षाकृत कम क्रिया के अविधेय रूपों के वाक्यांश में आती है, जैसे, मैं चाय पीने चल रहा हूं (५६, ६१), वह जिन जंजालों को तोड़कर चला आया है उनको टूटी ही पड़ी रहने देना चाहता है (११६, ७४), और तब धड़ाधड़ दरवाजा और खिड़कियां पीटी जाने लगीं (१३, ६८), अगर आपको मेरा खेलने जाना पसन्द नहीं है तो कल से न जाऊंगा (६६,६१), यह तार कंचनजंगा की चोटी छूने जा रही जर्मन टोली की ओर से आया है (२७, ६४),...रामलीला मैदान में होने जा रही जनता पार्टी

की सार्वजनिक सभा के सम्बन्ध में पुलिस ने बड़े पैमाने पर यातायात की व्यवस्था की है (IX, २३-३-१९७७), उसे पत्नी की गोद में टिका रहने देकर कुछ देर चुपचाप वह अँधेरे में देखता रहा (४४, ६९)।

## सुपाईन की रचनाएं

जैसा कि ऊपर अंकित है सुपाईन चार अर्द्धसहायक क्रियाओं की सहायता से वृत्तिवाचक प्रकृति की संयुक्त रचनाएं बनाता है जो नियम के अनुसार जटिल क्रियामूलक विधेय के समान प्रयुक्त होती हैं। इन रचनाओं में अर्द्धसहायक क्रियाएं इन रचनाओं के लिए स्थिर शाब्दिक अर्थों में प्रयुक्त होती हैं जो न्यूनाधिक ढंग से इन क्रियाओं के मुख्य अर्थों से भिन्न होती हैं।

'देना' क्रिया के रूपों के साथ सुपाईन के संयोग से व्यापार करने की अनुमति देने या न देने की ओर संकेत दिया जाता है। इस रचना का प्रयोग वहुधा निषेध के साथ होता है यानी वह व्यापार करने की अनुमति न देने की बात प्रकट करती है, जैसे, लाजवंती हेमराज को घर से बाहर न निकलने देती थी (१३९, १३), उसने उसे नीचे से निकलने नहीं दिया (१७, २२१), लड़के-लड़की में कभी सम्पर्क नहीं होने देना चाहिए (१४३, २६), बस रहने दो...(४४, ९८),...ज़रा हो जाने दे (१७, २२०), बरामदे की बत्ती मैंने जलती रहने दी थी (५२, १५३), अरे उस्ताद, अभी लड़ाई तो ख़त्म होने दो (११६, ६३)।

'पाना' क्रिया के रूपों के साथ सुपाईन के योग से सुपाईन द्वारा व्यक्त व्यापार को पूरा करना सम्भव या असम्भव होने की ओर संकेत दिया जाता है। इस रचना में नियम के अनुसार निषेध का प्रयोग होता है यानी इस रचना का अर्थ व्यापार को पूरा करना असम्भव होने का है, जैसे, मर जाने के लिए सब कुछ तो करता हूं, पर मर नहीं पाता (३९, १०१), लेकिन सारी उतावली के बावजूद इन धक्कम-धक्कियां में सावधानी बरती जा रही थी कि कोई गिरने न पाये (१, २६७), हाते के बाहर भी न निकलने पाया था कि ज़ोर की वर्षा होने लगी (६५, ३८), वहां नौ बजे के बाद कोई पढ़ने नहीं पाता और सबको नियम के साथ खेलना पड़ता है (६६, ८१)।

उल्लेखनीय है कि व्याकरण और अर्थ विज्ञान की दृष्टि से यह रचना "धातु रूपी क्रियाविशेषण + 'पाना' क्रिया" जैसी विश्लेषणात्मक क्रिया से मिलती-जुलती है जो व्यापार का संभाव्य पक्ष प्रकट करती है। अर्थ की दृष्टि से यह दोनों रचनाओं के समान अर्थ में व्यक्त होता है, जैसे, 'मर जाने के लिए सब कुछ तो करता हूं, पर मर नहीं पाता (३९,१०१)', तथा 'अनवर नवाब उन्हें हटा देना चाहते हैं, लेकिन हटा नहीं पाते (१, ५२९)'। व्याकरण की दृष्टि से इन दोनों की एकरूपता 'पाना' क्रिया के पूर्णकालिक रूपों में कर्मणि रचना के अभाव में प्रकट हो जाती है,

जैसे, परन्तु वे सीढ़ियों से और न उतरने पाये थे कि सहसा शोर मचा (१३६, १७२)....चल पड़ने की इच्छा को वह रोक पाता (१०८, १६१)।

'लगना' क्रिया के रूपों के साथ सुपाईन के संयोग से सुपाईन द्वारा व्यक्त व्यापार आरम्भ होने की ओर संकेत किया जाता है, जैसे, दादा फिर रोने लगे (१०७, ६८)....कानूनी कुमार कमरे में टहलने लगता है (७९, ३३), राजकन्या कहना चाहने लगी...(४४, २१)।

'जाना' क्रिया के सतत रूपों में सुपाईन के संयोग से सुपाईन द्वारा व्यक्त व्यापार को पूरा करने के इरादे की ओर संकेत किया जाता है, जैसे, ...वह कुल्लू के किसी गांव में रहने जा रही है (५०, १२४)...वह उत्तर देने ही जा रहा था कि ...(१, २५३)...हम इस रंगमहल में आग लगाने जा रहे हैं (२, १२०)।

'आना' क्रिया के रूपों के साथ 'होना' क्रिया के सुपाईन के योग से सुपाईन द्वारा व्यक्त व्यापार की पूर्ति का अर्थ आता है। ये रचनाएं 'आना' क्रिया के रूपों के साथ 'होना' क्रिया के विकारी कृदन्त समेत रचनाओं के समानार्थी हैं, जैसे, मैं तीस वर्ष का होने आया हूं (२०, १०७), मगर आज चौथा दिन होने आ रहा था (१०७, १०४), आठ बरस का यह लड़का होने आया...(४४, ४२)—तुलना कीजिये—उसकी उम्र अब चालीस की होने को आयी थी (१३, ८३), यह उम्र होने आयी, सुबह से शाम तक बस पैसे के पीछे हाय-हाय (५२, २०)।

## कृदन्त

आधुनिक हिन्दी में कृदन्त क्रियात्मक नामिक रूप है जो या तो द्रव्य अथवा व्यक्ति के प्रक्रियात्मक लक्षण या तो गौण सहायक व्यापार या स्वयं मुख्य व्यापार प्रकट करता है। इस तरह कृदन्त में क्रिया तथा विशेषण के लक्षण सन्निहित हैं, और एक स्थान में कृदन्त के क्रियात्मक लक्षण तथा दूसरे स्थान में कृदन्त के नामिक लक्षण प्राथमिकता पाते हैं।

आधुनिक हिन्दी में रूप तथा अर्थ के अनुसार १२ कृदन्त रूप हैं जिनमें से छः रूप कर्तृ प्रयोग के कृदन्त हैं और छः कर्मणि प्रयोग के हैं। ३ कृदन्त रूप कर्तृवाच्य धातु से बनते हैं, ३ और कृदन्त रूप कर्मवाच्य धातु से बनते हैं, २ कृदन्त रूप कर्तृवाच्य तथा कर्मवाच्य सुपाईन से तथा ४ कृदन्त रूप स्वयं कृदन्तों से बनते हैं।

कर्तृवाच्य तथा कर्मवाच्य धातु से 'त' परप्रत्यय और 'आ' विशेषणवाचक विभक्ति जुड़कर प्रथम कर्तृवाच्य तथा कर्मवाच्य कृदन्त बनते हैं यानी 'लिख + त + आ = लिखता', 'लिखा जा + त + आ = लिखा जाता'।

कर्तृवाच्य धातु से 'आ (या)' विशेषणसूचक विभक्ति जुड़कर द्वितीय कर्तृवाच्य कृदन्त बनते हैं यानी 'लिख + आ = लिखा', 'खा + या = खाया'। द्वितीय कर्मवाच्य कृदन्त द्वितीय कर्तृवाच्य कृदन्त और 'जाना' क्रिया के 'गया'

सर्वदेशीय रूप के मेल से बनते हैं यानी 'लिखा+गया=लिखा गया'। कर्तृवाच्य तथा कर्मवाच्य धातु से 'रहा' क्रिया रूप जुड़कर (जो 'रहना' क्रिया से बने द्वितीय कृदन्त का व्याकरणिक समनाम है) कर्तृवाच्य और कर्मवाच्य प्रक्रियात्मक (संतत) कृदन्त बनते हैं यानी 'लिख+रहा=लिख रहा', 'लिखा जा+रहा=लिखा जा रहा'।

कर्तृवाच्य तथा कर्मवाच्य सुपाईन से 'वाल' परप्रत्यय तथा 'आ' विशेषणसूचक विभक्ति जुड़कर कर्तृवाच्य तथा कर्मवाच्य 'वाला' रूपिम कृदन्त बनते हैं यानी 'लिखने+वाल+आ=लिखने वाला', 'लिखा जाने+वाल+आ=लिखा जाने वाला'।

प्रथम तथा द्वितीय कर्तृवाच्य और कर्मवाच्य कृदन्तों से 'हुआ' क्रिया रूप (जो कि 'होना' क्रिया से बने द्वितीय कृदन्त का व्याकरणिक समनाम है) जुड़कर कर्तृवाच्य तथा कर्मवाच्य प्रथम तथा द्वितीय संयुक्त कृदन्त बनते हैं यानी 'लिखता+हुआ=लिखता हुआ', 'लिखा जाता+हुआ=लिखा जाता हुआ', 'लिखा+हुआ=लिखा हुआ', 'लिखा गया+हुआ=लिखा गया हुआ'। उल्लेखनीय है कि प्रथम तथा द्वितीय संयुक्त कर्मवाच्य कृदन्तों के रूप अधिकतर काल्पनिक रूप हैं न कि वास्तविक।

सरल (कर्तृवाच्य तथा कर्मवाच्य) प्रथम तथा द्वितीय कृदन्त और कर्तृवाच्य तथा कर्मवाच्य संतत कृदन्त अपूर्ण, पूर्ण तथा संतत काल-रूपों को तथा संभावनार्थ तथा संकेतार्थ के अनुकूल रूपों को बनाने में भाग लेते हैं, जब भी प्रथम तथा द्वितीय संयुक्त कृदन्त तथा 'वाला' रूपिम कृदन्त क्रिया के काल-रूपों को बनाने में भाग नहीं लेते, वे संयुक्त नामिक विधेय के नामिक अंग के प्रकार्य के समान आते हैं।

प्रथम तथा द्वितीय सरल कृदन्त विश्लेषणात्मक तथा पक्ष-सम्बन्धी रूपों को बनाने में भाग लेते हैं। इसके अतिरिक्त प्रथम तथा द्वितीय सरल कृदन्तों में काल व वाच्य सम्बन्धी अन्तर्विरोध विद्यमान हैं यानी 'आता—आया', 'लिखता—लिखा'। प्रथम सरल कृदन्त में वृत्तिवाचक विरोध मौजूद हैं यानी 'जाता' (जाता आदमी) और 'जाता' (अगर आदमी जाता)। प्रथम और द्वितीय सरल कृदन्तों में पक्ष-सम्बन्धी विरोध विद्यमान हैं यानी 'बढ़ता—बढ़ता जाता', 'बढ़ता रहता', 'बना—बना रहा', 'बढ़ा—बढ़ा जाता।'

इसी तरह आधुनिक हिन्दी में कृदन्तों के समान तथा विशिष्ट प्रकार्य हैं और वे रूपप्रक्रियात्मक तथा वाक्यविन्यासात्मक लक्षणों की संख्या से अलग होते हैं। इसलिए प्रत्येक कृदन्त का अलग-अलग वर्णन करना आवश्यक है।

**प्रथम सरल कृदन्त**। प्रथम सरल कृदन्त में निम्न क्रियावाचक लक्षण हैं :

(१) वाच्य की कोटि, जो कृदन्त के स्वतंत्र प्रयोग में तथा विधेय रूपक

प्रयोग दोनों में प्रकट होती है, जैसे : 'कन्धे रगड़ती भीड़ें निरता हुआ मैं यहां चला आया हूं (१०७, २६)' और 'नीचे रगड़े जाते साथी को छुड़ाने के लिए वह लड़का आगे बढ़ा...(१७, २२०)'; 'अपने साथ मुझे भी क्यों पाप का भागी बनाते हो (१, २०४)' और '···सूट प्रायः सर्दियों में बनाये जाते हैं (१, २०३)'।

(२) पक्ष की कोटि, जो कि स्वतंत्र प्रयोग में तथा विधेय रूपक प्रयोग दोनों में प्रकट होती है, जैसे : दौड़ती बस में सागर को गीली गीली हवाओं में आती ये गम्भीर पुकार कैसी फुरहरी पैदा करती थी (१०७, २८)....भागे जाते एक नवयुवक ने मुझ नववृद्धा को अनचेता धक्का दे दिया (१, १२४), वह भागता जा रहा था (२१, १११), ज्यों-ज्यों वे पीछा करने वाले से बचने के लिए भागकर आगे बढ़ते, पीछा करने वाले का भय बढ़ता जाता था (६६, ५७)....प्रवाह में बहे जाते रावत जैसे सहसा किनारे आ लगे (६६, ८८)।

(३) सकर्मकत्व और अकर्मकत्व की कोटि, जैसे : ऐसा दूध पीता नादान बच्चा नहीं (७३,११२), वह स्वप्न देखती चली जा रही थी उसकी अँगुली थामे फ़ज्जा चल रहा था (७, २६),...उसने दूर चली जाती नन्दा के चरणों की थाप सुनी (१०७, ८८)।

(४) काल की कोटि, जो प्रथम सरल कृदन्त के स्वतंत्र प्रयोग में सरल क्रिया विधेय के प्रकार्य में प्रकट होती है। सरल कृदन्ती कालवाचक रूप लुप्तांश रूप होते हैं जिनमें वर्तमान काल के निषेधात्मक रूप तथा नियमतः पुनरावर्ती अपूर्ण काल (लङ) के रूप आते हैं जो कि वर्तमान तथा अपूर्ण भूतकाल के रूपों जैसे एक-दूसरे का विरोध करते हैं, जैसे : 'वह उसे देख नहीं पाते और वह सबको देखता है (१६, १५६)' और 'पहला युवक प्रायः आता, उसके पास बैठता और अनेक चेष्टाएं करता, किन्तु युवती अचल पाषाण-प्रतिमा की तरह बैठी रहती (३६, ८८)'।

(५) सापेक्ष कालसूचक अर्थ की कोटि। सहायक विधेय, क्रियाविशेषणवाचक या विधेयवाचक विशेषण के रूप में आते हुए जो मुख्य विधेय के साथ-ही-साथ एक ही कर्त्ता से सम्बन्ध रखता है, प्रथम सरल कृदन्त मुख्य विधेय के व्यापार से समपाती व्यापार की समक्षणिकता प्रकट करता है, जैसे : मैं तौलिये से अपने कानों के पास का साबुन पोंछता उनकी आँखों को गौर से देखता रहा (१०७, ४३), बीच आसमान में लटकता मैं चला जा रहा था (१०७, २६)। स्वतंत्र सहायक विधेय के समान आते हुए जो उस कर्त्ता से सम्बन्ध रखता है जो कि वाक्य का उद्देश्य नहीं है, प्रथम सरल कृदन्त विधेय से विधिवत रूप में सम्बन्ध विच्छेद करता है और विधेय से काल के बारे में एक सामान्य धारणा से जुड़ जाता है, जैसे : तू जब मोरनी के पास मोर नाचता देखता है...(१०३, ५६),...वह जब कभी कहीं फोटो खींचे जाते देखता...(१५, ८७)।

(६) अर्थ की कोटि, जो इसमें प्रकट होती है कि प्रथम सरल कृदन्त संकेतार्थ

(सरल रूप) के समान प्रयुक्त होते हैं, जैसे : काश, वह अपनी कृति देख पाता (१०७, ७१)।

(७) विधेयन की कोटि, जो इसमें प्रकट होती है कि कृदन्त तार्किक विधेय व्यक्त कर सकता है और अपना कर्त्ता अपना सकता है। इसमें कृदन्त नियमतः वाक्य के प्रधान कर्म की विशेषता दिखाता है और अधिकतर अकर्मक होता है, जैसे : ...सुमन की अनिच्छा दिनों-दिन बढ़ते देखकर उसने अपने मन में यह निर्धारित किया...(७३, ७०), मैं इन शब्दों को ध्वनित-प्रतिध्वनित होता सुन रहा था (१४२, १२५), सिपाहियों को मज़ाक करता देखकर इन्द्रपाल ने एक सिपाही को सम्बोधन किया...(९७, ५४),...मैं लालटेन जलती छोड़कर सो जाता... (१०८, ५१)।

इसके अतिरिक्त प्रथम सरल कृदन्त मुख्य क्रिया की हैसियत से निम्न विश्लेषणात्मक कालवाचक रूपों में आता है : (१) अपूर्ण भूतकाल (लङ)—लाख अपने को विश्वास दिलाता था, लेकिन विश्वास ही नहीं होता था कि आज मेरी ही सुहागरात है (१०८, ७); (२) नियमतः पुनरावर्ती अपूर्ण भूतकाल (लङ)—अम्मा और विमल दादा जब भी मिलते, उनमें अकसर इसी बात को लेकर लड़ाई हो जाती (१०७, ४६); (३) आभ्यासिक वर्तमान काल—सुबह मैं व्यायाम कर चुकता हूं तो मुझे तेज़ भूख लगती है (१०, ११२); (४) द्वितीय भविष्यत्काल—यहां अभी तुम्हारे जेठजी आते होंगे (१०८, ५३)।

प्रथम सरल कृदन्त सम्भावनार्थ तथा संकेतार्थ के अपूर्ण रूपों में आता है—जब सारा आसमान सलेटी रहता हो, बस पूरब में इस छोर से उस छोर तक छाया बैंगनी प्रकाश धीरे-धीरे सुनहली पड़ता जाता हो...(१०८, १०५), यही सब यदि जानता होता तो नन्दा, मैं भी सीधा हो गया होता (१०७, ८७)।

मुख्य क्रिया की हैसियत से प्रथम सरल कृदन्त निम्न पक्ष-सम्बन्धी रूपों में आता है : (१) नित्यताबोधक सीमित पक्ष—बस तुझे देखता रहना चाहता हूं (९६, १३१), वे लोग जब खायें, तुम खिलाती रहना (९५, ३६); (२) घटमान पक्ष—हर बार वह गिनती बढ़ाता गया (१७, ८३), जज साहब की स्थिति बिगड़ती चली गयी (८७, २९८)।

शब्द-समुदाय के स्तर पर प्रथम सरल कृदन्त विशेषणपरक सम्बन्ध प्रकट करता है जो कि (क) विशेषणात्मक-गुणात्मक—काँपते हाथ (१०२, ३); बदलता रंग (१०२, ६); जलती बीड़ी (५२, ३३); (ख) विशेषणात्मक-क्रिया-विशेषणात्मक—महादेव...मेंढ़क की भाँति उचकता चला (६९, १२३), "दुत् पगली...!" शीला उसे उठाती बोली (११६, १०४),...अम्मा...चावल बीनती कहती...(१०७, ४३); (ग) विशेषणात्मक-विधेयवाचक—यही आँखें कभी उसे खेलती देखकर प्रसन्न होती थीं, अब रक्त में लोटती देखकर तृप्त होंगी

(७२, २२३), हमने हिन्दी के गीतों के रिकार्ड बजने सुने (६६, १७) में बाँटते हैं।

प्रथम सरल कृदन्त में निम्न नामिक लक्षण हैं :

(१) कृदन्त में लिंग तथा वचन की व्याकरणिक कोटि निहित है। इन कृदन्तों की वचन सम्बन्धी व्याकरणिक कोटि पुल्लिंग संज्ञाओं से कृदन्त का अन्वय होते समय व्यक्त होती है। कारक की कोटि भी पुल्लिंग संज्ञाओं से कृदन्तों का अन्वय होते समय व्यक्त होती है। स्त्रीलिंग संज्ञाओं से कृदन्त केवल लिंग में अन्वित होता है। कुछ उदाहरण : दूध पीता बच्चा (७३, ११२), काँपते दो हाथों ने (१०८, २८), बरसते पानी में (१०२, ३), चलती कुमुदिनी (१६, १३६), देखती रहती...उसकी ठंडी पड़ती देह को, उसकी बन्द होती धड़कनों को (१०७, ७५), नीचे रगड़े जाते साथी को (१७, २२०), कहे जाते शब्दों को (४४, ७१)।

(२) विशेषण की तरह कृदन्त वस्तु का लक्षण सूचित कर सकता है और विशेषण के साथ विशेषण के समान आ सकता है, जैसे : ...भपाके छोड़ती शराबी साँसें (१०८, ८),...अपलक देखती अदृश्य आँखें (१०७, १३)।

(३) विशेषण की तरह कृदन्त 'सा' निपात-विशेषक के साथ प्रयुक्त हो सकता है, जैसे : सोचती-सी बोली (१०८, २४), रेंगता-सा स्वर (६६, १००)।

(४) विशेषण की तरह कृदन्त निषेधात्मक पूर्वप्रत्यय जोड़ सकता है, जैसे : पत्नी ने...अपनी अनदेखती आँख को जरा दबाकर, देखती आँख को कुछ कमान-सी ऊपर को खींचे, ठंडे सुर से कहा,...(२०, १६)।

(५) विशेषण की तरह कृदन्त का नामिकीकरण हो सकता है जिसके फलस्वरूप वह संज्ञा के सब लक्षण अपना लेता है, जैसे : जीतने का जग साथी हारते का बेटा नहीं...(२०, ८०), रावत...राह चलतों से राह पूछते चौक की ओर चलने लगे (६६, ८४), द्वार पर आते-जातों की भीड़ें जुटने लगी...(१, ४४०), अचानक वह जैसे सोते से चौंक पड़ा (२८, ५१), पहचानते में कोई दुविधा नहीं हुई (६७, १७२),...बारातियों की बोलती बन्द करके लच्छू जब रमेश के घर आया तब कन्यादान हो रहा था (१, ६७), मरता क्या न करता (७७, ३००)।

शब्द-समुदाय के स्तर पर नामिकीकृत कृदन्त निम्न सम्बन्ध व्यक्त करते हैं : (१) कर्म-विषयक—...इस बात की घोषणा वे...हर आते-जाते को सुनाते हुए जरूर किया करते (१७, २०५); (२) कर्त्ता-विषयक घायलों की चीत्कार, मरतों का आर्तनाद, हाथियों की चिंघाड़...सब मिलकर रक्त में अवसाद उत्पन्न करने लगे (४, १७१); (३) कर्त्ता-कर्मविषयक डूबते को तिनके का सहारा मिला (६६, १३६); (४) सम्बन्धवाचक (विशेषणवाचक सम्बन्धों के अन्दर) आते-जातों की भीड (१, ४४०); (५) क्रियाविशेषणात्मक अभी सुखराम के पाँव में चलते में कुछ दर्द बाकी था (१०३, २४२)।

वाक्य के स्तर पर प्रथम सरल कृदन्त निम्न अंगों के रूप में आते हैं :

(१) विशेषण—संज्ञा-संलग्न विशेषण के समान आते हुए कृदन्त अपने विशेषक से नियमित ढंग से अन्वित होता है, यानी निर्धारित पुल्लिग संज्ञा से वह लिंग, वचन तथा कारक में अन्वित होता है तथा निर्धारित स्त्रीलिंग संज्ञा से केवल लिंग में, जैसे : ...उभरते गंज को देखकर...(५२, २६),...काँपते हाथों से पत्तों को छू-छूकर...(१०२, ३),...प्रवाह में बहे जाते रावत जैसे सहसा किनारे आ लगे (६६, ८८),...कहे जाते शब्दों को सुनती रह गई (४४, ७१), बड़ी दूर दिखती घाटी...(११६, ३३),...छत से जाती जंजीर में...(५२, २३),...चौकीदार की मुसकराती नज़रों से उसकी आँखें मिलीं (५२, २५)।

एकल कृदन्तों के साथ-साथ विशेषण के रूप में द्विरुक्त कृदन्त आ सकते हैं, जो कि (क) भिन्न मूलों की धातुओं से बने हैं—जीती-जागती तसवीरें नहीं खींच सकते (६४, ५१); (ख) एकमूलीय सरल तथा साधित धातुओं से बने—...और इस मरु में किसी जलते हुए तीर की तरह जलती-जलाती, तपती-तपाती यह सड़क ! (७, २८)।

उन कृदन्तों के अतिरिक्त जो क्रियापरक तथा नाम-क्रियापरक धातुओं से बने हैं, संज्ञा-संलग्न विशेषण के कार्य में वे प्रथम सरल कृदन्त आते हैं जो विश्लेषणात्मक धातुओं से बने हैं, जैसे : हज़ारों वीर खाई में कूदकर बढ़ते आते हाथियों पर करारा वार करने लगे (४, ११७), उनकी आँखें...काले दिखायी देते ऊँचे वृक्षों... पर घूम रही थीं (६६, ६६)।

संज्ञा-संलग्न विशेषण की हैसियत से कृदन्त-रूपक क्रियावाचक नामिक शब्द-समुदाय तथा पदबंध रचनाएं आ सकती हैं, जैसे : आँसू लाने की कोशिश करती आँखों को देखा किये (५१, ७६), लालाजी का पीछा करती गोविन्द की निगाह... मुड़ गयी (५२, २२), बिना फ़ीते के खीसें निपोरते फटे-पुराने बूट ! (५२, २१), ...जहां पर करवट लेती-सी नदी मुड़ी थी (११६, ३३), देखती रहती...उसकी ठंडी पड़ती देह को, उसकी बन्द होती धड़कनों को (१०७, ७५)।

(२) विधेयवाचक विशेषण जो 'मिलना, नज़र आना, दिखायी देना', तथा 'देखना, सुनना, छोड़ना, पाना' आदि क्रियाओं के साथ प्रयुक्त होता है। विधेयवाचक विशेषण के समान आते हुए कृदन्त वाक्य के उद्देश्य सम्बन्धी सहायक विधेय के रूप में (जब मुख्य क्रिया अकर्मक है) तथा वाक्य के प्रधान कर्म सम्बन्धी सहायक विधेय के रूप में (जब मुख्य क्रिया सकर्मक है) प्रयुक्त होते हैं, जैसे : ...बिन्दु एक पेड़ के नीचे खड़ी उसकी प्रतीक्षा करती मिली (३६, ८),...लोमड़ी दूसरी झाड़ी की ओर भागी जाती दिखी (५१, २८), नन्दलाल की मां बाहर से आती दिखायी दी...(१६, १४८), दद्दा के सिर से खून बहता देख टुकड़ी के नायक ने कहा...(४, १७०), हमने हिन्दी के गीतों के रिकॉर्ड बजते सुने (६६, १७),...मैं लालटेन जलती छोड़कर सो जाता...(१०८, ५१), 'झरना' से आगे बढ़कर हम कवि को

'आँसू' में सिसकता पाते हैं (१५२, १४६)। लक्षण रहित प्रधान कर्म को निर्धारित करते हुए कृदन्त उससे नियमित ढंग से अन्वित होता है। लक्षणान्वित प्रधान कर्म को निर्धारित करते हुए कृदन्त (क) उससे नियमित ढंग से अन्वित हो सकता है, जैसे : ...तुमने जवानी में कितने ही हवाई महलों को... गिरते देखा (३२, ६४), बरीज़ उसको प्रसन्नता में नाचती देख बहुत प्रसन्न हुआ (३६, ५३-५४), (ख) एकवचन पुल्लिंग कृदन्त के रूप में अविकृत ढंग से आ सकता है, जैसे : आदमियों को आता देखकर बाबाजी भागे...(१४७, १२२)....शत्रु...सैकड़ों जीवित मुनियों को जलता देख भयभीत होकर भाग गये थे (४, ६४)।

(३) क्रियाविशेषणात्मक विशेषण, जो बहुधा गति, स्थानान्तरण, कथन, चिन्तन आदि की क्रियाओं के साथ प्रयुक्त होता है, जैसे : सारा दिन मैं मुँह छिपाता इधर-से-उधर भटकता रहा (१०८, १९)....पानो छिपाता छिपाता ज्वालासिंह के घर में पहुँचा (७५, ११९)....सहमी सिमटती सिमटती चली जा रही थी (७, २९), और फिर वह पुरानी गाड़ी अड़ती, मचलती, हिलती चलने लगी (६९, १६९), वह मानो चुनौती देता-सा उठा...(४४, ६६),...सोचती-सी बोली...(१०८, २४), एक दिन वह बातें करती-करती मूर्च्छित हो गयी (११६, १२६)।

(४) विधेय, जो (१) क्रियावाचक हो सकता है और उसमें (क) सरल कृदन्त-वाचक—...जो कुछ वह कहते, मैं कर डालता (१०८, २०), अगर वह सबसे कुछ-न-कुछ कहती-फिरती, तब भी शायद नया नहीं लगता (१०८, १९), उन्हें यह मौसम नहीं सुहाता (५२, ९८), (ख) संयुक्त कृदन्त क्रियावाचक या कृदन्त कृदन्तवाचक—मैं जब हँसता हूं या हंसाता हूं...(१०, ५१), अंग्रेज रमणियां थीं, जो धीरे नहीं चलती थीं, तेज़ चलती थीं (४४, ३५); (२) संयुक्त नामिक, जो नियमतः 'दिखायी देना' अर्थक क्रियाओं के साथ आता है—लाल साहब तो पक्के कृषक होते दिखायी देते हैं (६९, १२०), अपने हृदय से एक बोझा-सा उतरता मालूम हुआ...(६९, १३४), उसे इससे सहारा होता जान पड़ता है (४४, ६६), मेरी ज़िम्मेदारी खत्म नहीं होती लगती है (११६, ९६), शिवदास की मूर्ति उनके सामने खड़ी यह कहती देख पड़ती थी...(६९, ११६)। स्मरणीय है कि इस ढंग के विधेय में कृदन्त उद्देश्य में निहित हो सकने वाले आभासमूलक लक्षण की ओर संकेत देता है जो वास्तव में हो भी न सकता, यानी सारे विधेय में एक विशिष्ट काल्पनिक अर्थ विद्यमान है। यह उन सब अर्थसंयोजक क्रियाओं सहित सभी कृदन्तपरक विधेयों से सम्बन्धित है।

इसी श्रेणी में 'अनुभव (महसूस) होना' के साथ प्रयुक्त कृदन्त भी आते हैं, जैसे : सरनो को अपने शरीर से गर्मी-सी निकलती अनुभव हो रही थी (७५, १२६), प्रत्येक कदम पर दुर्घटना की नंगी तलवार सिर पर लटकती महसूस होती

थी (IV, १२-१२-१९७३)।

नामिकीकृत कृदन्त वाक्य के स्तर पर निम्न अंगों के रूप में आते हैं : (१) उद्देश्य—मरता क्या न करता (७७, ३००); (२) प्रधान कर्म—...इस बात की घोषणा वे...हर आते-जाते को सुनाते हुए ज़रूर किया करते (१७, २०५); (३) गौण कर्म—रावत...राह चलतों से राह पूछते चौक की ओर चलने लगे (९६, ८४); (४) विशेषण—द्वार पर आते-जातों की भीड़ें जुटने लगीं (१, ४४०); (५) क्रियाविशेषण—शायद भागते में वह गिर भी चुकी थी (१०२, १५५); (६) कर्त्तावाचक निर्धारक—डूबते को तिनके का सहारा मिला (६६, १३९)।

एकल कृदन्तों के साथ-साथ विधेयवाचक तथा क्रियाविशेषणवाचक विशेषण की परस्थिति में द्विरुक्त कृदन्त प्रयुक्त हो सकते हैं, जो (क) एकमूलीय सरल तथा साधित धातुओं से बने हैं—...पाली छिपता-छिपाता ज्वालासिंह के घर में पहुँचा (७५, ११९); (ख) भिन्न मूलों की धातुओं से बने हैं—वह गिरती-पड़ती चली जा रही थी (६६, २४७), वे बकती-झकती रसोईघर की ओर चली गयी (७, ७८); (ग) एक ही धातु से बने हैं—...लहरा लँगड़ाती-लँगड़ाती चली जा रही थी (७, २९),...जुए के खेल की बातें भी वह सुनाती-सुनाती थकती नहीं थी (११६, २५)।

द्विरुक्त कृदन्त संयुक्त नामिक विधेय में भी आ सकते हैं, जैसे : ...हरदम लिखते-पढ़ते ही नज़र आते थे (१, ५८)।

**संयुक्त प्रथम कृदन्त**—प्रथम संयुक्त कृदन्त विश्लेषणात्मक रचना है जो प्रथम सरल कृदन्त और 'हुआ' क्रिया रूप (जो 'होना' क्रिया के द्वितीय सरल कृदन्त का समाकार है) के मेल से बनी है।

प्रथम संयुक्त कृदन्त में वे तमाम नामिक लक्षण निहित हैं जो प्रथम सरल कृदन्त में हैं, परन्तु प्रथम सरल कृदन्त के विपरीत इसमें वे सब क्रियापरक लक्षण नहीं हैं जो सरल कृदन्त में मिलते हैं।

प्रथम संयुक्त कृदन्त में निम्न क्रियापरक लक्षण हैं :

(१) पक्ष की कोटि, जो प्रथम संयुक्त कृदन्त के स्वतंत्र प्रयोग में ही मिलती हैं, जैसे : अंजर-पंजर को तोड़ती आती हुई खाँसी...(४६, ९), इस म्लेच्छ घुड़सवार सेना को बढ़ती आती हुई देख...(४, ५८)।

(२) सकर्मकत्व और अकर्मकत्व की कोटि, जैसे : पानी को काटती हुई मथानी (५२, ७२), आवाज़ों को दबाती हुई गलियां (७, १०), वह रोता हुआ घर में आया (६६, १४६),...लाश पानी में बहती हुई आ रही थी (१, २५०)।

(३) सापेक्ष कालवाचक अर्थ की कोटि। विधेयवाचक तथा क्रियाविशेषण-वाचक विशेषण के समान आते हुए जो कि मुख्य क्रिया के साथ-साथ व्यापार के एक ही कर्त्ता से सम्बन्ध रखता है, प्रथम संयुक्त कृदन्त मुख्य क्रिया के व्यापार से

सहायक व्यापार की सहकालिकता प्रकट करता है, जैसे : तभी सामने से शीला तेजी से कदम बढ़ाती हुई आती दिखायी दी (११२, ८४), अरी, तू अब तक पीछे ही लटकती हुई चली आ रही है...(७, २२)। क्रियाविशेषण विशेषण (सहायक स्वतंत्र विधेय) के समान आते हुए जो व्यापार के कर्म से सम्बन्ध रखता है, प्रथम संयुक्त कृदन्त विधेय से विधिवत ढंग से कालगत सम्बन्ध खो देता है और इससे काल के बारे में एक सामान्य धारणा से जुड़ता है, जैसे : तभी उसने सामने आग की लपटें उठती हुई देखी (११६, ७७), लल्लू लुधियाना के एक हलवाई की दुकान पर बर्तन माँजता हुआ पकड़ा गया (१७, २५३)।

(४) विधेयन की कोटि, जो इसमें प्रकट होती है कि कृदन्त आंशिक विधेय व्यक्त कर सकता है और अपना कर्ता अपना सकता है। इसमें कृदन्त नियमतः वाक्य के प्रधान कर्म की विशेषता दिखाता है और अधिकतर अकर्मक होता है, जैसे : तभी उसने सामने आग की लपटें उठती हुई देखी (११६, ७७),...मुझे पढ़ता हुआ देख रही थी...(१०८, ५२)।

प्रथम संयुक्त कृदन्त का अपना आश्रित उपवाक्य हो सकता है, जैसे : इसी तरह अपने दिल को तसल्ली देता हुआ कि अगली दुकान से लूँगा, चला जाता था (२४, ८०)।

शब्द-समुदाय के स्तर पर प्रथम संयुक्त कृदन्त विशेषणात्मक संबंध प्रकट करते हैं, जो (क) विशेषणात्मक-गुणात्मक में भटकता हुआ राजकुमार (५२, ११), चमकती हुई मुस्कराहट (२७, १०३); (ख) विशेषणात्मक-क्रिया-विशेषणात्मक में—वह रोता हुआ घर में आया (६६, १४६)...पानी शोर करता हुआ बह रहा था (५२, १४४); (ग) विशेषणात्मक विधेयवाचक में ...स्त्रियां रास्ता चलती हुई देखी जा सकती हैं (४४, ६४), तिरंगे झंडों को फहराता हुआ देखकर...(११५, ५०) विभक्त होते हैं।

संयुक्त प्रथम कृदन्त में निम्न नामिक लक्षण हैं :

(१) कृदन्त में लिंग, वचन तथा कारक संबंधी व्याकरणिक कोटि निहित है। प्रथम संयुक्त कृदन्तों में वचन तथा कारक की व्याकरणिक कोटि पुल्लिंग संज्ञाओं से इनका अन्वय होते समय व्यक्त होती है क्योंकि स्त्रीलिंग संज्ञाओं के साथ कृदन्त का केवल लिंग में अन्वय होता है, जैसे : बिगड़ता हुआ काम बना लेती है (६६, १५१), दूजी ने उन झिलमिलाते हुए तारों को देखा (६६, २४६), उनके काँपते हुए पैर स्थिर हो गये...(६६, २६१), वह आंगन में खेलती हुई रजिया पर एक स्नेहभरी दृष्टि डालकर...(७, १३), वह बर्फ़ की बहती हुई चट्टानों के नीचे से छिपकर मार करता था (११६, ४६)।

(२) विशेषण की तरह प्रथम संयुक्त कृदन्त वस्तु का लक्षण सूचित कर सकता है और वह विशेषण के साथ विशेषण के कार्य में आ सकता है, जैसे : यह

हरा-भरा लहलहाता हुआ पौधा जल गया (६५, १०), नस-नस में लपकती हुई नीली लहरों के विष-बुझे तीर तुम्हारी चेतना के रथ को छलनी कर डालेंगे (१०७, २३)।

(३) विशेषण की तरह प्रथम संयुक्त कृदन्त 'सा' निपात विशेषक के साथ प्रयुक्त हो सकता है, जैसे :...पिछले कई वर्ष उसकी आँखों के सामने उड़ते हुए-से गुज़र गये (७, ६८), आँख बंद करके कुछ देखती हुई-सी पन्ना ने कहा... (१२६, २२)।

(४) विशेषण की तरह प्रथम संयुक्त कृदन्त का नामिकीकरण हो सकता है जिसके फलस्वरूप वह संज्ञा के सब लक्षण अपना लेता है, जैसे : सज्जन, इन जाते हुओं को क्या ताकता है, अब आते हुओं की ताक में रहना होगा (४, ५६)।

शब्द-समुदाय के स्तर पर नामिकीकृत प्रथम संयुक्त कृदन्त निम्न संबंध व्यक्त करते हैं: (१) कर्म-विषयक सज्जन, इन आते हुओं को क्या ताकता है... (४, ५६); (२) कर्त्ता-विषयक—मरते हुओं के आर्तनाद...से वातावरण अशांत हो उठा (४, १८४)।

वाक्य के स्तर पर प्रथम संयुक्त कृदन्त निम्न अंगों के रूप में आते हैं :

(१) विशेषण—संज्ञासंलग्न विशेषण के समान आते हुए प्रथम संयुक्त कृदन्त अपने विशेषक से नियमित ढंग से अन्वित होता है, यानी निर्धारित पुल्लिग संज्ञा से वह लिंग, वचन तथा कारक में अन्वित होता है तथा निर्धारित स्त्रीलिंग संज्ञा से केवल लिंग में, जैसे :...उसकी पत्नी ने सामने जाते हुए ताँगे के पीछे उड़ती हुई धूल में आँखें गड़ा दीं...(७, १८), दूजी ने उन झिलमिलाते हुए तारों को देखा (६६, २४६),...कहीं से धीमे-धीमे उठता हुआ शोर ज़ोर पकड़ने लगा (४४, २२)।

उन प्रथम संयुक्त कृदन्तों के अतिरिक्त जो शुद्ध क्रियापरक तथा नाम-क्रियापरक धातुओं से बने हैं, संज्ञा-संलग्न विशेषण के कार्य में वे प्रथम संयुक्त कृदन्त आते हैं जो विश्लेषणात्मक धातुओं से बने हैं, जैसे :...सब अंजर-पंजर को तोड़ती आती हुई खाँसी कहीं जमे कम्बख्त कफ को तनिक भी उखाड़ कर अपने साथ न ला पाती थी (४६, ६), वह दूर से दिखाई देती हुई आकृति मिस पाल ही हो सकती थी (५२, १२७)।

संज्ञा-संलग्न विशेषण के कार्य में कृदन्तरूपक क्रियावाचक नामिक शब्द-समुदाय तथा पदबंध रचनाएं आ सकती हैं, जैसे : सारे कला भवन में नग्नता का प्रदर्शन करता हुआ एक भी चित्र नहीं है (६६, ६१), पर तभी मेरी दृष्टि उसकी दूर होती हुई लड़खड़ाती आकृति पर पड़ी (१२५, २८), राह काटते हुए गाड़ीवान ने पूछा...(५२, ४४)।

सजातीय विशेषणों के कार्य में आते हुए कई प्रथम संयुक्त कृदन्तों में 'हुआ' क्रिया रूप अंतिम कृदन्त के बाद से एक बार प्रयुक्त हो सकता है, जैसे : नुकीली

चट्टानों से छीलता और काटता हुआ पानी शोर करता हुआ बह रहा था (५२, १४४)।

(२) विधेयात्मक विशेषण जो 'मिलना', 'नज़र आना', 'दिखाई देना' तथा 'देखना', 'सुनना', 'पाना' आदि क्रियाओं के साथ प्रयुक्त होता है। विधेयात्मक विशेषण के समान आते हुए प्रथम संयुक्त कृदन्त वाक्य के उद्देश्य संबंधी सहायक विधेय के रूप में (जब मुख्य क्रिया अकर्मक है) तथा वाक्य के प्रधान कर्म संबंधी सहायक विधेय के रूप में (जब मुख्य क्रिया सकर्मक है) प्रयुक्त होते हैं, जैसे: रोज लगभग एक ही स्थान पर उसी समय यही करता हुआ वह मिलता है (४८, ९५), केसर...बाहर जाती हुई दिखायी दी (६९, २०१), पश्चिम में गर्द उड़ती हुई नज़र आ रही थी (६९, ७०)... एक भारी-भरकम साँड...तेज़ी से बढ़ता जाता हुआ दिखाई दिया (१, २५८), तभी उसने सामने आग की लपटें उठती हुई देखी (११, ७७), नन्दू लुधियाना के एक हलवाई की दुकान पर बर्तन माँजता हुआ पकड़ा गया (१७, २५८), रत्नप्रभा अपनी ओर लोगों को देखते हुए पाने की आदी है (४८, ९५)।

लक्षणरहित प्रधान कर्म को निर्धारित करते हुए प्रथम संयुक्त कृदन्त उससे नियमित ढंग से अन्वित होता है। लक्षणयुक्त प्रधान कर्म को निर्धारित करते हुए प्रथम संयुक्त कृदन्त (क) उससे नियमित ढंग से अन्वित हो सकता है, जैसे: इस म्लेच्छ घुड़सवार सेना को बढ़ती आती हुई देख...(४, ५८)...रंगन को जलते हुए देखा था (५२, ११३); (ख) एकवचन पुल्लिंग कृदन्त के रूप में अविकृत ढंग से आ सकता है, जैसे: उन्होंने अपनी आँखों से अपनी [illegible] को खोद-खोदकर छुरियों से कटता हुआ देखा (१०३, ६१७), वह खिड़की के बाहर बादलों को उड़ता हुआ देखती रही (५२, ९८),...तिरंगे झंडों को फहराता हुआ देखकर... (११६, ५०)।

(३) क्रियाविशेषणात्मक विशेषण, जो बहुधा गति, [illegible], कथन, चिंतन संबंधी आदि क्रियाओं के साथ प्रयुक्त होता है। उल्लेखनीय है कि यह प्रकार्य प्रथम संयुक्त कृदन्तों का मुख्य प्रकार्य है, जो उसमें प्रथम सरल कृदन्तों की तुलना में कहीं अक्सर आते हैं।

मुख्य क्रिया के व्यापार की गुणात्मक विशेषता तब और अधिक स्पष्ट दीखती है जब प्रथम संयुक्त कृदन्त मुख्य क्रिया से सन्निहित है, जैसे: भागता हुआ जा बेटा (५४, ६), करीमुद्दीन बुड़बुड़ाता हुआ बाहर चला गया (५२, ११२), लखनदास भागता हुआ आ रहा है...(६६, २६२), वह जल्दी मचाती हुई-सी बोली...(१०८, १३६), वह काँपती हुई बैठ गयी (६६, १६५)...लतिका सोती हुई-सी जग गयी (५२, ६०)।

मुख्य क्रिया से भिन्न-भिन्न दूरी के स्थानों पर आते हुए (बहुधा आश्रित

अंगों समेत) प्रथम संयुक्त कृदन्त क्रियाविशेषणवाचक विशेषण का प्रकार्य निम्नतर ढंग से अदा करने लगता है, परन्तु अपूर्ण सहायक गौण व्यापार का प्रकार्य अपनाने लगता है जो मुख्य व्यापार का समपाती होता है, जैसे : ड्राइवर ने... गाड़ी चला दी और कुछ क्षणों तक उसकी गड़गड़ाहट धीमी होती हुई फिर खो गयी (११२, ५२), वेश्या जम्हाई लेती हुई गली में किसी को पुकार रही थी (९६, ८६),...पर रौनकी इसको न जानता हुआ अपने काम में लीन था (१३९, ६४), स्त्रियां पनघटों को जाती हुई रुक गयीं (६९, २४०)।

(४) संयुक्त नामिक विधेयक जो (क) संयुक्त नामिक विधेय में जो प्रथम संयुक्त कृदन्त और संयोजक क्रिया से बना है, जैसे : उसका कद छ: फुट से निकलता हुआ था (३१, ३८), बूढ़े की आवाज गड़गड़ाती हुई थी (५३, ४६), सवेरे जब उनकी आँखें खुलतीं, तो श्रद्धा उनके स्नान के लिए पानी तपाती हुई होती...(६८, १२५); (ख) संयुक्त नामिक विधेय में जो प्रथम संयुक्त कृदन्त और 'मालूम होना', 'लगना' आदि अर्द्धसंयोजक क्रिया से बना है, जैसे : उसकी आँखें किसी को खोजती हुई मालूम होती थीं (६५, २७२),...इस लड़के का काँपता हुआ स्वर उसके भीतर घूमता हुआ लगता था (४४, ९९), अपने जीवन की घटनाएं...आनन्द के निवास-स्थान की ओर दौड़ती हुई जान पड़ती थी... (६९, २६९), डाकू की भयानक आँखें उसे अपने शरीर के अणु-अणु में प्रवेश करती हुई प्रतीत हुईं (१६, १२३) विभक्त होता है।

वाक्य के स्तर पर नामिकीकृत प्रथम संयुक्त कृदन्त उसके निम्न अंगों के रूप में आते हैं; (१) प्रधान कर्म—सज्जन, इन जाते हुओं को क्यों ताकता है... (४, ५६); (२) विशेषण—मरते हुओं के आर्तनाद...से वातावरण अशांत हो उठा (४, १८४)।

प्रथम संयुक्त कृदन्तों के आधार पर एक नवरचना—अनुमतिवाचक कृदन्त उत्पन्न हुई जो प्रथम संयुक्त कृदन्त तथा 'भी' निपात के मेल से बनती है, जैसे : वह बाहर की ओर देखता हुआ भी जैसे उन्हीं को देख रहा था (८, ३२), मैं उससे असहमत होता हुआ भी उसे मना न करता...(२९, १००) बड़ा ही करुण, क्षीण स्वर था, दूर से आया प्रतीत होता हुआ भी मेरे बिलकुल समीप था (११६, ११६)।

(५) विधेयवाचक समानाधिकरण, जो मुख्यत: कर्तृकारकीय नामिक एकांगी वाक्यों में आते हुए वाक्य के मुख्य अंग से नियमित ढंग से अन्वित होता है, यहां तक कि इसका 'हुआ' में अंतिम स्वर का नासिकीकरण होता है, जैसे : और एकाएक मेरी निगाहों में मेरे छोटे भाई की दुल्हन आशा का चेहरा घूम गया— शर्मीला, साँवला चेहरा। माथे पर बिंदी। नाक में सोने की चमकीली कील। पतले-पतले होंठ लज्जा और शर्म से मुसकराते हुए। और मेंहदी रची उँगलियां

रेशम के लच्छों को सभालती हुई, रगीन डोरियों में गोजाना के जीवन के सपने बुनती हुई (३१, ४६)।

उन प्रथम संयुक्त कृदन्तों के अतिरिक्त जो शुद्ध क्रियापरक तथा नाम-क्रिया-परक धातुओं से बने हैं, परस्थिति में वे प्रथम संयुक्त कृदन्त आ सकते हैं जो विशेषणात्मक (गत्यात्मक) धातुओं से बने हैं, जैसे ...एक भारी-भरकम सांड... तेजी से बहता जाता हुआ दिखाई दिया (१, ५२), उस अनेकों घुड़सवार सेना को बढ़ती आती हुई देख...(४, ५८)।

प्रथम सरल और संयुक्त कृदन्तों में निम्न ... भेद होते हैं :

(१) प्रथम संयुक्त कृदन्त वाक्य, काल तथा ... संबंधी उन विरोधों से वंचित हैं जो ... ढंग से प्रकट किये जाते हैं। शुद्ध ... विधेय के रूप में प्रथम संयुक्त कृदन्त के प्रयोग की संभावना, जैसे 'वह सलाम करके चलता हुआ (६५, १२२)', बहुत कम नजर आती है क्योंकि 'हुआ' की जगह 'बनना' क्रिया से बना द्वितीय सरल कृदन्त आ सकता है, जैसे ...अमीर खां उन इलाकों को छोड़कर चलता बना (८७, २६)।

(२) प्रथम संयुक्त कृदन्त काल संबंधी रूपों को तथा संभावनार्थ तथा संकेतार्थ के रूपों को नहीं बनाते यानी क्रियापरक विधेय के समान उनका प्रयोग नहीं होता। संयुक्त नामिक विधेय में उनका संयोजक क्रियाओं समेत प्रयोग भी बहुत कम आता है।

(३) वाक्य के स्तर पर प्रथम संयुक्त कृदन्त ... समानाधिकरण के प्रकार्य में आते हैं जो प्रथम सरल कृदन्तों में नहीं मिलता।

(४) शब्द-समुदाय तथा वाक्य के स्तर पर प्रथम संयुक्त कृदन्तों की पुनरुक्ति नहीं होती।

**सरल द्वितीय कृदन्त**—ऊपर विचारित अविधेय ... के विपरीत सरल द्वितीय कृदन्त प्रक्रिया ही नहीं बल्कि निष्पादित प्रक्रिया का परिणाम प्रकट करता है जो द्रव्य (या व्यक्ति) में उसकी विशेषता बतलाने वाले जैसी सम्मिलित की जाती हैं। यह विशेषता स्वयं कर्ता के व्यापार के फलस्वरूप उत्पन्न हो सकती है और तब सरल द्वितीय कृदन्त कर्तृवाचक होता है, परन्तु यह विशेषता किसी बाहरी व्यापार के फलस्वरूप जो कि अन्य कर्ता (निर्दिष्ट और अनिर्दिष्ट) द्वारा किया जाता है और तब सरल द्वितीय कृदन्त कर्मवाच्य होता है। अतः कर्तरि प्रयोग में सरल द्वितीय कृदन्त पूर्ण परिणामात्मक ... के अर्थ में आता है और वह व्यापार के पूर्णत्व और अपूर्णत्व की दृष्टि से सरल प्रथम कृदन्त का विरोध है : 'आया लड़का—आता लड़का' तथा 'लड़का आया—लड़का आता'। कर्मणि प्रयोग में सरल द्वितीय कृदन्त वाच्य की दृष्टि से प्रथम सरल कृदन्त का विरोध है : 'उसकी लिखी किताब' तथा 'वह किताब लिखता'। स्मरणीय है कि सकर्मक

क्रिया से बने द्वितीय कृदन्त का कर्तरि प्रयोग कृदन्त के विशेषणात्मक प्रकार्य में होता है जब वह अपने प्रधान कर्म समेत संज्ञासंलग्न विशेषण के समान आता है।

सरल द्वितीय कृदन्त में निम्न क्रियापरक लक्षण हैं:

(१) वाच्य की कोटि, जो सरल द्वितीय सकर्मक कृदन्त के शाब्दिक अर्थ के अतिरिक्त व्याकरणिक रूप से कृदन्त के स्वतंत्र प्रयोग में और विधेय दोनों में व्यक्त होती हैं, जैसे: 'आपका बताया नुस्खा मैं हमेशा याद रखूंगा' (१४३, ४६) और 'उन्हें ज्योतिष द्वारा बताये गये अपने हस्तरेखा के फल पर दृढ़ विश्वास था' (६६, ३३), '...वह...दुर्गा भाभी द्वारा इकट्ठा किया दल का पैसा था'(६७, १८) और 'रमेश के द्वारा की गयी इस गहरी खुशामद से...' (१, १८०), 'मेरे आँसू उन्होंने देख लिए' (१३६, १५५) और 'दैत्यों से यह न देखा गया' (२८, ६०)।

(२) पक्ष की कोटि, जो सरल द्वितीय कृदन्त के स्वतंत्र प्रयोग में तथा विधेय दोनों में मिलती हैं, जैसे: '...उसका पिसे आटे को सम्भालने वाला गिलाफ़-सा सूंड की तरह लटका था' (५२, २३) और '...महंगाई के कुचक्र में पिसता आया उपभोक्ता अब कुछ राहत की साँस ले सकेगा' (II, ५.५.१९६८, ६), 'लड़का असहाय पड़ी रत्नप्रभा की आँखों में करुणा से देखता हुआ...' (४४, ११३) और 'धुँधली पड़ गयी आँखों के कारण जान पड़ता था कि...' (६६, ८६), '...वह दरवाज़े की ओर बढ़े' (४४, ७१) और 'कुन्ती सीधी बढ़ती गयी' (१७, ३८६), 'पत्नी ने ऊपर देखा...' (४४, ७१) और 'पत्नी स्तब्ध बनी उसे देखती रही' (४४, ७०)।

(३) सकर्मकत्व और अकर्मकत्व की कोटि, जैसे: वर्दी पहने खानसामा ने... पूछा (६६, १३-१४), ...सड़क से भटका परदेसी हूं (६६, ४६), प्राण-विसर्जन का प्रण किये लाल माने नहीं (६६, ३६),...टप्पर से लटके लालटेन की रोशनी में छाया नाचती है आस-पास...(५२, ५५)।

(४) काल की कोटि जो सरल क्रियापरक विधेय के रूप में सरल द्वितीय कृदन्त के प्रयोग में व्यक्त होती है जब कृदन्त निष्पादित एक बार होने वाला व्यापार प्रकट करता है, जैसे: वह डरा (४४, ६६), इस तरह एक महीना बीत गया, मगर कोई पत्र न आया (१३६, १४४), खाना खाकर जब चेतन लेटा... (१७, ८८)।

(५) सापेक्ष कालवाचक अर्थ की कोटि। सहायक विधेय (या क्रियाविशेषणात्मक विधेयवाचक विशेषण) के समान आते हुए जो कि मुख्य क्रिया के साथ-साथ व्यापार के एक ही कर्ता से सम्बन्ध रखता है सरल द्वितीय कृदन्त मुख्य क्रिया के व्यापार से सहायक परिणामात्मक अवस्था की सहकालिकता प्रकट करता है, जैसे: बिचारा बैठा मार खाता रहा (६६, १०),...एक युवक हाजी...भागा आ रहा है (६, १०७),...स्टेशन मास्टर मरा पड़ा था (३१, २७), गंगा की कथा

पुराणों में अनेक प्रकार से [illegible] मिलती हैं ([illegible])।

किसी भी कर्ता सम्बन्धी सहायक विधेय (विशेषतावाचक विशेषण) के समान आते हुए जो वाक्य का उद्देश्य नहीं है सरल द्वितीय कृदन्त विधेय से विधिवत् ढंग से कालवाचक सम्बन्ध रखता है और इससे काल के बारे में एक सामान्य धारणा से जुड़ता है, जैसे : ...उसने [illegible] किया था ([illegible]), तू मुझे बदली समझता है (१०३, ७८)।

स्वतंत्र कृदन्तीय वाक्यांश में जो कि संरचना में [illegible] सहित जटिल वाक्य के समान है, अपने कर्ता समेत आते हुए सरल द्वितीय कृदन्त मुख्य विधेय के व्यापार की पूर्वकालिकता (या समकालिकता) प्रकट करता है, जैसे (क्षमा)... एक महीना हुआ यहां आयी थी (५६, ६), [illegible] भी अर्सा हुआ मुझे पहुंच चुका था ([illegible]) [illegible] देर हुई बनारसी आया था (६५, १२९)।

(६) विधेयन की कोटि, जो इसमें प्रकट होती है कि सरल द्वितीय कृदन्त तार्किक विधेय व्यक्त कर सकता है और अपना कर्ता अपना सकता है। इसमें कृदन्त वाक्य के प्रधान कर्म की विशेषता दिखाता है अथवा स्वतंत्र कृदन्तीय वाक्यांश में प्रयुक्त होता है, जैसे : अब अपनी हवेली का ताला टूटा और किवाड़ खुले पड़े... (२४, १२९), थोड़ी देर हुई लौटा हूं (६६, १६७), मुझे [illegible] आया देख भूरा मेरे पास आ गया (१०३, १२३)।

ऊपर लिखे लक्षणों के अतिरिक्त सरल द्वितीय कृदन्त मुख्य क्रिया के समान निम्न विश्लेषणात्मक कालवाचक रूपों में आता है : (१) पूर्ण भूतकाल में—चेतन पहले भी आया था (१४७, ६१), उसके बाद दस दिन उन लोगों को दंड दिया जाता था, जो दूर-दूर से आये होते थे (२, ८७); (२) पूर्णतामूलक काल (आसन्न-भूत, पूर्ण वर्तमान)—कलकत्ता तो कई बार गया हूं (२६, १२३)....उन्होंने चाय पर कुछ मित्र बुला रखे होते हैं...(९, ६४); (३) तृतीय [illegible] कहार सो गये होंगे (७३, ३२)।

सरल द्वितीय कृदन्त सम्भावनार्थ तथा संकेतार्थ के पूर्ण रूपों में आता है—...सोचने लगे, शायद घूमने गया हो...(६६, १९४),...अगर मैं...दावत न दी होती, तो मुझे क्या यह काम मिल जाता ? (७, १००)।

मुख्य क्रिया की हैसियत से सरल द्वितीय कृदन्त निम्न [illegible] रूपों में आता है : (१) नित्यताबोधक पूर्णपरिणामी पक्ष—सप्ताह भर मैं बीमार पड़ी रही (१३, २२), वह गहरी नींद सोया रहा (८, ४१); (२) [illegible] पूर्णपरिणामी पक्ष—प्रभा शर्म और उलझन में मरी जा रही थी (९६, ६४), जिन्दगी खराब हुई जा रही है लड़के की (१०८, ९६); (३) स्थैतिक पक्ष—...परिहास उनकी

ाणी से फूटा पड़ रहा था (१०८, ५०),...जी, क्यों बीच में कूदे पड़ते हो (६६, ६८)।

शब्द-समुदाय के स्तर पर सरल द्वितीय कृदन्त विशेषणपरक सम्बन्ध प्रकट करता है जो कि (क) विशेषणात्मक-गुणात्मक—आया आदमी (६६, ४६), बैठे लोग (६६, ३७), पिसे आटे को (५२, २३), खुली दृष्टि (७२, ६१); (ख) विशेषणात्मक-क्रियाविशेषणात्मक—...एक नौकर बैठा खाना खा रहा था (७, ७४), दौड़ा-दौड़ा उनको ले आया। (११६-६२); (ग) विशेषणात्मक-विधेयवाचक —पिता का शव एक कोने में कपड़े से ढँका रखा था (३१, १०८), हेम ने शीला को अपने विचारों में खोया पाया (११२, ७१) विभक्त होते हैं।

सरल द्वितीय कृदन्त में निम्न नामिक लक्षण हैं :

(१) कृदन्त में लिंग, वचन तथा कारक की व्याकरणिक कोटि निहित है। इन कृदन्तों की वचन तथा कारक सम्बन्धी कोटि पुल्लिंग संज्ञाओं से कृदन्त का अन्वय होते समय व्यक्त होती है, जैसे : सामने...पेड़ों से छाया एक और छोटा-सा टीला था (६६, ४७), काजों में फँसे बटन खिंचे जा रहे थे (६६, ११३), स्टोर वाले ने ध्यान से अशोक के चश्मा पहने चेहरे की ओर देखा...(१३६, ४१)। स्त्रीलिंग संज्ञाओं के साथ कृदन्त केवल लिंग में अन्वित होता है, जैसे : ...आटे में नहाई चक्की...खड़ी थी (५२, २३),...खिड़की में बैठी राजकुमारी की तसवीर (४२, ११-१२), डबडबा आयी आँखों को ऊपर उठाकर...(५६, ६८)।

(२) विशेषण की तरह सरल द्वितीय कृदन्त वस्तु का लक्षण सूचित कर सकता है और वह विशेषण के साथ विशेषण के समान आ सकता है, जैसे : भीगी और शिथिल वायु ने रावत को याद दिलाया...(६६, ७७), घने, फैले, काले जंगल और चाँदनी में चमकता लिद्दर...(७६, ११४)।

(३) विशेषण की तरह सरल द्वितीय कृदन्त 'सा' निपात-विशेषक के साथ प्रयुक्त हो सकता है, जैसे : भरे-से स्वर में कहा...(१०२, १४), यहाँ...टूटा-सा पुल है (५२, ११२)।

(४) विशेषण की तरह सरल द्वितीय कृदन्त निषेधात्मक या कुछ अन्य पूर्वप्रत्यय जोड़ सकता है, जैसे : किस शिव का धनुष मेरे बिना अनटूटा पड़ा है? (१०७, २२),...वह मुसकराहट अभी तक अन-सिमटी पड़ी है (१७१, ३०), चेतन...कोहनियों के बल अधलेटा हो उठा (१७, १६), तुम...बेहोश और अधमरे पड़े हुए थे (२८, ३४)।

(५) विशेषण की तरह सरल द्वितीय कृदन्त शाब्दिक खण्ड के रूप में 'होना' क्रिया के तुमर्थ के साथ आ सकता है, जैसे : थके होने के कारण खूब जोर की नींद आयी (६६, २७), ऊँची कुर्सी पर बना होने पर भी शिवालिक का खुला द्वार आधा डूबा हुआ था (१, २५४), चेस्टर के नीचे नैकर पहने होने के कारण उसकी

टाँगें खुली रहतीं (५२, १२)।

(६) विशेषण की तरह सरल द्वितीय कृदन्त का नामिकीकरण हो सकता है जिसके फलस्वरूप वह संज्ञा के सब लक्षण अपना लेता है, जैसे : सरकार का दिया ही खाता हूं (१०३, १३०), मर्दों के मुंह किसी ने सी दिये हैं (१०३, १७४), मैंने उसका कहा न माना (२८, ५४), चेतन की मां का ख्याल था कि ऐसी फिर-निकलियों पर मैं कम ही टिकती हैं...(१०, २८३)।

[illegible] के स्तर पर नामिकीकृत सरल द्वितीय कृदन्त निम्न सम्बन्ध व्यक्त करते हैं : (१) [illegible] किये-धरे पर पानी फिर जाता (८३, ७३); (२) कर्ता-कर्म [illegible] हुस्न के चोर आगे को चैन कहां (१०३, २६१); (३) [illegible] ([illegible] सम्बन्धों के अन्दर) मर्दों के मुंह किसी ने सी दिये हैं (१०३, ११४); (४) [illegible] तख्त से उठकर राम के मारों की तरह महल में चला गया (२५, १७४)।

वाक्य के स्तर पर सरल द्वितीय कृदन्त निम्न अंगों के रूप में आते हैं :

(१) विशेषण [illegible] संज्ञा-संलग्न विशेषण के समान आते हुए कृदन्त [illegible] से नियमित ढँग से अन्वित होता है, यानी निर्धारित पुल्लिंग संज्ञा से वह लिंग, वचन तथा कारक में अन्वित होता है तथा निर्धारित स्त्रीलिंग संज्ञा से केवल लिंग में, जैसे : बैठा गोविन्द हिसाब लिख रहा था (५२, १६), रामशरण जंगल से छाये टीले पर चढ़ रहा था (६६, ८७),...वह बड़ी देर तक काली स्याही से छपे कहानी के अक्षरों को स्थिर निगाहों से घूरता रहा (५२, ११), ढीली पकड़ी लाठी विजय के हाथ से निकल गयी (५१, २५), बीती बातों की याद...गुसाईं सोचने लगा... (५२, ७४)।

एकल कृदन्तों के साथ-साथ विशेषण के रूप में द्विरुक्त कृदन्त आ सकते हैं, जो कि (क) एकमूलीय सरल तथा साधित धातु से बने [illegible] बाजी हाथ से जाती थी...(७०, ३६), ...ये [illegible] बातें थीं...(७३, १०६), ... शर्माजी ने इन्हीं गिने-गिनाये मनुष्यों को प्रसन्न [illegible] समझा (७३, १०४); (ख) भिन्न मूलों की धातुओं से बने हैं—घास के लॉन के साथ [illegible] मेंहदी के पीछे क्यारी में सोसन खिला था (७, १२८), [illegible] में बची-खुची पूंजी भी निकल गयी (६६, २०६), पियानो के संगीत सुर रुई की छुई-मुई रेशों से अब तक उसके मस्तिष्क की थकी-माँदी नशों पर फड़फड़ा रहे थे (५२, १०७); (ग) एक ही धातु से बने हैं—दाड़िम की फैली-फैली अधढंकी डालों से छनकर धूप उसके शरीर पर पड़ रही थी (५२, ८२)।

उन कृदन्तों के अतिरिक्त जो क्रियापरक तथा नामपरक धातुओं से बने हैं, संज्ञा-संलग्न विशेषण के प्रकार्य में सरल द्वितीय कृदन्त आते हैं जो विश्लेषणात्मक धातुओं से बने हैं, जैसे : मैंने जल चुकी सिगरेट को देखा (१५६, १४६),...जेब में

तह किये रखे मैट्रिक के सार्टिफिकेट को मैं खूब मरोड़ता-मसलता रहा (१०८, १३७), गले में खुद कत्ल किये आदमियों के मुंडों की माला पहने रहते हैं (९६, ६३)।

संज्ञा-संलग्न विशेषण की हैसियत से कृदन्त-रूपक क्रियावाचक नामिक शब्द-समुदाय तथा पदबंध रचनाएं आ सकती हैं, जैसे : जिन लोगों ने पक्की कराई बात को फेर दी...(९६, १३१),...वह...दुर्गा भाभी द्वारा इकट्ठा किया दल का पैसा था (९७, १८),...उसने...एड़ी का पिछला हिस्सा किवाड़ के उस चोट खाये भाग पर अड़ाकर पूरा ज़ोर लगाया (७, १३५)।

सरल द्वितीय कृदन्त द्वारा प्रकट किये हुए विशेषणों में वे जटिल विशेषण एक ख़ास स्थान अपना लेते हैं, जो परसर्गरहित संज्ञा के साथ बहुधा कर्तृहीन कृदन्त के मेल से बने हैं और जिसका करणकारकीय अर्थ होता है, जैसे : ...नग जड़े पिन ने उसका ध्यान आकर्षित किया (९६, १२), चमारियाँ मोटे कपड़े का रंग उड़ा लहँगा पहनतीं...(१०३, १५७),...कालिख पुती बटलोई में पानी भरकर...(५२, ८२), स्त्री रामशरण पर ममताभरी दृष्टि डालकर...(९६, ५३), मौजे चढ़े पैरों में चप्पल थी (४४, ४०)।

कुछ ऐसी रचनाओं में लक्षणान्वित या लक्षणरहित परसर्गीय नियंत्रण बचा रहता है, जैसे : ज़रा आगे लकड़ी के लट्ठों से लदी एक भैंस बड़ी ही मंथर गति से चली जा रही थी (९, १६९),...सुनहरे बादल रत्नों-भरी लहरों के आँचल में चमकने लगे...(२८, ६७)।

सरल द्वितीय कृदन्त से आश्रित घटक समेत परसर्गरहित रचना के आधार पर जटिल कृदन्त उत्पन्न होते हैं जो एक शाब्दिक इकाई के रूप में प्रयुक्त होते हैं जिनमें से अधिकतर शब्दकोश में पाये जा सकते हैं, जैसे, तू मुँहमाँगा इनाम पायेगा (५४, ६४), इन लोगों को...मदन की नकचढ़ी बेबाकी पसन्द आ गयी थी (२८, ९०), मीनू में लिखी हुई मनचाही वस्तुओं का ऑर्डर दे दो (१२३, ५२)।

सरल द्वितीय सकर्मक कृदन्तों की विशेषता यह है कि वे व्यापार का वह कर्ता अपना लेते हैं जो 'का' परसर्ग सहित संज्ञा या सम्बन्धवाचक सार्वनामिक विशेषण से प्रकट होता है, जैसे, ताल्स्ताय के स्वयं के बनाये कई चित्र भी इस कमरे में टँगे हैं (९९, ६९), पर मोहब्बत का मारा जोगी है? (१०३, ७२), तेरी काती रुई का बहुत अच्छा सूत था (१०३, २५)। व्यापार के कर्ता के सिवा, द्वितीय सकर्मक एवं अकर्मक कृदन्त 'का' परसर्ग की सहायता से कालसूचक को शामिल कर सकते हैं, उदाहरणार्थ : सुबह की पढ़ी चीज़ सन्ध्या को भूल जाता (१०८, ७७), रात की देखी पिक्चर की कहानी भाभी को सुनाना जारी रहता (१०७, ४२)।

(२) विधेयवाचक विशेषण, जो कि मुख्यत: 'पड़ना', 'मिलना','दिखाई देना',

नज़र आना' तथा 'देखना', 'पाना', 'छोड़ना' आदि क्रियाओं के साथ प्रयुक्त होता है। द्वितीय कृदन्त विशेषण के समान आते हुए, सकर्मक द्वितीय कृदन्त वाक्य के उद्देश्य सम्बन्धी सहायक विधेय (जब मुख्य क्रिया अकर्मक हो) और वाक्य के प्रधान कर्म सम्बन्धी सहायक विधेय (जब मुख्य क्रिया सकर्मक हो) की हैसियत से प्रयुक्त होते हैं, जैसे फ़र्श पर शीशे का एक सुन्दर फूलदान टूटा पड़ा था (१६, १११), एक कहानी लिखी पड़ी थी (६, २०)...आइने जड़े मिले (२८, १११), पॉलिश्ड दीवार के साथ लगी दिखायी दी (६, १६२), सफ़ाई ऐसी थी कि एक तिनका भी पड़ा कहीं नज़र नहीं आया...(२८, १०२), एक रोज़ एक पुस्तक में भी लिखा देखा...(२८, ११), उसने अपनी सूरत को कुछ उतरा पाया (६, १६२), उसने गेट खुला छोड़ दिया था (८, ८६)।

कृदन्त जब वाक्यान्तर्गत प्रधान कर्म के विशेषक का काम देता है, तो वह उससे नियमित तौर पर अन्वित होता है। कृदन्त जब वाक्यान्तर्गत प्रधान कर्म का विशेषक होता है तो वह (क) नियमित तौर पर उससे अन्वित हो सकता है, उदाहरणार्थ : चेतन के पिता भी अपने पुत्र को एकदम नेक और अच्छे लड़के बने देखना चाहते थे (१७, २०६), मुझे इस प्रकार बनी-ठनी देखकर...(६६, ८३); (ख) पुल्लिंग, एकवचन, कृदन्त के रूप में ही हो सकता है, उदाहरणार्थ : माई ने रोटी को अपने पास पड़ा देखा...(२८, ८४), हेम ने शीला को अपने विचारों में खोया पाया (११२, ७१)।

(३) क्रियाविशेषणात्मक विशेषण, जो कि मुद्रा, गति, स्थानान्तरण, चिन्तन सम्बन्धी आदि क्रियाओं के साथ प्रयुक्त होते हैं, उदाहरणार्थ : एक युवक भागा आ रहा है (६, १६७),...लच्छू, रमेश दोनों थके-थकाए लौट रहे थे...(१, ३२),... दौड़ा-दौड़ा उनको ले आया (११६, ६२), वह बिस्तर पर बैठी चाय बना रही है (२, ४५), वह बड़ी देर तक पार्क में घास पर बैठी सोचती रही.. (७१, १०७), ...निर्मला अपने कमरे में चारपाई पर पड़ी रो रही थी...(६६, २०७), बातों में जब खोई-सी वह सो जाती...(५२, ६६), सामने भूत हुआ खड़ा है (४८, ६६)।

जैसा कि उदाहरणों से स्पष्ट है, क्रियाविशेषणात्मक विशेषण के प्रकार्य में सिर्फ़ वही कृदन्त आते हैं, जो कि अकर्मक धातु से बने हैं। सकर्मक धातु के कृदन्त समान स्थितियों में द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के रूप में आते हैं, जो कि शुद्ध क्रियाविशेषण के प्रकार्य की हैसियत से प्रयुक्त होते हैं।

(४) पूरक जो कि उन क्रियाओं में व्यक्त होता है, जो विशेष शाब्दिक-वाक्यात्मक स्थितियों में अपर्याप्त सूचना रखती है और जो पूरक की उपस्थिति में ही प्रधान कर्म अपना सकती हैं। ऐसी क्रियाएं बन्द शाब्दिक सूची से सम्बन्ध रखती हैं। द्वितीय कृदन्त के साथ मुख्यतः 'समझना', 'अनुभव करना' आदि क्रिया इस्तेमाल होती है। उदाहरणार्थ : तू मुझे बदली समझता है? (१०३, ७६), मुझे

खत्म हुआ, चूक गया समझते थे (८, ६९)। इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि पूरक के प्रकार्य में द्वितीय कृदन्त बहुधा पुल्लिंग, एकवचन के रूप में होता है।

(५) विधेय, जो निम्न प्रकार का हो सकता है : (१) क्रियार्थक : (क) सरल कृदन्तपरक—हम आगे बढ़े (१०३, १२१), कुछ देर से ज़ीने से एक जवान स्त्री उतरी (९६, ५२); (ख) संयुक्त (कृदन्तपरक-क्रियार्थक या कृदन्तपरक-कृदन्तार्थक)—...मैंने लड़की को देखा है (१४७, ४८), पराये मर्दों के संग सोई हूं (१०३, १४१), औरत जो कल आयी थी...(६९, ४१), तारो और कीथू तब तक अपने स्कूलों को जा चुके होते थे (११५, ७०); (२) संयुक्त नामिक : (क) जो कि 'दिखाई देता' जैसी क्रियाओं के साथ प्रयुक्त होते हैं। उदाहरणार्थ : ...सबके चेहरे मुझे खिले दिखायी दे रहे थे (३१, १००), अब खेलने का मज़ा आ गया दिखता है (४४, १०), बाँके आया लगता है (१०३, ३००), वह मनुष्यों का बनाया नहीं मालूम होता था (२, ६७), हर व्यक्ति खुदा की पूजा में लगा नज़र आया (२४, १३९),...उनको कुछ हर्ष नहीं हुआ प्रतीत होता था (४४, ५९); (ख) संयोजक क्रियाओं के साथ, जहां सकर्मक क्रियाओं के कृदन्त होते हैं जो कि अवस्थापरक कर्मवाच्य का अर्थ देते हैं, उदाहरणार्थ : भाग्य में जो लिखा था वह हुआ, आगे भी वही होगा, जो लिखा है (६५, ४६), सरकारी टिकटों पर ये शब्द लिखे होते हैं 'स्वदेशी चीजें' खरीदो (६९, २१); (ग) 'रहना' क्रिया के साथ (या 'होना' क्रिया के साथ जो 'रहना' से कम आता है), जब कृदन्त 'का' परसर्ग समेत पुनरुक्त रूप से व्यक्त होता है, उदाहरणार्थ : दिलीप का हाथ उठा का उठा रह गया (३, १२५), वह पलंग पर लेटी की लेटी रही (११६, १०),...तब से पत्थर पर बैठा का बैठा हूं (११६, १०३); (घ) 'है', 'था' संयोजक क्रिया और सरल द्वितीय कृदन्त के साथ, जिनमें कारण या काल चिन्हक होते हैं, जैसे : दुनिया के कानून पैसे वालों के बनाये हैं (१०२, ११३), रात भर का थका था (१०७, ४२)।

नामिकीकृत सरल द्वितीय कृदन्त वाक्य के स्तर पर उसके निम्नलिखित अंगों के प्रकार्य की हैसियत रख सकता है : (१) उद्देश्य—लेकिन आदमी का चाहा कब हो सका है (५७, ८); (२) प्रधान कर्म—मैं अपने हाथ का ही बना खाती हूं (५७, ११३); (३) गौण कर्म—उसे अपने किये पर पछतावा होने लगा (२६, १७); (४) कर्तृ-संबंधी निर्धारक—मगर हुस्न की चोट खाने को चैन कहां (१०३, २६१); (५) विशेषण—मरों के मुँह किसी ने सी दिये हैं...(१०३, १७४); (६) क्रिया-विशेषण—...बादशाह तख़्त से उठकर गम के मारों की तरह महल में चला गया (२५, १८४); (७) नामिक विधेय—यह सब तुम्हारा करा-कराया है (५७, ८२)।

अकेले कृदन्तों के साथ-साथ क्रियाविशेषणात्मक तथा विधेयवाचक विशेषक की परस्थित हालत में कृदन्तों की पुनरुक्तियां आ सकती हैं जो कि (क) एकमूलीय सरल और व्युत्पन्न धातु से बन सकती है : ...सब चीजें प्लेटों में सजी-

सजायी चली आती है (१२३, ५२)....लक्कू, रमेश दोनों [illegible] लौट रहे थे... (१, ७२); (ख) भिन्न मूलों की धातुओं से बन सकती है : मुझे इस प्रकार बनी-ठनी देखकर...(६६, ८३), रास्ते में पत्थरों के ढेर टूटे-फूटे पड़े हुए थे (६६, १७६); (ग) एक ही धातु से बन सकती है : चार हजार तो गाड़ी पर बैठा-बैठा ही दे रहा था (५२, ३७), राम इन्हीं विचारों में पड़ा-पड़ा सो गया (६५, ८५)।

सरल द्वितीय कृदन्तों के अलावा, जो कि शुद्ध क्रियार्थक या नामिक-क्रियार्थक धातुओं से बने होते हैं परस्थिति में वे द्वितीय सरल कृदन्त आ सकते हैं जो कि विश्लेषणात्मक धातुओं से बने होते हैं, उदाहरणार्थ : लोग मुझे खत्म हुआ, चूक गया समझते थे (८, ६६)।

परस्थिति में ऐसे कृदन्त होते हैं जो कि आश्रित कर्तृ-संबंधी या काल-चिह्नक के साथ आ सकते हैं, उदाहरणार्थ : और मैं शामत की मारी यहीं आयी...(७३, ३६), आज तो सुबह के गये अब आये हो (१०८, ४९-५०)।

**संयुक्त द्वितीय कृदन्त** संयुक्त द्वितीय कृदन्त विश्लेषणात्मक रचना है, जिसमें सरल द्वितीय कृदन्त के साथ 'हुआ' रूप लगता है जो 'होना' क्रिया का सरल द्वितीय कृदन्त रूप है।

संयुक्त द्वितीय कृदन्त, सरल द्वितीय कृदन्त की तरह सिर्फ़ प्रक्रिया को ही व्यक्त नहीं करता, बल्कि निष्पादित प्रक्रिया का परिणाम है, जिसका कारण कोई द्रव्य (या व्यक्ति) है। यह विशेषता कर्ता के व्यापार के कारण या बाह्य व्यापार के कारण जिसे कोई दूसरा कर्ता (ज्ञात या अज्ञात) पूरा करता है, प्रकट होती है। पहली हालत में संयुक्त द्वितीय कृदन्त का कर्तृवाच्य में तथा दूसरी हालत में कर्मवाच्य में प्रयोग होता है। जब कर्तृवाच्य में प्रयुक्त द्वितीय कृदन्त का प्रयोग होता है तो निष्पादित परिणामी विशेषता के अर्थ में होना है और वह व्यापार के पूर्णत्व या अपूर्णत्व की दृष्टि से संयुक्त प्रथम कृदन्त का विरोध है : आया हुआ लड़का—आता हुआ लड़का। जब कर्मवाच्य में इसका प्रयोग होता है तो वाच्य की परिकल्पना में संयुक्त द्वितीय कृदन्त संयुक्त प्रथम कृदन्त का विरोध है : बोझ उठाता हुआ तथा—उसका उठाया हुआ तूफ़ान।

संयुक्त द्वितीय कृदन्त नामिक चिह्नों सहित होते हैं जो कि सरल द्वितीय कृदन्तों की विशेषता होती है, लेकिन सरल द्वितीय कृदन्त के विपरीत उनके क्रियार्थक चिह्न नहीं होते, जैसे वाच्य की श्रेणी (उसकी व्याकरणिक अभिव्यक्ति में) और व्यापार के पक्ष की श्रेणियां। इस प्रकार, संयुक्त द्वितीय कृदन्त के निम्नलिखित क्रियार्थक चिह्न होते हैं :

(१) सकर्मक तथा अकर्मक श्रेणी— उदाहरणार्थ : रास्ता भूला हुआ मृग (५, १४), ...मुन्नी भागी आयी...(१०८, ७८);

(२) सापेक्ष कालवाचक अर्थ की श्रेणी—गौण विधेय के प्रकार्य की हैसियत

से (क्रियाविशेषणात्मक या विधेयवाचक विशेषण), जो कि मुख्य विधेय के साथ-साथ एक ही व्यापार के कर्ता से सम्बन्धित होता है, संयुक्त द्वितीय कृदन्त मुख्य विधेय के व्यापार के साथ समपाती परिणामी अवस्था की समकालिकता को व्यक्त करता है। उदाहरणार्थ : भाई ने कहानी का नाम ही बदला हुआ पाया...(९, २९),...एक सैनिक आँगन में दौड़ा हुआ पहुँचा (७०, ७७), वह पकड़ा हुआ आया (४४, ६२), बीवी जी दूध तो नपा हुआ रखा है...(१०८, ७८)। किसी भी कर्ता सम्बन्धी सहायक विधेय (विधेयवाचक विशेषण) के प्रकार्य की हैसियत से आते हुए जो कि वाक्य का उद्देश्य नहीं होता, कृदन्त विधेय से रूपात्मक सम्बन्ध खो देता है और उससे समय के बारे में एक आम भावना से जुड़ा होता है, उदाहरणार्थ : आप हमारे कमरे में कई-कई आलमारियां पुस्तकों से सजी-सजाई देखेंगे...(७२, १८१), भाई ने कहानी का नाम ही बदला हुआ पाया (९, २९)।

(३) विधेयन की श्रेणी, जो इनमें प्रकट होती है कि संयुक्त द्वितीय कृदन्त तर्कसंगत विधेय व्यक्त करता है और कर्ता भी अपना सकता है। इस हालत में कृदन्त वाक्य के प्रधान कर्म की विशेषता दिखाता है, उदाहरणार्थ : तब उसने रास्ते में एक लाश पड़ी हुई देखी (६९, १८३),...भाई ने कहानी का नाम ही बदला हुआ पाया...(९, २९)।

संयुक्त द्वितीय कृदन्तों के निम्नलिखित नामिक लक्षण होते हैं :

(१) संयुक्त द्वितीय कृदन्त के लिंग, वचन और कारक की व्याकरणिक श्रेणी होती है। इन कृदन्तों के वचन एवं कारक की श्रेणी सिर्फ़ पुल्लिग संज्ञाओं के साथ अन्विति के समय प्रकट होती है, जैसे, छत पर रुका हुआ पानी टपक रहा था (६५, ३०), उमड़े हुए आँसू न रुक सके (६९, २२८), खुले हुए मैदान में भी देह से पसीने की धारें निकलती थीं (६६, ६७)। स्त्रीलिंग संज्ञाओं के साथ ये कृदन्त सिर्फ़ लिंग से अन्वित होते हैं, उदाहरणार्थ : थकी हुई आँखें सो गयी थीं (७, १३४), राज्यसभा पर लिखी हुई पुस्तक में उन्होंने पढ़ा...(७, ८१)।

(२) संयुक्त द्वितीय कृदन्त विशेषण की तरह द्रव्य के लक्षण को व्यक्त कर सकते हैं और विशेषक या नामिक विधेय के प्रकार्य में विशेषण के साथ आ सकते हैं, उदाहरणार्थ : अँग्रेजी की शिक्षा पाया हुआ, शौकीन, रंगीन और रसीला आदमी था (६९, २३५), इसका वृक्ष काफ़ी ऊँचा और फैला हुआ होता है (५०, १०२)।

(३) संयुक्त द्वितीय कृदन्त, विशेषण की तरह,. 'सा' निपात-विशेषक के साथ आ सकता है, जैसे : फिर वह...भागा हुआ-सा सड़क पार आ खड़ा हुआ...(७, ३५), एक पाँव दूसरे पाँव के आगे ज़रा उठा हुआ-सा...(२८, २२)।

(४) संयुक्त द्वितीय कृदन्त का प्रयोग, विशेषण की तरह शाब्दिक खंड के रूप में, 'होना' क्रिया के तुमर्थ के साथ हो सकता है, लेकिन यह बात इन कृदन्तों में

बहुत कम पायी जाती है, जैसे, यही एक गिरे हुए होंठ की निशानी थी (१११, ३३)।

(५) संयुक्त द्वितीय कृदन्त विशेषण की तरह नामिकीकृत हो सकता है, और संज्ञा के सब लक्षणों को अपना सकता है, जैसे, पोखर में पड़े हुओं ने भी गरदनें बढ़ा-बढ़ाकर देखने की कोशिश की थी (८३, ६६), तूने नटों का छुआ हुआ खाया है (१०३, ६), काले आदमी का लिखा हुआ जाली था... (६६, १६७)।

संयुक्त द्वितीय कृदन्त शब्द-समुदाय के स्तर पर निम्नलिखित विशेषणात्मक सम्बन्ध व्यक्त करते हैं : (क) विशेषणात्मक गुणवाचक : खोया हुआ भाई (६६, २०२), बनाये हुए खाके (५२, १३७), बनी हुई वस्तुएं (११५, ८१); (ख) विशेषणात्मक-क्रियाविशेषणात्मक : दूजी बैठी हुई सोचती थी (६६, २४०), एक सैनिक आँगन में दौड़ा हुआ पहुंचा (७०, ७७); (ग) विशेषणात्मक विधेयवाचक—...उसे एक कलसा रखा हुआ मिला...(६६, १२५)....आज तक किसी ने...उसकी कविताएं छपी हुई नहीं देखी (११२, २६)।

नामिकीकृत कृदन्त शब्द-समुदाय के स्तर पर निम्नलिखित सम्बन्ध व्यक्त करते हैं : (१) कर्म-सम्बन्धी—तूने नटों का छुआ हुआ खाया है (१०३, ६); (२) सम्बन्धवाचक (विशेषणात्मक सम्बन्धों की प्रणाली में)—उन्होंने हाथ में कसे हुओं की बिनिया करवाई (१०३, ३०८)।

वाक्य के स्तर पर संयुक्त द्वितीय कृदन्त उसके निम्नलिखित अंगों के प्रकार्य में आते हैं :

(१) विशेषण। संयुक्त द्वितीय कृदन्त संज्ञासंलग्न विशेषण के प्रकार्य में अपने विशेषक से नियमित तौर पर अन्वित होते हैं, अर्थात् लिंग, वचन, कारक—पुल्लिंग संज्ञाओं में, और सिर्फ़ लिंग में अगर स्त्रीलिंग हो तो, उदाहरणार्थ : ...वह कोई सुखी परिवार के प्यार में पला हुआ युवक है (३६, ७५), हारे हुए जुआरी की तरह मैं मुसकरा उठा (५७, २५), उसे धुले हुए कपड़े पहनने को मिले थे (७, १०),...काटे हुए खेतों से जैसे लहरियें-से उठ रहे थे (१६, ७०)....अब वही एक सूखी हुई टहनी उस हरे-भरे पेड़ का चिह्न रह गया था (६६, २२६), थकी हुई औरतें सो गयी थीं (७, १३८)।

संयुक्त द्वितीय कृदन्तों के अलावा जो कि शुद्ध क्रियार्थक या नामिक क्रियार्थक धातुओं से बनते हैं, संज्ञासंलग्न विशेषक के प्रकार्य में वे सरल कृदन्त आते हैं, जो कि विश्लेषणात्मक धातुओं (मुख्यत: नामबोधक संयुक्त धातुओं) से बनते हैं, उदाहरणार्थ : ...मेरी पैदा की हुई दौलत है (६६, १५५),...यह सब सिर्फ़ उसी चौबीस-पच्चीस साल में जमा की हुई रकम है (५२, २६)।

संयुक्त द्वितीय कृदन्त के रूप में संज्ञा-संलग्न विशेषक के प्रकार्य में क्रियार्थक-नामिक वाक्यांश और पदबंध रचनाएं आती हैं, उदाहरणार्थ : मैं जीवन-यात्रा की

कई मंज़िलें पार किया हुआ मेम्बर हूं (७२, २०६), वह चोरी की हुई चीज़ चुपचाप वापस वहीं रख देता था (१७, २०९),...तुम्हें कब्र में पाँव लटकाये हुए बूढ़े के जीवन-मूल्यों का लिहाज तो बहुत हुआ...(१, ५५५),...(मुंशीजी) गोली खाये हुए मनुष्य की भाँति ज़मीन पर गिर पड़े (६६, १७७)।

यह उल्लेख करना उचित होगा कि क्रियार्थक-नामिक वाक्यांशों में जो कि संयुक्त द्वितीय कृदन्त के रूप में आते हैं, वाक्यांश का नामिक घटक—संज्ञा—क्रिया की उपस्थिति में प्रधान कर्म नहीं होता, बल्कि सिर्फ व्यापार का शाब्दिक पूरक होता है, उदाहरणार्थ : प्रेस की हुई साड़ी, कल्फ़ की हुई धोती (९६, १०७), वार्निश की हुई लकड़ी (६५, ७५), चूँकि हमारे पास वे उदाहरण नहीं हैं जिसमें नामिक घटक के साथ करण परसर्ग हों जिनसे कि जटिल विशेषक का पता चल सकता हो, जैसे : 'साड़ी प्रेस से (द्वारा) की हुई', 'धोती कल्फ़ से (द्वारा) की हुई', आदि।

अकर्मक, मुख्यतः भाववाचक क्रियाओं में, जैसा कि सरल द्वितीय कृदन्तों के विश्लेषण के समय बताया गया था, करण अर्थ को करण परसर्ग व्यक्त कर सकते हैं, हालांकि संयुक्त द्वितीय कृदन्त समान प्रयोगों के लिए बहुत कम सामग्री देते हैं, जैसे : बांस लदी हुई गाड़ी (५७, ३९)। संयुक्त कृदन्तों के इस प्रयोग के आधार पर (यह सच है कि बहुत-बहुत कम) संयुक्त कृदन्त पैदा होते हैं जो कि रूप-निर्माण के गौण अंश होते हैं : पहले संज्ञा एवं सरल द्वितीय कृदन्त के मिलने से एक जटिल कृदन्त बनता है, जो कि एक शाब्दिक इकाई होती है, जिसमें बाद में संयुक्त कृदन्त का सूचक मिल जाता है अर्थात् 'हुआ' का रूप, उदाहरणार्थ : फिर मुझे दिलचाही हुई सज़ा दीजिये (१२०, ३९)।

क्रियार्थक-नामिक वाक्यांश का क्रियार्थक घटक संयुक्त द्वितीय कृदन्त के रूप में संज्ञा-संलग्न विशेषक के प्रकार्य में वाक्यांश के नामिक घटक अर्थात् संज्ञा में आ सकता है, उदाहरणार्थ : ...भय था सिर पर ली हुई ज़िम्मेदारी पूरी न कर सकने का (९६, ७८),...यह मेरी की हुई बेइज्ज़ती पी कैसे गया (१०३, १३०)।

संयुक्त द्वितीय कृदन्त सरल द्वितीय कृदन्त के समान व्यापार के कर्त्ता के साथ मिल सकते हैं, जो कि 'का' परसर्ग सहित संज्ञा या सम्बन्धवाचक सार्वनामिक-विशेषण द्वारा व्यक्त होते हैं, उदाहरणार्थ : विजय के उठाये हुए तूफ़ान से बचना मुश्किल था (१२०, ४६),...उसने चौकीदार की दी हुई बीड़ी सुलगायी (८२, २७), हद से ज़्यादा बढ़ी हुई निराशा का मारा हुआ पुरुष न गोभी का पत्ता बन सकता है, न प्याज़ का छिलका (३०, ६७), भाभी ने मेरा पिया हुआ प्याला हाथ से वापस ले लिया...(१०३, ३४),...मेरी पैदा की हुई दौलत है (६६, १५५)। 'का' परसर्ग के अलावा यहां करण परसर्ग भी हो सकते हैं (मुख्यतः 'के द्वारा'), उदाहरणार्थ : विजय द्वारा भड़काया हुआ तूफ़ान अब भी उनके दिमाग

में चल रहा है...(१२०, ४६)....चिड़िया उस काफ़िले द्वारा उड़ी हुई धूल की ओर तक रही थी (६५, ६४)। सरल द्वितीय कृदन्तों के विपरीत 'का' परसर्ग सहित कालसूचक बहुत कम संयुक्त द्वितीय कृदन्त में मिलता है : न जाने कितनी रातों का जागा हुआ था (३१, २७)।

(२) विधेयवाचक विशेषण, जिसका प्रयोग मुख्यतः 'मिलना', 'दिखायी देना' तथा 'देखना', 'पाना', 'रखना' आदि क्रियाओं के साथ होता है। संयुक्त द्वितीय कृदन्त विधेयवाचक विशेषण के प्रकार्य में उद्देश्य सम्बन्धी सहायक विधेय (जब अकर्मक मुख्य क्रिया या 'रखना' क्रिया होती है) और प्रधान कर्म सम्बन्धी सहायक विधेय (जब मुख्य क्रिया सकर्मक होती है) की हैसियत से प्रयुक्त होता है, उदाहरणार्थ : ...उसे एक कलसा रखा हुआ मिला...(६६, १२५), पुराने अख़बारों के टुकड़े इधर-उधर बिखरे हुए दिखायी दे जाते हैं (५२, ११२), मेरे सन्दूकों में सैकड़ों, एक-से-एक कीमती साड़ियां तह की हुई रखी थीं (५३, ५८), पूरियाँ गर्म मिलें, इसके लिए आटा अलग गुँथा हुआ रखा था (१, १००), तब उसने रास्ते में एक लाश पड़ी हुई देखी (६६, १८३), मैंने हर समय अपने को इन लोगों से कितना ऊँचा उठा हुआ पाया है (१०३, १५)।

लक्षणरहित प्रधान कर्म के विशेषक की हैसियत से कृदन्त उससे नियमित तौर पर अन्वित होता है। जब लक्षणान्वित प्रधान कर्म का विशेषक होता है तो संयुक्त द्वितीय कृदन्त मुख्यतः पुल्लिग, एक वचन का अविकारी रूप धारण करता है, उदाहरणार्थ : उसने मुर्गों को मरा हुआ पाया (१०३, ४३२), आँगन में शिव ने कपूर को घिरा हुआ देखा (६७, ११),...उस्ताद ने वातावरण को बदला हुआ पाया (५४, ६४)। संयुक्त द्वितीय कृदन्त की अन्विति की स्थितियां कम होती हैं, जैसे : उसको तो मैंने रसूलपुर के बाहर पड़ी हुई पाया था (५४, ४३)।

(३) क्रियाविशेषणात्मक विशेषण, जो कि गति, अवस्था, चिंतन, उक्ति या कुछ दूसरी क्रियाओं के साथ आता है, उदाहरणार्थ : सुमन...भागी हुई अपने घर आयी (७५, २१), उसने टोकरी फेंक दी और दौड़ा हुआ चाचा के घर में जा पहुँचा (६६, २११), वह पकड़ा हुआ आया (४४, ६२), मेरी सारी जिज्ञासा रुँधी हुई रह गयी (१०३, ४),...वह जनसमूह में शान्ति की मूर्ति बनी हुई निश्चल खड़ी थी (६६, २४२), दूजी बैठी हुई सोचती थी...(६६, २४३) न जाने कौन मेरे हृदय में बैठा हुआ कह रहा था (६६, २०३), दूजी एक चट्टान पर...बैठी हुई यह दृश्य देख रही थी (६६, २४२),...रामनाथ वाचनालय में बैठा हुआ पत्र पढ़ रहा था (६५, १५७), सिगार नीचे झुका हुआ लटक रहा था (५२, ११५)।

सरल द्वितीय कृदन्तों की भाँति क्रियाविशेषणात्मक विशेषण के प्रकार्य में सिर्फ़ वे संयुक्त द्वितीय कृदन्त इस्तेमाल होते हैं जो कि अकर्मक धातुओं से बनते हैं। इस प्रकार्य में सकर्मक कृदन्तों के स्थान पर संयुक्त द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक

कृदन्तों का प्रयोग होता है, जो कि शुद्ध क्रियाविशेषण के प्रकार्य में आते हैं।

(४) पूरक जो कि उस क्रिया में प्रकट होता है जो विशेष शाब्दिक-वाक्यात्मक स्थितियों में अपर्याप्त सूचना रखती है, और जो पूरक की उपस्थिति में ही प्रधान कर्म अपना सकती है। ऐसी क्रियाएं बन्द शाब्दिक सूची से सम्बन्ध रखती हैं। संयुक्त द्वितीय कृदन्त के साथ मुख्यतः 'समझना', 'अनुभव (महसूस) करना', 'स्वीकार करना' और दूसरी क्रियाएं इस्तेमाल होती हैं। उदाहरणार्थ : मैं आपको मरा हुआ समझता था (६६, १६७),...वे अपने-आपको एकदम बदला हुआ महसूस करने लगे (८, ५१),...हम विदेशी मुद्रा की तुलना में रुपये के मूल्य को कटा हुआ स्वीकार कर चुके थे (II, ५.७.१९६६, ६)। इस बात को ध्यान में रखना चाहिए कि संयुक्त द्वितीय कृदन्त पूरक के प्रकार्य में बहुधा पुल्लिंग, एकवचन के रूप में होता है।

(५) संयुक्त नामिक विधेय जिसे निम्नलिखित श्रेणियों में बाँट सकते हैं : (क) संयुक्त नामिक विधेय, जो कि संयुक्त द्वितीय कृदन्त तथा संयोजक क्रिया से मिलकर बनता है, और (ख) संयुक्त नामिक विधेय जो कि संयुक्त द्वितीय कृदन्त तथा 'मालूम होना', 'लगना' जैसी अर्द्धसंयोजक क्रियाओं से मिलकर बनता है।

संयुक्त नामिक विधेय सरल तथा संयुक्त वर्तमान योजक के साथ मुख्यतः पूर्णतावाची अर्थ रखता है, उदाहरणार्थ : भाई घंटे-भर से आया हुआ है...(६६, १४१), उसने मुझे रखा हुआ है (२८, १५१),...सड़ा हुआ शरीर जिस पर सहस्रों भद्दे दाग पड़े हुए होते हैं (३२, ६४)। कुछ स्थितियों में विधेय का पूर्णतावाची अर्थ कम हो जाता है और द्रव्य (या व्यक्ति) की अवस्था, जो कि व्यापार के परिणामस्वरूप पैदा होती है, एक स्थैतिक गुण, द्रव्य (या व्यक्ति) की स्थायी विशेषता समझी जाने लगती है। यह बात विशेषकर सजातीय विधेय के उदाहरणों में खरी उतरती है, जो कि विशेषण या संयुक्त द्वितीय कृदन्तों द्वारा व्यक्त होते हैं, उदाहरणार्थ : इसका वृक्ष ऊँचा और फैला हुआ होता है (५०, १०२), हिन्दू संख्या में कम हैं, असंगठित हैं, बिखरे हुए हैं (६६, १७४)।

सरल या संयुक्त अपूर्ण योजक समेत संयुक्त नामिक विधेय मुख्यतः पूर्णभूत का अर्थ रखता है, उदाहरणार्थ : थोड़ी देर में वह लौटा और हमें एक कमरे में ले गया, जिसमें चार व्यक्ति पहले से ही ठहरे हुए थे (६६, ३०), नोहरी अभी बैठी हुई थी कि शोर मचा (६६, ६७), उसकी दृष्टि लजायी हुई थी (२८, ३४), इन लोगों ने एक कोठरी किराये पर ली हुई थी (६७, २६)। यहां भी संयुक्त कृदन्त द्रव्य (या व्यक्ति) के स्थैतिक गुण को व्यक्त कर सकता है, जो कि विशेषण एवं कृदन्त द्वारा व्यक्त सजातीय विधेयों में सबसे अधिक स्पष्ट रूप से प्रकट होता है, उदाहरणार्थ : हृदय अपमान से संकुचित और सिर लज्जा के बोझ से झुके हुए थे (६६, ३४४)।

संयुक्त नामिक विधेय, जो कि कर्मवाच्य अवस्था के अर्थ में सकर्मक क्रिया

द्वारा व्यक्त होता है, सरल या संयुक्त वर्तमान योजक की उपस्थिति में वर्तमान अर्थ और सरल या संयुक्त अपूर्ण योजक से अपूर्ण अर्थ रखता है। उदाहरणार्थ : मगर पानी तो सिरहाने रखा हुआ है (६६, ११६)। मूल्य सूची में बहुत-सी वस्तुओं के मूल्य दिये गये होते हैं (१०६, २३३), और यही मेरी पहचान फ़ौजी रजिस्टर में भी लिखी हुई थी (१६, २०८)।

संयुक्त वर्तमान और अपूर्ण योजकों के साथ-साथ योजक के अर्थ में 'रहना' विशेषक क्रिया आ सकती है, जो संयुक्त द्वितीय कृदन्त के साथ नामिक विधेय को बनाती है जो अपने अर्थ में निरन्तरताबोधक पूर्णपरिणामी पक्ष के रूपों के नजदीक होता है, उदाहरणार्थ : चारों ओर नीरवता छायी हुई रहती थी...(७३, ११४), तुलना कीजिये—वहां नीरवता छायी रहती (११६, ५६), वह तो दिन-भर काम में जुटी हुई रहती थी (११६, ५५)।

साधारण भविष्यत् काल के रूप में प्रयुक्त योजक सहित संयुक्त नामिक विधेय भविष्य में व्यापार को व्यक्त करता है या द्रव्य (या व्यक्ति) की उस अवस्था को बताता है जो कि भविष्य में व्यापार के परिणामस्वरूप पैदा होती है। इस मुख्य अर्थ के अलावा यह विधेय तृतीय भविष्यत् काल का भी अर्थ दे सकता है, उदाहरणार्थ : फ़र्क इतना ही होगा कि यह (गुठली) होगी पिघली हुई (५०, ५०), विद्या में तो शायद अधिकांश तुमसे बढ़े हुए होंगे (६६, ५४)।

साधारण सम्भावनार्थ के रूप में प्रयुक्त योजक सहित संयुक्त नामिक विधेय उद्देश्य की काल्पनिक, सम्भव अवस्था व्यक्त करता है जो कि कार्यान्वित हुए वास्तविक व्यापार के परिणामस्वरूप पैदा हो सकती थी, उदाहरणार्थ : फूल की पत्तियां एक-दूसरे पर जैसे पड़ी हुई हों, ऐसी लगती है (५०, ८६)।

संयुक्त नामिक विधेय जो कि संयुक्त द्वितीय कृदन्त तथा संयोजक क्रियाओं से बना होता है, कुछ काल्पनिक अर्थ रखता है चूंकि संयुक्त द्वितीय कृदन्त उद्देश्य को प्राप्त प्रक्रियात्मक विशेषता की ओर संकेत करता है, जो कि वास्तविकता में नहीं भी हो सकता, उदाहरणार्थ : उनके तेवर आज कुछ बदले हुए मालूम होते थे (६६, २३६),...पर अब कार्यक्षेत्र कठिनाइयों से घिरा हुआ जान पड़ता था (६६, १११), आज मुझे तेरा सुर बदला हुआ लगता है (१०३, ७५), बैंक भी आज खुला हुआ दिखायी पड़ता था (६६, १०२),...पर उसे अपने हृदय पर एक बोझ-सा रखा हुआ मालूम देता था।

(६) विधेयवाचक समानाधिकरण, जो कि मुख्यतः कर्तृकारक-सम्बन्धी नामिक एकांगी वाक्यों में प्रकट होता है, जहां संयुक्त द्वितीय कृदन्त नियमित तौर पर वाक्य के मुख्य अंग के साथ अन्वित होता है, उदाहरणार्थ : एक पाँव दूसरे पाँव के आगे ज़रा-सा उठा हुआ-सा, दो भिन्न सुरों की तरह उलझा हुआ-सा (२८, २२), कुत्सित वृक्ष में केवल एक पल दृष्टिगोचर हुआ, वह भी कुछ पीला-सा,

मुरझाया हुआ-सा (६६, २१५), फिर आँखें मिलतीं, एक प्रेमाकांक्षा से बेचैन, दूसरी लज्जावश सकुची हुई (६६, २३६)।

नामिकीकृत संयुक्त द्वितीय कृदन्त का वाक्य के स्तर पर उनके निम्नलिखित अंगों के प्रकार्य की हैसियत से प्रयोग हो सकता है : (१) उद्देश्य—पोखर में पड़े हुओं ने भी गरदनें बढ़ा-बढ़ाकर देखने की कोशिश की थी (८३, ६६); (२) प्रधान कर्म—तूने नटों का छुआ हुआ खाया है (१०३, ६); (३) विशेषण—उन्होंने हाथ में कसे हुओं की बिलिया करवायी...(१०३, ३०८)।

सरल तथा संयुक्त द्वितीय कृदन्तों में निम्नलिखित प्रकार्यात्मक अन्तर है :

(१) संयुक्त द्वितीय कृदन्तों में वाच्य, पक्ष, काल, तथा वृत्ति सम्बन्धी विरोध नही होते, जो कि व्याकरणिक माध्यमों से व्यक्त होते हैं।

(२) संयुक्त द्वितीय कृदन्तों में काल के पूर्णतावाची रूप नहीं पाये जाते, और वे सम्भावनार्थ तथा संकेतार्थ के रूपों को भी नहीं बनाते, अर्थात् वे क्रियार्थक विधेय की रचना में इस्तेमाल नहीं होते।

(३) संयुक्त द्वितीय कृदन्त नामिक विधेय के प्रकार्य में पूर्ण व्यापार के काल के सभी अर्थ व्यक्त करते हैं, जैसे कि वे सरल द्वितीय कृदन्त के व्याकरणिक समनाम हों। संयुक्त द्वितीय कृदन्त संयोजक क्रिया के वृत्तिवाचक रूपों के साथ वही अर्थ देते हैं जैसे कि सरल द्वितीय कृदन्त के पूर्णतावाची वृत्तिवाचक रूप देते हैं।

(४) संयुक्त द्वितीय कृदन्त वाक्य के स्तर पर विधेयवाचक समानाधिकरण के प्रकार्य में आते हैं जो कि सरल द्वितीय कृदन्त के लिए नहीं होता।

(५) संयुक्त द्वितीय कृदन्त वाक्य तथा शब्द-समुदायों के स्तर पर पुनरुक्त रूप में नहीं आते।

**संतत कृदन्त।** संतत कृदन्त भी विश्लेषणात्मक रचना होती है जो कि धातु क्रिया तथा 'रहा' के विकारी रूप के साथ मिलकर बनती है (सरल द्वितीय कृदन्त का 'रहने' क्रिया से समाकार)।

संतत कृदन्त संतत लक्षण को व्यक्त करता है जो कि किसी व्यक्ति या द्रव्य के साथ किसी विशेष समय के अन्तराल में लगता है।

संतत कृदन्त एक नयी रचना है जिसको अपेक्षाकृत हाल ही में व्याकरणाचार्यों ने खोजा है। यह कृदन्त प्रयोग का सीमित घेरा रखता है : विशेषणात्मक (संज्ञा-संलग्न विशेषण) और विधेयवाचक (संतत काल रूपों का संयुक्त घटक)। इसके गुण नामिक की अपेक्षा क्रियार्थक ज्यादा होते हैं।

संतत कृदन्त तथा सरल प्रथम कृदन्त के बीच अन्तर यह है कि संतत लक्षण हमेशा किसी विशेष, सिद्धान्ततः सीमित समय के अन्तराल में होता है, और कथन के क्षण से सम्बन्धित होता है या उससे नहीं होता, जबकि सरल कृदन्त उस लक्षण

को व्यक्त करता है जो कि हमेशा कथन के किसी विशेष क्षण के साथ सम्बन्ध रखता है। विधेयवाचक प्रकार्य में इन दोनों कृदन्तों में व्यापार के पक्ष में अन्तर है : सांतत्य और अपूर्णता, सातत्य और आवर्ती प्रक्रम। काल के संतत क्षणों के लिए सांतत्य तथा सरल प्रथम कृदन्त के रूपों के लिए अपूर्णता तथा आवर्ती प्रक्रम स्वाभाविक है।

संतत कृदन्त के लिए निम्नलिखित क्रियार्थक लक्षण स्वाभाविक है :

(१) वाच्य की श्रेणी, जो कि कृदन्त के स्वतंत्र प्रयोग में तथा विधेय में प्रगट होती है, जैसे : क्रोध और रोष से कांप रही आवाज में वह बोल उठी... (५६, १४), नीचे दी जा रही तालिका से...दूध के उत्पादन की स्थिति स्पष्ट हो जाएगी (II, ५-६-१९६७, २४); मैं अन्दर बरामदे में बैठी पढ़ रही थी (१३, १४), बड़े-बड़े शामियाने लगाकर उनमें शरणार्थियों को ठहराया जा रहा था (१, २६६)।

(२) पक्ष की श्रेणी, जो कृदन्त के स्वतंत्र प्रयोग तथा विधेय में प्रगट होती है, उदाहरणार्थ : विश्व पूंजीवादी बाजार अधिक तेजी से बढ़ती जा रही उत्पादन क्षमता के मुकाबले संकुचित होता जा रहा है (१४१, २२), हो सकता है कि आदिकाल से लोगों के मुँह पर चढ़ी चली आ रही इन पहेलियों और मुकरियों की भाषा में कुछ परिवर्तन हो गया हो (११६, ८३), वह सीधा उसी की ओर बढ़ता चला आ रहा था (७५, १५१)।

(३) सकर्मता और अकर्मता की श्रेणी, उदाहरणार्थ : ...फिर मुड़कर चाय ला रहे बैरे से कहा...(५६, ३५), प्रोफ़ेसर कर्नल र की निगाहें...ज्वार पर आ रहे सागर, आठवें क्षितिज पार डूबने को जा रहे सूरज— कहीं पर नहीं टिकीं (८, ४२)।

(४) काल की श्रेणी, जो कि संतत कृदन्त के स्वतंत्र प्रयोग में क्रियार्थक विधेय के प्रकार्य में प्रगट होती है। संतत कृदन्त समेत कालवाचक रूप लुप्त होते हैं। इनमें वर्तमान संतत काल के निषेधात्मक रूप तथा नियमित आवर्ती प्रक्रम के सभी संतत अपूर्ण रूप शामिल हैं, जो कि वर्तमान तथा भूतकाल के संतत रूपों में एक-दूसरे का विरोध है, उदाहरणार्थ : मदाम, छुट्टियों में क्या आप घर नहीं जा रहीं ? (५२, ८६), मैं धीरे-धीरे पागल तो नहीं होता जा रहा ? (१०८, ७२), और वे अन्दर बिस्तर पर लेटे-लेटे बातें कर रहे होते...(७, ६४), कभी मल्होत्रा छुट्टी के दिन बाहर एक वजह इधर से गुजरते तो ललन नल पर नहा रही होती (१३, ३८)।

(५) सापेक्ष कालवाचक अर्थ की श्रेणी। संज्ञा-संलग्न विशेषण के प्रकार्य की हैसियत से संतत कृदन्त द्रव्य (या व्यक्ति) का संतत लक्षण व्यक्त करता है, जो कि एक निश्चित समय के साथ सहकालिक है, जब विधेय अपूर्ण काल रूपों से

व्यक्त किया होता है या एक निश्चित काल से पूर्ववर्ती है, जब विधेय पूर्णतावाची काल रूपों से व्यक्त किया होता है, उदाहरणार्थ : ...वज़ीर जुनाईजी...प्रति क्षण बदल रहे रंग को समझ रहा था (११३, ६), और हमारा देश १५ अगस्त, १९४७ को सदियों से चली आ रही विदेशी दासता से मुक्त हुआ (११५, ३९४)।

किन्तु पूर्णतावाची काल रूपों में भी संतत कृदन्त संतत लक्षण व्यक्त कर सकता है, जो कि एक निश्चित समय का सहकालिक होता है, उदाहरणार्थ : क्रोध और पीड़ा से काँप रही आवाज़ में वह बोल उठी...(५९, १४)।

इसके अलावा, संतत कृदन्त मुख्य क्रिया की हैसियत से निम्नलिखित विश्लेषणात्मक काल रूपों में शामिल हो सकता है : (१) संतत अपूर्ण काल— दरवाज़े पर शहनाई बज रही थी और भीतर गाना हो रहा था (७२, १५३); (२) नियमित आवर्ती प्रक्रम या संतत अपूर्ण काल—चेतन जब कभी पानी भरने या कुएं पर नहाने जाता और उनमें से कोई पानी भर रही होती...(१७, ११६); (३) वर्तमान संतत—कहां जा रहा है ? (१०३, १०१), मैं अपने वादे के अनुसार तुम्हें जहाज़ में से ही पत्र लिख रही हूं (१२३, १); (४) अभ्यासिक वर्तमान संतत— जब देखो वे किसी को मिलने जा रही होती हैं या कोई उन्हें मिलने आ रहा होता है (V, विशेषांक, १९६२, ५५); (५) भविष्यत् संतत—आ ही रहे होंगे (६६, ८६), मुझे लगता है कि लावन्ती...मेरी ओर देख रही होगी...(८, ८३)। सम्भावनार्थ तथा संकेतार्थ के संतत रूपों में भी संतत कृदन्त शामिल हो सकता है— मुझे लगा, जैसे वह निरन्तर मेरी ओर देख रहा हो (१३, १५), वह विवाह कर रही होती तो हम पूरी सहायता देते (१, ५५५)।

विशेषण की तरह संतत कृदन्तों की भी लिंग, वचन तथा कारक की व्याकरणिक श्रेणियां होती हैं। इन कृदन्तों की वचन तथा कारक श्रेणी सिर्फ़ तब ही प्रगट होती है जब वे पुलिंग संज्ञाओं से अन्वित होते हैं, उदाहरणार्थ : फिर मुड़कर चाय ला रहे बैरे से कहा...(५९, ३५),...उसकी बुनियाद प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालयों में पढ़ रहे लड़के और लड़कियों की शिक्षा पर डाली जाती है (II, २५.९.१९६६, ५)। संतत कृदन्त स्त्रीलिग संज्ञाओं से सिर्फ़ लिंग में अन्वित होते हैं, उदाहरणार्थ : उसकी चिरख रही रगों का रक्त झनझनाने लगा था (५९, ७), उनके चेहरे पर हर समय झलक रही मनोव्यथा से यह जाना जा सकता था (१, अंक ८, १९६५, ४५)।

संतत कृदन्तों के दूसरे नामिक लक्षण नहीं होते।

संतत कृदन्त शब्द-समुदाय के स्तर पर सिर्फ विशेषणात्मक-गुणात्मक प्रकार्य में हो सकते हैं, और वाक्य के स्तर पर मुख्यतः विशेषण के प्रकार्य में।

बहुत ही कम स्थितियों में संतत कृदन्त संयुक्त नामिक विधेय के नामिक अंग के प्रकार्य में जिसमें 'दिखायी देना' जैसी अर्द्धसंयोजक क्रियाएं हों, आ सकता है,

जैसे : उनके पुनरुद्धार के प्रयत्न राष्ट्रीय स्तर पर हो रहे दिखायी देते है (११५, ४२५)।

संतत कृदन्त विशेषण के प्रकार्य में अपने निर्धारित विशेषक से नियमित तौर पर अन्वित होते है, अर्थात्, लिंग, वचन, कारक — अगर संज्ञा पुंल्लिंग है और सिर्फ़ लिंग में, अगर संज्ञा स्त्रीलिंग है।

शुद्ध संतत कृदन्त के अलावा, संज्ञा-संलग्न विशेषण के प्रकार्य में पक्ष-सम्बन्धी संतत तथा संयुक्त नामधातु वाले संतत कृदन्त भी होते है, उदाहरणार्थ : विश्व पूंजीवादी बाजार अधिक तेजी से बढ़ती जा रही उत्पादन क्षमता के मुकाबले संकुचित होता जा रहा है (१४१, २२), आन्तरिक तटकर द्वारा तेजी से क्षेत्र के कम कुशल उत्पादकों को अन्य देशों से आयात हो रही वस्तुओं की प्रतियोगिता से सुरक्षा नहीं हो सकेगी (II, १०.१२.१९६६, १६)।

संज्ञा-संलग्न विशेषण के प्रकार्य में [illegible] रूप में क्रियार्थक-नामिक वाक्यांश आ सकते है, उदाहरणार्थ : पिछले कई वर्षों से भारतीय अर्थव्यवस्था में काम कर रही दिक्कतों के परिणामों को दृष्टि में रखकर रुपये का अवमूल्यन किया गया है (II, २५.७.१९६६, १३), हम...ठंडे हो रहे लोहे के बेंच पर बैठ गये (४४, ३७)।

**'वाला' रूपिम के साथ कृदन्त।** 'वाला' रूपिम के साथ कृदन्त एक विश्लेषणात्मक रचना होती है जो कि अविकारी तुमर्थ (सुपाइन) के साथ 'वाला' रूपिम लगाने से बनती है। 'वाला' रूपिम के साथ कृदन्त न केवल द्रव्य (या व्यक्ति) के प्रक्रिया के लक्षण को व्यक्त करता है, वरन् साथ-साथ व्यापार के निष्पादन के आशय को भी प्रगट करता है। प्रक्रिया का लक्षण जो कि 'वाला' रूपिम के साथ कृदन्त द्वारा व्यक्त किया जाता है, एक प्रकार का द्रव्य (या व्यक्ति) के लिए सर्वदा स्वाभाविक लक्षण के रूप में लिया जाता है। प्रथम कृदन्त तथा 'वाला' रूपिम के साथ कृदन्त के बीच में यही अन्तर है। प्रथम कृदन्त उस लक्षण को व्यक्त करता है जो कि किसी विशेष समय में द्रव्य (या व्यक्ति) के लिए स्वाभाविक है।

'वाला' रूपिम के साथ कृदन्त के लिए निम्नलिखित क्रियार्थक लक्षण स्वाभाविक हैं :

(१) वाच्य की श्रेणी, जो कि कृदन्त के स्वतंत्र प्रयोग तथा विधेय में आ सकती है, उदाहरणार्थ : ...अपने शरीर का सौदा करने वाली यह औरत...दो हजार कैसे ठुकराये दे रही है। (९६, ८९), बीमारी में किये जाने वाले आराम ने उसे और भी खूबसूरत बना दिया था (१३, १५९),...हालत बदलने वाली न थी (१६, ५८),...मकान का किराया उससे ही लिया जाने वाला है (४४, ९३)।

(२) पक्ष की श्रेणी—जो कि मुख्यतः कृदन्त के स्वतंत्र प्रयोग में प्रगट होती

है, उदाहरणार्थ : चक्कर लगाती रहने वाली आपकी सहेली क्यों नहीं आयी (५८, ३४), उधर तैयार हो चुकने वाली चीज़ों पर पालिश हो रहा था (६, १७७), भड़क उठने वाले विमल दादा को इतनी तीखी बात पर गुस्सा क्यों नहीं आया (१०७, ५१)।

(३) सकर्मकता तथा अकर्मकता की श्रेणी उदाहरणार्थ : वह चीख मारने ही वाली थी...(३१, ६), खिड़की से झाँकने वाला आदमी भी नीचे उतर आया ...(९६, ४६)।

(४) सापेक्ष कालवाचक अर्थ की श्रेणी—जब 'वाला' रूपिम कृदन्त विधेय-वाचक विशेषण के प्रकार्य में आता है जो कि मुख्य क्रिया के साथ व्यापार के एक ही कर्ता (या कर्म) से सम्बन्धित होता है तो वह कृदन्त मुख्य क्रिया के व्यापार के साथ समपाती प्रक्रियात्मक लक्षण की समकालिकता व्यक्त करता है, उदाहरणार्थ : ...ये उद्गार तुर्की, ईरान और पाकिस्तान की हिम्मत बढ़ाने वाले सिद्ध होंगे... (XI, ३०.७.१९५७),...जो संसार का नाश करने वाले कहे जाते हैं...(८४, ११),...प्रभा बहुत अच्छी अंग्रेजी लिखने वाली गिनी जाती थी...(९६, ५६)। व्यापार के कर्म संलग्न विधेयवाचक विशेषण के प्रकार्य में आते हुए जबकि विधेय व्यापार के कर्ता को निर्धारित करता है, 'वाला' रूपिम कृदन्त विधेय से सब प्रकार के रूपात्मक कालबोधक सम्बन्ध खो बैठता है और वह उससे काल के बारे में सिर्फ़ एक आम धारणा से जुड़ा होता है, उदाहरणार्थ : आज वह मुझे अपने बेटे की जान लेने वाली कहती है (५९, ८२),...उसे हम अपने स्वास्थ्य का नाश करने वाली बना देते हैं (X)।

(५) विधेयन की श्रेणी जो तब प्रगट होती है जब कृदन्त तार्किक विधेय व्यक्त करता है और उसका अपना कर्ता होता है। इस स्थिति में कृदन्त, सिद्धान्ततः, वाक्य के प्रधान कर्म की विशेषता दिखाता है, उदाहरणार्थ : आज वह मुझे अपने बेटे की जान लेने वाली कहती है (५९, ८२)।

'वाला' रूपिम के साथ कृदन्त के निम्नलिखित नामिक लक्षण होते हैं :

(१) 'वाला' रूपिम के साथ कृदन्त की लिंग, वचन तथा कारक की व्याकरणिक श्रेणी होती है। वचन तथा कारक की व्याकरणिक श्रेणी सिर्फ़ पुंल्लिग संज्ञाओं के साथ अन्वित होने में प्रगट होती है, उदाहरणार्थ : मैं हूं आटा माँगने वाला भिखारी (१०२, १२), अहातों में बोझा ढोने वाले बैल...भयातुर दृष्टि से देख रहे थे (९६, १३), खिड़की से बाहर निकलने वाले चेहरे ने दोहराया...(९६, ४६)। स्त्रीलिंग संज्ञाओं के साथ 'वाला' रूपिम के साथ कृदन्त सिर्फ़ लिंग में अन्वित होता है, उदाहरणार्थ : घुन की भाँति भीतर-ही-भीतर खा जाने वाली वेदना ! (७५, १०५), ऐसा अधिकार मोटरों पर बैठने वाली स्त्रियों को ही था (९६, ५८)।

(२) 'वाला' रूपिम के साथ कृदन्त विशेषण की तरह नामिकीकृत हो सकता है, और तब वह न केवल कृदन्तात्मक पुल्लिंग संज्ञा का रूप अपना लेता है, बल्कि एकार्थी स्त्रीलिंग रूप भी अपना लेता है। इस प्रकार 'वाला' रूपिम के साथ कृदन्त के बारे में कह सकते हैं कि वे कारक रूप का पूर्ण संज्ञात्मक रूपतालिका अपना लेते हैं, जैसे : आध घंटे तक वह किसी आने-जाने वाले की राह देखता रहा... (६२, ६३)....वे...टिकट पा जाने वालों को धन की मदद देते हैं (१४२, १४७), कोठरियों में रहने वालियां बैठकर नीचे आते-जाते लोगों को आकर्षित करने की चेष्टा करती हैं (६६, ८५), पानी भरने वालियों के प्रभाव से पानी खराब हो सकता है (X)।

शब्द-समुदाय के स्तर पर 'वाला' रूपिम के साथ कृदन्त निम्नलिखित विशेषणात्मक सम्बन्ध व्यक्त करते हैं : (क) विशेषणात्मक-गुणात्मक सामान लाने-ले जाने वाले ट्रक (५३, ३३), घूमने वाली लड़कियों को (६६, ५८); (ख) विशेषणात्मक-विधेयवाचक ...उसे हम...अपने स्वास्थ्य का नाश करने वाली बना देते हैं (X)।

'वाला' रूपिम के साथ नामिकीकृत कृदन्त शब्द-समुदाय के स्तर पर निम्नलिखित सम्बन्ध व्यक्त करते हैं : (१) कर्म-विषयक पीछा करने वाले से बचने के लिए (६६, ७७); (२) कर्ता-सम्बन्धी-कर्म-विषयक रहने वालियों के नाज-नखरे (१४०, २४); (३) सम्बन्धवाचक (विशेषणात्मक की प्रणाली में)—रहने वालों के मन (१, ४१५)।

'वाला' रूपिम के साथ कृदन्त वाक्य के स्तर पर उसके निम्नलिखित अंगों में आ सकता है :

(१) विशेषण—संज्ञा-संलग्न विशेषण के प्रकार्य में 'वाला' रूपिम कृदन्त अपने विशेषक के साथ नियमित तौर पर अन्वित होता है अर्थात् वचन, लिंग तथा कारक में अगर पुल्लिंग संज्ञा हो और सिर्फ लिंग में अगर संज्ञा स्त्रीलिंग हो, उदाहरणार्थ : लोहे की दुकान से लखपति होने वाले रामधन साहू हैं...(१११, ७),...पहाड़ जाने वाले यात्री...बसों के चलने के समय की प्रतीक्षा कर रहे थे (६६, ७),... लैला बनने वाली हीराबाई...का नाम किसने नहीं सुना भला ! (५२, ४०), उधर तैयार हो चुकने वाली चीजों पर पालिश हो रहा था (६, १७७)।

शुद्ध 'वाला' रूपिम के साथ कृदन्तों के अलावा, संज्ञा-संलग्न विशेषण के प्रकार्य में पक्ष-सम्बन्धी तथा 'वाला' रूपिम के साथ नामबोधक संयुक्त धातु वाले कृदन्त हो सकते हैं, उदाहरणार्थ : ...चाँदनी चौक में लाठी लेकर गश्त करते रहने वाले एक सिपाही ने उसे भागते देखकर उस पर लाठी का भरपूर वार कर दिया (६७, १२६), ...कल से आरम्भ होने वाली छुट्टियों का ध्यान भटक आया (५२, ६०)।

'वाला' रूपिम के साथ कृदन्त के रूप में संज्ञा-संलग्न विशेषण के प्रकार्य में क्रियार्थक-नामिक वाक्यांश और पदबन्ध हो सकते हैं, उदाहरणार्थ : ...पीछा करने वाले व्यक्ति की आहट ही उनके कानों में गूँजने लगी (९६, ७७),...अपने शरीर का सौदा करने वाली यह औरत...दो हज़ार को कैसे ठुकराए दे रही है ! (९६, ८५), चक्कर लगाते रहने वाली आपकी सहेली क्यों नहीं आयी ? (५८, ३४), अँग्रेज़ को जलाकर उनका खून करने वाले इन हथियारों के प्रति साहब लोगों के क्रोध और घृणा के कारण प्रतिहिंसा का अन्त न था (९६, ९२)।

(२) विधेयवाचक विशेषण—जो मुख्यतः 'सिद्ध (साबित) होना' ('करना') और 'कहना', 'गिनना', 'समझना' और दूसरी क्रियाओं की उपस्थिति में आते हैं, उदाहरणार्थ : ...ये उद्‌गार तुर्की, ईरान और पाकिस्तान की हिम्मत बढ़ाने वाले सिद्ध होंगे (XI, ३०.७.१९५७), आज वह मुझे अपने बेटे की जान लेने वाली कहती है (५९, ८२), ...प्रभा बहुत अच्छी अंग्रेज़ी लिखने वाली गिनी जाती थी (९६, ५९)।

'वाला' रूपिम के साथ कृदन्त लक्षणान्वित प्रधान कर्म-संलग्न विशेषण के प्रकार्य में उसके साथ नियमित तौर पर अन्वित होता है, उदाहरणार्थ : जिस सुहावनी तथा स्वच्छ वायु ने हमारे स्वास्थ्य का निर्माण किया था, उसे हम गोबर तथा गन्दे ढेरों को दुर्गन्ध से अपने स्वास्थ्य का नाश करने वाली बना देते हैं (X), आज वह मुझे अपने बेटे की जाने लेने वाली कहती है (५०, ८२)।

(३) पूरक जो कि उन क्रियाओं में प्रगट होता है जो विशेष शाब्दिक-वाक्यात्मक स्थितियों में अपर्याप्त सूचना रखती हैं, और जो पूरक की उपस्थिति में ही प्रधान कर्म अपना सकती हैं। ऐसी क्रियाएं बन्द शाब्दिक सूची से सम्बन्ध रखती हैं। 'वाला' रूपिम के साथ कृदन्त इसी प्रकार कीं बहुत ही कम क्रियाओं से प्रयुक्त होते हैं, उदाहरणार्थ : आज वह मुझे अपने बेटे की जान लेने वाली कहती है (५९, ८२), ...प्रभा बहुत अच्छी अंग्रेज़ी लिखने वाली गिनी जाती थी (९६, ५९), ...उसे हम...अपने स्वास्थ्य का नाश करने वाली बना देते हैं (X)। यहां यह उल्लेख करना उचित होगा कि 'वाला' रूपिम के साथ कृदन्त बहुधा लक्षणान्वित प्रधान कर्म के साथ नियमित तौर पर अन्वित होता है।

(४) संयुक्त नामिक विधेय जिसका अर्थ उद्देश्य का प्रक्रिया सम्बन्धी लक्षण है, जो स्थायी तथा नित्य व्यापार में निहित है या व्यापार के कर्ता से जो कि वाक्य का उद्देश्य है, व्यापार करने की इच्छा की ओर संकेत करता है। संयोजक क्रियाएं 'वाला' रूपिम के साथ कृदन्त-रूप तथा वर्तमान, भूत और (कम) भविष्यत् काल के बीच के सह-सम्बन्ध बताती हैं तथा संकेतार्थ और सम्भावनार्थ के साथ भी, उदाहरणार्थ : समिति की बैठक यहां २९ सितम्बर को होने वाली है (IV, २६.९.१९६८), थोड़ी देर में गाड़ी जाने वाली है (३१, ३५), ग्यारह बजने वाले

थे (८. ३७). वह भीख मांगने ही वाली थी कि...(३१. ६)....देश का वातावरण दूषित होने के कारण सबसे बड़ी परेशान करने वाला होगा...(७. ८१). अब तो निकलने ही वाली होगी (उनकी बारात) (१. ४६१). हां. अब दो बजने वाले होंगे (५२. ८२)....मैं इस बाजार में बाकायदा आने वाला होता तो उठकर उसे... कमरे से बाहर कर देता (१३. १२५)।

जैसा कि उदाहरणों से विदित है, 'वाला' रूपिम के साथ कृदन्त विधेय की बनावट में, रचना के संयुक्त घटकों के बीच समाविष्ट निपात रह सकता है, जैसे : मेरी मेज खाली होने ही वाली थी (५६. ३०)। इसके कारण 'वाला' इस विश्लेषणात्मक रचना में परप्रत्यय नहीं है बल्कि रूपिम है अर्थात् स्वतः पदायोग्य शब्द, जो कि सिर्फ़ व्याकरणिक प्रकार्य का काम दे रहा है।

'वाला' रूपिम के साथ नामिकीकृत कृदन्त वाक्य के स्तर पर उसके निम्नलिखित अंगों के प्रकार्य में आ सकता है : (१) उद्देश्य ...मगर तब तो बहुत-सी काम करने वालियां थी (१, २६२);...गानेवालियां तथा नाचनेवालियां भी बारात के साथ थीं (१४०, ६४); (२) प्रधान कर्म- ...वे...टिकट पा जाने वालों को धन की मदद देते हैं (१४२, १४७); (३) अप्रधान कर्म — मरने वाले की याद रुलाने के लिए काफ़ी है (६६, २२); (४) विशेषण — लेकिन पिटने वाले से पीटने वाली की फुर्ती अधिक थी (६, ११६)।

**कर्मवाच्य कृदन्त** कर्मवाच्य कृदन्त बगैर किसी अपवाद के विश्लेषणात्मक रचना होती है जो कि मुख्य क्रिया के सरल द्वितीय कृदन्त तथा सहायक क्रिया 'जाना' के चारों में से किसी एक कृदन्तपरक रूप से बनी होती है (संयुक्त प्रथम तथा द्वितीय कृदन्तों के रूपों को छोड़कर अर्थात् "जाता हुआ" और "गया हुआ" छोड़कर)। इस प्रकार, निम्नलिखित कर्मवाच्य कृदन्त होते हैं : कर्मवाच्य सरल प्रथम कृदन्त (लिखा+जाता), कर्मवाच्य सरल द्वितीय कृदन्त (लिखा+गया), कर्मवाच्य संतत कृदन्त जो कि बहुविश्लेषणात्मक रूप है (लिखा+जा+रहा), 'वाला' रूपिम के साथ कर्मवाच्य कृदन्त, वह भी बहुविश्लेषणात्मक रूप है (लिखा +जाने+वाला)। संयुक्त कर्मवाच्य प्रथम तथा द्वितीय कृदन्त ज्यादातर काल्पनिक रूप होते हैं न कि भाषा में सच में होने वाले हैं, इसलिए उनका अध्ययन यहां नहीं किया जायेगा हालांकि दो-एक उदाहरण साहित्य में मिलते हैं, जैसे... पहनाई जाती हुई मालाएं (श्रेष्ठ आंचलिक कहानियां, पृष्ठ ११२)।

कर्तृवाच्य कृदन्तों के विपरीत कर्मवाच्य कृदन्तों के प्रयोग का अधिक सीमित घेरा होता है चूंकि शब्द-समुदाय के स्तर पर स्वतंत्र प्रयोग में सिद्धान्ततः सिर्फ़ विश्लेषणात्मक-गुणात्मक सम्बन्ध व्यक्त करते हैं और वाक्य के स्तर पर वे मुख्यतः संज्ञा-संलग्न विशेषण के प्रकार्य में ही आते हैं। कर्मवाच्य कृदन्तों के लिए दूसरे प्रकार्य जैसे शब्द-समुदाय तथा वाक्य के स्तर पर, स्वाभाविक नहीं होते।

विधेय के प्रकार्य में, वे आम तौर पर सिर्फ़ क्रियार्थक कालरूपों की बनावट में आते हैं जिसका वाच्य के विभाग में अध्ययन किया जायेगा। इसकी वजह से कर्मवाच्य कृदन्तों के काफी कम क्रियार्थक एवं नामिक लक्षण होते हैं।

क्रियार्थक लक्षणों में सकर्मकता, पक्ष (मुख्यत: विधेय के प्रकार्य में; विशेषण के प्रकार्य में केवल अवधारण तथा प्रभावी पक्ष के रूप में ही इस्तेमाल हो सकते हैं), काल की श्रेणी, जो कि कर्मवाच्य कृदन्तों के स्वतंत्र प्रयोग के समय हो सकती है (प्रथम और द्वितीय तथा बहुत कम संतत कृदन्त में), जब वे क्रियार्थक विधेय के प्रकार्य में आते हैं ('किताब लिखी नहीं जाती' और 'किताब लिखी गयी'), और वृत्ति (अर्थ) की श्रेणी (सिर्फ़ प्रथम कर्मवाच्य कृदन्त की स्थिति में)।

कर्मवाच्य कृदन्तों के नामिक लक्षण उनमें लिंग, कारक तथा वचन की व्याकरणिक श्रेणियों तक ही सीमित हैं, जो कि कर्तृवाच्य कृदन्तों जैसा नियमित तौर पर प्रगट होते हैं। कर्मवाच्य कृदन्त आम तौर पर नामिकीकृत नहीं होते।

इसके अलावा कर्मवाच्य कृदन्त मुख्य क्रिया की हैसियत से उन्हीं विश्लेषणात्मक काल रूपों के संघटन में आते हैं जिनमें 'जाना' सहायक क्रिया का कृदन्त आता है (सरल प्रथम कृदन्त, सरल द्वितीय कृदन्त तथा संतत कृदन्त)। यही बात संकेतार्थ तथा सम्भावनार्थ के अपूर्ण, पूर्ण तथा संतत रूपों के लिए भी उतनी सही है। कर्मवाच्य कृदन्तों के प्रयोग के प्रकार्यात्मक पहलू का जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, वाच्य के विभाग में अध्ययन किया जायेगा।

**कर्मवाच्य सरल प्रथम कृदन्त**—जब संज्ञा-संलग्न विशेषण के प्रकार्य में आता है तो वह अपने विशेषक से नियमित तौर पर अन्वित होता है, उदाहरणार्थ : नीचे रगड़े जाते साथी को छुड़ाने के लिए वह लड़का आगे भागा ...(१७, २२०), वह...पति को देखती और कहे जाते शब्दों को सुनती रह गयी (४४, ७१), जोती जाती कुल भूमि का दस प्रतिशत बटाई के अन्तर्गत है (II, १०.२.१९७०, १२)।

**कर्मवाच्य सरल द्वितीय कृदन्त**—जब संज्ञा-संलग्न विशेषण के प्रकार्य में होता है तो अपने विशेषक से नियमित तौर पर अन्वित होता है, उदाहरणार्थ : रूस द्वारा छोड़ा गया उपग्रह बिना किसी पूर्व सूचना के अचानक सामने आया है (XI, ८.१०.१९५७), रावत ने समझाये गये ढंग से दरवाज़े पर पुकारा (९६, ७६), रमेश के द्वारा की गयी अपनी इस गहरी खुशामद से रद्धू बाबू प्रसन्न हुए... (१, १८०),...बनायी गयी ऐसी योजना के लिए की गयी व्यवस्थाओं में और वृद्धि की गयी (१५३, ७)।

जैसा कि उदाहरणों से प्रगट होता है क्रियार्थक-नामिक वाक्यांश का क्रियार्थक घटक कर्मवाच्य द्वितीय कृदन्त के रूप में वाक्यांश के नामिक घटक-संज्ञा के संज्ञा-संलग्न विशेषण के प्रकार्य में हो सकता है : की गयी खुशामद, की गयी व्यवस्था।

कर्मवाच्य द्वितीय कृदन्त के रूप में संज्ञा-संलग्न विशेषण के प्रकार्य में क्रियार्थक-नामिक वाक्यांश और विशेषणात्मक नामबोधक संयुक्त क्रिया आ सकते हैं जो नियमित तौर पर अपने विशेषक से अन्वित होते हैं, उदाहरणार्थ : इनमें कई नयी स्थापित की गयी कम्पनियों के शेयर शामिल हैं (१५३, ३३), प्रस्तुत पुस्तक का उद्देश्य यह है कि इन प्रश्नों तथा पहले प्रस्तुत किये जा चुके प्रश्नों का विश्लेषण किया जाये (१४५, ५६), अमरीका ने अपनी ओर से शुरू किये गये हमले में मदद मांगी (XI, ४.२.१९६३), ...१९७०-७१ में जारी किये गये आयात-लाइसेंसों के मूल्यों में तेजी से वृद्धि हो गयी थी (१५३, ७१)।

अगर क्रियार्थक-नामिक वाक्यांशों के नामिक घटक जो कि कर्मवाच्य द्वितीय कृदन्त के रूप में आते हैं, संज्ञा होती है, तो वह क्रियार्थक घटक की उपस्थिति में अपने-आपको प्रधान कर्म प्रगट नहीं करता, बल्कि सिर्फ व्यापार का शाब्दिक पूरक होता है, उदाहरणार्थ : ...विदेशी सहायता में से उपयोग नहीं की गयी विदेशी सहायता की राशि केवल ५०२.६४ करोड़ रुपये थी (II, १०.२.१९७०, ७)।

**कर्मवाच्य संतत कृदन्त** जब संज्ञा-संलग्न विशेषण के प्रकार्य में आता है तो वह अपने विशेषक से नियमित तौर पर अन्वित होता है, उदाहरणार्थ : लेकिन क्या अब उसके द्वारा लिखे जा रहे और उसके बारे में लिखे जा रहे कागजों में सारी चीजें बन्द नहीं हैं ? (V, जनवरी, १९६३, २३), ...जिससे कि दोनों देशों के मध्य चलाये जा रहे व्यापार की रूपरेखा मालूम की जा सके (II, २०.३.१९६६, २२), नीचे दी जा रही तालिका ऋण के विभिन्न स्रोतों को प्रदर्शित करती है (II, ५.४.१९६७, २४)।

क्रियार्थक-नामिक वाक्यांश के क्रियार्थक घटक कर्मवाच्य संतत कृदन्त के रूप में वाक्यांश के नामिक घटक (संज्ञा) के संज्ञा-संलग्न विशेषण के प्रकार्य में आ सकते हैं, उदाहरणार्थ : शायद श्री सुब्रमनियम को कांग्रेस जन द्वारा इस क्षेत्र में किये जा रहे काम का अध्ययन करने का समय नहीं मिला (II, २०.१०.१९६७, ४), सरकार...उनके द्वारा किये जा रहे व्यापार पर प्रतिबन्ध लगाती...(XI, १७.१.१९६३)।

कर्मवाच्य संतत कृदन्त के रूप में संज्ञा-संलग्न विशेषण के प्रकार्य में क्रियार्थक-नामिक वाक्यांश हो सकता है, उदाहरणार्थ : इस समय स्थापित किये जा रहे आठ कारखानों में से छः सरकारी तथा दो निजी क्षेत्र में हैं (II, २०.८.१९६५, ८)।

**'वाला' रूपिम के साथ कर्मवाच्य कृदन्त** संज्ञा-संलग्न विशेषण के प्रकार्य में अपने विशेषक से नियमित तौर पर अन्वित होता है, उदाहरणार्थ : रोज बदले जाने वाले कपड़े धोने लगी (१३, ४१), सरकारी भंडारों से दिये जाने वाले अनाज की मात्रा काफी बढ़ा दी गयी है (१५३, २), वहां भेजी जाने वाली लड़कियों को पचहत्तर रुपये मासिक भत्ता दिया जा रहा था...(९६, ९०)।

क्रियार्थक-नामिक वाक्यांश का क्रियार्थक घटक 'वाला' रूपिम के साथ कर्मवाच्य कृदन्त के रूप में वाक्यांश के नामिक घटक—संज्ञा—के संज्ञा-संलग्न विशेषण के प्रकार्य में हो सकता है, उदाहरण के तौर पर—बीमारी में किये जाने वाले आराम ने उसे और भी खूबसूरत बना दिया था (१३, १५६). साथ ही भारत सरकार ने...राज्यों को दी जाने वाली सहायता की सीमाएं भी बढ़ा दी हैं (१५३, ७)।

'वाला' रूपिम कृदन्त के साथ संज्ञा-संलग्न विशेषण के प्रकार्य में क्रियार्थक-नामिक वाक्यांश, नामबोधक संयुक्त विश्लेषणात्मक क्रियाएं तथा पदबन्द आ सकते हैं, उदाहरणार्थ : आयात की जाने वाली मुख्य वस्तुओं के स्थान पर देश में तैयार की जाने वाली वैसी ही वस्तुओं का उत्पादन काफ़ी हुआ था (१५३, ७२), इसी तरह, पिछड़े क्षेत्रों में स्थापित किये जाने वाले लघु उद्योग, एकांकों के लिए संयत्र और कच्चा माल आयात करने के सम्बन्ध में वरीयता दी जाती रही (१५३, ८२), जारी किये जाने वाले औद्योगिक लाइसेंसों और आशय-पत्रों की संख्या में भी वृद्धि हुई (१५३, ३१)।

अगर क्रियार्थक-नामिक वाक्यांश का नामिक घटक जो 'वाला' रूपिम के साथ कर्मवाच्य कृदन्त के रूप में आता है, संज्ञा है तो क्रियार्थक घटक की उपस्थिति में वह अपने-आपको प्रधान कर्म प्रगट नहीं करता, बल्कि सिर्फ़ व्यापार का शाब्दिक पूरक होता है। तब मुख्य क्रिया या अपने सरल द्वितीय कृदन्त के रूप में अपने नामिक घटक विशेषक शब्द के साथ भी अन्वित होती है, उदाहरणार्थ : 'निर्यात **किये जाने** वाली कुछ वस्तुओं पर,...जो प्रतिबन्ध लगाये गए थे, उनमें ढील दे दी गयी' (१५३, ८१) और 'निर्यात **की जाने** वाली वस्तुओं का उत्पादन बढ़ने...की सुनिश्चित व्यवस्था करना' (१५३, ८१)।

'वाला' रूपिम के साथ कर्मवाच्य कृदन्त 'सकना' सम्भाव्य क्रिया के साथ पक्ष-सम्बन्धी रूप में आ सकता है, उदाहरणार्थ :...वास्तविक प्राप्तियां सन्तोषजनक कहे जा सकने वाले स्तरों से काफ़ी नीची हैं (II, ५.४.१९६६, ३६),...सरकार द्वारा अपनायी जा सकने वाली घाटे की वित्त-व्यवस्था की रकम अपेक्षाकृत कम है (१५३, ५८)।

'वाला' रूपिम के साथ कर्मवाच्य कृदन्त संयुक्त नामिक विधेय के प्रकार्य में आ सकता है, उदाहरणार्थ : ...मकान का किराया उससे ही लिया जाने वाला है (४४, ९३),...रफ़ी को एक घोड़े पर सवार किया जाने वाला है (१६१, २८)।

## क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त

क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त आधुनिक हिन्दी में एक अविकारी क्रियार्थक-क्रियाविशेषणात्मक रूप होता है, जो कि या तो मुख्य व्यापार के गुणात्मक लक्षण

को व्यक्त करता है, या सहायक, गौण व्यापार या अवस्था को व्यक्त करता है या मुख्य व्यापार को जो कि कर्ता की अवस्था के द्वारा प्रगट होता है।

आधुनिक हिन्दी में रूप एवं अर्थ के अनुसार क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तों में ६ कर्तृवाच्य के तथा ३ कर्मवाच्य के होते है। दो क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त कर्मवाच्य तथा कर्तृवाच्य धातु से बनते है। पांच क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त कृदन्तों के आधार पर उत्पन्न होते है और एक स्वयं क्रियाविशेषण कृदन्त से बना है।

कर्तृवाच्य धातु से परिवर्तन द्वारा (सामान्य अर्थ में), और धातु के साथ 'कर', 'के' और 'करके' परप्रत्यय लगाने से तृतीय कर्तृवाच्य क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त बनता है (पूर्ववर्ती व्यापार का क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त)। कर्मवाच्य धातु से उसके साथ वे ही परप्रत्यय लगा तृतीय कर्मवाच्य क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त बनता है :

| कर्तृवाच्य धातु | परप्रत्यय | तृतीय कर्तृवाच्य क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त | कर्मवाच्य धातु | परप्रत्यय | तृतीय कर्मवाच्य क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त |
|---|---|---|---|---|---|
| लिख | — | लिख | लिखा जा | — | लिखा जा |
| लिख | कर | लिखकर | लिखा जा | कर | लिखा जाकर |
| लिख | कर | लिख के | लिखा जा | के | लिखा जाके |
| लिख | करके | लिख करके | लिखा जा | करके | लिखा जा करके |

पाँच कृदन्तपर्वक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त रूप में कृदन्तों के अप्रत्यक्ष कारक के बराबर हैं।

प्रथम कर्तृवाच्य क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त (सरल एवं संयुक्त) रूप में कर्तृवाच्य कृदन्त के सरल तथा संयुक्त रूप के अप्रत्यक्ष कारण के बराबर है: 'लिखते' और 'लिखते हुए'। भाषा के संकालिक विश्लेषण के आधार पर यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि सरल प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त, क्रिया के कर्तृवाच्य धातु के साथ परप्रत्यय 'ते' जोड़कर बनता है : लिख + ते = लिखते। कर्तृवाच्य संयुक्त कृदन्त इस स्थिति में 'हुए' रूप को (क्रिया 'होना' के सरल क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त का समाकार है) सरल प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के साथ जोड़ने से बनता है।

कर्मवाच्य प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त (आम तौर पर केवल सरल) कर्मवाच्य प्रथम सरल कृदन्त के अप्रत्यक्ष कारक के रूप के बराबर है: लिखा जाते। भाषा के संकालिक विश्लेषण के आधार पर कह सकते हैं कि कर्मवाच्य सरल प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त कर्मवाच्य धातु को परप्रत्यय 'ते' लगाने से

बनता है : लिखा जा + ते = लिखा जाते।

कर्तृवाच्य द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त (सरल तथा संयुक्त) कर्तृवाच्य द्वितीय कृदन्त के सरल तथा संयुक्त रूप के अप्रत्यक्ष कारक के रूप के बराबर है : 'लिखे' और 'लिखे हुए'। भाषा के संकालिक विश्लेषण के आधार पर निश्चय से कहा जा सकता है कि सरल द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त क्रिया के कर्तृवाच्य धातु के साथ परप्रत्यय 'ए' (ये) जोड़ने से बनता है : लिख + ए = लिखे। कर्तृवाच्य द्वितीय संयुक्त क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त इस स्थिति में सरल द्वितीय क्रिया-विशेषणात्मक कृदन्त के साथ 'हुए' रूप को ('होना' क्रिया के सरल द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त का समाकार है) जोड़ने से बनता है।

क्षणिक पूर्ववर्ती क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त (क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त 'ही' निपात के साथ) प्रथम सरल कर्तृवाच्य क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के साथ 'ही' निपात लगाने से बनता है : लिखते + ही = लिखते ही।

अनुमतिवाचक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त जिनको आधुनिक हिन्दी में नयी रचना कहा जाता है द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के रूप से, प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के सरल तथा संयुक्त रूप से द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के संयुक्त रूप से 'भी' निपात लगाने से बनता है क्योंकि अनुमतिवाचक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तों को छोडकर ये सब रचनाएं जिनका ऊपर अध्ययन किया गया है, प्राचीनतम हिन्दी में मिलती हैं : (क) तृतीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त—मालिन आवत देख करी...(कबीर—६२, १०), पेट पकड़िके माता रोवई बाह पकड़िके भाई (कबीर—६२, १२); (ख) प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त (सरल)—सोते मुझको आन जगावे (खुसरो—६२, ५), चलते-चलते झुक गया पांव कोम पर गउ (कबीर—७६, भाग-२, २५०); (ग) द्वितीय क्रिया-विशेषणात्मक कृदन्त (सरल)—मूँड मराये हरि मिलई (कबीर—६२, ११), (घ) 'ही' निपात के साथ क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त—सूरन की कहत ही... (सूरदास—७६, भाग-२, २५०)।

संयुक्त प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त, एवं सरल तथा संयुक्त द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त तथा 'ही' निपात के साथ क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के कर्मवाच्य रूप ज्यादातर काल्पनिक होते हैं और भाषा में उनका वास्तविक अस्तित्व नहीं के बराबर होता है।

सरल तथा संयुक्त प्रथम तथा द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त काल विरोध रखते हैं : आते—आये, आते हुए—आए हुए; सरल प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त और तृतीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त वाच्य विरोध रखते हैं—लिखते—लिखा जाते, लिखकर—लिखा जाकर।

सरल प्रथम तथा द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त विश्लेषणात्मक पक्ष-

सम्बन्धी रूप की रचना में हिस्सा लेते है।

तृतीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त पक्ष-सम्बन्धी विरोध रखते है : करके—करते रहकर, भागकर—भागे जाकर।

शब्द-समुदाय और वाक्य के स्तर पर क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त तद्रूप तथा विशेष प्रकार्यों को पाबन्द करते है। वे रूपात्मक तथा वाक्यात्मक लक्षणों की श्रेणियों में पहचाने जाते है। इसलिए हर क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के लिए स्वतंत्र विवरण की जरूरत पड़ती है।

**सरल प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त** के निम्नलिखित क्रियार्थक लक्षण होते हैं :

(१) वाच्य की श्रेणी, उदाहरणार्थ : पहले दिन उन्होंने...तैयार करते देखा था...(१६, २७), और...टुन्नु का शव वरुणा में प्रवाहित किये जाते भी हमारे संवाददाता ने देखा है (१२६, १०६)।

(२) सकर्मकता तथा अकर्मकता की श्रेणी उदाहरणार्थ : यह कहते नोहरी ने सबको आशीर्वाद दिया...(६६, ७६), सूरजना को मारते-मारते वह बेदम कर सकती...(४४, २१), रास्ता चलते वह किसी स्त्री को देखकर रुक जाती...(७५, ३१)।

(३) सापेक्ष कालवाचक अर्थ की श्रेणी—सरल प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त मुख्य व्यापार के गुणात्मक लक्षण या गौण सहायक व्यापार का वर्णन करते हुए मुख्य विधेय के व्यापार की सहकालिकता व्यक्त करता है, उदाहरणार्थ : 'हां भाई', चिलम को मुंह लगाते करिंदा बोला...(८३, ३५), लेकिन मोहन को सारी रात खाँसते गुजरी (६६, १४८)।

(४) विधेयन की श्रेणी—जो तब प्रगट होती है जब सरल प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त तार्किक विधेय व्यक्त कर सकता है और उसका अपना कर्ता भी हो सकता है। क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त इस स्थिति में स्वतंत्र पदबन्ध बनाता है या वाक्य के प्रधान कर्म से सम्बन्धित होता है, उदाहरणार्थ : राम के पहुँचते वह भी पहुँच जायेगी (६५, १३६),...उसे शहर में चौकीदारी करते हो चुके थे नक़द २० साल...(५२, २५), राम ने धूल उठते देखी (८४, ६१-६२)।

सरल प्रथम विशेषणात्मक कृदन्त मुख्य क्रिया की हैसियत से निम्नलिखित पक्ष-सम्बन्धी रूपों की बनावट में आता है : (१) नित्यताबोधकगामीसाकारी पक्ष—हर दो दिन बाद नया कुर्ता-धोती लाते रहना सम्भव न था...(६७, ३६),...इशारों में सब कुछ कहते रहना मुझे दिन-रात खाये जाता है (१०८, ३६); (२) घटमान पक्ष—सेठी उसे खिलाते जाना चाहता था...(६६, १६); (३) योग्यताबोधक पक्ष—नीलो से कुछ बोलते नहीं बना (५६, १३२)।

क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के क्रियाविशेषणात्मक लक्षण इसलिए प्रगट होते

हैं कि प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त एक अविकारी रूप होता है जो कि लिंग, वचन, कारक के अनुसार बदलता नहीं। क्रियाविशेषण की तरह, सरल क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त व्यापार का गुणात्मक वर्णन कर सकता है जब वह क्रियाविशेषणात्म शब्द के प्रकार्य में होता है। तब क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त क्रिया से पहले स्थान लेता है जो स्थान क्रियाविशेषण या दूसरा क्रियाविशेषणीकृत शब्द लेता है।

प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के क्रियाविशेषणीकरण की असीम हद उसका क्रियाविशेषण बनना होती है, उदाहरणार्थ :...वह देखते-देखते द्वार से बाहर तैरती निकल गयी (४४, ७१)—देखते-देखते—अर्थात 'जल्दी-से', 'क्षण भर में', 'पल-भर में'; मेरे कुल की नारियां पुराने ज़माने में हँसते-हँसते आग में कूद जाती थीं (१४३, १७)—हँसते-हँसते—अर्थात् 'खुशी से', 'बग़ैर डर के'; मेरा यह निर्णय केवल प्रोफ़ेसर महमूद की उस चलते-चलते कही गयी बात के कारण हो, ऐसा नहीं (११, १४)—चलते-चलते—अर्थात् 'राह चलते'।

सरल प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त संयोजक होता है, अगर उसका कर्ता वाक्य का उद्देश्य होता है और वह निरपेक्ष होता है, अगर वह अपने कर्ता के साथ-साथ आता है या वह कर्ता कल्पित होता है। संयोजक तथा निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त संयोजक या निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तपरक रचना बनाते हैं, लेकिन वे अकेले क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त की हैसियत से हो सकते हैं। निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त का तब व्यापार का कल्पित कर्ता होता है।

शब्द-समुदाय के स्तर पर सिर्फ़ संयोजक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त होते हैं जो कि विशेषणात्मक सम्बन्धों की प्रणाली में क्रियाविशेषणात्मक सम्बन्ध व्यक्त करते हैं, उदाहरणार्थ : थियेटर में...वह हँसते-हँसते लोट गया (६६, ६५)। स्पष्ट है कि निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त शब्द-समुदाय के आश्रित घटक के प्रकार्य में नहीं हो सकते।

वाक्य के स्तर पर सरल प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त उसके निम्नलिखित अंगों के प्रकार्य में आ सकता है :

(१) क्रियाविशेषण—क्रियाविशेषण के प्रकार्य में सरल प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त संयोजक अथवा निरपेक्ष हो सकता है।

संयोजक प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त क्रियाविशेषण के प्रकार्य में मुख्य व्यापार से समपाती गौण व्यापार को व्यक्त करता है, उदाहरणार्थ : बाहर निकलते, सड़क पर चलते, घर में रहते हमेशा सचेत रहता...(१०८, १६७), डंडा लेते चलना (६६, ५५)।

अगर संयोजक प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त में कर्ता है जो कि कर्तृ-सम्बन्धी रचना में आता है और बहुवचन, पुल्लिग संज्ञा से व्यक्त होता है या एकवचन के शिष्ट रूप में होता है, तो सरल प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त रूप और

प्रकार्य में सरल प्रथम कृदन्त के अप्रत्यक्ष कारक के साथ मिलता है और वे व्याकरणिक पर्याय शब्द और शाब्दिक समनाम की हैसियत से आते हैं, उदाहरणार्थ: लड़के...उछलते-कूदते घर में दाखिल हुए (६६, १७०-१७१), इंकार के शब्द उसके होंठों तक आते-आते रुक गये (७५, ११८), तुम दौड़ते-दौड़ते थक गये हो (६६, १८६)।

अगर उद्देश्य साधक कारक में होता है (कर्म या भाववाच्य रचनाओं में) तो इस प्रकार्य में सिर्फ़ सरल प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त ही आते हैं (आम तौर पर पुनरुक्त), उदाहरणार्थ: भाग्य को धिक्कारते धिक्कारते उसने (औरत) लल्लनसिंह को धिक्कारना आरम्भ किया (६६, २५१), जग्गा ने डरते-डरते उधर देखा (६५, २८०), कुबड़े ने डरते-डरते कहा...(६६, १२५), कहते-कहते शेरनी की तरह लपककर उसने एक तेज छुरा स्त्री की छाती में घुसेड़ दिया (६६, १६६)। इस बात को ऐसे समझना चाहिए कि साधक कारक में शब्द वाक्य के बाकी अंगों के साथ अपना हर सम्बन्ध खो बैठता है, सिवाय अपने विशेषण के, इस तरह कृदन्त उससे अन्वित होने की सम्भावना खो बैठता है जैसा कि, कृदन्त के लक्षणान्वित प्रधान कर्म की उपस्थिति में होता है (मुकाबला कीजिएगा...उसे खेलती देखकर...(७२, २२३)।

क्रियाविशेषणात्मक प्रकार्य में निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त मुख्यत: निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तपरक पदबन्ध में आता है, जो कि वाक्य का पृथक्कृत अंग होता है। ऐसे पदबन्धों में क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त अपने तार्किक कर्ता के साथ मानो स्वतंत्र विचार व्यक्त करता है, उदाहरणार्थ: मुझे नौकरी करते तीस साल हो गये (६५, ५२), रमा के पहुँचते-पहुँचते वह भी पहुँच जायेगी (६५, १३९), लेकिन सोहन को सारी रात खाँसते गुजरी (६६, १४८), अपना धार्मिक विश्वास मैं प्राण रहते छोड़ूँगा नहीं (३, ७९), ढाई बजते-न-बजते हरी गाड़ी दरवाज़े पर खड़ी हो गयी (१, १३९)।

निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तपरक पदबन्ध के स्थान पर यहाँ निरपेक्ष अर्थ में पुनरुक्त क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त आ सकता है, उदाहरणार्थ: चलते-चलते मेरे पैर दुखने लगे...(६६, १६०), खाते-पीते बारह बजते हैं (६५, १७८)।

प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के संयोजक और निरपेक्ष प्रयोग के बीच में तथाकथित 'कर्म-सम्बन्धी' सरल प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त है जिसका एक तरफ़ तो अपना तार्किक कर्ता होता है और दूसरी तरफ़ वह पृथक्कृत पदबन्ध को नहीं बनाता चूँकि वह वाक्य के प्रधान कर्म से सम्बन्ध रखता है (मुख्यत: सुनना, देखना आदि क्रियाओं की उपस्थिति में), उदाहरणार्थ: राम ने धूल उड़ते देखी (८४, ९१-९२),...उसने लालबिहारी को दरवाज़े पर खड़े यह कहते सुना कि...(६६, १५०), अपनी आँखों मैंने अपने सम्बन्धियों की निर्मम हत्या होते देखी

है (८७, ५०७), रमणी को जाते देखकर सरदार साहब की जान में जान आयी (६६, १८६), इस कोठरी का दरवाज़ा खुलते सुनता...(६६, २२६)।

'कर्म-सम्बन्धी' सरल प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त उस व्यापार को व्यक्त करता है, जो कि किसी विशेष समय के बीच हुआ हो और जो सारे समय में हुए मुख्य व्यापार के साथ सन्निपात हो या उसकी कार्यान्विति के किसी निश्चित क्षण के साथ सन्निपात हो। यही एक अन्तर सरल प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त तथा उन सरल प्रथम कृदन्तों के बीच है जिनमें वे ही क्रियाएं प्रयोग में आती हैं, लेकिन जो विधेयवाचक विशेषण के प्रकार्य में व्यक्त होती हैं चूंकि कृदन्त अपने स्थान को बदल सकते हैं, अर्थात् शुद्ध विशेषण के प्रकार्य में हो सकते हैं [मुकाबला कीजिये—'दद्दा के सिर से खून बहता देख...(४, १७०)' और 'दद्दा के सिर से बहता खून देख...', लेकिन '...पहलवान के मुँह से खून बहते देखकर...(२८, १८४')' ], इसीलिए प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त अपने कर्ता के व्यापार तथा उसकी अवस्था को व्यक्त करता है, लेकिन कर्ता के संतत गुण को नहीं। यही कारण है कि यहां क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त क्रियाविशेषण है, और कृदन्त—विधेयवाचक विशेषण।

सरल प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त न केवल पुल्लिग, बहुवचन बल्कि एकवचन वाले लक्षणान्वित प्रधान कर्म के साथ आते हुए रूप और प्रकार्य में सरल प्रथम कृदन्त के अप्रत्यक्ष कारक से मिल जाते हैं और वे व्याकरणिक पर्याय तथा शाब्दिक समनाम की हैसियत से आते हैं, उदाहरणार्थ : जब मैंने उनके गवाहों को सरासर झूठ बोलते देखा...(७१, ५), लड़कों को खेलते देखा...(६६, २१३),... कृष्णचन्द्र ने...साधू को अपनी ओर आते देखा (७२, २३१),...दो व्यक्तियों को व्यभिचार और चोरी करते पकड़ा...(२४, ८८)।

जब लक्षणान्वित स्त्रीलिंग संज्ञाएं इस्तेमाल होती हैं तो प्रधान कर्म के प्रकार्य में केवल सरल प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त आता है, उदाहरणार्थः इस बुढ़िया को निकलते देखा (२४, १३१). सोना ने अंग्रेज़ी सेना को एकत्रित होते देखा (३६, ८६)।

इस तरह तीन प्रकार के सरल प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त क्रिया-विशेषणात्मक प्रकार्य में आते हैं : (१) संयोजक, या 'कर्ता' क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त; निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त और 'कर्म-सम्बन्धी' क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त।

(२) विधेय—सरल प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त संयुक्त और जटिल क्रियार्थक विधेय में इस्तेमाल होता है।

संयुक्त क्रियार्थक विधेय में सरल प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त व्यापार के योग्यताबोधक पक्ष में आता है, उदाहरणार्थ :...आपकी बात नहीं टालते बनती

(६५, ६८)।

जटिल क्रियार्थक विधेय में क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त शामिल हो सकता है : (क) व्यापार के निरन्तरबोधक-सीमित तथा वर्तमान पक्षों संबंधी तुमर्थ में, उदाहरणार्थ : वह किसी बहाने से उसकी मदद करते रहना चाहती थी (६५, १८२), सेठी उसे खिलाते जाना चाहता था (६६, १६); (ख) 'डरना', 'शर्माना', 'झेंपना', 'घबराना', 'ऊँघना' आदि क्रियाओं की रचनाओं में, 'थकना' तथा 'चूकना' क्रियाओं के साथ जहां क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त का अर्थ क्रियार्थक कर्म के करीब होता है जो तुमर्थ व्यक्त करता है, उदाहरणार्थ : मैं इन लोगों के सामने पड़ते डरता हूं (१०८, ३३)...वह सुधा के घर गहने पहन कर जाते शर्माती थी (६६, ११८), इतना स्वीकार करते क्यों झेंपते हो (६६, १२१-१२२), राम इतना भारी बोझ लेते घबरा रहा था (६५, ६८)...वह गाते-गाते थक गया (५२, ६६), तो यह बात बताते भी नहीं चूकता कि...(११६, १०६); (ग) 'बचना' क्रिया के साथ तथा 'सम्भलना' और 'रहना' क्रियाओं के साथ की रचनाओं में जहां क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त अर्थक भार का धारण करते है, और समापक क्रिया जाहिर करती है कि कृदन्त द्वारा व्यक्त किया हुआ व्यापार वास्तविक रूप में नहीं हुआ, उदाहरणार्थ : वह बार-बार गिरते-गिरते बचा (६६, ४७), सुखराम का लट्ठ कन्धे पर पड़ते-पड़ते बचा (१०३, १६६), वह एक ओर धोखा खाकर गिरते-गिरते सम्भली...(१०८, ७१), उसके मुंह से एक बार आवाज निकलते-निकलते रह गयी (६५, २६६); (घ) एक धातु की क्रिया की रचनाओं में, जो कि मुख्य व्यापार की कार्यान्विति की ओर संकेत देती है जो कि सरल प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त द्वारा व्यक्त की जाती है, उदाहरणार्थ : इस तरह बातचीत बढ़ते-बढ़ते बढ़ गयी (५१, १२), शिथिलता फैलते-फैलते फैल गयी (११६, १२५)।

जैसा कि उदाहरणों से विदित है कि क्रियाविशेषण के प्रकार्य में एवं विधेय के प्रकार्य में सरल प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त बहुत अक्सर पुनरुक्त रूप में आता है, जो कि व्यापार की नित्यता को अकेले क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त से ज्यादा व्यक्त करता है। निषेधात्मक 'न' निपात के साथ क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त की पुनरुक्ति का अर्थ यह है कि व्यापार या अवस्था जो कि क्रिया-विशेषणात्मक कृदन्त द्वारा व्यक्त किया गया है, शुरू हो चुका है, परन्तु अभी समाप्त नहीं हुआ है, उदाहरणार्थ : नन्दू ने अनमने भाव से नोट गिनने शुरू किये, परन्तु गिनती खत्म करते-न-करते उसकी आँखें चमक उठीं (७, ६), तीसरे दिन सूर्योदय होते-न-होते उसका जीवन अस्त हो गया (१, ३२)।

**संयुक्त प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त**—संयुक्त प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तों के निम्नलिखित लक्षण होते हैं :

(१) सकर्मकता तथा अकर्मकता की श्रेणी—उदाहरणार्थ : किवाड़ खोलते हुए मिनाल बोली...(१०८, १२८), यह कहते हुए लल्लू हँसा (१७, ३५८), अँधेरे बरामदे में चलते हुए लतिका ठिठक गयी (५२, ८७)।

(२) सापेक्ष कालवाचक अर्थ की श्रेणी—जब क्रियाविशेषण के प्रकार्य में आता है तो संयुक्त क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त मुख्य विधेय के व्यापार के साथ सहकालिकता व्यक्त करता है, उदाहरणार्थ :...वह मुसकराते हुए बोली...(५२, १०५), दूजी को बूढ़ी कैलासी के साथ रहते हुए एक मास बीत गया (६९, २४५)।

(३) विधेयन की श्रेणी—जो कि तव प्रगट होती है जब संयुक्त प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त तार्किक विधेय को व्यक्त करता है और अपना कर्ता रखता है। इस स्थिति में क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त स्वतंत्र पदबन्ध बनाता है या वाक्य के प्रधान कर्म के साथ सम्बन्धित होता है, उदाहरणार्थ : आपके फ़ेल होते हुए मेरा पास हो जाना इतना बड़ा अपराध है...(१४३, ८), मिस्टर, कभी तुमने बर्फ़ गिरते हुए देखी है ? (३०, ३०)।

संयुक्त प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के क्रियाविशेषणात्मक लक्षण इससे प्रगट होते हैं कि यह क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त एक अविकारी रूप है जो कि लिंग, वचन तथा कारक के अनुसार बदलता नहीं। क्रियाविशेषण की तरह, संयुक्त प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त व्यापार के गुणात्मक वर्णन को व्यक्त कर सकता है, जब वह क्रियाविशेषणात्मक शब्द के प्रकार्य में होता है। यह बात विशेषकर तब प्रगट होती है जब कि मुख्य क्रिया और क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त की सन्निहित अवस्था होती है।

संयुक्त प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त संयोजक होता है अगर उसका कर्ता वाक्य का उद्देश्य होता है, और वह निरपेक्ष होता है अगर वह अपने कर्ता के साथ होता है (या अगर वह कल्पित होता है)। संयोजक और निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त संयोजक और निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तपरक पदबन्ध बनाते हैं और अकेले क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त हो सकते हैं। निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त का तब व्यापार का कल्पित कर्ता होता है।

शब्द-समुदाय के स्तर पर सिर्फ संयोजक प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त ही हो सकते हैं जो कि विशेषणात्मक सम्बन्धों की प्रणाली में क्रियाविशेषणात्मक सम्बन्ध व्यक्त करते हैं। उदाहरणार्थ : वह मुसकराते हुए बोली...(५२, १०५)।

वाक्य के स्तर पर संयुक्त प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त उसके निम्नलिखित अंगों के प्रकार्य में आते हैं :

(१) क्रियाविशेषण—संयुक्त प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तों का क्रियाविशेषणात्मक प्रकार्य ही मुख्य प्रकार्य है, जहां संयोजक अथवा निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त इस्तेमाल होते हैं।

क्रियाविशेषणात्मक प्रकार्य में संयोजक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त सहायक व्यापार को व्यक्त करते हैं जो कि मुख्य व्यापार का गौण होता है। उदाहरणार्थ : और यह कहते हुए वह मुड़ा (१७, १८६), जादूगर दौड़कर झोंपड़ी में मां-मां पुकारते हुए घुसा (३६, ३०)।

विधेय से जैसे-जैसे दूर होते हैं, विशेषकर जब संयुक्त प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त वाक्य के उद्देश्य से पहले रखा जाता है, तो उसके क्रियाविशेषणात्मक प्रकार्य कम हो जाते हैं और प्रथम स्थान पर सहायक व्यापार का शुद्ध अर्थ आ जाता है, उदाहरणार्थ : मोटर से जाते हुए सेठानी ने यह सब देखा (८८, ६५), और रास्ते में चलते हुए वह बार-बार मेरी तरफ देखती रही...(५२, १४६)।

अगर संयोजक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त में उद्देश्य कर्तासम्बन्धी रचना में आता है और बहुवचन पुल्लिंग संज्ञा द्वारा व्यक्त होता है या एकवचन में शिष्ट रूप में व्यक्त होता है तो संयुक्त प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त रूप तथा प्रकार्य में संयुक्त प्रथम कृदन्त के अप्रत्यक्ष कारक से मिल जाता है और वे व्याकरणिक पर्याय तथा शाब्दिक समनाम की हैसियत से आते हैं, उदाहरणार्थ :...लोग उसके सामने जाते हुए काँपते हैं (८, ३७), सरदार साहब हंसते हुए विदा हुए (६६, २०५)।

अगर उद्देश्य साधक कारक में होता है (कर्म-विषयक या भाववाचक रचनाओं में) तो क्रियाविशेषण के प्रकार्य में सिर्फ़ संयुक्त प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त ही आते हैं, उदाहरणार्थ : तुरार्या ने जाते हुए कहा...(६६, १६६), जागेश्वर ने बाहर जाते हुए उत्तर दिया (६६, २१८), स्त्री ने रोते हुए कहा...(६६, ११६)। जैसा कि सरल प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तों की स्थिति में, इस बात को इस तरह समझना चाहिए कि साधक कारक में शब्द वाक्य के बाकी अंगों के साथ अपना हर सम्बन्ध खो बैठता है, सिवाय अपने विशेषण के, इस तरह क्रिया-विशेषणात्मक कृदन्त उससे अन्वित होने की सम्भावना खो बैठते हैं, जैसा कि कृदन्त के लक्षणान्वित प्रधान कर्म की उपस्थिति में होता है, उदाहरणार्थ : इस मलेच्छ घुड़सवार सेना को बढ़ती आती हुई देख...(८, ५८)।

क्रियाविशेषणात्मक प्रकार्य में निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त मुख्यतः निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तपरक पदबन्ध में आता है, जो कि वाक्य का पृथक्कृत अंग होता है। ऐसे पदबन्धों में क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त अपने तार्किक कर्ता के साथ मानो स्वतंत्र विचार व्यक्त करता है, उदाहरणार्थ : मराठा फ़ौजों को विश्राम करते हुए अभी थोड़ा समय हुआ होगा...(४७, १०), गालों पर साबुन लगाते हुए मुझे बड़ी मचलन-सी लग रही थी (१०८, ४७), वह बच्चों के रहते हुए अपना दूसरा विवाह करे (६६, १५३)।

संयुक्त प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त बहुत ही कम 'देखना', 'सुनना' और दूसरी क्रियाओं की उपस्थिति में क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के 'कर्म संबंधी' अर्थ

में आता है हालाँकि ऐसा प्रयोग आधुनिक हिन्दी में मिलता है, उदाहरणार्थ : मिस्टर, कभी तुमने बर्फ़ गिरते हुए देखी है ? (३०, ३०),...वह यह कहते हुए सुना जाता है (१११, १००)।

संयुक्त प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त पुल्लिग, एकवचन तथा बहुवचन के लक्षणान्वित प्रधान कर्म की उपस्थिति में रूप और प्रकार्य में संयुक्त प्रथम कृदन्त के अप्रत्यक्ष कारक के साथ मिल जाते हैं, उदाहरणार्थ : आज एक को रोते हुए देख दूसरा हँसता...(६६, २१६),...उन्हें आज भी तपस्या करते हुए माना जाता है...(८४, ६८)।

संयोजक संयुक्त प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त प्रकार्य रूप में संयुक्त प्रथम कृदन्त के करीब है जो कि विधेयवाचक क्रियाविशेषण के प्रकार्य में आता है। यह बात प्रायः समान उदाहरणों से सिद्ध हो जाती है : 'यह कहते हुए लल्लू हँसा' (१७, ३५८), और 'यह कहता हुआ जियाराम अपने कमरे में चला गया (६६, १६०)', 'रास्ते में चलते हुए वह बार-बार मेरी तरफ देखती रही (५२, १४६)', और 'वह चलती हुई मुझे बताने लगी...(५२, १४६)'।

(२) विधेय—संयुक्त प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त सिर्फ़ जटिल क्रियार्थक विधेय में होता है जो कि 'डरना', 'झेंपना' आदि समापिका क्रियाओं की उपस्थिति में होता है, उदाहरणार्थ : सदान उसके आगे पुस्तक खोलते हुए डरता (७३, ५०), पहले मन्साराम उसके पास आते हुए झिझकता था...(६६, ५०), वह कुँवर बन चुका था, इसलिए ऐसी तुच्छ भेंट देते हुए झेंपता था (७२, १०२)।

सरल तथा संयुक्त प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तों में निम्नलिखित प्रकार्यात्मक अन्तर है :

(१) संयुक्त प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त वाच्य विरोध नहीं रखते।

(२) संयुक्त प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त विश्लेषणात्मक पक्ष-सम्बन्धी रूपों में नहीं आते।

(३) संयुक्त प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त शब्द-समुदाय तथा वाक्य के स्तर पर पुनरुक्त रूप में नहीं आते।

**सरल द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त**—सरल द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त उस अवस्था को व्यक्त करता है जो कि किसी ख़त्म हुई प्रक्रिया का परिणाम होती है, जो कि (क) क्रियाविशेषणात्मक शब्द की हैसियत से दूसरी प्रक्रिया को साथ लेता है, और (ख) मुख्य तथा गौण विधेय की सीमा में स्वयं प्रक्रिया को व्यक्त कर सकता है (गौण विधेय केवल निरपेक्ष पदबन्ध में)। सरल द्वितीय कृदन्त के विपरीत, सरल द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त जो कि सकर्मक धातु से बना है, हमेशा कर्तृवाच्य अर्थ रखता है। इस विषय में यह निश्चयपूर्वक

कहा जा सकता है कि द्वितीय कृदन्त का कोई भी कर्तृवाच्य अर्थ, वास्तव में, क्रियाविशेषणात्मक होता है, चूंकि द्वितीय कृदन्त का विशेषणात्मक प्रयोग हमेशा अप्रत्यक्ष कारक के रूप में होता है, चाहे वह स्त्रीलिंग संज्ञा के आगे ही क्यों न हो। निम्नलिखित उदाहरण इसको साबित करता है: इतने में झिलमिलाती पोशाक **पहने** और जड़ाऊ गहनों से **लदी** कई परियां वहां किसी तरफ़ से आ निकलीं (२५, १२०)।

सरल द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के निम्नलिखित क्रियार्थक लक्षण होते हैं:

(१) सकर्मकता और अकर्मकता की श्रेणी, उदाहरणार्थ: सामने एक टीला मार्ग रोके खड़ा था (६६, २४७), वह स्कूटर में लेटे-लेटे बेपरवाही से खाता है (८, ७६)।

(२) सापेक्ष कालवाचक अर्थ की श्रेणी—जब सरल द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त क्रियाविशेषणात्मक शब्द या क्रियाविशेषणात्मक पदबन्ध के प्रकार्य में आता है, तो वह प्रक्रिया-अवस्था व्यक्त करता है, जो कि मुख्य क्रिया के व्यापार के साथ सहकालिक होती है, उदाहरणार्थ: भालचन्द्र एक मिनट तक आँखें बन्द किये बैठे रहे...(६६, २२), धर्मदास सिर झुकाये खड़ा रहा (६६, १७६)।

(३) विधेयन की श्रेणी, जो तब प्रगट होती है जबकि सरल द्वितीय क्रिया-विशेषणात्मक कृदन्त तार्किक विधेय को व्यक्त करता है और अपना कर्ता रखता है। इस स्थिति में क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त स्वतंत्र पदबन्ध बनाता है या वाक्य के प्रधान कर्म के साथ सम्बन्ध रखता है, उदाहरणार्थ: चेतन के बैठे-बैठे रजत की वहन चाय लायी थी (१७, १५४), श्री कोलारकर को स्वीप खेले वर्षों बीत गये थे (७, ८७), मुझे पलकें झुकाए देखकर सोनो उठ गयी (१०३, ८२)।

सरल द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त मुख्य क्रिया की हैसियत से निम्न-लिखित पक्ष-सम्बन्धी रूपों में होता है: (१) नित्यताबोधक पूर्णपरिणामी पक्ष—पुलिस भी पहरा लगाये रहती थी (६७, ५), वह करीमुद्दीन को देर रात तक बातों में उलझाये रहती (५२, ६६); (२) घटमान पूर्णपरिणामी पक्ष—चिन्ता दिल को कहे जा रही थी (५८, ३७), उसकी मां रोये जाती है, उसे चूमे जाती है, रोये जाती है (७, १२२); (३) निश्चयबोधक पक्ष—बैठने की जगह मैं अभी बनाये देती हूं (५२, १३२), अरे ठहरो, मैं पकड़े लेता हूं (७५, १७३); (४) गुणार्थक पक्ष—क्रोध सम्भाले नहीं सम्भलता था (२६, १०), उस गाय की याद तो अलग हटाये नहीं हटती (११६, ६७)।

सरल द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के क्रियाविशेषणात्मक लक्षण इसलिए होते हैं कि क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त एक अविकारी रूप है और लिंग, वचन तथा कारक के अनुसार नहीं बदलता। क्रियाविशेषण की तरह, सरल

द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त व्यापार के क्रियाविशेषणात्मक वर्णन को व्यक्त कर सकता है। इस तरह, सरल द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त उसी स्थान पर क्रिया से पहले होता है जो कि क्रियाविशेषण या दूसरा क्रियाविशेषणात्मक शब्द लेता है। सरल द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त का असीम क्रियाविशेषणीकरण है उसका क्रियाविशेषण बन जाना, जो विशेषकर निषेधात्मक पूर्वप्रत्यय सहित क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तों के लिए सही है। उदाहरणार्थ : मैंने अनजाने किया (४७, १२), अनजाने---'बगैर इच्छा के','वैसे ही'; वह इसी तरह चुपचाप बे-हिले-डुले लेटा रहा (१७, १६), बे-हिले-डुले—'बगैर हिले'; बैठे-बैठे आ जायेगा? (१०३-४१६); बैठे-बैठे—'बगैर मुश्किल के', 'बगैर किसी बात के'; तुम्हें बैठे-बैठाये एक-न-एक खुचर सूझती ही रहती है (६६, २२४), बैठे-बिठाये—'वैसे ही', 'बगैर किसी बात के'।

सरल द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त संयोजक होता है अगर उसका कर्ता वाक्य का उद्देश्य होता है, और निरपेक्ष है, अगर वह अपने कर्ता के साथ आता है (या अगर वह कल्पित है)। संयोजक तथा निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त संयोजक या निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तपरक पदबन्ध बना सकते हैं, लेकिन वे अकेले क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के रूप में आते हैं। निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त का तब व्यापार का कल्पित कर्ता होता है।

शब्द-समुदाय के स्तर पर सिर्फ़ संयोजक सरल द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त आते हैं जो कि विशेषणात्मक सम्बन्धों की प्रणाली में क्रियाविशेषणात्मक सम्बन्ध व्यक्त करते हैं, उदाहरणार्थ : न जाने आँखें मूँदे मैं क्या सोच रहा था... (११६, ४२), जहां गगास की नदी...पहाड़ियों में अनजाने खो जाती है (६, १३०)।

वाक्य के स्तर पर सरल द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त उसके निम्नलिखित अंगों के प्रकार्य में आता है :

(१) क्रियाविशेषण—क्रियाविशेषण के प्रकार्य में सरल द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त संयोजक और निरपेक्ष हो सकते हैं।

संयोजक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त क्रियाविशेषण के प्रकार्य में कर्ता, जो कि वाक्य का उद्देश्य है, की अवस्था व्यक्त करता है और क्रियार्थक विधेय के व्यापार का क्रियाविशेषण के रूप में साथ देता है (मुख्यत: व्यापार के प्रकार का क्रियाविशेषण)। मुख्य क्रिया की हैसियत से, जिसके साथ क्रियाविशेषणात्मक कृदंत का सम्बन्ध है, दूसरी क्रियाओं की अपेक्षा गतिसूचक तथा दशासूचक क्रियाएं ज़्यादा आती हैं और कथनवाचक तथा भाव-चेतनावाचक क्रियाएं भी। उदाहरणार्थ : उसकी उँगली थामे फज्जा चल रहा है...(७, २६), सरदार छुरा लिये मेरी तरफ बढ़ा (६६, १६०), सद्वृत्तीय मुँह छुपाये खड़ी थी...(६६, १५),...वह स्टेशन के

प्लेटफ़ार्म पर कुर्सी डाले धूप में बैठा था (१६, १४८), धर्मदास सिर झुकाये खड़ा रहा (६६, १७६), न जाने आँखें मूँदे मैं क्या सोच रहा था...(११६, ४२), वही वह युवा शिकारेवाले दोगे पर बैठे एक आदमी से बातें कर रहा था (६, १८२)।

प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के विषयों के विपरीत जो कि अप्रत्यक्ष प्रथम कृदन्त का समाकार है, द्वितीय (सरल तथा संयुक्त) क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त सिर्फ़ द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त की उपस्थिति में ही ऐसा समाकार बना सकता है जो कि अकर्मक धातुओं (या अकर्मक कृदन्तों) से बनते हैं। सकर्मक धातुओं से बने अविधेय रूप हमेशा अविकारी क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तपरक रूप में आते हैं, चाहे वे प्रत्यक्ष कारक में शब्द के आगे ही क्यों न हों, उदाहरणार्थ: उसके साथ बरसाती ओढ़े, छाता लगाये, एक युवती थी (११६, ६१),...सीधे-सादे रंगों के कपड़े पहने स्त्रियां (६५, ६५), दीवार से पीठ टिकाये मर्द नारियल गुड़गुड़ाता हुआ फिर बड़बड़ा रहा था...(६६, ३५)। सरल द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त जो कि अकर्मक धातु से बना है, रूप तथा प्रकार्य में सरल द्वितीय कृदन्त के अप्रत्यक्ष कारक के साथ मिल जाता है और वे व्याकरणिक पर्याय और शाब्दिक समनाम की हैसियत में आते हैं, जब वाक्य का उद्देश्य, जो कि कर्तृ-सम्बन्धी रचना में आता है, पुल्लिंग, बहुवचन या शिष्ट रूप, एकवचन द्वारा व्यक्त किया जाता है, उदाहरणार्थ :...बगुले डालियों पर बैठे हिंडोले झूल रहे थे (६६, १३०), व्रजनाथ दरवाज़े पर बैठे गोरेलाल का इन्तजार कर रहे हैं (६०, १३३), पुरोहितजी पूजा पर बैठे सोच रहे थे...(६६, १२७)।

अगर उद्देश्य (कर्म-सम्बन्धी या भाववाचक रचनाओं में) साधक कारक में है तो परस्थित स्थिति में आमतौर पर सरल द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त आता है जो कि अकर्मक धातु (अकर्मक कृदन्त) से बनता है, उदाहरणार्थ: नवाब ने मोटर में बैठे-ही-बैठे कहा...(३, २५)।

संयोजक द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त क्रियाविशेषणात्मक प्रकार्य में 'के बिना' और 'के बगैर' परसर्गों के साथ आता है। इस स्थिति में वे सहायक व्यापार को व्यक्त करते हैं, जिसके बगैर मुख्य क्रियार्थक विधेय का व्यापार सम्पन्न हो जाता है, उदाहरणार्थ : मिस पाल क्षण भर बाद फिर उसी तरह बिना रुके बात करने लगी...(५२, १४८),...बिना कोई जवाब दिये लौट पड़ा...(७१, ६१),...बिना मुँह से एक शब्द निकाले कमरे से निकल गयी (६६, २०५)।

निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त क्रियाविशेषणात्मक प्रकार्य में मुख्यतः निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तपरक पदबन्ध में प्रयोग होता है जो कि वाक्य के पृथक्कृत अंग के प्रकार्य में आता है। इन पदबन्धों में क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त अपने तार्किक कर्ता के साथ मानो स्वतंत्र विचार व्यक्त करता है, उदाहरणार्थ: यूसुफ़ सौदागर को मरे सौ वर्ष हो चुके थे...(२५, ४७), चेतन के बैठे-बैठे रजत की

बहन चाय लायी थी (१७, १५४), सुमन को ससुराल आये डेढ़ साल के लगभग हो चुका था (७३, २१), मुन्नू इतनी रात बीते नहीं जा सकता (६९, १३५), उस वक्त सूरज छिपे काफ़ी देर हो गयी थी (१७, २४३)।

निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त 'तक' परसर्ग के साथ इस्तेमाल हो सकता है, उदाहरणार्थ : वह उसके साथ दिन चढ़े तक सोया रहता (७, ६४), दिन छिपे तक सोता रहता...(७, ७१)।

सरल द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के निरपेक्ष तथा संयोजक इस्तेमाल के बीच में तथाकथित 'कर्म-सम्बन्धी' सरल द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त है जो एक तरफ़ अपना तार्किक कर्ता रखता है तो दूसरी तरफ़ पृथक्कृत पदबन्ध नहीं रचता चूँकि वह वाक्य के प्रधान कर्म के साथ सम्बन्ध रखता है (मुख्यत: 'देखना' क्रिया के साथ), उदाहरणार्थ : मुझे पलकें झुकाये देखकर सोनो उठ गयी (१०३, ४२), 'कर्म-सम्बन्धी' सरल द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त उस अवस्था को व्यक्त करता है जो कि द्रव्य (या व्यक्ति) के लिए मुख्य व्यापार की कार्यान्विति के समय स्वाभाविक है।

जैसा कि सरल प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त की स्थितियों में होता है, यहां भी क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त का रूप अविकारी होता है और परस्थिति निश्चित होती है।

पुल्लिग, एकवचन तथा बहुवचन लक्षणान्वित प्रधान कर्म में जब आता है, तो सरल द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त रूप तथा प्रकार्य में सरल द्वितीय कृदन्त के अप्रत्यक्ष कारण से मिल जाता है और वे फिर व्याकरणिक पर्याय और शाब्दिक समनाम की हैसियत से आने लगते हैं, उदाहरणार्थ :...मादा हातिम को वहां पड़े देखकर घबरायी...(२५, २०), सुमन ने दो कांस्टेबलों को कन्धे पर लट्ठा रखे आते देखा (७३, ३३)।

चिह्नित स्त्रीलिंग संज्ञा में इस प्रकार्य में सिर्फ़ क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त आता है, उदाहरण के लिए : उसने भोली को छज्जे पर बैठे देखा (७३, २०)।

इस प्रकार, क्रियाविशेषणात्मक प्रकार्य में सरल द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के तीन प्रकार आते हैं : संयोजक, या 'कर्तृ-सम्बन्धी' कृदन्त, निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त तथा 'कर्म-सम्बन्धी' क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त।

(२) विधेय—सरल द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त क्रियार्थक और नामिक विधेय में आता है।

सरल द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त संयुक्त क्रियार्थक विधेय में मुख्य क्रियाओं की हैसियत से निम्नलिखित पक्षों में आता है : (क) नित्यताबोधक पूर्णपरिणामी—किन्तु कोई शक्ति उसे रोके रही...(५२, १४); (ख) घटमान पूर्णपरिणामी—वह लगातार बातें किये जा रहा है (२८, १५४); (ग) निश्चय-

बोधक---मैं लाये देती हूं...(७५, ९१); (घ) गुणार्थक---उस गाय की याद तो अलग हटाये नहीं हटती (११६, ९७)।

सरल द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त जटिल क्रियार्थक विधेय में नित्य-बोधक पूर्णपरिणामी और वर्तमान पूर्णपरिणामी पक्ष-सम्बन्धी तुमर्थ में आता है, उदाहरणार्थ : वह दल के लिए मेरा भेद जाने रहना चाहता था (९७, ९८)।

सरल द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त संयुक्त नामिक विधेय में मुख्य क्रिया होता है, जो कि कृदन्तपरक रूपों के विपरीत कर्ता द्वारा किये जाने वाले व्यापार को नहीं बल्कि कर्ता की अवस्था को व्यक्त करता है, जो वह अनुभव करता है। इस प्रकार्य में सिर्फ़ सरल द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त ही आते हैं, जो कि सकर्मक धातुओं से (या कृदन्तों से) बने हैं, और वाक्य की रचना हमेशा कर्तृ-सम्बन्धी रहती है, उदाहरणार्थ : वह...फरिया पहने थी...(१०३, ४), मैं समझे था तुम गुसलखाने में हो (१०७, ५३), मेमसाहब बच्चे के लिए पिटारी में दूध की बोतल लिये थी (९६, १४), वह...इतनी जोर से मुट्ठी बांधे थी कि...(१०३, ५५३)। इस क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के साथ के विधेय में संयोजक 'था' मौजूद है।

**संयुक्त द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त**--संयुक्त द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त, सरल क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के समान वह अवस्था व्यक्त करते हैं जो कि समाप्त की हुई प्रक्रिया के परिणामस्वरूप होती है जो कि (क) दूसरी प्रक्रिया के साथ, क्रियाविशेषणात्मक शब्द की हैसियत से आ सकता है, और (ख) मुख्य तथा गौण विधेय (गौण विधेय केवल निरपेक्ष पदबन्धों में) की सीमा में खुद प्रक्रिया व्यक्त कर सकता है। संयुक्त द्वितीय कृदन्त के विपरीत, सकर्मक धातु से बना संयुक्त द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त हमेशा कर्तृवाच्य अर्थ रखता है।

संयुक्त द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के निम्नलिखित क्रियार्थक लक्षण होते हैं :

(१) सकर्मकता तथा अकर्मकता की श्रेणी--उदाहरणार्थ : राम सिर झुकाये हुए सुनता रहा (६५, २५५), गंधा बैठे हुए पैरों के घुंघरू उतार रही थी (८७, १३०)।

(२) सापेक्ष कालवाचक अर्थ की श्रेणी--क्रियाविशेषणात्मक शब्द के प्रकार्य में या क्रियाविशेषणात्मक पदबन्ध में, संयुक्त द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त प्रक्रिया-अवस्था को व्यक्त करता है, जो कि मुख्य क्रिया के व्यापार के साथ सहकालिक होती है, उदाहरणार्थ : एक व्यक्ति शानदार मोतियों का ताज पहने हुए बैठा था (२४, ५६),...बरामदे में लेटे हुए मैं देर तक जाली के बाहर देखता रहा (५२, १५२)।

(३) विधेयन की श्रेणी—इसके प्रगट होने का कारण है कि संयुक्त द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त तार्किक विधेय को व्यक्त कर सकता है और अपना कर्ता रखता है। क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त उस स्थिति में स्वतंत्र पदबन्ध बनाता है। उदाहरणार्थ: रामनाथ को कलकत्ता आये हुए दो महीने से ऊपर हो गये हैं (६५, १५५); पंडित कृष्णचन्द्र को जेलख़ाने से छूटकर आये हुए एक सप्ताह बीत गया था...(७३, ११३)।

संयुक्त द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के क्रियाविशेषणात्मक लक्षण के प्रगट होने का कारण यह है कि यह क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त एक अविकारी रूप होता है जो कि क्रियाविशेषण की तरह व्यापार के क्रियाविशेषणात्मक वर्णन को व्यक्त करता है। तब संयुक्त द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त क्रिया से पहले स्थान पर होता है, जिस पर कि क्रियाविशेषण या दूसरे क्रियाविशेषणात्मक शब्द होते हैं।

संयुक्त द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त संयोजक होता है, अगर उसका कर्ता वाक्य का उद्देश्य होता है, और निरपेक्ष होता है अगर वह अपने कर्ता के साथ होता है (या अगर वह कल्पित होता है)। संयोजक या निरपेक्ष क्रिया-विशेषणात्मक कृदन्त संयोजक या निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तपरक पदवन्ध बना सकते हैं।

शब्द-समुदाय के स्तर पर सिर्फ़ संयोजक संयुक्त द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त आते हैं जो कि विशेषणात्मक सम्बन्धों की प्रणाली में क्रियाविशेषणात्मक सम्बन्ध व्यक्त करते हैं, उदाहरणार्थ : वह सिर लटकाये हुए चुपचाप वहां से लौट गया (५२, १४५), गंधा बैठे हुए पैरों के घूंघरू उतार रही थी (८७, १३०)।

वाक्य के स्तर पर संयुक्त द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त उसके निम्नलिखित अंगों के प्रकार्य में आ सकते हैं :

(१) क्रियाविशेषण—क्रियाविशेषण के प्रकार्य में संयुक्त द्वितीय क्रिया-विशेषणात्मक कृदन्त संयोजक अथवा निरपेक्ष हो सकता है।

संयोजक संयुक्त द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त कर्ता जो कि वाक्य का उद्देश्य है, की अवस्था को व्यक्त करता है और क्रियाविशेषण की तरह क्रिया-विधेय के व्यापार के साथ होता है (आम तौर पर—व्यापार के प्रकार का क्रिया-विशेषण)। मुख्य क्रिया की हैसियत से, जिससे क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त सम्बन्ध रखता है, गति तथा अवस्था की क्रिया होती है, और कथनवाचक तथा भाव-चेतनावाचक क्रिया होती है, उदाहरणार्थ : धर्मदास पानी लिये हुए दौड़ा... (६६, १७६), आईना सामने रखे हुए कानों में झुमके पहन रही थी (६५, १२४), राम सिर झुकाये हुए सुनता रहा (६५, २५५),...मिस रानी...सिर्फ़ चोली पहने हुए खुले सिर चुनौती के साथ कहने लगी...(४४, २३), आँखें झुकाये

हुए ही वह बोला (१०८, ७६)।

संयुक्त द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त संयुक्त द्वितीय कृदन्त के अप्रत्यक्ष कारक का समाकार सिर्फ़ तब हो सकता है जब वह अकर्मक धातु से बनता है चूंकि अविधेय रूप जो कि सकर्मक धातुओं से बनते हैं, हमेशा अविकारी क्रिया-विशेषणात्मक होते हैं, चाहे वे वाक्य के उद्देश्य (या शब्द, जिनसे वे सम्बन्ध रखते हैं) के आगे हों, उदाहरणार्थ : ...उनके बीच में आने-जाने का रास्ता छोड़े हुए, फिर भी उस रास्ते को रोके हुए यह ड्योढ़ी थी (४४, १२०),...तिरंगा झंडा लगाये हुए एक टैक्सी उनके पास आकर खड़ी हो गयी (११६, ६७)।

संयुक्त द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त जो अकर्मक धातु से बनता है प्रकार्य तथा रूप में संयुक्त द्वितीय कृदन्त के अप्रत्यक्ष कारक के रूप में मिल जाता है और वे व्याकरणिक पर्याय तथा शाब्दिक समनाम की हैसियत से आते हैं जब वाक्य का उद्देश्य कर्ता-सम्बन्धी रचना में आता है और पुल्लिंग बहुवचन संज्ञा या शिष्ट एकवचन रूप से व्यक्त होता है, उदाहरणार्थ : ये लोग राज-पथ से हटे हुए, पेचीदा औघट रास्तों से चले आ रहे थे (६६, १७४), रद्दू सिंह खोये हुए से बैठे थे (१, १४६)।

अकर्मक संयुक्त द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त और अप्रत्यक्ष कारक के संयुक्त द्वितीय कृदन्त की उपस्थिति में उद्देश्य आम तौर पर साधक कारक में नहीं होते।

विरल स्थिति में संयोजक संयुक्त द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त 'के बिना' और 'के बगैर' परसर्गों के साथ होते हैं। वे तब, समान सरल क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तों की तरह, सहायक व्यापार को व्यक्त करते हैं, जिसके बगैर विधेय की मुख्य क्रिया का व्यापार सम्पन्न होता है, उदाहरणार्थ : ...वह बिना उत्तर की प्रतीक्षा किये हुए ही चला गया था (११६, ३१)।

निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त क्रियाविशेषणात्मक प्रकार्य में आम तौर पर निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तपरक पदबन्ध में इस्तेमाल होता है, जो कि वाक्य के पृथक्कृत अंग के प्रकार्य में होता है। इन पदबन्धों में क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त अपने तार्किक कर्ता के साथ मानो स्वतंत्र विचार व्यक्त करते हैं, उदाहरणार्थ : हमारे सोये हुए धर्म-ज्ञान की सारी सम्पत्ति लुट जाये, तो उसे ख़बर नहीं होती...(६६, १५५), आगे-पीछे पड़े हुए सवेरा हो जायेगा (६५, १२३), अभी आपके यहां से निकले हुए उसे पाँच-छः महीने से ज्यादा नहीं हुए होंगे (७३, ५६), उसे लेटे हुए अभी कुछ ही मिनट हुए होंगे (१५, १२)।

'कर्म-सम्बन्धी' संयुक्त द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त बहुत कम पाया जाता है और मुख्यतः सकर्मक संयुक्त द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त से व्यक्त होता है, उदाहरणार्थ : उसने उसे मुँह पर रूमाल लपेटे हुए ही देखा था (६६,

७४), यहां पर मैंने बहुत-से लोगों को भेड़ की खाल के बालों के कपड़े पहने हुए देखा है (२७, १२)। 'कर्म-सम्बन्धी' संयुक्त क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त अवस्था को व्यक्त करता है जो कि द्रव्य (या व्यक्ति) के मुख्य व्यापार की कार्यान्विति के समय स्वाभाविक है।

इस तरह, क्रियाविशेषणात्मक प्रकार्य में क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तों के तीन प्रकार होते हैं : संयोजक या 'कर्ता-सम्बन्धी' क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त, निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त और 'कर्म-सम्बन्धी' क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त।

(२) विधेय--संयुक्त द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त मुख्य क्रिया की हैसियत से संयुक्त नामिक विधेय में आता है और कृदन्तपरक रूपों के विपरीत कर्ता—वाक्य के उद्देश्य—द्वारा किये गये व्यापार को नहीं वल्कि कर्ता द्वारा अनुभव की गयी अवस्था को व्यक्त करता है। इस प्रकार्य में सिर्फ़ संयुक्त द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त आते हैं जो कि सकर्मक धातुओं से (या कृदन्तों से) बने होते हैं, और वाक्य की रचना हमेशा कर्ता-सम्बन्धी होती है, उदाहरणार्थ : वह शराब पिये हुए थी (१०३, २३), जी, वही पहने हुए हूं (२७, ३२),...बालक सेठी की उँगली पकड़े हुए था (९६, १३), मैं सरकार से सम्पर्क कायम किये हुए हूं (XI, २.२.१९६३)। इस समान प्रकार्य के सरल द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तों के विपरीत, यहां सिर्फ़ अपूर्ण भूत हीनहीं बल्कि वर्तमान योजक भी प्रयोग होता है। संयुक्त योजक की हैसियत से यहां 'रहना' क्रिया हो सकती है जो कि रूपों में समस्त रचना को व्यापार के नित्यताबोधक पूर्णपरिणामी पक्ष के करीब लाती है, उदाहरणार्थ : दिन भर युवतियां उसे घेरे हुए रहती थीं (११६, २८)।

(३) विधेयवाचक सामाधिकरण—जो कि मुख्यत: कर्तृकारक नामिक एकांगी वाक्यों में प्रगट होता है जबकि संयुक्त द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त अवस्था का विधेयवाचक सूचक होता है, उदाहरणार्थ : ...नाक उभरी हुई, पेशानी चौड़ी, बाल ज़रा लाली लिये हुए (३, ३३), अब लड़का सरकार। ठहरा जवान। शहर की हवा खाये हुए (१५, २४)।

सरल तथा संयुक्त द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तों में निम्नलिखित प्रकार्यात्मक अन्तर है :

(१) संयुक्त द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त विशेषणात्मक पक्ष-सम्बन्धी रूपों में नहीं आता।

(२) संयुक्त द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त पुनरुक्त रूप में नहीं आता।

(३) संयुक्त द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त, सरल द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के विपरीत विधेयवाचक सामाधिकरण के प्रकार्य में आता है।

(४) संयुक्त द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त सिर्फ़ संयुक्त नामिक विधेय में आता है।

**तृतीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त** (पूर्ववर्ती व्यापार का क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त)—तृतीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के निम्नलिखित क्रियार्थक लक्षण होते हैं :

(१) वाच्य की श्रेणी—जो कि तृतीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के स्वतन्त्र प्रयोग में प्रगट होती है, उदाहरणार्थ : 'मैंने उसको उठाकर मंगू की तरह घुमाया' (१०३, ११२), और 'उस तरह उठाया जाकर वह उठ गया...(४४, ५५)'।

तृतीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त कर्मवाच्य अर्थ अपनाते हैं अगर वह मुख्य क्रिया से सम्बन्ध रखता है जो कि कर्मवाच्य में होती है. उदाहरणार्थ : चन्दा पकड़कर भीतर भेजी गयी (१०३, ४८६), हालांकि तृतीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त का यह कर्मवाच्य अर्थ शुद्ध शाब्दिक है।

(२) पक्ष की श्रेणी—जो कि सिर्फ़ तृतीय क्रियाविशेषणात्मक के स्वतंत्र प्रयोग में प्रगट होती है जैसे : थोड़ी देर उसका लिखना ताकते रहकर लड़के ने...पत्रिका निकालकर उनके सामने रख दी...(५२, १३), कुछ देर उसके पीछे भागे जाकर गालियां देते और हाँफते चाचा डालचन्द वापस लौट आये (१७, १०६)।

(३) सकर्मकता तथा अकर्मकता की श्रेणी- उदाहरणार्थ : बात की थाह पकड़कर बोली...(११६, २०), कजरी बैठकर सी रही थी (१०३, ५०७)।

(४) सापेक्ष कालवाचक अर्थ की श्रेणी—जब मुख्य व्यापार के गुणात्मक वर्णन को व्यक्त करता है या सहायक गौण व्यापार को व्यक्त करता है तो तृतीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त मुख्यतः क्रिया (क्रिया-विधेय) के पूर्ववर्ती व्यापार को व्यक्त करता है, उदाहरणार्थ : पहाड़ पर पहुंचकर सुखराम रुक गया (१०३, ४४५), वह बाहर निकला और नल पर जाकर भरपेट पानी पिया (११६, ७५)। यद्यपि काल के अपूर्ण रूपों में तृतीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त मुख्य क्रिया के व्यापार के साथ सहकालिकता व्यक्त कर सकता है, जबकि पूर्ववर्तिता की बाकी घटनाएं फिर भी महसूस होती हैं, उदाहरणार्थ : ...मार-मारकर खाल उड़ा देगा दरोगा (१०३, ३९), कठफोड़ा अखरोट के पेड़ पर चोंच मार-मार खट-खट, खट-खट की आवाज कर रहा था (११६, २९), वह ठुमका मारकर कमर हिलाती हुई नाचती (१०३, ४५)।

(५) विधेयन की श्रेणी—जो कि तब प्रगट होती है जब तृतीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त तार्किक विधेय व्यक्त कर सकता है और अपना कर्ता रखता है। तृतीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त तब स्वतंत्र पदबन्ध को बनाता है, उदाहरणार्थ : उसे जनता के उस जोश को देखकर विश्वास नहीं हुआ...(११६, ७५),...आपको यह जानकर बड़ी प्रसन्नता होगी (२७, ५५)।

तृतीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के क्रियाविशेषणात्मक लक्षण यह हैं कि वह अविकारी रूप होने की वजह से व्यापार के गुणात्मक वर्णन को व्यक्त कर सकता है जब वह क्रियाविशेषणात्मक शब्द के प्रकार्य में आता है और उसी स्थान पर होता है जो कि क्रियाविशेषण या किसी दूसरे क्रियाविशेषणीकृत शब्द का होता है।

तृतीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के क्रियाविशेषणीकरण की चरम सीमा उसका क्रियाविशेषण हो जाना है, उदाहरणार्थ : कृष्णचन्द्र उड़कर पहुँचना चाहते थे (७२, १०), उड़कर 'बहुत जल्दी', 'क्षण-भर में'; मैंने इम्तहान को अपने मन में आँख डालकर कसकर बाँध लेना चाहा...(४४, ७४), कसकर 'पक्की तरह', 'ज़ोर से', 'शक्ति से'; वह खुलकर मुसकराया...(५२, ५१), खुलकर 'स्वतंत्रता से', 'हार्दिक ढंग से'।

तृतीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त संयोजक होता है, अगर उसका कर्ता वाक्य का उद्देश्य होता है और निरपेक्ष होता है, अगर वह अपने कर्ता के साथ आता है (या अगर वह कल्पित होता है)। संयोजक और निरपेक्ष तृतीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त संयोजक या निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तपरक पदबन्ध बना सकते हैं परन्तु साथ-साथ अकेले क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त होते भी हैं। निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त का तब व्यापार का कल्पित कर्ता होता है।

शब्द-समुदाय के स्तर पर सिर्फ़ संयोजक तृतीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त आते हैं, जो कि विशेषणात्मक सम्बन्धों की प्रणाली में क्रियाविशेषणात्मक सम्बन्ध व्यक्त करते हैं, उदाहरणार्थ : उसने चौंककर देखा...(३९, ३३), जुगनू ने झुककर सलाम किया...(७१, ५६)।

वाक्य के स्तर पर तृतीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त उसके निम्नलिखित अंगों के प्रकार्य में आता है :

(१) क्रियाविशेषण—क्रियाविशेषण के प्रकार्य में तृतीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त संयोजक और निरपेक्ष हो सकते हैं।

संयोजक तृतीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त व्यक्त कर सकते हैं : (क) मुख्य क्रिया का गुणात्मक वर्णन—वह चीख-चीखकर रोती रही, बिलख-बिलखकर रोती रही, लिपट-लिपटकर रोती रही (१०८, ८९), पत्नी इस पर झपट के उठी...(४४, ७१), कुँवर साहब ठठकारकर हँसे (७३, १४४); (ख) सहायक व्यापार जो कि मुख्य व्यापार के पूर्ववर्ती है—लीला ने स्वयं हाथ बढ़ाकर सिगरेट ले लिया, सिगरेट होंठों में दबाकर मेज़ पर से माचिस उठा, एक सींख जलाकर बोली...(९६, ६३), वहां पहुँचकर तुम दायीं तरफ वाला रास्ता पकड़ लेना (२५, १०८), सुखराम शिकार मारकर लाता है (१०३, ४५१); (ग) सहायक व्यापार जो कि मुख्य क्रिया के साथ है—...तोते...टाँय-टाँय कर उड़ रहे थे (१०३,

२४०), कठफोड़ा पक्षी अखरोट के पेड़ पर चोंच मार-मारकर खट-खट, खट-खट की आवाज़ कर रहे थे (११६, २६)।

निरपेक्ष तृतीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त क्रियाविशेषणात्मक प्रकार्य में मुख्यत: निरपेक्ष कृदन्तपरक पदबन्ध में आता है जो कि वाक्य का पृथक्कृत अंग है। इन पदबन्धों में क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त, अपने तार्किक कर्ता के साथ मानो स्वतंत्र विचार व्यक्त करता है। उदाहरणार्थ : एक घायल को देखकर उसका दिल पसीज उठा (११६, ७६), मुझे उन लोगों की यह हालत देखकर बहुत दु:ख हुआ (२७, २१), सरदार पटेल की बात मानकर आत्मसमर्पण किया गया (११६, ७४)।

इस प्रकार, क्रियाविशेषणात्मक प्रकार में तृतीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के दो प्रकार होते हैं : संयोजक, या 'कर्ता-सम्बन्धी' क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त और निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त।

(२) विधेय—तृतीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त संयुक्त तथा जटिल क्रियार्थक विधेय में आता है।

संयुक्त क्रियार्थक विधेय में तृतीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त क्रिया-विशेषणात्मक कृदन्त-धातु के रूप में व्यापार का अवधारण तथा प्रभावी पक्ष में आते हैं, उदाहरणार्थ : उनके माथे पर बाल उभर आये (१०७, ४८), दुर्भाग्य से मैं एक नाग औरत को नौकर रख बैठी थी (३६, ११६), हूणों का ज़िक्र हम पहले कर चुके हैं (२, ६८)।

क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु के साथ, अवशिष्ट घटनाओं की हैसियत से यहां परप्रत्ययी तृतीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त मिलते हैं, उदाहरणार्थ : एक किस्सा आँखों के आगे उभरकर आता है (१०७, ३२), चाय पीकर चुके ही थे कि फिर जीप के आकर रुकने की आहट हुई (१८७, ३०)।

जटिल क्रियार्थक विधेय में तृतीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त क्रिया-विशेषणात्मक कृदन्त-धातु के रूप में मुख्य व्यापार को स्वतंत्र समझाने वाला या जोड़ने वाला अंश होता है, उदाहरणार्थ : ...मैं किसी के साथ निकल तो नहीं भागी (५६, ११५), बाँदा की उस श्यामल छाया ने तुम्हें ऐसी जगह ला छोड़ा... (१०७, २२)।

**कर्मवाचक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त**—आधुनिक हिन्दी में कर्मवाचक प्रथम तथा तृतीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त मौजूद हैं। कर्मवाचक द्वितीय क्रिया-विशेषणात्मक कृदन्त नहीं होता चूंकि द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त उस अवस्था को व्यक्त करता है जो कि व्यापार के कर्ता द्वारा अनुभव की जाती है लेकिन स्वयं व्यापार को व्यक्त नहीं करता। जैसा कि पता है, आधुनिक हिन्दी में व्यापार का कर्मवाच्य है जो कि 'जाना' सहायक क्रिया की मदद से बनता है तथा अवस्था का कर्मवाच्य है जो कि द्वितीय कृदन्त तथा संयोजक क्रिया के मेल से

बनता है। दूसरी ओर संयोजक द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त हमेशा कर्तृ-सम्बन्धी रचना में प्रयोग होता है, इस कारण भी कर्मवाचक द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त का बनना सम्भव नहीं।

**कर्मवाचक प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त** (मुख्यत: सरल क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त)—आम तौर पर 'देखना' क्रिया की उपस्थिति में 'कर्म-सम्बन्धी' क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त की हैसियत से आता है। तब कर्मवाचक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त का पहला तत्व अन्वित या भाववाचक रूप में आ सकता है अर्थात् द्वितीय कृदन्त के रूप में, लेकिन क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तपरक रूप भी अपना सकता है, उदाहरणार्थ : वह स्कूल से आते वक्त भैरो बाजार में घंटों बोतलें भरी जाते देखा करता था (१७, २८७), समस्त अधिकारों को छीना जाते हुए देखकर एक चुनौती-सी लगी...(१०३, २४८), लड़कपन में उसे बोतलों में सोडा भरे जाते देखना बेहद पसन्द था (१७, २८७),...टुन्नू का शव वरुणा में प्रवाहित किए जाते भी हमारे संवाददाता ने देखा है (१२६, १०६)। कर्मवाचक प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त सहायक व्यापार को व्यक्त करता है जो कि मुख्य क्रिया के व्यापार के साथ सहकालिक है।

कर्मवाचक तृतीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त क्रियाविशेषण के प्रकार्य में सहायक व्यापार को, जो कि मुख्य क्रिया के व्यापार का पूर्ववर्ती है, व्यक्त करता है, उदाहरणार्थ : उपहार कर के बारे में आपका सुझाव है कि कर उपहारदाता पर न लगाया जाकर, उपहार पाने वाले पर लगाया जाए (II, २०.३.६८, २६), इतना भारी पर्वत दैत्यों और देवों द्वारा खींचा जाकर जब कछुए की पीठ पर जोरों से घूमता था तो...(८४, १६), उस तरह उठाया जाकर वह उठ गया... (४४, ५५)।

**क्षणिक पूर्ववर्ती क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त** ('ही' निपात समेत क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त)—इन कृदन्तों के निम्नलिखित क्रियार्थक लक्षण होते हैं :

(१) सकर्मकता तथा अकर्मकता की श्रेणी-- उदाहरणार्थ: शिव की आज्ञा पाते ही उसके हाथ वीणा पर बढ़ गये (२८, १०), युवक गिरते ही उठा...(१७, २२)।

(२) सापेक्ष कालवाचक अर्थ की श्रेणी—गौण सहायक व्यापार, या मुख्य क्रिया के गुणात्मक वर्णन को व्यक्त करते हुए, क्षणिक पूर्ववर्ती क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त मुख्य क्रिया-विधेय के क्षणिक पूर्ववर्ती व्यापार को व्यक्त करता है, उदाहरणार्थ : कृष्णचन्द्र उन्हें देखते ही घबराकर उठे...(७३, ११),...असेम्बली खुलते ही यह बिल पेश करूंगा (७१, २६)।

(४) विधेयन की श्रेणी तब प्रगट होती है जब क्षणिक पूर्ववर्ती क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त तार्किक विधेय व्यक्त करता है और अपना कर्ता रखता है।

क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त इस स्थिति में स्वावलम्बी और स्वतंत्र पदबन्ध बनाता है, उदाहरणार्थ : पहली बार चलते ही भगदड़ मच गयी (६६, १२), बाप के मरते ही अपने यार को कहीं से उठा के ले आयी है (२८, ३०)।

क्षणिक पूर्ववर्ती क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के क्रियाविशेषणात्मक लक्षण इसलिए प्रगट होते हैं कि यह क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त एक अविकारी रूप है। क्रियाविशेषण की तरह, यह क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त भी व्यापार के गुणात्मक वर्णन को व्यक्त कर सकता है जब वह क्रियाविशेषणात्मक शब्द के प्रकार्य में होता है। तब क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त उसी स्थान पर क्रिया से पहले होता है, जहां पर क्रियाविशेषण या दूसरा क्रियाविशेषणात्मक शब्द होता है।

क्षणिक पूर्ववर्ती क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त संयोजक होता है, अगर उसका कर्ता वाक्य का उद्देश्य होता है और निरपेक्ष होता है, अगर वह अपने कर्ता के साथ होता है (या अगर वह कल्पित होता है)। संयोजक और निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त संयोजक और निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तपरक पदबन्ध बना सकते हैं, लेकिन अकेले क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त भी हो सकते हैं। तब निरपेक्ष क्रिया-विशेषणात्मक कृदन्त व्यापार का अपना कल्पित कर्ता रखता है।

शब्द-समुदाय के स्तर पर सिर्फ़ संयोजक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त आते हैं जो कि विशेषणात्मक सम्बन्धों की प्रणाली में क्रियाविशेषणात्मक सम्बन्ध व्यक्त करते हैं, उदाहरणार्थ : शर्मा जी उसकी सूरत देखते ही सूख जाने (७३, ५४),... रतन आ पहुँची और आते-ही-आते बोली...(६५, १००)।

वाक्य के स्तर पर क्षणिक पूर्ववर्ती क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त क्रियाविशेषण के प्रकार्य में आता है।

संयोजक क्षणिक पूर्ववर्ती क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त गौण व्यापार को व्यक्त करता है जो कि मुख्य व्यापार के पूर्ववर्ती होता है और दोनों व्यापारों के बीच में समय का अन्तर न्यूनतम होता है, उदाहरणार्थ : घर पहुँचते ही विट्ठलदास पत्र लिखने को बैठ गये (७३, ६१), युवक गिरते ही उठा...(१७, २२२)।

निरपेक्ष क्षणिक पूर्ववर्ती क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त क्रियाविशेषणात्मक प्रकार्य में मुख्यतः निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तपरक पदबन्ध में आता है जो कि वाक्य का पृथक्कृत अंग होता है। इन पदबन्धों में क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त अपने तार्किक कर्ता के साथ मानो स्वतंत्र विचार व्यक्त करता है, उदाहरणार्थ : ज़मींदार साहब के जाते ही कुछ समय के बाद धानियाँ आयी (८७, १०७), शिव ने केशव के झुकते ही अपना दाहिना पाँव उसके सिर से लगा दिया (२८, १३), रुक्मिणी की याद आते ही सियाराम घर की ओर चला (६०, १८७)।

**अनुमतिवाचक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त** ('भी' निपात समेत क्रिया-विशेषणात्मक कृदन्त)—ये क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त प्रथम क्रियाविशेषणात्मक

कृदन्त (सरल तथा संयुक्त), द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त (आम तौर पर संयुक्त) और तृतीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त भी निपात के साथ के संयोग से बनते हैं। ये क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त नयी रचनाओं से सम्बन्ध रखते हैं और ये रचनाएं प्रासंगिक से कोटिबद्ध तक की संक्रमक रचनाएं होती हैं। ऊपर उल्लेखित सभी अनुमतिवाचक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तों में सबसे ज़्यादा वे अनुमतिवाचक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त मिलते हैं जो कि संयुक्त प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त से बनते हैं। अनुमतिवाचक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तों के निम्नलिखित क्रियार्थक लक्षण होते हैं :

(१) सकर्मकता तथा अकर्मकता की श्रेणी—उदाहरणार्थ : (क) लेकिन सुमन सब कुछ देखते हुए भी देखती न थी, सब कुछ सुनते हुए भी कुछ न सुनती थी (७३, २३०),...छात्रालय में रहते हुए भी उसने वह काम न किया...(६६, ८८),...एक पंजाबी आदमी लोगों के रोकते-रोकते भी भीड़ चीरकर डैडी के पास तक आ पहुँचा (१०७, ७), उठकर जाते भी क्रूरता अनुभव होती थी (६६, २८); (ख) ...निगाहें नीची किये हुए भी वह ऊपर की स्थिति को भाँपने का प्रयत्न करता था (५२, १५); (ग) ...उन्होंने उसे देखकर भी ना देखा (७१, ५६), वह मरकर भी मरी नहीं थी (१०३, ११)।

(२) सापेक्ष कालवाचक अर्थ की श्रेणी—सहायक गौण व्यापार या मुख्य व्यापार के गुणात्मक वर्णन को व्यक्त करते हुए अनुमतिवाचक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त निम्नलिखित बातें व्यक्त कर सकते हैं : (क) मुख्य विधेय के व्यापार के साथ सहकालिकता (अनुमतिवाचक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त जो प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के आधार पर बनते हैं), उदाहरणार्थ : अगर वे चाहती हैं कि वह सब कुछ देखते और समझते हुए भी चुप रहे...(५८, ४८), ऐसी नायाब चीजें पास रहते भी ज़िन्दा नहीं रह सकते ? (३२, ११२), वह सिर से पाँव तक कपड़े पहने हुए भी नंगा था (६५, १३१); (ख) मुख्य विधेय का पूर्ववर्ती व्यापार (अनुमतिवाचक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त जो कि तृतीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के आधार पर बनते हैं), उदाहरणार्थ : वह मरकर भी मरी नहीं थी (१०३, ११),...और यह देखकर भी मुझे धक्का कम नहीं लगा...(१०७, १०८)।

(३) विधेयन की श्रेणी—जो इसलिए प्रगट होती है कि अनुमतिवाचक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त तार्किक विधेय व्यक्त कर सकता है और अपना कर्ता रखता है। तब क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त एक स्वतंत्र पदबन्ध बनाते हैं, उदाहरणार्थ : बड़ी-बूढ़ियों के रहते हुए भी राजकिशोर कहने से न चूका...(१, ६६), कभी-कभी सकर्मक धातुओं का आशय कर्म के रहते भी पूरा नहीं होता...(२२, १६१),...और यह देखकर भी मुझे धक्का कम नहीं लगा...(१०७, १०८)।

अनुमतिवाचक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तों के क्रियाविशेषणात्मक लक्षण इसलिए प्रगट होते हैं कि वे अविकारी रूप होते हैं। क्रियाविशेषण की तरह ये क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त व्यापार के गुणात्मक वर्णन को व्यक्त कर सकते हैं जब वे क्रियाविशेषणात्मक शब्द के प्रकार्य में आते हैं। तब क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त उसी स्थान पर क्रिया के आगे होता है जिस पर क्रियाविशेषण या दूसरा क्रिया-विशेषणात्मक शब्द होता है।

अनुमतिवाचक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त संयोजक होते हैं अगर उनका कर्ता वाक्य का उद्देश्य होता है, और निरपेक्ष होते हैं, अगर अपने कर्ता के साथ आते हैं (या अगर वह कर्ता कल्पित होता है)। संयोजक और निरपेक्ष क्रिया-विशेषणात्मक कृदन्त संयोजक या क्रियाविशेषणात्मक पदबन्ध बनाते हैं, लेकिन अकेले क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त भी हो सकते हैं। निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त तब व्यापार का कल्पित कर्ता रखता है।

शब्द-समुदाय के स्तर पर सिर्फ संयोजक अनुमतिवाचक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त ही होते हैं जो कि विशेषणात्मक सम्बन्धों की प्रणाली में क्रियाविशेषणात्मक सम्बन्ध व्यक्त करते हैं, उदाहरणार्थ : अनचाहे भी चाहा ही कि वे झेंपें...(२०, ७६), वह सिर से पाँव तक कपड़े पहने हुए भी नंगा था (६५, १३१), तुम चाहकर भी कुछ नहीं कर सकोगे (५६, ८८)।

वाक्य के स्तर पर अनुमतिवाचक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त क्रियाविशेषण के प्रकार्य में आता है।

संयोजक अनुमतिवाचक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त गौण व्यापार को व्यक्त करते हैं, जिसके विपरीत मुख्य व्यापार होता है, उदाहरणार्थ : ...हम सुहागिन होते हुए भी विधवाएं थीं (६६, २७८), मैं कहना चाहकर भी कह नहीं सकता था (१०३, ८२)....निगाहें नीची किये भी वह ऊपर की स्थिति को भाँपने का प्रयत्न करता था (५२, १५)।

निरपेक्ष अनुमतिवाचक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त क्रियाविशेषणात्मक प्रकार्य में मुख्यतः निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तपरक पदबन्ध में आता है, जो कि वाक्य का पृथक्कृत अंग होता है। इन पदबन्धों में क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त मानो स्वतंत्र विचार व्यक्त करता है जिसके विपरीत मुख्य व्यापार होता है और अपना तार्किक कर्ता रखता है जैसे : न चाहते हुए भी उसकी निगाहें उधर उठ गयीं (८, १११),...जो अपने पति के होते हुए भी विधवा है (५६, ५७), उठकर जाते हुए भी क्रूरता अनुभव होती थी (६६, २८),...और यह देखकर भी मुझे धक्का कम नहीं लगा...(१०७, १०८)।

**निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तपरक पदबन्ध** विभिन्न क्रियाविशेष-णात्मक कृदन्तों के अध्ययन के समय जैसा कि उल्लेख किया गया था कि उनमें से

हर एक स्वतंत्र पदबन्ध बना सकता है, जबकि क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तों के संयोजक प्रयोग के विपरीत, क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त स्वतंत्र विचार व्यक्त करता है और अपना तार्किक कर्ता रखता है। व्याकरण की दृष्टि से यह निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तपरक पदबन्ध वाक्य का एक व्यापक पृथक्कृत अंग होता है (व्यापार या अनुमति के प्रकार का क्रियाविशेषण)। ऐसे निरपेक्ष पदबन्ध रूसी भाषा में नहीं होते। इसलिए वे अनुवाद में उचित आश्रित वाक्यों द्वारा व्यक्त होते हैं।

निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तपरक पदबन्ध का कर्ता या 'उद्देश्य' व्यक्त हो सकता है :

(१) संज्ञा द्वारा—(१) प्रत्यक्ष कारक के रूप में (आमतौर पर सिर्फ़ अचेतन संज्ञा), उदाहरणार्थ : संध्या होते-होते हलके में दारोगा साहब आ पहुँचे (६६, २४), इस वक्त सूरज छिपे काफी देर हो गयी (६६, १२); (२) अप्रत्यक्ष कारक के रूप में—(क) 'के' परसर्ग के साथ (आम तौर पर प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त, क्षणिक पूर्ववर्ती क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त तथा अनुमतिवाचक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के साथ), उदाहरणार्थ : हम लोगों के उतरते-उतरते एक रूसी सज्जन आ गये (६६, ६७), लेकिन इन सब बातों के होते हुए जब तुम्हारी आँख खुली... (३२, ६५), बाप के मरते ही अपने यार को कहीं से उठाके ले आयी है (२८, ३०), ...माली के न रहते हुए भी उन्हें तोड़ नहीं सकता...(७३, ६२); (ख) 'को' परसर्ग के साथ (सब क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त सिवाय क्षणिक पूर्ववर्ती और अनुमतिवाचक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तों के), उदाहरणार्थ : जीजी को बूढ़ी कैलासी के साथ रहते हुए एक साल बीत गया (६६, २४५), श्री कोलारकर को स्वीप खेले वर्षों बीत गये थे (७, ८७), पंडित कृष्णचन्द्र को जेलख़ाने से छूटकर आये हुए सप्ताह बीत गया था...(७३, ११३), इस भाँति विट्ठलदास पर दोषारोपण करके शर्माजी को बहुत धैर्य हुआ (७३, ६१); (ग) 'का' परसर्ग के साथ, जबकि संज्ञा वाक्य के किसी अंग के संज्ञा-संलग्न विशेषण के प्रकार्य में आती है, मुख्यतया उद्देश्य के, उदाहरणार्थ : यह कहते-कहते लालबिहारी का गला भर गया (६६, १४६)।

(२) सर्वनाम द्वारा—अप्रत्यक्ष या कर्म कारक में, उदाहरणार्थ : आपको तो बीस-बीस साल नौकरी करते हो गये होंगे (६५, ३८), अपने बाप से कहते हुए तुमको क्यों शर्म आती है ? (६५, १२८), मुझे सोये हुए बहुत देर हुई (७३, २३३), मुझे उन लोगों की यह हालत देखकर बहुत दुःख हुआ (२७, २१),—यहां भी समस्त क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त आते हैं सिवाय क्षणिक पूर्ववर्ती और अनुमति-वाचक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तों के।

(३) सार्वनामिक विशेषण द्वारा—(क) पुल्लिग अप्रत्यक्ष कारक के रूप में,

अगर वह प्रत्यक्ष रूप से क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त से सम्बन्ध रखता है, उदाहरणार्थ : अरे वह साला ! मेरे रहते क्या कर सकता है ! (१०३, ३१८), मेरे होते हुए मेरे घर सुख की सेज पर नहीं सो सकेगी (५६. ४६), हमारे सोये हुए धर्म-ज्ञान की सारी सम्पत्ति लुट जाये...(६६. १५३), उनके कहते ही हमें भी फ़ौज में कोई बड़ा ओहदा मिल जायेगा (४७. ७४); (ख) संज्ञासंलग्न विशेषण के अन्वित रूप में, अगर सार्वनामिक विशेषण किसी दूसरे शब्द से सम्बन्ध रखते हैं, उदाहरणार्थ : सहते-सहते हमारा कलेजा पक गया (६६. १६८), इन फ़ौजियों को देखकर उसका हृदय घृणा से भर जाता था (११६. ७६), शिव की आज्ञा पाते ही उसके हाथ वीणा पर बढ़ गये (२८. १०)।

जैसा कि उदाहरणों से विदित है, निरपेक्ष क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तपरक पदबन्ध वाक्य के शुरू में या बीच में हो सकता है।

# भाग-२

# विधेय-क्रिया

## पुरुष, लिंग, तथा वचन की श्रेणी

आधुनिक हिन्दी में सब विधेय के क्रियार्थक रूप पुरुषवाचक, पुरुषवाचक-लैंगिक तथा लैंगिक क्रियाओं में बाँट सकते हैं।

पुरुषवाचक क्रिया में पुरुष एक विशेष विभक्ति द्वारा व्यक्त होता है जो कि साथ-साथ वृत्ति तथा वचन का सूचक भी होता है। आधुनिक हिन्दी में आज्ञार्थ और सरल सम्भावनार्थ के संश्लेषणात्मक रूप पुरुषवाचक क्रियाओं से सम्बन्ध रखते हैं। निश्चयार्थ में 'है' पुरुषवाचक क्रिया के रूप भी पुरुषवाचक क्रियाओं से सम्बन्ध रखते हैं।

पुरुषवाचक-लैंगिक विधेय-क्रिया संश्लेषणात्मक और विश्लेषणात्मक हो सकती है। संश्लेषणात्मक पुरुषवाचक-लैंगिक क्रिया विभक्ति रखती है अर्थात् पुरुष और वचन की सूचक और विकारी (व्युत्पत्ति से कृदन्तपरक) विभक्ति जो कि लिंग, वचन, वृत्ति तथा काल की सूचक है। विश्लेषणात्मक पुरुषवाचक-लैंगिक रूप कृदन्तों के लैंगिक रूपों तथा पुरुषवाचक या पुरुषवाचक-लैंगिक रूपों के मिलने से बनते हैं।

लैंगिक रूप (संश्लेषणात्मक तथा विश्लेषणात्मक) अविधेय होते हैं चूँकि उनकी पुरुष की श्रेणी वाक्यविन्यासात्मक ढँग से होती है अर्थात् पुरुषवाचक या पुरुषवाचक-संकेतवाचक सर्वनाम तथा लैंगिक रूप के मिलने से।

सम्भावनार्थ और 'है' क्रिया के पुरुषवाचक रूप के दो-दो पर्यायवाची रूप होते हैं : मध्यम तथा अन्य पुरुष का एकवचन और उत्तम, शिष्ट मध्यम और अन्य

पुरुष का बहुवचन । इस तरह पुरुषवाचक रूपों में चार विभक्तिपरक रूपों का एक वर्ग शामिल होता है : (१) उत्तम पुरुष का एकवचन रूप, (२) मध्यम तथा अन्य पुरुष के एकवचन रूप, (३) उत्तम, शिष्ट मध्यम तथा अन्य पुरुष के बहुवचन रूप, तथा (४) मध्यम पुरुष का बहुवचन रूप ।

पुरुषवाचक-लैंगिक रूपों (संश्लेषणात्मक और विश्लेषणात्मक) का एक वर्ग होता है जो कि आठ रूपों से बना होता है (चार पुल्लिग में तथा चार स्त्रीलिंग में)।

लैंगिक रूपों (संश्लेषणात्मक तथा विश्लेषणात्मक) का एक वर्ग होता है जो कि चार रूपों से बनता है (दो पुल्लिग में तथा दो स्त्रीलिंग में) ।

समस्त विधेय-क्रियाओं में उत्तम तथा मध्यम पुरुष का अर्थ जो कि पुरुषवाचक है, अन्य पुरुष के अर्थ का विरोध होता है जो कि वस्तुपरक-पुरुषवाचक है अर्थात् अन्य पुरुष में व्यापार का कर्ता पुरुषवाचक संकेतवाचक सर्वनाम द्वारा व्यक्त हो सकता है, जो कि व्यक्ति या द्रव्य होता है और संज्ञा या किसी भी संज्ञापरक शब्द द्वारा भी व्यक्त हो सकता है : 'वह आया', 'दिन जो आया', 'जो दिन आया', आदि ।

उत्तम पुरुष के रूपों का मुख्य अर्थ है बोलने वाले पुरुष तथा व्यापार के कर्ता की समानता : 'मैं बोलूं', 'मैं आऊंगी' । मध्यम पुरुष के रूपों का मुख्य अर्थ है व्यापार के कर्ता तथा बातचीत करने वाले के साथ समानता जिसके लिए शब्द बोले गये हों : 'तू जा', 'तुम बोलो' । अन्य पुरुष के रूपों का मुख्य अर्थ है यह जताना कि व्यापार का कर्ता न तो बोलने वाला है और न ही बातचीत करने वाला, बल्कि कोई और ही व्यक्ति है या वस्तु है : 'वह चला गया', 'यह वही मेज़ है जो कोने में पड़ी थी' ।

उत्तम तथा मध्यम पुरुष के बहुवचन रूप बतलाते हैं कि व्यापार कुछ-एक लोगों से, जिनमें तत्सम्बद्ध व्यक्ति भी शामिल हैं, सम्बन्धित है। अन्य पुरुष के बहुवचन रूप इस बात का संकेत देते हैं कि व्यापार कुछ-एक लोगों (वस्तुओं) से जिनमें उत्तम तथा मध्यम पुरुष नहीं हैं, सम्बन्धित है ।

कोटिबन्द, या मुख्य पुरुषवाचक रूपों के प्रयोग के अलावा, पुरुषवाचक रूपों के प्रासंगिक प्रयोग भी होते हैं ।

मध्यम पुरुष के एकवचन रूप सामान्य पुरुषवाचक अर्थ रख सकते हैं जो कि किसी निश्चित व्यक्ति से सम्बन्ध नहीं रखते, बल्कि सब व्यक्तियों से सम्बन्ध रखता है, उदाहरणार्थ : जो बोओगे वही काटोगे। अन्य पुरुष के बहुवचन रूप अनिश्चय पुरुषवाचक अर्थ रख सकते हैं । इस स्थिति में व्यापार कई-एक अनिश्चित व्यक्तियों से सम्बन्ध रखता है तथा एक ही अनिश्चित व्यक्ति से, उदाहरणार्थ : ...सैकड़ों किताबों का जन्म हुआ है, जिन्हें उपनिषद कहते हैं (९०, १६), बोगी के चारों कोनों पर रस्सियां बाँध देते हैं (१५४, ९०), ।

पुरुषवाचक रूपों में वचन की श्रेणी पुरुष के सूचक के साथ विभक्तियों में निहित होती है।

पुरुषवाचक-लैंगिक रूपों के वचन की श्रेणी संश्लेषणात्मक रूपों की विभक्तियों में और कृदन्तपरक प्रत्ययों में निहित है, और विश्लेषणात्मक रूपों में सहायक क्रियाओं के पुरुषवाचक या पुरुषवाचक-लैंगिक रूपों के संयोग में कृदन्तों के लैंगिक रूपों में।

लैंगिक रूपों में वचन की श्रेणी लैंगिक विभक्तियों और नामिकीकरण (स्त्रीलिंग के लैंगिक रूपों में) द्वारा व्यक्त होती है।

लिंग की श्रेणी सिर्फ़ पुरुषवाचक-लैंगिक और लैंगिक रूपों में प्रकट होती है। तब बहुवचन के विभिन्न लिंगों के निर्धारित द्रव्यों को लेकर अधिकतर विधेय-क्रिया में पुल्लिग के रूप अधिक होते हैं, अगर निर्धारित द्रव्यों में से अन्तिम द्रव्य के अनुसार क्रिया-रूप नहीं बदलता।

## व्यापार के प्रकार, काल तथा पक्ष की श्रेणी

प्रकार की व्याकरणिक श्रेणी में कृदन्तपरक विधेय-क्रिया शामिल होती है और वह श्रेणी इन रूपों के विरोध से बनती है, जिनमें सरल प्रथम कृदन्त, सरल द्वितीय कृदन्त तथा संतत कृदन्त आते हैं।

विधेय-क्रिया जिसमें सरल प्रथम कृदन्त मुख्य क्रिया के प्रकार्य में आता है अपूर्ण प्रकार बनाती है, विधेय-क्रिया जिसमें सरल द्वितीय कृदन्त आता है पूर्ण प्रकार (अनिर्दिष्ट) बनाती है और विधेय-क्रिया जिसमें संतत कृदन्त आता है सांतत्वबोधक प्रकार बनाती है।

पुरुषवाचक क्रिया के रूप तथा क्रिया के संश्लेषणात्मक पुरुषवाचक-लैंगिक रूप प्रकार की श्रेणी को नहीं बनाते।

हिन्दी के प्रकार स्लाव भाषाओं के प्रकार की श्रेणी से भिन्न हैं, चूँकि उनके लिए क्रिया के समापक कृदन्तपरक रूप स्वाभाविक हैं और क्रिया के समस्त पुरुषवाचक तथा अविधेय रूपों के लिए लागू नहीं हैं, जैसा कि स्लाव भाषाओं में होता है।

हिन्दी में प्रकार की श्रेणी और पक्ष की श्रेणी के बीच अन्तर जानना चाहिए। पक्ष की श्रेणी धातु के, क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तपरक-धातु के, सरल प्रथम तथा द्वितीय कृदन्त के, सरल प्रथम तथा द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के, क्रियार्थक नाम के रूपों में मुख्य क्रिया तथा विभिन्न विशेषक क्रियाओं के सम्मिलन से बनती है। उसका विभिन्न स्तर का व्याकरणिकीकरण होता है। इसलिए पक्ष की श्रेणी शाब्दिक-व्याकरणिक श्रेणी होती है। विशेषक क्रियाएं ही समस्त व्याकरणिक लक्षणों को व्यक्त करती हैं, जो कि प्रकार की श्रेणी को भी

शामिल करते है, अगर वे क्रियाएं कृदन्तपरक रूप में होती है।

आधुनिक हिन्दी में काल की श्रेणी व्यापार का उक्ति के क्षण के साथ सम्बन्ध बनाती है जो कि वर्तमान, भूत तथा भविष्यत् काल के रूपों से व्यक्त होती है। ये निश्चयार्थ में संश्लेषणात्मक तिङन्तपरक क्रियार्थक, क्रियार्थक-कृदन्तपरक रूपों तथा विश्लेषणात्मक कृदन्तपरक-क्रियार्थक, तिङन्तपरक कृदन्तपरक तथा कृदन्तपरक-क्रियार्थक-कृदन्तपरक रूपों में प्रकट होते है।

इसलिए आधुनिक हिन्दी में **शुद्ध काल (प्रकारहीन) रूप** मिलते हैं जो कि संश्लेषणात्मक तिङन्ती और तिङन्ती विकारी रूपों में बांटे जा सकते हैं। शुद्ध काल रूपों में 'था' का विकारी रूप भी आता है जो कि कृदन्तपरक रूपों के बाहर द्रव्य की भूतकाल में अवस्था व्यक्त करता है।

**प्राकारिक-काल रूपों में** संश्लेषणात्मक विकारी रूप आते है तथा विश्लेषणात्मक विकारी-तिङन्ती रूप ('है' सहायक क्रिया समेत कृदन्तपरक रूप), विकारी-विकारी रूप ('था' सहायक क्रिया समेत कृदन्तपरक रूप), विकारी-तिङन्त-विकारी रूप (सामान्य भविष्यत् काल में 'होना' सहायक क्रिया समेत कृदन्तपरकी रूप), विकारी-विकारी-तिङन्ती रूप (कृदन्तपरक रूप जिनमें सहायक क्रिया 'होना' के वर्तमान तथा पूर्णतावाची रूप अर्थात् 'होता है', 'हुआ है' आते हैं), विकारी-विकारी-विकारी रूप (कृदन्तपरक रूप जिनमें सहायक क्रिया 'होना' के अपूर्णतावाची तथा पूर्ण भूतवाची रूप आते हैं — 'होता था', 'हुआ था')।

आधुनिक हिन्दी में व्याकरणिक काल तथा प्राकारिक काल के रूप निश्चयार्थ के घेरे में सीमित होते हैं। आज्ञार्थ, सम्भावनार्थ तथा संकेतार्थ के रूप कालसापेक्षता का ज्यादा सामान्य अर्थ व्यक्त करते हैं।

इस प्रकार, आज्ञार्थ के रूप अपने प्रत्यक्ष आज्ञार्थक अर्थ में भविष्यत् काल की काल सापेक्षताव्यक्त करते हैं, उदाहरणार्थ : सरनो ज़रा अन्दर आइयो (७५, १३०), तुम लोग हट जाओ, वरना मैं फ़ायर कर दूंगा (७१, ५)। भविष्यत् काल की कालसापेक्षता विशेषकर उभरकर प्रगट होती है जबकि आज्ञार्थ का शिष्ट रूप 'इएगा' द्वारा व्यक्त किया जाता है जैसे : आप आथॉरिटीज़ से शिकायत कीजियेगा (८, ४०)।

भविष्यत् काल की कालसापेक्षता सम्भावनार्थ तथा संकेतार्थ के रूप भी व्यक्त कर सकते हैं, जैसे : यदि आप आज्ञा दें तो हम इसे वार्षिक अंक में दे दें (६, २८), वह विवाह कर रही होती तो हम पूरी सहायता देते (१, ५५५)।

सम्भावनार्थ और संकेतार्थ के रूप भी कालसापेक्षता व्यक्त कर सकते हैं जो कि वर्तमान काल के स्तर से सम्बन्ध रखती है, उदाहरणार्थ : लेकिन अब इस वर्तमान का क्या करूं? (१०८, ११), यदि आज यह पुरुष जीवित होता, तो पचास या पचपन वर्ष का होता (५, ३७)।

सम्भावनार्थ और संकेतार्थ के रूप भूतकाल से सम्बन्धित कालसापेक्षता व्यक्त कर सकते हैं, उदाहरणार्थ : फिर सोचा, कहीं यह कोई दुर्घटना तो नहीं हो गयी— आग लग गयी हो या किसी ने किसी का खून कर दिया हो (१०८, १३५),... जान-बूझकर सरकार ने आपको अधिक नम्बर दिये हैं, नहीं तो आप क्या कम्पीट करतीं (१११, २६)।

सम्भावनार्थ और संकेतार्थ के कृदन्तपरक रूप प्राकारिक वर्णनों से ओतप्रोप होते हैं और व्यापार की अपूर्णता-पूर्णता-सांतत्य की दृष्टि से विपरीत होते हैं। सम्भावनार्थ का सरल रूप प्राकारिक विरोध नहीं रखता।

**अर्थ की श्रेणी**—आधुनिक हिन्दी में अर्थ की व्याकरणिक श्रेणी वास्तविकता और व्यापार के बीच सम्बन्ध व्यक्त करती है जो कि वक्ताओं द्वारा निर्धारित होती है। अर्थ यह व्यक्त करता है कि वक्ता व्यापार को वास्तविक समझता है या अवास्तविक समझता है। व्यापार की वास्तविकता का अर्थ है उसके तीन वस्तुगत तौर पर मौजूदा काल-स्तरों में से किसी एक के साथ सम्बन्ध। और अवास्तविकता का अर्थ है इस सम्बन्ध की अनुपस्थिति चूँकि व्यापार सम्भाव्य, वांछित, संदिग्ध, प्रतिबन्धित या आवश्यक समझा जाता है। व्यापार की वास्तविकता जो कि निश्चयार्थ रूपों द्वारा व्यक्त होती है, अवास्तविक व्यापार के विरोध में होती है, जो कि आज्ञार्थ, सम्भावनार्थ और संकेतार्थ के रूपों द्वारा व्यक्त होता है।

निश्चयार्थक वास्तविक व्यापार को व्यक्त करता है जो कि वास्तविकता का प्रत्यक्ष प्रतिबिम्ब होता है। निश्चयार्थ की काल-क्रियार्थक रूपों की प्रणाली के वर्तमान काल, भूत काल और भविष्यत् काल के व्यापार और वास्तविक घटनाओं के बीच परस्पर सम्बन्ध बनाती है। निश्चयार्थ में समस्त कृदन्तपरक काल रूप प्राकारिक वर्णनों द्वारा जटिल बनते हैं, जो कि प्राकारिक-काल रूपों की जटिल प्रणाली को बनाते हैं। उनका अध्ययन नीचे किया जायेगा।

निश्चयार्थ के सभी रूपों में से सिर्फ़ पाँच संश्लेषणात्मक रूप होते हैं, ये 'हैं' क्रिया के तिङन्ती रूप होते हैं, एवं 'था' क्रिया के विकारी रूप, सामान्य भविष्यत् काल के तिङन्ती-विकारी रूप और दो कृदन्तपरक विकारी रूप (प्रथम कृदन्त तथा द्वितीय कृदन्त)। विश्लेषणात्मक प्राकारिक-काल रूप जिनमें प्रथम और द्वितीय कृदन्त हैं द्विघटकीय, तथा संतत कृदन्त के ऐसे रूप तृघटकीय हैं। निश्चयार्थ के प्राकारिक-काल रूप पक्ष-सम्बन्धी वर्णनों द्वारा जटिल बन सकते हैं और तब एक जटिल समापक विश्लेषणात्मक रचना बनाते हैं जो अपने अन्दर पाँच घटकों को शामिल कर सकती है।

सम्भावनार्थ अवास्तविक व्यापार व्यक्त करता है, जो कि सम्भाव्य, वांछनीय, काल्पनिक या अनुज्ञेय हो सकता है। सम्भावनार्थ का अर्थ एक अप्राकारिक तिङन्ती संश्लेषणात्मक रूप और तीन प्राकारिक विकारी-तिङन्ती रूपों द्वारा व्यक्त हो

सकता है, जो कि पक्ष-सम्बन्धी वर्णनों द्वारा जटिल हो सकता है और तब वे (रूप) एक जटिल बहुघटकीय समापक रचना बनाते हैं।

संकेतार्थ अवास्तविक व्यापार को व्यक्त करता है जो कि काल्पनिक, संदिग्ध या सप्रतिबन्ध सम्भाव्य हो सकता है। तब व्यापार की अवास्तविकता प्रतिबन्धित हो सकती है अर्थात् व्यापार किन्हीं विशेष स्थितियों में ही हो सकता है। संकेतार्थ का अर्थ एक प्राकारिक संश्लेषणात्मक विकारी रूप तथा तीन विश्लेषणात्मक प्राकारिक विकारी रूपों द्वारा व्यक्त होता है, जो कि पक्ष-सम्बन्धी वर्णनों द्वारा जटिल हो सकते हैं और तब वे जटिल बहुघटकीय समापक रचना बनाते हैं।

आज्ञार्थ किसी एक व्यक्ति का संकल्प व्यक्त करता है और दूसरे व्यक्ति को व्यापार के लिए उद्बोधक करता है। यह भी हो सकता है कि संकल्प एक स्पष्ट आज्ञा हो, स्पष्ट या शिष्ट प्रार्थना हो। आज्ञार्थ का अर्थ मध्यम पुरुष के एकवचन तथा बहुवचन के रूपों की प्रणाली द्वारा व्यक्त हो सकता है—स्पष्ट आज्ञा अगर मध्यम पुरुष में एकवचन को दी गयी हो और स्पष्ट प्रार्थना अगर मध्यम पुरुष में बहुवचन को दी गयी हो, शिष्ट प्रार्थना जब मध्यम पुरुष में बहुवचन के शिष्ट रूप होते हैं। अन्य पुरुष में एकवचन तथा बहुवचन के रूप व्यापार के लिए उद्बोध व्यक्त करते हैं। मध्यम पुरुष में एकवचन और बहुवचन के रूप पाँच संश्लेषणात्मक रूपों द्वारा व्यक्त होते हैं, जिनमें से तीन तो नियमित होते हैं और दो शैली की दृष्टि से रंजित होते हैं। ये रूप प्रासंगिक प्रत्ययों के क्रिया की धातु के साथ मिलने से वनते हैं। अन्य पुरुष में एकवचन तथा बहुवचन के रूपों में सम्भावनार्थ का सरल तिङन्ती रूप प्रयोग होता है। आज्ञार्थ के रूप बहुत ही कम स्थितियों में पक्ष-सम्बन्धी वर्णनों द्वारा जटिल बन सकते हैं।

**वाच्य की श्रेणी**—आधुनिक हिन्दी में वाच्य की श्रेणी एक जटिल तथा परस्पर विरोधी बात है। एक तरफ़ वाच्य क्रिया के रूपों द्वारा व्यक्त होता है और रूपात्मक श्रेणी होता है, दूसरी तरफ़ वाच्य शब्दों के अन्दर विशेष सम्बन्धों में प्रगट होता है अर्थात् एक वाक्यात्मक श्रेणी है। इसीलिए वाक्य की श्रेणी को निम्नलिखित परिभाषा दे सकते हैं: वाच्य यह क्रिया के व्याकरणिक रूपों की एक प्रणाली है, जो कि उद्देश्य (या व्यापार के कर्ता, अगर क्रिया के अविधेय रूप होते हैं) के साथ क्रियार्थक व्यापार का सम्वन्ध बताती है। अगर क्रियार्थक रूप उद्देश्य को व्यापार के कर्ता की हैसियत से व्यक्त करता है अर्थात् व्यक्ति (या वस्तु) जो कि व्यापार को कर रहा है, तो यह कर्तृवाच्य होता है। अगर क्रियार्थक रूप उद्देश्य को व्यापार के कर्म की हैसियत से व्यक्त करता है, अर्थात् व्यक्ति (या वस्तु), जिसकी तरफ़ व्यापार का संकेत है, तो कर्मवाच्य होता है। लेकिन अगर पहले स्थान पर व्यापार ही प्रस्तुत है, और व्यापार के कर्ता या कर्म की तरफ सम्वन्ध अव्यक्त रहता है तो भाववाच्य (कर्ता-कर्महीन वाच्य) होता है।

कर्तृवाच्य की क्रियाएं कर्तृवाच्य धातु से बनती हैं, जो कि क्रिया के समस्त पुरुषवाचक और अविधेय रूपों को बनाने के लिए प्रारम्भिक होती है।

कर्मवाच्य की क्रियाएं कर्मवाच्य धातु से बनती हैं, जिनका कोटिबद्ध लक्षण सकर्मक सरल द्वितीय कृदन्त का होना है जो कि 'जाना' सहायक क्रिया के कर्तृ-वाच्य धातु के रूप के साथ आता है। कर्मवाच्य धातु क्रिया के समस्त पुरुषवाचक तथा अविधेय रूपों को बनाने के लिए प्रारम्भिक होती है।

भाववाच्य की क्रियाएं सिर्फ़ समापक रूपों से ही व्यक्त होती हैं, जो कि सरल अकर्मक द्वितीय कृदन्त तथा 'जाना' सहायक क्रिया से बने होते हैं।

वाक्य के स्तर पर कर्तृ-क्रियाएं कर्तृवाच्य कर्तृ-सम्बन्धी, कर्मणि-सम्बन्धी तथा भाववाचक रचनाएं बनाती हैं। कर्मवाच्य की क्रियाएं कर्मवाच्य कर्मणि-विषयक और भाववाचक रचनाएं बनाती हैं। भाववाच्य की क्रियाएं भाववाचक अवैयक्तिक रचना बनाती हैं।

विधेय-क्रियाओं में वाच्य 'जाना' सहायक क्रिया समेत सरल द्वितीय कृदन्तों के सकर्मक और अकर्मक रूपों के और समस्त बचे हुए तिङन्ती और विकारी क्रियार्थक रूपों के विरोध में प्रगट होता है। तब कर्मवाच्य की समापक क्रियाएं कभी भी कर्तृ-सम्बन्धी रचना में नहीं आतीं, और भाववाच्य की समापक क्रियाएं सिर्फ़ अवैयक्तिक भाववाच्य रचना में आती हैं। भाववाच्य की क्रियाओं और व्यापार के घटमान पूर्णपरिणामी पक्ष के रूपों में जो कि सदा की तरह कर्ता-सम्बन्धी रचनाओं में आते हैं, यही अन्तर है (मुकाबला कीजिए : 'मुझसे चला नहीं जाता (१०३, ६०)'—भाववाच्य और '...मैं भी आया जाता हूं (६५, ७६)'।

कर्मवाच्य तथा कर्तृवाच्य का विरोध सिर्फ़ सकर्मक क्रियाओं के क्षेत्र को ही प्रभावित करता है और कर्म और कर्तृ-सम्बन्धी रचनाओं में प्रगट होता है। कर्तृ-वाच्य भाववाच्य का विरोध अकर्मक क्रियाओं के क्षेत्र को ही प्रभावित करता है, जहां मुख्यतः गति और अवस्था की ही क्रियाएं होती हैं। कर्मवाच्य और भाववाच्य का विरोध, जबकि समान रूप-निर्माण होता है, क्रिया की सकर्मकता द्वारा तथा उसकी वजह से कर्मवाच्य में प्रधान कर्म की उपस्थिति द्वारा और क्रिया की अकर्मकता द्वारा तथा भाववाच्य में प्रधान कर्म के अभाव द्वारा व्यक्त होता है।

बनावट की दृष्टि से सब वाच्य रचनाओं की विशेषता यह है कि उनका क्रियार्थक विधेय अवश्य होता है और उद्देश्य और कर्म की उपस्थिति ज़रूरी नहीं है। कर्तृ रचना का विधेय कर्मणि-सम्बन्धी और अवैयक्तिक भाववाचक रचनाओं के विधेय से मेल खाता है। कर्तृ रचना का उद्देश्य कर्मवाच्य और अवैयक्तिक भाववाचक रचना के साधक कर्म (व्यापार के कर्ता) से मेल खाता है। कर्तृरचना का प्रधान कर्म कर्मवाच्य रचना के उद्देश्य या प्रधान कर्म से मेल खाता है और

अवैयक्तिक भाववाचक रचना में संगत संरचनात्मक तत्व नहीं रखता।

वाच्य रचनाएं तिनांगी, दो-अंगी और एकांगी हो सकती हैं।

कर्तृवाच्य रचना तिनांगी हो सकती है, अर्थात् उसमें उद्देश्य, विधेय और प्रधान कर्म हो सकते हैं [मैंने लड़के को पाला है...(७३, ७)]; दो-अंगी हो सकती हैं, अर्थात् उसमें विधेय और उद्देश्य हो सकते हैं, [शोभा बोली (११, ७८)]; और एकांगी हो सकती है अर्थात् उसमें सिर्फ़ विधेय हो सकता है (कहते हैं कि...)।

कर्मवाच्य रचना तिनांगी हो सकती है, अर्थात् उसमें उद्देश्य, साधक कर्म और विधेय हो सकते हैं [वे एक स्वर्णकार के द्वारा पाले-पोसे गये थे (१,१७४)]; दो-अंगी हो सकती है, अर्थात् उसमें (क) विधेय और उद्देश्य हो सकते हैं [...मैं पकड़ा जाऊंगा (१०२, १०८)], (ख) विधेय और प्रधान कर्म हो सकते हैं [लड़की को टॉर्चर करके मारा गया है (१११, ४३)], (ग) विधेय तथा साधक कर्म हो सकते हैं [मुझसे न कहा जायेगा (१, १८८)] और एकांगी भी हो सकता है अर्थात् सिर्फ़ विधेय से रचना बन सकती है [कहा जाता है कि...१११, ६२)]।

अवैयक्तिक भाववाचक रचना, आम तौर से, दो-अंगी होती है अर्थात् उसमें विधेय और साधक कर्म हो सकते हैं [मुझसे चला नहीं जाता था (१०३, ६०)]।

कर्तृवाच्य और कर्मवाच्य रचनाओं के बीच संरचनात्मक भिन्नता के अलावा शब्दार्थक भिन्नता भी होती है। कर्तृवाच्य रचना में व्यापार के कर्ता अर्थात् वाक्य के उद्देश्य पर ज़ोर होता है। कर्मवाच्य पदबन्धों में व्यापार और उसके कर्म पर अर्थात् उसके उद्देश्य या प्रधान कर्म पर ज़ोर होता है। कर्मवाच्य रचनाओं में व्यापार का कर्ता संरचना का आवश्यक तत्व नहीं होता अगर ज़ोर व्यापार और उसके कर्म पर होता है। फिर भी, अगर व्यापार ही पर ज़ोर होता है, जो कि व्यापार के कर्ता की तरफ़ से उसकी पूर्ति की सम्भावना या असम्भावना से सम्बन्धित होता है अर्थात् कर्मवाच्य रचनाओं में जिनमें वृत्तिवाचक झुकाव बहुत ही स्पष्टतः व्यक्त होता है, व्यापार का कर्ता एक आवश्यक संरचनात्मक तत्व है। व्यापार का कर्म एक अनावश्यक संरचनात्मक तत्व हो जाता है। इस तरह, आधुनिक हिन्दी में सबसे ज़्यादा दो-अंगी कर्मवाच्य रचनाएं प्रचलित होती हैं जिनमें किसी-न-किसी तरह से व्यापार पर मुख्य ज़ोर होता है लेकिन कर्ता के ऊपर नहीं। इसी कारण कर्मवाच्य रचना आम तौर पर सामान्यकृत व्यापार को व्यक्त करने के काम आती है। यह रचना उस व्यापार को नहीं बता सकती जो कि उक्ति के क्षण के साथ मेल खाता है।

इसके परिणामस्वरूप हिन्दी व्याकरण में कर्मवाच्य रचना इन स्थितियों में हो सकती है जब कि मुख्य ज़ोर व्यापार पर ही करना होता है। उन रचनाओं में जिनमें वृत्तिवाचक छाया नहीं होती, सकर्मक क्रिया का व्यापार कर्म द्वारा बढ़ाया जाता है, और उन रचनाओं में जहां वृत्तिवाचक छाया होती है, क्रिया का व्यापार

उसके निकास के स्रोत की ओर संकेत के साथ होता है, और कर्म द्वारा सदा की तरह नहीं बढ़ाया जाता।

कर्मवाच्य रचना कर्म-विषयक (उद्देश्य-सम्बन्धी) हो सकती है, उदाहरणार्थ : मैं सरकारी अनाथालय में पाला गया हूं (६९, २०२), अच्छे आदमी सताये जाते हैं...(११६, ३५), फिर की बात फिर सोची जायेगी (१११, २६), तभी तो मुझसे कहानी नहीं लिखी जाती (१२५, २०९) और भाववाचक (उद्देश्यरहित) हो सकती है जो कि बाँटी जा सकती है: (क) रचना जिसमें चिह्नित प्रधान कर्म होता है जो कि बगैर चिह्न के रचना का उद्देश्य हो जाता है, उदाहरणार्थ : दुनिया को धोखे में रखा जा सकता है...(१११, ३६), बड़े-बड़े शामियाने लगाकर उनमें शरणार्थियों को ठहराया जा रहा था (१, २६९), मुकाबला कीजिये : 'दुनिया धोखे में रखी जा सकती है और शरणार्थी ठहराये जा रहे थे'; (ख) रचना जिसमें उद्देश्य छोड़ा गया हो या चिह्नित प्रधान कर्म होता है, उदाहरणार्थ : उस दिन न मुझसे खाया गया और न कुछ पीया ही गया (६९, १९३),...लेकिन हमसे...उस ठंठे पानी में नहाया न गया...(९, ६१); (ग) रचना जिसमें उद्देश्य छोड़ा गया हो और साधक कर्म भी, उदाहरणार्थ : कहा नहीं जा सकता यह बात कहां तक ठीक है (१११, ११६),...जैसा कि पहले बताया गया है... (१५३, ११)।

कर्मवाच्य रचनाएं शब्दार्थक-वाक्यात्मक अर्थ में कर्तृवाच्य रचनाओं से मेल खा सकती हैं, लेकिन पूर्ण वाक्यात्मक और शब्दार्थक मेल इन दोनों रचनाओं में कदापि नहीं हो सकता।

सबसे ज़्यादा परस्पर सम्बन्ध तिनांगी कर्मवाच्य और कर्तृवाच्य रचनाएं रखती हैं, उदाहरणार्थ :

| **कर्मवाच्य रचना** | **कर्तृवाच्य रचना** |
|---|---|
| ...कम्पनियों द्वारा ५.२ करोड़ रुपये की पूँजी जुटायी गयी...(१५३, ९)। | कम्पनियों ने ५.२ करोड़ रुपये की पूँजी जुटायी। |
| ...ताकत के ज़रिए उसकी सीमाएं बदली जा सकती हैं...(१४५, २-३)। | ताकत उसकी सीमाएं बदल सकती है। |
| ...भारत...विदेशी लुटेरों के हाथ लूटा जाता है (४, ४८)। | भारत को विदेशी लुटेरे लूटते हैं। |

तिनांगी कर्मवाच्य रचना वृत्तिवाचक अर्थ के साथ रूपात्मक तौर पर कर्तृवाच्य रचना के साथ मेल नहीं खाती, चूँकि कर्तृवाच्य रचना को समान वृत्तिवाचक अर्थ को रखने के लिए वृत्तिवाचक क्रिया द्वारा जटिल हो जाना है,

उदाहरणार्थ :

| कर्मवाच्य रचना | कर्तृवाच्य रचना |
|---|---|
| ...यह...बकबक उससे भी न सही गयी (६६, २०२)। | वह यह बकबक न सह सकी। |
| छत्रपति से यह दृश्य और अधिक न देखा गया (४७, १३)। | छत्रपति यह दृश्य और अधिक न देख सका। |

तिनांगी कर्मवाच्य रचना संरचनात्मक तौर पर कर्तृवाच्य रचना से, जिसमें भाववाच्य क्रियाएं होती हैं, मेल खाती है जो कि कर्मवाच्य अर्थ रखती हैं, उदाहरणार्थ :

| कर्मवाच्य रचना | कर्तृवाच्य रचना |
|---|---|
| ...भारत...विदेशी लुटेरों के हाथ लूटा जाता है (४, ४८)। | वह मोना के हाथों लुटता गया (२८, ८५)। |
| ...यह किस चीज़ से तोड़ा गया (८०, ७९)। | फूलदान वास्तव में उसी से टूट गया था (१६, १११)। |

जैसा कि उदाहरणों से स्पष्ट है, व्यापार का कर्ता (साधक कर्म) कर्मवाच्य रचनाओं में परसर्गीय-अप्रत्यक्ष कारक में अलग-अलग करण परसर्गों के साथ आता है : से, के द्वारा, के ज़रिए, के हाथ (हाथों)।

दो-अंगी कर्मवाच्य रचनाएं पूरी तरह कर्तृवाच्य दो-अंगी रचनाओं से मेल नहीं खा सकतीं चूँकि हिन्दी के व्याकरण में अनिश्चय-पुरुषवाचक कर्तृवाच्य रचनाएं तुलना में कम ही क्रियाओं को शामिल करती हैं, जो कि मुख्यत: कारोबारी व सरकारी भाषा में इस्तेमाल होती हैं, उदाहरणार्थ :

| कर्मवाच्य रचना | कर्तृवाच्य रचना |
|---|---|
| ...वे सरकार के आदमी कहे जाते हैं (५१, ५९)। | ...जिसे 'मैकमोहन लाइन' कहते हैं (११५, ४११)। |
| जब पत्रों को उपरोक्त विधि से छाँट लिया जाता है (१६१, ७५)। | पहले पत्रों को वर्णमाला के आधार पर छाँट लेते हैं (१०१, ७४)। |
| एक सूची ख़ज़ांची के पास भेज दी जाती है (१०१, ११)। | ...दूसरी पर उसके हस्ताक्षर कराकर लेखा-विभाग को भेज देते हैं (१०१, ११)। |
| ...आगे का हिसाब नहीं लिखा जाता (५१, ६०)। | विश्वविद्यालयों की डिग्रियां...नाम के बाद में लिखते हैं (१०१, ३१)। |

दो-अंगी कर्मवाच्य रचनाएं कर्तृवाच्य रचनाओं के साथ निम्नलिखित स्थितियों में मेल खाती हैं :

(१) जबकि मुख्य सकर्मक क्रिया की संगत व्युत्पन्न भाववाच्य क्रिया होती है, उदाहरणार्थ :

| **कर्मवाच्य रचना** | **कर्तृवाच्य रचना** |
|---|---|
| लोग पीटे जा रहे थे (१०२, १४८)। | बड़े-बड़े आदमी भी पिटे थे (१०२, १४८)। |
| ज़मींदारी तोड़ दी जायेगी (१२०, ३६)। | ज़मींदारी टूट रही है (१२०, ३६)। |
| बाँध काटा जा चुका है (१२०, १२६)। | बाँध कट गया। (१२०, १२६)। |
| वंजर ज़मीन खेत मज़दूरों और गरीब किसानों में बाँटी जाए (IV, ३०.१. १९७२)। | गांव में मिठाई बँटी थी (१११, ११)। |
| ...बैठक ही के एक द्वार में पर्दा टाँगा गया (१, ५६)। | वहां खूँटी पर स्टेथस्कोप भी टँगा था। |

(२) जब कर्मवाच्य रचना क्रिया-नामिक वाक्यांशों के नामधातुज विश्लेषणात्मक क्रिया के या 'करना' क्रिया सहित क्रियार्थक समास के आधार पर बनती है और 'होना' क्रिया के साथ संगत विरोध रखती है, उदाहरणार्थ :

| **कर्मवाच्य रचना** | **कर्तृवाच्य रचना** |
|---|---|
| ...केन्द्रीय समाज-कल्याण मंडल की स्थापना की गयी (११५, ४१५)। | ...केन्द्रीय सरकारी बैंक की स्थापना हुई (११५, ३७६)। |
| ...जिसका उपयोग प्रतिरक्षा के लिए न किया जाता हो (II, १०.२.१९६६, ४०)। | ...जिससे...श्रम-शक्ति का पूरा उपयोग हो सके (११५, ३७४)। |
| ...४ करोड़ राज्यों में खर्च किया जायेगा (११५, ४१६)। | ...दो करोड़ ३७ लाख रुपये कारीगरों पर खर्च होंगे (११५, ३७४)। |
| इस समस्या को खेतों को बड़ा करके... हल किया जा सकता है (११५,२८८)। | ...बहुत-सी वर्तमान समस्याएं अपने-आप हल हो जायेंगी (११५, २८८)। |
| हर राज्य में युवा-कल्याण मंडल स्थापित किये जायें (IV, ३०.१.१९७७)। | लोक - संस्कृति - शोधक संस्थान भी स्थापित हो गये हैं (११५, ४२८)। |
| ...दस नये पैसों के सिक्के ही प्रचलित किये गये (११५, ४३७)। | ...यह प्रणाली सन् १७८६ से प्रचलित है (११५, ४३६)। |

(३) जब कर्मवाच्य रचना क्रियार्थक विधेय द्वारा व्यक्त होती है, और कर्तृवाच्य रचना से परस्पर मेल खाती है, जो कि नामिक विधेय द्वारा उसी मुख्य कृदन्त समेत व्यक्त होती है, उदाहरणार्थ :

| कर्तृवाच्य रचना | कर्मवाच्य रचना |
|---|---|
| ...लक्ष्य रखा गया है (११५, ४१७)। | साइकिल रखी हुई थी (६५, १३६)। |
| ...आगे का हिसाब नहीं लिखा जाता (५१, ६०)। | यही मेरी पहचान फ़ौजी रजिस्टरों में भी लिखी हुई थी (६६, २०२)। |
| ...दस सहकारी कृषि समितियां बनायी जायें (११५, ३७४)। | मैं जो कुछ हूं, मां का बनाया हूं (१३, २८)। |
| ...मिश्रजी एक दिन बाँधे जा सकते हैं (५१, ६०)। | सर्दी के लिए सिर पर जो रूमाल बाँधा था...(५८, ८६)। |

हालाँकि दो-अंगी कर्मवाच्य रचनाओं में व्यापार के कर्ता की ओर रूपात्मक संकेत का अभाव होता है, वह फिर भी सांदर्भिक तौर पर काफ़ी हद तक निश्चयतः समझा जा सकता है। इसी कारण दो-अंगी कर्मवाच्य रचनाएं निम्न-लिखित वर्गों में बाँटी जा सकती हैं :

(१) जबकि व्यापार का कर्ता बहुत ही अस्पष्ट होता है और व्यावहारिक तौर पर उसके बारे में वास्तविकता से नहीं बता सकते, उदाहरणार्थ : बंजर जमीन खेत मज़दूरों और किसानों में बाँटी जाये (IV, ३०.१.१९७२), कहीं ऐसी बातें कही जाती होंगी (१०३, १८३), दुनिया को धोखे में रखा जा सकता है... (१११, ३६)।

(२) जबकि व्यापार का कर्ता काफ़ी हद तक स्पष्टतः व्यक्त होता है, चूंकि वह किसी विशेष व्यक्ति द्वारा, बहुधा लोगों के किसी ग्रुप द्वारा वर्णित होता है, उदाहरणार्थ : यह हसन खां, जो गाँव में सिर्फ़ 'हस्सू' के नाम से पुकारा जाता रहा...(७, २३), अब छोटी-बड़ी क्लासों में कहानियां पढ़ायी जाती हैं...(६४, ३७), आपका नाम सोच-समझकर रखा गया था (१११, ५६), इन्टरव्यू में तू ही चुनी जायेगी (१११, १०६)। हालाँकि उद्धृत किये गये उदाहरणों में और परिवर्ती प्रसंगों में व्यापार के कर्ता की ओर प्रत्यक्ष संकेत नहीं है, फिर भी उदाहरण काफ़ी हद तक सम्भव कर्ता को व्यक्त करते हैं। पहले उदाहरण में—गाँव के लोग हैं, दूसरे में—स्कूल के अध्यापकगण, तीसरे में—मां-बाप तथा चौथे में—जो इन्टरव्यू ले रहा है।

(३) व्यापार का कर्ता प्रसंग की बदौलत काफ़ी हद तक ठीक व्यक्त होता है, उदाहरणार्थ : मैं दिल की बात कहता हूं, अब तुम्हारी यह हालत देखी नहीं जाती

(१०८, १२८), ...वह गर्भवती हो गयी और ऐसी चेष्टा हो रही थी कि गर्भ गिरा दिया जाये...(१११, ६१), गली के और लोगों ने भी मदद की। लाश उठायी जा रही थी (१११, ६९)। उद्धृत किये उदाहरण स्पष्टतः व्यापार के कर्ता की ओर संकेत देते हैं, जिसकी वजह से कर्मवाच्य रचनाओं का कर्तृवाच्य रचनाओं में परिवर्तन होना सम्भव है : 'मैं दिल की बात कहता हूं, अब मैं तुम्हारी यह हालत नहीं देख सकता', 'वह गर्भवती हो गयी और ऐसी चेष्टा हो रही थी कि वह गर्भ गिरा दे', 'गली के और लोगों ने भी मदद की, वे लाश उठा रहे थे'।

एकांगी कर्मवाच्य रचना व्यावहारिक तौर पर कर्तृवाच्य रचना से मेल नहीं खाती सिवाय कुछ एक क्रियाओं के जो कि अनिश्चित-पुरुषवाचक रचनाओं में आती हैं, जैसे : 'कहा जाता है कि...' और 'कहते हैं कि'।

कर्मवाच्य के प्राकारिक-काल रूप को कर्मवाच्य की शाब्दिक ढंग की अभिव्यक्ति से सम्भ्रमित नहीं होना चाहिए। शाब्दिक कर्मवाच्य का अर्थ निम्नलिखित प्रकारों द्वारा व्यक्त हो सकता है :

(१) **भाववाच्य क्रिया**—भाववाच्य क्रियाएं कर्मवाच्य व्यापार को व्यक्त करती हैं, जो कि मुख्यतः उनके कर्ता के किसी भी हस्तक्षेप के बिना अपने-आप ही होता है। वाक्य के स्तर पर भाववाच्य क्रियाएं सिर्फ़ कर्तृ-सम्बन्धी रचना ही बनाती हैं, हालाँकि भाववाच्य क्रियाओं के कर्मवाच्य अर्थ में वाक्य का उद्देश्य व्यापार का कर्ता नहीं होता, बल्कि कर्म होता है, उदाहरणार्थ : फूलदान वास्तव में उसी से टूट गया (१६, १११), इसी कारण पति के हाथों उसे कई बार पिटना पड़ा था (१७, ११५), वह अपने क्रूर पिता के हाथों बुरी तरह पिटा था (१६, ८५), दाढ़ी उसकी न मुँडासे बँधी थी, न डोरे से कसी थी (१५, १०), रावत लुट तो गये ही थे (९६, ८३)। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, भाववाच्य क्रियाओं के साथ रचनाओं को कर्मवाच्य रचनाओं में परिवर्तित कर सकते हैं और 'कर्मवाच्य-कर्तृवाच्य' का इस तरह का विरोध रख सकते हैं। भाववाच्य क्रियाओं को "प्राकृतिक या मौलिक कर्मवाच्य" नहीं कह सकते (१५१, १००-१०१), चूँकि भाववाच्य क्रियाओं का कर्मवाच्य अर्थ ही नहीं, बल्कि कर्तृवाच्य अर्थ भी हो सकता है, उदाहरणार्थ : लेकिन रात तो कट ही जायेगी (१०२, १५), "रात कुछ बीत ही जायेगी"; कुछ लोग और बँधे (५१, ८८), "कुछ लोग और शामिल हुए"; लोग डर के मारे रुपये दे-देकर छूट रहे हैं (१०२, १५८), "लोग डर के मारे पैसे दे रहे हैं और बच रहे हैं" [मुकाबला कीजिये—ढोर छूटे (१५१, ४९), "पशु को छोड़ दिया गया"]; जब नींद टूट जाती है...(१११, ४५), "जब नींद में खलल हो जाता है"। व्यापार का कर्ता भाववाच्य क्रियाओं की उपस्थिति में बहुत कम आता है, वह आम तौर पर, परसर्गों 'से', 'के हाथ' (हाथों) द्वारा चिह्नित होता है, लेकिन व्यापार के प्रकार के परसर्गों 'के द्वारा' (ज़रिये) के साथ

प्रयोग में नहीं आता।

(२) **संस्कृत के कृदन्तपरक विशेषणों द्वारा** व्यक्त हो सकता है जिसका निकास संस्कृत के कर्मवाच्य कृदन्त हैं, उदाहरणार्थ : सर्वेक्षण द्वारा यह तथ्य स्थापित हो चुका है...(११५, ३७१), बहुमूल्य जानकारी प्राप्त हुई है (११५, ४४३), यह संविधान कई राष्ट्रों के विधानों के सम्मिश्रण से निर्मित हुआ (११५, ३२७)। संस्कृत के कृदन्तपरक विशेषण कर्मवाच्य में आ सकते हैं—मुख्यत: कर्मवाच्य कृदन्त के रूप में 'करना' क्रिया के साथ। इस स्थिति में कर्मवाच्य का शाब्दिक और व्याकरणिक अर्थ एक हो जाता है, उदाहरणार्थ : सिक्कों की परिवर्तन-तालिका भी बहुत अधिक संख्या में वितरित की गयी (११५, ४३७), रजवाड़ों को उनके पर्सों और विशेषाधिकारों से वंचित किया जा चुका है (IV, ३०.१.१९७२)।

(३) **सकर्मक क्रियाओं से बने सरल तथा संयुक्त द्वितीय कृदन्तों द्वारा** व्यक्त हो सकते हैं, जो कि सरल तथा संयुक्त योजकों के साथ संयुक्त नामिक विधेय में आते हैं और कर्मवाच्य प्रकृति की वजह से कृदन्त की स्थैतिक कर्मवाच्य (या अवस्था का कर्मवाच्य) का अर्थ व्यक्त करते हैं। उदाहरणार्थ : भाग्य में जो लिखा था, वह हुआ, आगे भी वही होगा, जो लिखा है (६५, ४६), मूल्य सूची में बहुत सी वस्तुओं के मूल्य दिये हुए होते हैं (१०१, २३३), जो गढ़े खोदे थे...(६६, २६८)।

स्थैतिक कर्मवाच्य के शाब्दिक अभिव्यक्त रूपों और नियमित कर्मवाच्य के रूपों के बीच अन्तर जानना चाहिए, चूँकि वे (क) (स्थैतिक) कर्मवाच्य कृदन्त के रूपों से वंचित होते हैं और इसलिए वे कभी भी विशेषण की तरह इस्तेमाल नहीं हो सकते; (ख) सिर्फ़ एक ही पूर्णतावाची प्राकारिक रूप रखते हैं, जो कि योजक के आधार पर वर्तमान, भूत, भविष्यत् काल को बतलाता है, लेकिन काल रूपों के विभाजन नहीं रखते, जैसा कि कर्मवाच्य के लिए प्राकृतिक है; (ग) आम तौर पर, व्यापार के कर्ता के साथ इस्तेमाल नहीं होते, चूँकि व्यापार को व्यक्त नहीं करते, बल्कि उसकी परिणामी अवस्था को व्यक्त करते हैं। कर्मवाच्य के विधेय में आने वाले स्थैतिक रूपों और अपने कर्ता के साथ सरल तथा संयुक्त द्वितीय कृदन्त के नामिकीकृत प्रयोग के बीच अन्तर जानना चाहिए जो कि 'का' परसर्ग के साथ संज्ञा द्वारा व्यक्त होता है या सम्बन्धवाचक सर्वनामिक विशेषण द्वारा व्यक्त होता है। नामिकीकृत कृदन्त विशेषण के तौर पर, विशेषण-विधेय और विधेय के तौर पर हो सकते हैं, उदाहरणार्थ : चुंगी का लाया सौदा क्या तुमने कभी देखा नहीं है (६६, १८६), मैं प्यास की मारी जा पहुँची थी; (१३, १०), दुनिया के कानून पैसे वालों के बनाये हैं (१०२, ११३); (घ) 'है, था, होगा' योजक-क्रियाओं के स्थान पर सरल तथा संयुक्त द्वितीय कृदन्त के साथ जो कि स्थैतिक कर्मवाच्य का अर्थ देता है, अर्द्धसंयोजक 'रहना' क्रिया आ सकती है, उदाहरणार्थ : प्रत्येक कार्ड पर

एक तारीख लिखी होती है और कार्ड क्रमानुसार रखे रहते हैं (१०१, १०२), दो प्लेटों में कृत्रिम फल और मेवे रखे रहते थे (१३, २६)।

शब्दार्थ स्तर पर कर्मवाच्य रचनाएं अवैयक्तिक रचनाओं से परस्पर सम्बन्ध रखती हैं, चूँकि दोनों रचनाएं विशेष कर जिनमें निषेध होता है, समान वृत्तिवाचक अर्थ को व्यक्त करती हैं। यह बात व्यापार के कर्ता के साथ 'से' परसर्ग जोड़ने से विशेष कर स्पष्ट प्रकट होती है। फिर भी संरचनात्मक तौर पर ये रचनाएं कर्मवाच्य रचना में प्रधान कर्म की उपस्थिति या अवैयक्तिक रचना में ऐसे कर्म के अभाव में भिन्न होती हैं, उदाहरणार्थ :

| **कर्मवाच्य रचना** | **अवैयक्तिक रचना** |
|---|---|
| मुझसे अब बार-बार चूल्हा नहीं जलाया जाता (१४, ६८)। | मुझसे तो ऊपर न लेटा गया (८, ३८)। |
| दैत्यों से यह न देखा गया (२८, ६०)। | उसकी स्त्री से न रहा गया (६६, १०)। |

अगर प्रधान कर्म को छोड़ दिया जाये तो कर्मवाच्य रचनाओं और अवैयक्तिक रचनाओं में संरचनात्मक भिन्नता नहीं होती, उदाहरणार्थ :

| **कर्मवाच्य रचना** | **अवैयक्तिक रचना** |
|---|---|
| मुझसे न कहा जायेगा (१, १८८)। | मुझसे रहा नहीं गया (३१, ७३)। |
| उस दिन न मुझसे खाया गया और न ही कुछ पिया गया (६६, १६३)। | नहीं रोया जायेगा मुझसे (१०२, ११६)। |

## निश्चयार्थ

आधुनिक हिन्दी में निश्चयार्थ काल-रूपों का एक समूह है, जो कि तीनों मौजूदा वास्तविक कालों अर्थात् वर्तमान, भूत और भविष्यत् काल से सम्बन्ध रखते हैं।

वर्तमान काल के रूप उस व्यापार को व्यक्त करते हैं जो कि उक्ति के क्षण के साथ मेल खाता है, जिसमें उक्ति का क्षण शामिल होता है और जो उक्ति के क्षण के लिए वास्तविक होता है।

भूतकाल के रूप उस व्यापार को व्यक्त करते हैं जो कि उक्ति के क्षण का पूर्ववर्ती होता है या भूतकाल में किसी विशेष काल के क्षण तक सम्पन्न होता है।

भविष्यत् काल के रूप उस व्यापार को व्यक्त करते हैं जो कि उक्ति के क्षण के प्रति अनुवर्ती होता है या भविष्य में किसी विशेष क्षण तक सम्पन्न होता है।

आधुनिक हिन्दी में प्रत्येक काल के लिए विश्लेषणात्मक और संश्लेषणात्मक

कृदन्तपरक रूपों का अपना वर्ग होता है।

वर्तमान काल 'है' क्रिया के संश्लेषणात्मक तिङन्ती रूपों तथा उन विश्लेषणात्मक रूपों द्वारा व्यक्त होता है जो कि प्रथम कृदन्त, द्वितीय कृदन्त और संतत कृदन्त और 'है' क्रिया के तिङन्ती रूपों के संयोग से बनते हैं।

भूतकाल 'था' क्रिया के संश्लेषणात्मक विकारी रूपों तथा प्रथम और द्वितीय कृदन्त के विकारी रूपों एवं उन विश्लेषणात्मक रूपों द्वारा व्यक्त होता है जो कि प्रथम कृदन्त, द्वितीय कृदन्त और संतत कृदन्त तथा 'था' क्रिया के विकारी रूपों के सम्मिलन से बनते हैं।

भविष्यत् काल किसी भी क्रिया के सामान्य भविष्यत् काल के संश्लेषणात्मक तिङन्ती-विकारी रूप एवं उन विश्लेषणात्मक रूपों से बनता है जो कि प्रथम कृदन्त, द्वितीय कृदन्त और संतत कृदन्त और 'होना' क्रिया के सरल भविष्यत् काल के तिङन्ती-विकारी रूपों के संयोग से बनते हैं।

निश्चयार्थ के काल रूप प्राकारिक वर्णनों के दृष्टिकोण से अप्राकारिक ('है', 'था' कियाओं के रूप और भविष्यत् काल के संश्लेषणात्मक रूप) और प्राकारिक रूपों में बाँट सकते हैं जो कि प्रथम और द्वितीय कृदन्तों तथा संतत कृदन्त द्वारा व्यक्त होते हैं।

| काल / रूप | वर्तमान | भूत | भविष्यत् |
|---|---|---|---|
| संश्लेषणात्मक अप्राकारिक | है | था | लिखेगा |
| संश्लेषणात्मक अपूर्ण | लिखता | लिखता | — |
| संश्लेषणात्मक पूर्ण | — | लिखा | — |
| विश्लेषणात्मक अपूर्ण | लिखता है | लिखता था | लिखता होगा |
| विश्लेषणात्मक पूर्ण | लिखा है | लिखा था | लिखा होगा |
| विश्लेषणात्मक संतत | लिख रहा है | लिख रहा था | लिख रहा होगा |

आधुनिक हिन्दी में काल के रूप में निरपेक्ष रूप को पहचानना चाहिए जो कि स्वयं व्यापार को व्यक्त करते हैं और जो कि प्रत्यक्ष रूप से उक्ति के क्षण से सम्बन्ध रखते हैं और सापेक्ष रूप को पहचानना चाहिए जो कि एक व्यापार को दूसरे व्यापार (या काल के क्षण) के साथ उसके सम्बन्ध में व्यक्त करते हैं और इस तरह उक्ति के क्षण के साथ 'परोक्ष सम्बन्ध' रखते हैं।

समस्त संश्लेषणात्मक रूप और वर्तमान काल के सब विश्लेषणात्मक रूप और भूतकाल तथा भविष्यत् काल के समस्त अपूर्ण रूप निरपेक्ष रूप होते हैं। यहां यह उल्लेख करना उचित होगा कि वर्तमान काल का पूर्ण रूप उस व्यापार को व्यक्त करता है जिसका आख़िरी सिरा उक्ति का क्षण है।

भूत काल और भविष्यत् काल के पूर्ण और संतत रूप सापेक्ष रूप होते हैं।

वर्तमान काल और भूत काल के पूर्णतावाची रूप पूर्ण वर्तमान (या आसन्न भूत) का अर्थ रखते हैं, अर्थात् उस व्यापार को व्यक्त करते हैं, जिसके परिणाम वर्तमान तथा भूत काल में अनुवर्ती काल अर्थ में वास्तविक होते हैं।

भूत तथा भविष्यत् काल के पूर्णतावाची रूप उस व्यापार को व्यक्त कर सकते हैं जो कि दूसरे भूत या भविष्य के व्यापार से पहले हो गया हो अर्थात् उनका पूर्ण भूत तथा पूर्ण भविष्यत् अर्थ होता है।

अपूर्णतावाची काल रूप मुख्यतः आवर्ती, अवास्तविक और अमूर्त व्यापार को व्यक्त करते हैं जो किसी असीमित समय में होता है, उदाहरणार्थ : जब कमरे में आती, लोग खड़े हो जाते थे (६६, ३१), दो बच्चे हैं, जो स्कूल चले जाते हैं (१११, १०२),—तो खाते क्या होंगे ?—बेटी, यह लोग हवा पर रहते हैं (६६, २८६)।

कम स्थितियों में ऐसा होता है कि अपूर्णतावाची काल रूप मूर्त, वास्तविक व्यापार व्यक्त करते हैं, जो कि उक्ति के क्षण के साथ घटता है और सीमित समय के अन्दर होता है। उदाहरणार्थ : दुनिया में सब सोते होंगे, बस हम ही जागते हैं (१०२, १११), लड़को, क्यों भागते हैं (६६, ७३), पाँचों रंगरूट एक-दूसरे से लिपटते थे, उछलते थे, चीखते थे...(६६, ७७)।

पूर्णतावाची काल रूप मुख्यतः मूर्त, अकेले व्यापार को व्यक्त करते हैं जो कि समय में सीमित होता है, उदाहरणार्थ : परसों शहर में गोलियां चलीं (६६, १०), और कल से उसने आज तक पानी नहीं पिया है (१२०, ८८), आज से पाँच दिन पहले उसको बुखार आया था (१११, ७०)।

आवर्ती व्यापार भी काल की दृष्टि से सीमित होता है : हसनदीन इस बीच में दो-तीन बार घास ले आया था (१५, ८), कलकत्ता तो कई बार गया हूं (३५, १३३)।

बहुत ही कम स्थितियों में पूर्णतावाची काल रूप समय में असीमित आवर्ती व्यापार को व्यक्त करते हैं जो कि कभी-कभी क्रिया के शाब्दिक अर्थ के साथ सम्बन्धित है, उदाहरणार्थ : पराये मरदों से सोयी हूं (१०३, १४१), बेटी, उसे मैंने देश-भर में बहुत खोजा...(५, १३)।

संतत काल रूप आम तौर पर एकल प्रक्रियात्मक व्यापार को व्यक्त करते हैं जो समय में सीमित होता है, उदाहरणार्थ : बाहर अब भी वर्षा हो रही है (१११, २५), एक दिन संध्या समय मैं रामायण पढ़ रही थी (६६, ८१), मुझे लगता है कि लवाणी...मेरी ओर देख रही होगी...(८, ८३)।

संतत काल रूप आवर्ती व्यापार को बहुत ही कम व्यक्त करते हैं जो कि समय में असीमित होता है, उदाहरणार्थ : सूर्य लगातार रेडियो तरंगें भेज रहा है

(८८, १६५), शेख पट्टी में लोग कारीगरी से जी रहे हैं (१२०, ५७)।

'था' और 'है' अप्राकारिक काल रूप वर्तमान काल तथा भूत काल में अकेले, मूर्त व्यापार को व्यक्त करते हैं। भविष्यत् काल का अप्राकारिक रूप अकेले, मूर्त व्यापार को और सामान्यीकृत आवर्ती व्यापार को भी व्यक्त कर सकता है, उदाहरणार्थ : 'मैं अभी शादी नहीं करूँगी (१११, ७८)', और '...तुम्हारे आरकेस्ट्रा में वायलिन बजाऊँगा (२८, १६५)'।

काल-रूपों के प्रत्यक्ष सांदर्भिक सम्बन्धित प्रयोग के साथ-साथ, जबकि प्रसंग काल रूप के मुख्य अर्थ को रखता है, काल-रूपों का उपलक्षित लाक्षणिक प्रयोग भी होता है जो कि परिवर्ती प्रसंग के साथ विरोध में होते हैं। इस हालत में वर्तमान तथा भूत काल भविष्यत् काल का अर्थ देते हैं, और भूत काल वर्तमान काल का अर्थ देता है और वर्तमान भूतकाल का, उदाहरणार्थ : ...ऐसा लग रहा है जैसे दिल अब बैठा, अब बैठा (५६, ५८),...तो कल आप 'सत्य' जी के उपन्यास की आलोचना लिख ला रहे हैं ना ? (५६, २४), सुखराम घायल लेटा है...कजरी बैठी है पास (१०३, २१६),...ओह ! आप नमस्ते !—नमस्ते ! इसी ट्रेन से आ रही हैं क्या ?—जी हां—अकेली ही...—जी हां अकेली ही आयी हूं ! (५६, १०४)।

लाक्षणिक अर्थ मात्रिक तथा गुणात्मक तौर पर प्रबल हो सकता है। यह तब होता है जब भविष्यत् काल के कृदन्तपरक रूपों का इस्तेमाल करते हैं। भविष्यत् काल हर हालत में अतिरिक्त वृत्तिवाचक अर्थों से स्वतंत्र नहीं होता, जिनकी विशेषता है—भावी व्यापार की कल्पना। हालाँकि व्यापार पूरी तरह वास्तविक समझा जाता है, इसकी प्रतीक्षा मात्र की जाती है। इसी कारण भविष्यत् काल के कृदन्तपरक रूपों के ऊपर पुनः विचार किया गया जो कि बहुत कम 'शुद्ध' भविष्यत् काल का अर्थ देते हैं और अकसर काल्पनिक (संदेहार्थक) व्यापार व्यक्त करते हैं, जो कि वर्तमान, भूत या स्वयं भविष्यत् काल से भी सम्बन्ध रख सकता है। व्यापार की काल्पनिक प्रकृति और प्रबल हो जाती है जब 'होना' सहायक क्रिया सामान्य भविष्यत् काल के संश्लेषणात्मक रूप में होती है, चूँकि स्वयं 'होना' क्रिया सामान्य भविष्यत् काल में वृत्तिवाचक छाया को बहुत ही अच्छी तरह व्यक्त करती है। (माइकू) ने कहा—बड़ी भीड़ है, वे कोई दो-तीन सौ आदमी होंगे (६६, ६१)। भविष्यत् काल के कृदन्तपरक रूपों के लाक्षणिक अर्थ के बारे में विस्तारपूर्वक उल्लेख भविष्यत् काल के रूपों का वर्णन करते समय किया जायेगा।

निश्चयार्थ के ऊपर गिनाये गये काल-रूपों के अलावा जिनको सामान्य कह सकते हैं, आधुनिक हिन्दी में बहुत-से सीमित, विशेष प्रसंग के काल रूप होते हैं, जो कि समापक कृदन्तों और संयुक्त वर्तमान और अपूर्ण सहायक क्रियाओं ('होता है', 'होता था') के संयोग से बनते हैं।

कई शर्तों के तहत सीमित, विशेष प्रसंग के रूपों में संयुक्त पूर्ण वर्तमान और पूर्णभूत सहायक क्रियाओं ('हुआ है', 'हुआ था') के रूप शामिल हो सकते हैं, जो, दूसरी तरफ़, संयुक्त नामिक विधेय कहला सकते हैं, जो कि संयुक्त द्वितीय कृदन्त और वर्तमान और अपूर्ण योजक ('है', 'था') के संयोग से बनते हैं, अर्थात् 'लिखा+हुआ है (था)' या 'लिखा हुआ+है (था)'।

इस तरह, सीमित विशेष प्रसंग के रूपों को ध्यान में रखते हुए, निश्चयार्थ के काल रूपों की तालिका निम्नलिखित लगेगी :

| काल / रूप | वर्तमान | भूत | भविष्यत् |
|---|---|---|---|
| संश्लेषणात्मक अप्राकारिक | है | था | लिखेगा |
| संश्लेषणात्मक अपूर्ण | लिखता | लिखता | — |
| संश्लेषणात्मक पूर्ण | — | लिखा | — |
| विश्लेषणात्मक | लिखता है | लिखता था | — |
| अपूर्ण | लिखता होता है | लिखता होता था | — |
| विश्लेषणात्मक | लिखा है | लिखा था | लिखा होगा |
| पूर्ण | लिखा होता है | लिखा होता था | — |
| | लिखा हुआ है | लिखा हुआ था | — |
| विश्लेषणात्मक | लिख रहा है | लिख रहा था | लिख रहा होगा |
| संतत | लिख रहा होता है | लिख रहा होता था | |

सीमित विशेष प्रसंग के रूप उक्ति के क्षण के लिहाज़ से वे ही सम्बन्ध व्यक्त करते हैं जो कि सरल सहायक क्रिया के साथ काल रूप व्यक्त करते हैं।

संयुक्त वर्तमान या अपूर्ण सहायक क्रिया के साथ काल रूप आम तौर पर आवर्ती व्यापार व्यक्त करते हैं, जो कि समय में असीमित या बहुत कम सीमित होता है।

संयुक्त पूर्ण वर्तमान या पूर्ण भूत सहायक क्रिया के साथ काल रूप मुख्यत: समय में अकेला सीमित व्यापार व्यक्त करते हैं, उदाहरणार्थ : तुमको किसी ने रोककर नहीं रखा हुआ है (३६, ८९), सीढ़ियों से सटे जँगले पर ह्यूबर्ट ने अपना सिर रखा हुआ था (५२, १२३)।

निश्चयार्थ के काल रूपों के विश्लेषण के कुछ परिणाम निकालते समय कह

सकते हैं कि हर काल रूप के लिए शब्दार्थक लक्षणों का वर्ग स्वाभाविक होता है, जो एक तरफ़ काल रूपों को मिलाते हैं और दूसरी तरफ़ अलग करते हैं, और उनके सामान्य और विशेष गुणों पर प्रकाश डालते हैं। निश्चयार्थ के काल रूप शब्दार्थक लक्षणों के अनुसार निम्नलिखित तौर पर होते हैं :

| काल | रूप | शब्दार्थक लक्षण | | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | | पूर्व (अ) | पूर्व (आ) | सह० | पर० | सी० | पूर्ण० | आव० | अके० | प्र०* |
| | है | — | — | + | — | + | — | — | + | — |
| व | लिखता है | — | — | + | — | ∓ | — | + | — | ∓ |
| तं | लिखता होता है | — | — | + | — | ∓ | — | + | — | — |
| मा | लिखा है | + | — | ∓ | — | + | + | — | + | — |
| न | लिखा होता है | + | — | ∓ | — | ∓ | + | + | — | — |
| का | लिखा हुआ है | + | — | ∓ | — | + | + | — | + | — |
| ल | लिख रहा है | — | — | + | — | + | — | ∓ | + | + |
| | लिख रहा होता है | — | — | + | — | ∓ | — | + | + | + |
| भू | था | + | — | — | — | + | — | — | + | — |
| | लिखता | + | — | — | — | + | — | + | — | ∓ |
| त | लिखा | + | — | — | — | + | — | — | + | — |
| | लिखता था | + | — | — | — | ∓ | — | ∓ | + | ∓ |
| का | लिखता होता था | + | — | — | — | ∓ | — | + | — | — |
| | लिखा था | + | + | — | — | + | + | — | + | — |
| ल | लिखा होता था | + | — | — | — | ∓ | ∓ | + | — | — |
| | लिखा हुआ था | + | ∓ | — | — | + | ∓ | — | + | — |
| | लिख रहा था | + | — | — | — | + | — | — | + | + |
| | लिख रहा होता था | + | — | — | — | ∓ | — | + | — | + |
| भ | | | | | | | | | | |
| वि | लिखेगा | — | — | — | + | + | — | ∓ | ∓ | ∓ |
| ष्य | लिखता होगा | — | — | — | + | + | — | + | — | + |
| त् | लिखा होगा | — | + | — | + | + | (∓) | — | + | — |
| का | लिख रहा होगा | — | — | — | + | + | — | ∓ | + | + |
| ल | | | | | | | | | | |

*पूर्व० (अ)=उक्ति के क्षण की पूर्ववर्तिता, पूर्व०(आ०)=भूत या

भविष्यत् काल में काल के क्षण की पूर्ववर्तिता, सह० = सहकालिकता, पर० = परवर्तिता, सी० = काल में सीमित व्यापार, पूर्ण० = पूर्णतावाची, आव० = आवर्ती व्यापार, अके० = अकेला व्यापार, प्र० = प्रक्रियात्मक व्यापार, + का अर्थ है लक्षण की अभिव्यक्ति, — का अर्थ है रूप के प्रत्यक्ष प्रयोग में यह लक्षण नहीं होता, ∓ बताता है कि लक्षण व्यक्त हो सकता है, लेकिन ज़रूरी तौर पर नहीं अर्थात् दिये गये रूप के लिए वैकल्पिक है।

## कालरूपों के प्रत्यक्ष और लाक्षणिक अर्थ

### वर्तमान काल के रूप

वर्तमान काल में निम्नलिखित काल रूप होते हैं: (१) वर्तमान स्थिर सत्यवाचक, (२) वर्तमान अपूर्णतावाची, (३) वर्तमान अपूर्णतावाची आभ्यासिक, (४) वर्तमान पूर्णतावाची, (५) वर्तमान पूर्णतावाची आभ्यासिक, (६) वर्तमान पूर्णतावाची स्थैतिक, (७) वर्तमान संतत और (८) वर्तमान संतत आभ्यासिक। इन आठ काल रूपों में चार सामान्य होते हैं और चार सीमित विशेष प्रसंग के जो वास्तव में सामान्य काल रूपों के विकार होते हैं। प्रथम कृदन्त के द्वारा मुख्य क्रिया की हैसियत से व्यक्त किये गये रूप निम्नलिखित लक्षण बताते हैं: सह० +, सी० ∓, आव० +; द्वितीय कृदन्त द्वारा मुख्य क्रिया की हैसियत से व्यक्त किये गये रूप निम्नलिखित लक्षणों को बताते हैं: पूर्व० (अ) +, सी० +, पूर्ण० +, अके० +; संतत कृदन्त द्वारा मुख्य क्रिया की हैसियत से व्यक्त किये गये रूप निम्नलिखित लक्षणों से व्यक्त होते हैं: सह० +, सी० +, अके० +, पूर्व० (आ) +। काल रूप वर्तमान सहायक क्रिया के साथ अतिरिक्त लक्षण आव० + को व्यक्त करते हैं। अप्राकारिक तिङन्ती रूप 'है' सह० +, सी +, अके० + लक्षणों को व्यक्त करता है।

चूँकि सब रूपों के प्रयोग की कोई-न-कोई विशेषता होती है, इसीलिए उनके बारे में स्वतंत्र वर्णन की ज़रूरत है।

### वर्तमान स्थिर सत्यवाचक

यह काल रूप 'है' क्रिया के चार तिङन्ती रूपों द्वारा व्यक्त होता है—'हूँ' उत्तम पुरुष, एकवचन, 'है'—मध्यम तथा अन्य पुरुष, एकवचन, 'हैं'—उत्तम तथा अन्य पुरुष, बहुवचन और मध्यम शिष्ट पुरुष, बहुवचन, 'हो'—मध्यम पुरुष बहुवचन :

| | |
|---|---|
| मैं हूं | हम हैं |
| तू है | तुम हो, आप हैं |
| वह है | वे हैं |

इस काल रूप का प्रयोग करते हैं जब द्रव्य या व्यक्ति की उपस्थिति (निषेधात्मक वाक्यों में अनुपस्थिति) के बारे में बताना होता है जब वे वाक्य के उद्देश्य होते हैं, उदाहरणार्थ : हां, मैं ही हूं (१०, ६),...दो छोटे पौत्र हैं (१११, ५१), अब मैं बम्बई में हूं (२८, ४८), घर में चार कमरे हैं (१११, १०), वह क्या सिपाही नहीं है ? पुलिस नहीं है ? (१०३, ७८), यहां बच्चों के लिए दूध भी नहीं है (२६, २१)।

निषेधात्मक वाक्यों में, विशेषकर जब बातचीत हो रही है, 'है' को छोड़ भी सकते हैं, उदाहरणार्थ : आपको अवश्य कोई धोखा हुआ है। कोई धोखा नहीं (२८, २६),...मियादी बुखार है। टायफ़ायड तो नहीं ?...(१२, ६७)। लेकिन यह बात व्याकरणिक मानक नहीं जिसकी निम्नलिखित उदाहरणों की जोड़ियों से पुष्टि हो जाती है : 'क्यों री, तुझे ग़म नहीं ?' (१०३, ८४) और 'फिर तो तुझे गुस्सा नहीं है ?' (१०३, ६३); 'कौन है ? पता नहीं' (१०३, २२) और 'बच्ची के बाप को इसका कुछ पता नहीं है' (२६, १२)।

संयोजक क्रिया की हैसियत से 'है' वर्तमान काल के साथ विधेय के नामिक हिस्से के परस्पर सम्बन्ध की ओर संकेत करता है, उदाहरणार्थ : यह मेरे एक मित्र का बच्चा है। तो यह बच्चा तुम्हारा नहीं है ? (२६, १७), तू राजा है (१०३, ११४), राजा नहीं हूं (१०३, १०७)।

संयोजक क्रिया के प्रकार्य में 'है' को आम तौर पर छोड़ नहीं देते।

लेकिन 'है' को छोड़ने की बात को नामिक एकांगी वाक्य नहीं समझ लेना चाहिए चूँकि उसको संरचना की दृष्टि से 'है' के आवश्यक अभाव के आधार पर अलग होता है, उदाहरणार्थ : अकेली रातें, प्रभात और संध्या बेलाएं, जलती दोपहरी (४, २५१), आसमान साफ़, खुला और नीला, धरती भूरी, काली और मटियाली (२८, १४)।

## वर्तमान अपूर्णतावाची

यह काल का रूप प्रथम कृदन्त के लैंगिक विकारी रूपों और क्रिया 'है' के तिङन्ती रूपों के संयोग से बनता है। इस तरह, वर्तमान अपूर्णतावाची पुंल्लिग के दो लैंगिक रूप तथा स्त्रीलिंग के एक लैंगिक रूप द्वारा व्यक्त होता है जो कि 'है' क्रिया के चार तिङन्ती रूपों के साथ मिल जाते हैं :

| | |
|---|---|
| मैं लिख-ता (-ती) हूं | हम लिख-ते (-ती) हैं |
| तू लिख-ता (-ती) है | तुम लिख-ते (-ती) हो |
| | आप लिख-ते (-ती) हैं |
| वह लिख-ता (-ती) है | वे लिख-ते (-ती) हैं। |

निषेधात्मक वाक्यों में जबकि सहायक क्रिया 'है' को छोड़ दिया जाता है,

यह काल रूप चार लैंगिक रूपों द्वारा व्यक्त होता है।

| | |
|---|---|
| मैं नहीं लिख-ता (-ती) | हम नहीं लिख-ते (-तीं) |
| तू नहीं लिख-ता (-ती) | तुम नहीं लिख-ते (-तीं) |
| | आप नहीं लिख-ते (-तीं) |
| वह नहीं लिख-ता (-ती) | वे नहीं लिख-ते (-तीं)। |

निषेधात्मक वाक्यों में सहायक क्रिया का छोड़ना रचनात्मक तत्व है, लेकिन वह एक व्याकरणिक मानक नहीं है, चूँकि सहायक क्रिया रह सकती है, उदाहरणार्थ : मैं तो कहती हूं इस पर वह मानता नहीं है (२६, ३३), तो तुम लिखते क्यों नहीं हो ? (२८, १५६), वह जादू तो नहीं जानती है (५६, ११४)।

सहायक क्रिया का निषेधात्मक वाक्यों में होना आवश्यक है अगर उसके छोड़ने से काल अर्थ में भंग हो सकता है, उदाहरणार्थ : ...वह ग्यारह दिन टैक्सी नहीं चला सकता था। और जब टैक्सी नहीं चलती है तो घर का ख़र्च नहीं चल सकता है, और बच्चों का स्कूल नहीं चलता है, और बनिये की बही नहीं चलती है...(२६, २५)। सहायक क्रिया के वग़ैर व्यापार को भूतकाल (नियमित आवर्ती का अपूर्णतावाची) में समझा जा सकता था। यह बात निम्नलिखित उदाहरण के लिए भी सही है : यदि एक दिन भी वह नहीं आता है तो उसके प्राण व्याकुल हो जाते हैं (५, ४४)।

इस रूप का सामान्य अर्थ सह० +, सी० +, आव० +, प्र० +, लक्षणों द्वारा व्यक्त होता है, तब व्यापक रूप से सहकालिकता का उक्ति के क्षण के साथ परस्पर सम्बद्ध कह सकते हैं। अपूर्णतावाची वर्तमान को उक्ति के क्षण के अनुसार अवास्तविक वर्तमान में बाँट सकते हैं, जो कि अमूर्त आवर्ती व्यापार द्वारा व्यक्त होता है जो कि समय में असीमित होता है तथा वास्तविक वर्तमान में बाँट सकते हैं, जो कि मूर्त संतत व्यापार द्वारा व्यक्त है जो कि समय में सीमित होता है। अपूर्णतावाची वर्तमान के ऊपर गिनाये गये प्रकारों को अपने अनुच्छेदों में बाँटा जा सकता है।

अवास्तविक अपूर्णतावाची वर्तमान काल रूप के मुख्य अर्थ को व्यक्त करता है। यहां पर इस बात का संकेत नहीं होता कि व्यापार उक्ति के मूर्त क्षण में हुआ, बस व्यापार होता है, आम तौर पर। वह वास्तव में वर्तमान के साथ औपचारिक सम्बन्ध रखता है। अपूर्णतावाची वर्तमान के इस अवच्छेद के बहुत-से छोटे अवच्छेद होते हैं।

(१) अमूर्त अवास्तविक वर्तमान—अवास्तविक अपूर्णतावाची वर्तमान का यह अवच्छेद असीम सामान्य व्यापार को व्यक्त करने के लिए काम आता है जो कि मुख्यत: अलग-अलग मुहावरे, कहावतें, स्थिर सच्चाई, सूक्तियां आदि व्यक्त

करता है, उदाहरणार्थ : एक मछली सारे तालाब को गंदा करती है (३७, ८०), एक हाथ से ताली नहीं बजती (३७, ८०), बनिया भी दादा कहने से गुड़ देता है (५४, ५), निराशा असम्भव को सम्भव बना देती है (६०, १०३), हर चीज़ का वक्त आता है (८०, ५६), जो गरजते हैं, वे बरसते नहीं (३७, १०३)।

(२) नियमित अवास्तविक वर्तमान—अवास्तविक अपूर्णतावाची वर्तमान का यह अवच्छेद नियमित आवर्ती व्यापार को व्यक्त करने के काम आता है जो कि स्थिर नहीं होता, बल्कि रुक-रुककर होता है, उदाहरणार्थ : मिसेज़ दास के पत्र कभी-कभी आते हैं (६६, ६५), हर साल बाढ़ आती है और लाखों लोग इससे तबाह हो जाते हैं (१११, ६६), आजकल कोई लड़की किराये के मकान में नहीं रहती (२८, ११६), अब वह अंग्रेज़ी पुस्तकें बहुत कम पढ़ती है (६६, ६६), कम-से-कम पाँच आदमी मेरे यहां रोज़ आते हैं (१११, १२४), और पुलिस बड़े आदमियों की ही मदद क्यों करती है? (१०३, १५४)।

अवास्तविक वर्तमान के इस अवच्छेद में वह व्यापार एक विशिष्ट स्थान लेता है जो 'होना' क्रिया से बने प्रथम कृदन्तपरक रूप से प्रगट होता है और जिसमें मुख्य ज़ोर प्रस्तुत व्यापार की आभ्यासिकता पर पड़ता है, उदाहरणार्थ : अमीरों को धन का रोग होता है (६६, २१०), जब बादल बहुत होते हैं तो जोड़ों का दर्द भी बढ़ जाता है (१११, ३३), इस विधि का प्रयोग छोटे कार्यालयों में ही होता है (१०१, ७३)।

'होना' क्रिया का यह कृदन्तपरक रूप 'है' क्रिया के तिङन्ती रूप के साथ मिलकर संयुक्त वर्तमान योजक की हैसियत से प्रयुक्त हो सकता है, जबकि वह लक्षण की आभ्यासिकता की ओर संकेत करता है जो कि नामिक हिस्से में होता है, उदाहरणार्थ : कॉमन-रूम में जब लड़कियां इकट्ठी होती हैं तो...(१११, २७), वे ऊपर से गोल होते हैं (१०१, ८०), भूख बड़ी भयानक होती है (१०२, ७८)।

विश्लेषणात्मक क्रियाओं में क्रियार्थक हिस्सा जो इसी संयुक्त रूप द्वारा व्यक्त होता है बिना आभ्यासिकता की किसी छाया के वर्तमान अपूर्णतावाची की सभी किस्में व्यक्त कर सकता है, उदाहरणार्थ : ...जिसका नाम उस सूचक-पत्र पर लिखे अक्षर से आरम्भ होता है (१०१, ७६)—अमूर्त वर्तमान; 'क्यों रोती है?' रुस्तम खां पूछता है। वह कहती है 'दर्द होता है' (१०३, १४६)—मूर्त वर्तमान।

यह अवास्तविक वर्तमान का अवच्छेद कर्मवाच्य रूपों द्वारा बहुत ज़्यादा व्यक्त होता है जो कि कारबारी सरकारी भाषा के लिए विशेषकर लाक्षणिक है, उदाहरणार्थ : ...सारे पत्र तिथिवार रखे जाते हैं (१०१, ७६), पत्र को खोलने के बाद उस कार्यालय की मुहर लगायी जाती है (१५५, ३४), आगे का हिसाब नहीं

लिखा जाता (५१, १६०), आज छोटे-बड़े क्लासों में कहानियां पढ़ाई जाती हैं और परीक्षाओं में उन पर प्रश्न किये जाते हैं (६४, ३७), मुझसे अब बार-बार चूल्हा नहीं जलाया जाता (१४, ६७)।

(३) वृत्तिवाचक अवास्तविक—अवास्तविक वर्तमान अपूर्णतावाची का यह अवच्छेद वृत्तिवाचक छायापूर्ण अमूर्त व्यापार को व्यक्त करने के काम आता है, जहां रूप के वृत्तिवाचक अर्थ के ऊपर मुख्य बल दिया जाता है। यहां निम्नलिखित वृत्तिवाचक छायाओं के बीच अन्तर जानना चाहिए :

(क) विध्यर्थक, अर्थात् व्यापार के लिए आम तौर पर क्षमता, योग्यता की छाया, लेकिन किसी विशेष हालत में नहीं, उदाहरणार्थ : क्या करते हो ? वीणा बजाता हूं (२८, ३६), खड़े क्यों हो, आओ ना, ज़रा देखूं कैसे नाचते हो ! (६९, ६९), गधे होने के बावजूद तुम बातें अच्छी बना लेते हो (२७, ४९)।

(ख) काल्पनिक, जो कि संरचनात्मक तौर पर शर्त द्वारा व्यक्त होता है (आम तौर पर क्रियार्थक-नामिक पदबंध 'कल्पना करना' या 'मानना' क्रिया द्वारा) जिसके बाद अवास्तविक व्यापार होता है जो कि निश्चयार्थ के वर्तमान तथा भविष्यत् काल की सीमा पर होता है और जिसका शब्दार्थक तौर पर सम्भावनार्थ की तरफ़ झुकाव होता है, उदाहरणार्थ : कल्पना कीजिये कि पचास हज़ारों की बस्ती वाले शहर में राजधानी से एक व्यक्ति आता है (३५, २१), मान लीजिये कि आदिवासी केवल तीन ही गिनती करना जानता है...(३५, ८९), मान लीजिये कि वह स्वयं अपनी दाढ़ी बनाता है (३५, ९९);

(ग) निर्दिष्ट व्यापार की छाया, जो कि बताती है कि व्यापार का कर्ता व्यापार किन्हीं खास निर्दिष्ट सिद्धांतों आदि के बल पर करता है और व्यापार स्वयं एक प्रकार का आवश्यकताबोधक प्रकृति अपना लेता है और वह अमूर्त होता है लेकिन आवर्ती नहीं, उदाहरणार्थ : ऐसे प्रबंध के अभाव में प्राप्ति-क्लर्क स्वयं ऐसे पत्रों की प्राप्ति स्वीकार करके, उन्हें उक्त अफ़सर के पास भेजने की व्यवस्था करता है (१५५, ३४), पत्र खोलने के पश्चात्...प्रधान क्लर्क प्राप्त पत्रों को रजिस्ट्री क्लर्क के पास भेज देता है जो उन पत्रों का ब्यौरा करके एक अवाक् रजिस्टर में लिख देता है (१०१, ४६०)।

वर्तमान अपूर्णतावाची वास्तविक मूर्त व्यापार को व्यक्त करता है जो कि उक्ति के क्षण के समय होता है, लेकिन उक्ति का क्षण अलग-अलग लम्बाई का हो सकता है। व्यापार उक्ति के समय के साथ सौ फ़ीसदी मेल खा सकता है और व्यापार के क्षण की सीमा के बाहर भी हो सकता है जो उक्ति से पहले शुरू हो सकता है और उसके बाद भी चल सकता है। इस कारण वास्तविक वर्तमान अपूर्णतावाची भी कई प्रकारों में बाँटा जा सकता है :

(१) वास्तविक जो कि उक्ति के क्षण के साथ मेल खाता है अर्थात् जो कि

किसी विशेष समय पर होता है, उदाहरणार्थ : लड़को, क्यों भागते हैं ? (६६, ७३), क्यों घबराते हो, क्यों चिल्लाते हो (८०, ७४), जल्दी पानी ला। मैं गर्मी से जली जाती हूं (५, ६६), मैं बोलता हूं,...अपने मुल्क को लौट जाओ (२८, १२६), मैं तुम्हें गिरफ़्तार करता हूं (८०, ८३)।

(२) वास्तविक विस्तारित व्यापार, जो न केवल उक्ति के क्षण के साथ मेल खाता है, बल्कि ज़्यादा व्यापक काल का अर्थ रखता है, वह उक्ति के क्षण से पहले शुरू हो सकता है, उक्ति के क्षण के समय चल सकता है और उक्ति के क्षण के बाद समाप्त हो सकता है। व्यापार एक नित्यताबोधक तथा निरंतरताबोधक प्रक्रिया जैसा होता है जो कि वास्तव में मौजूदा समय की दृष्टि से असीमित या सीमित होती है। वास्तविक वर्तमान अपूर्णतावाची का यह प्रकार बहुत ही कम पाया जाता है, उदाहरणार्थ : मैट्रिक में पढ़ता है और आठवीं श्रेणी का प्रश्न नहीं आता (१२, ८०), उस दिन से अब मैं आठों पहर अपनी बदनसीबी पर आँसू बहाता हूँ (२५, ३४), ग्यारह साल से मेरे घर की मुफ़्लिसी तुम्हारा इंतज़ार करती है (२६, ६४), उनके बुड्ढे वालिद खेती का काम करते-करते मरते हैं (८०, ८६)।

वास्तविक वर्तमान का यह प्रकार बहुत ही स्पष्टतः उन स्थितियों में प्रगट होता है, जबकि व्यापार काल-सूचकों के साथ-साथ घटित होता है जो कि उसकी लम्बाई की ओर संकेत करते हैं, उदाहरणार्थ : पिछले बीस साल से गाड़ी हाँकता है हीरामन (५२, ३६), इस लड़की को मैं बचपन से जानता हूं (६१, ८५), पिछले दो-तीन साल से मिस लतिका ही रहती है (५२, १०६)।

(३) वास्तविक नित्यतासूचक व्यापार, जो कि सिर्फ़ उक्ति के क्षण को प्रभावित करता है, जो कि निरन्तर और नित्य तथा बग़ैर काल की किसी भी सीमा के होता है। वास्तविक वर्तमान तथा वास्तविक विस्तारित वर्तमान के बीच में यही अन्तर है जो कि समय से बाँधा जा सकता है। वास्तविक नित्यतासूचक वर्तमान वर्तमान के काल-अर्थ को भरता है और व्यापार के कर्ता के नित्यता-सूचक प्रक्रियात्मक लक्षण की ओर संकेत करता है, उदाहरणार्थ : ...शंकरगढ़ का थाना विंध्याचल की पर्वतमाला की गोद में इस ज़िले के सुदूर भाग की रक्षा करता है (८०, ६), दुर्ग का जो परकोटा समुद्र की ओर पड़ता है,...(४, ५),...वह पिछवाड़े की उस सड़क पार आयी जो दरियागंज में शहर के पुराने परकोटे के किनारे-किनारे जाती है (२६, १४), आगे कुछ दूर वह नाला था जो इस्माईलपुर ग्राम के पास से बहता है (८०, ६६)।

अवास्तविक तथा वास्तविक वर्तमान अपूर्णतावाची काल के बीच वर्तमान अपूर्णतावाची का एक और प्रकार है जो, एक तरफ़ समय में पूर्णतः असीमित होता है, और दूसरी तरफ़ मूर्त प्रक्रियात्मक व्यापार को व्यक्त करता है। वर्तमान अपूर्णतावाची के इस प्रकार को सप्रतिबद्ध हम **वर्तमान रूपबद्ध** कहेंगे चूँकि वह

बहुत ही विशेष सीमाओं से बाँधा जा सकता है और रूपबद्धतः वह वर्तमान के अर्थ से सम्बन्ध रखता है। इस प्रकार के निम्नलिखित अवच्छेद हैं :

(१) **'नाटक-सम्बन्धी' वर्तमान**—जो कि किसी नाटक रचना के लिए लेखक की टिप्पणियों द्वारा व्यक्त होता है। 'नाटक-सम्बन्धी' वर्तमान का व्यापार संगत नाटक-सम्बन्धी व्यापार के क्षण के साथ मेल खाता है और वास्तव में समय निरपेक्ष होता है, चूँकि रचना के काल से सम्बन्ध रखता है लेकिन किसी वास्तविक वस्तुगत काल के साथ सम्बन्ध नहीं रखता, अर्थात् वर्तमान के इस प्रकार को सापेक्ष काल रूप माना जा सकता है, उदाहरणार्थ : अशोक अन्दर जाकर अपने स्थान पर बैठ जाते हैं। सब लोग खड़े होकर उनका स्वागत करते हैं (३८, ५६), बाली राम के बाण से गिर जाता है। राम बाली के पास चले जाते हैं (१३८, २६), पंडित नेहरू चौंक कर भगवानदीन की तरफ देखते हैं और बुद्ध की मूर्ति से हाथ हटाकर पलट जाते हैं और खुली खिड़की में खड़े हो जाते हैं और आसमान में खिले हुए तारों की तरफ देखने लगते हैं (२६, ४६)।

(२) **कथा-सम्बन्धी वर्तमान**—जो कि प्रयोग में तब आता है जब (क) किसी साहित्यिक रचना के विषय-वस्तु के बारे में बताते हैं, उदाहरणार्थ : फिर जासूस आते हैं, वकील आते हैं और मुजरिम गिरफ़्तार होता है, उसे सजा मिलती है (६४, ५३-५४); (ख) किसी स्थिति के बारे में वर्णन होता है जो कि वास्तव में नहीं भी हो सकती, उदाहरणार्थ : ...ऐसी खोई-खोई-सी सुन्दरी बहुत शीघ्र किसी ठीक प्रकार के, लेकिन किसी धनी बिजनेसमैन के ध्यान के केन्द्र बन जाती। छः महीने बाद वह उससे विवाह कर लेती है और चित्रकार 'ओल्ड जोन' के किसी कोने में काफ़ी का एक तल्ख़ प्याला पीता है और...अपने भाग्य को कोसता है (२८, १५५); (ग) गणित या तर्कशास्त्र की किसी सत्यता की परिकल्पना करने के लिए, उदाहरणार्थ :...हम कागज़ का एक वर्गाकार टुकड़ा लेते हैं और इसे ६४ लघु वर्गों में विभाजित करते हैं (३५, ४६)।

रूपबद्ध वर्तमान के इस प्रकार की ख़ास विशेषता व्यापारों की क्रमबद्ध श्रृंखला है जो कि एक के बाद दूसरा आता है। वे एक तरह से घटनाओं के किसी क्रम पर प्रकाश डालते हैं। ये व्यापार उक्ति के क्षण के साथ किसी भी प्रकार सम्बन्ध नहीं रखते, बल्कि समस्त वर्णन या इसके किसी विशेष अंश के साथ काल-अर्थ से सम्बन्ध रखते हैं। उक्ति के क्षण के साथ वे सिर्फ़ उन ऊपर उल्लेखित व्यापारों की वास्तविक कार्यान्विति के समय ही मेल खाते हैं।

(३) **उक्ति-सम्बन्धी वर्तमान**—किसी लेखक के कथन का वर्णन करता है, उदाहरणार्थ : गीता कहती है कि मर कर भी तुम मरते नहीं (१२२, ४५), इस अध्याय के अन्त में भगवान कहता है...(१२२, ४७), अर्जुन स्वानुभव से कहता है कि विराट स्वरूप देखने की इच्छा न करो (१२२, १४४)।

रूपबद्ध वर्तमान का यह प्रकार सिर्फ़ किसी कथन, विचार, स्थिति की ओर संकेत करता है, लेकिन व्यापार की उक्ति के क्षण के साथ किसी भी प्रकार नहीं मिलाता। सिर्फ़ यही ज़रूरी है कि किसी दिये गये वर्तमान क्षण में कथन का अस्तित्व है, चाहे कथन कितने ही पुराने भूतकाल से सम्बन्ध रखता है। इसलिए यहां वर्तमान काल अर्थ की पूर्णतावाची छाया से जटिल हो जाता है।

वर्तमान अपूर्णतावाची के रूपों के प्रत्यक्ष प्रयोगों के साथ-साथ जब व्यापार अपने कई अर्थों में वर्तमान काल के अर्थ की सीमा के बाहर नहीं होता, वर्तमान अतूर्णतावाची के रूपों का लाक्षणिक प्रयोग भी होता है जब कि रूप के काल अर्थ और उसके उक्ति के क्षण के बीच भिन्नता होती है। वर्तमान अपूर्णतावाची के लाक्षणिक समयनिरपेक्ष प्रयोग के भी अपने प्रकार होते हैं।

(१) **ऐतिहासिक वर्तमान**—जो कि भूत काल के व्यापार को व्यक्त करने के काम आता है। व्यापार चूँकि क्षणिक होता है, इसीलिए वह बहुत भावपूर्ण होता है। व्यापार की क्षणिकता जैसे कि उसे उक्ति के साथ मिलाती है या उक्ति के क्षण के करीब कर देती है। उदाहरणार्थ : जब केशव ने आँखें खोलीं तो क्या देखता है कि हार ने अपना स्थान बदल लिया है (२८, ११०), हातिम आवाज़ सुनते ही उस ओर को चल पड़ा। कुछ दूर जाकर देखता क्या है कि एक खूबसूरत नौजवान... रो रहा है (२५, २०), देखने लगी कि लोग क्या चन्दा देते हैं। अधिकांश लोग दो-दो, चार-चार आना ही दे रहे थे (६९, ८२)।

(२) **वर्तमान भविष्यत् काल के अर्थ में**—तब इस्तेमाल होता है जब कि व्यापार को उक्ति के क्षण के बाद व्यक्त करना चाहते हैं। यहां भविष्यत् काल के शाब्दिक सूचक भी हो सकते हैं, उदाहरणार्थ : मैं कल ही...साइनबोर्ड बनवाये डालता हूं (१, १५७), कल दादा को कहला भेजना है कि मैं जाता हूं (६९, ७७), अब हटता है कि और लेगा ? (६९, ६२), जाओ, सीधे, नहीं तो मैं शोर मचाती हूं (१०७, १२५), मैं आधे घंटे में आता हूं फिर खाके कीर्तन में जाऊँगा (१, १२९), कल मैं हरी दादा के प्रेस में जाकर फ़िल्म-कम्पनी के पैड और रसीद छपवा लेता हूं और काम चालू कर देता हूं (२८, १२७)।

## अपूर्णतावाची आभ्यासिक वर्तमान

यह काल रूप प्रथम कृदन्त के विकारी रूपों तथा संयुक्त सहायक क्रिया के विकारी-तिङन्ती रूपों के मेल से बनता है। इसलिए अपूर्णतावाची आभ्यासिक वर्तमान पुल्लिंग के दो लैंगिक रूपों (मुख्य और सहायक क्रिया), स्त्रीलिंग के एक लैंगिक रूप (मुख्य और सहायक क्रिया) और 'है' क्रिया के चार तिङन्ती रूपों द्वारा व्यक्त होता है।

| | |
|---|---|
| मैं लिख-ता (-ती) हो-ता (-ती) हूं | हम लिख-ते (-ती) हो-ते (-ती) हैं |

| | |
|---|---|
| तू लिख-ता (-ती) हो-ता (-ती) है | तुम लिख-ते (-ती) हो-ते(-ती) हो |
| | आप लिख-ते (-ती) हो-ते (-ती) हैं |
| वह लिख-ता (-ती) हो-ता (-ती) है | वे लिख-ते (-ती) हो-ते (-ती) हैं। |

जैसा कि ऊपर उल्लेखित किया गया है यह रूप सीमित संकुचित प्रसंग से सम्बन्ध रखता है और बहुत ही कम पाया जाता है। वह मूर्त अकेले व्यापार को व्यक्त करता है, आम तौर पर वह समय में सीमित होता है। अपूर्णतावाची वर्तमान की तुलना में इस काल का रूप अकेले व्यापार की अभ्यासता पर ज़ोर देता है। यह रूप आम तौर पर काल के आश्रित वाक्यों में आता है, उदाहरणार्थ : जब लोग चाय पीते हैं वह बिना बुलाये पहुंच जाती है...(V, जनवरी, १९६३, ८५), जब और रईस मीठी नींद के मज़े लेते होते हैं, तो आप नदी के किनारे ऊषा का शृंगार देखते हैं (६८, १७)।

## पूर्णतावाची वर्तमान

यह काल रूप द्वितीय कृदन्त के विकारी रूपों (कर्तृ-सम्बन्धी और कर्म-सम्बन्धी रचना में) या द्वितीय कृदन्त के एक रूप में (भाववाचक रचना में) तथा 'है' क्रिया के तिङन्ती रूपों (कर्तृ-सम्बन्धी और कर्म-सम्बन्धी रचना में) या 'है' क्रिया के एक रूप (भाववाचक रचना में) के मेल से वनता है। इस तरह पूर्णतावाची वर्तमान पुल्लिग के दो विकारी लैंगिक रूपों और स्त्रीलिंग के एक विकारी लैंगिक रूप (कर्तृ-सम्बन्धी और कर्म-सम्बन्धी रचना में) या पुल्लिग के एक विकारी लैंगिक रूप (भाववाचक रचना में) और (क) 'है' क्रिया के चार तिङन्ती रूपों (कर्तृ-सम्बन्धी रचना में), (ख) 'है' क्रिया के दो तिङन्ती रूपों (कर्म-सम्बन्धी रचना में) और (ग) 'है' क्रिया के अविकारी रूप (भाववाचक रचना में) से व्यक्त होता है।

### कर्तृ-सम्बन्धी रचना

| | |
|---|---|
| मैं आया (आयी) हूं | हम आये (आयी) हैं |
| तू आया (आयी) है | तुम आये (आयी) हो |
| | आप आये (आयी) हैं |
| वह आया (आयी) है | वे आये (आयी) हैं |

### कर्म-सम्बन्धी रचना

एकवचन

मैं
तू
उस

हम ने पत्र (चिट्ठी) लिखा (लिखी) है
तुम
आप
उन्होंने

बहुवचन

मैं
तू
उस
हमने पत्र (चिट्ठियां) लिखे (लिखी) हैं
तुम
आप
उन्हों

## भाववाचक रचना

### एकवचन तथा बहुवचन

मैं
तू
उस
हमने पत्र-पत्रों को (चिट्ठी-चिट्ठियों को) लिखा है
तुम
आप
उन्हों

पूर्णतावाची वर्तमान जिसका दूसरा नाम भी होता है—आसन्न भूत—विगत व्यापार को व्यक्त करता है जिसका परिणाम ज़्यादा बाद के काल अर्थ यानी वर्तमान काल में वास्तविक होता है। पूर्णतावाची वर्तमान के दोनों संयुक्त हिस्से व्यापार को अपने काल की छाया देते हैं, कृदन्त भूतकाल का अर्थ व्यक्त करता है, क्रिया वर्तमान काल का अर्थ देती है। तब 'है' क्रिया इस बात का संकेत देती है कि परिणामी अवस्था जो भूतकाल में उत्पन्न हुई थी, वर्तमान काल में भी है। स्वयं व्यापार (क) खत्म हो सकता है और वर्तमान काल में सिर्फ़ उसका परिणाम होता है और (ख) समाप्त नहीं भी हो सकता है, जो कि भूतकाल में शुरू हुआ था और पूर्णता को प्राप्त किया, व्यापार वर्तमान काल में भी होता है (वह बैठा है—व्यापार शुरू हुआ और भूतकाल में पूर्णता को प्राप्त किया, लेकिन प्रक्रिया समाप्त नहीं हुई)।

पूर्णतावाची वर्तमान के व्यापार की समाप्ति द्वैध हो सकती है। एक तरफ़

तो व्यापार की समाप्ति उक्ति के क्षण का सहारा ले सकती है, चाहे वास्तव में कभी भी व्यापार पूर्ण हुआ हो, अर्थात व्यापार वर्तमान क्षण के साथ किसी भी अन्तराल द्वारा टूट नहीं सकता, उदाहरणार्थ : 'वह उसके साथ कलकत्ता गयी है (३६, ७६)'—यहां पूर्णतावाची व्यापार के परिणाम से इस बात का संकेत मिलता है कि 'वह कलकत्ता में है', यही बात हमारे वाक्य द्वारा भी व्यक्त हो सकती थी : 'वह कलकत्ता में है।' ; 'यह तीतर लायी हूं' (१०३, १६२)—तीतर यहां है; 'हाँ-हाँ अभी थोड़ा पहले मेरे साथ ही आयी है' (१, ६७)—वह यहाँ है; 'कहाँ है तुम्हारा बाबा ?'—'खेत पर गया है' (३६, २२)। वर्तमान काल के साथ निकट सम्बन्ध स्पष्टतापूर्वक संयुक्त नामिक विधेय में होता है जिसमें पूर्णतावाची योजक होता है, उदाहरणार्थ : '...वह जोश अब ठंडा हो चला है' (६६, ८६)—जोश ठंडा है; 'चित्र लगभग तैयार हो गया है' (२६, ४७)—चित्र तैयार है; 'वह तो गांव में है। और जवान भी हो गया है...' (२६, ४३)—जवान भी है।

उक्ति के क्षण तक व्यापार की असमाप्ति अपूर्ण व्यापार के विभिन क्रिया-विशेषणों जैसे आज, आज-कल, अब, अभी, अकसर, कभी, हमेशा, सदैव, और काल क्रियाविशेषणों द्वारा समर्थित होती है। ये काल क्रियाविशेषण 'में' और 'से' परसर्ग समेत संज्ञाओं द्वारा व्यक्त होते हैं (पक्ष-सम्बन्धी क्रियाओं की हालत में परसर्ग 'तक' समेत), उदाहरणार्थ : ...तुमने आजकल घर में क्या उपद्रव मचा रखा है ? (६६, १४६), आज चाचा ने मुझे मारा है (७५, १५२),...लेकिन अब हमने गुलामी की जंज़ीरों को तोड़ने का फ़ैसला कर लिया है (६६, ३५), अभी तेरा काम समाप्त कहां हुआ है ! (७५, १४६), इस मूल्य का ज्ञान कब-से हुआ है ?—जब से तुम मुझे छोड़कर आयी हो (३६, ११०), अकसर ज़मींदारों ने तो लगान वसूल करने से इंकार कर दिया है। अब पुलिस उनकी मदद पर भेजी गयी है (६६, १०), अदालत का फ़ैसला कभी दोनों फ़रीकान ने पसन्द किया है कि तुम्हीं करोगे ? (६६, ७६),...इस तरह के लोगों के प्रति नोला ने हमेशा अपनी विरक्ति ही दिखायी है (११२, ११), तुमने सदैव मेरी आज्ञाओं का पालन किया है, इस समय निराश न करना...(६६, ६३), एक महीने से देश की हालत बदल गयी है (६६, १७३), कितने प्राइवेट कालिज पिछले चन्द महीनों में खुले हैं...(११२, ३३), बाबा आज बहुत देर तक साधु से बातें करता रहा है (३६, ८)।

दूसरी तरफ़ व्यापार की कालावधि जिसमें पूर्णतावाची वर्तमान हो रहा है उक्ति के क्षण तक समाप्त हो सकती है। इस स्थिति में पूर्णतावाची वर्तमान का परिणामी अर्थ कम हो जाता है और पूर्ववर्तिता का अपना अर्थ प्रथम स्थान पर आता है। 'है' सहायक क्रिया इस बात की ओर संकेत करती है कि व्यापार जो कि उक्ति के क्षण से पहले समाप्त हो गया है, वर्तमान अर्थ के साथ कोई सम्बन्ध रख सकता है। यहां, आम तौर पर, पूर्णतावाची वर्तमान में पूर्ण काल के क्रिया-

विशेषण आ सकते हैं, उदाहरणार्थ : आयशा को लग रहा था मानो वह घटना कल ही हुई है (५८, १७), पिछले वर्ष उसके घर वाले का स्वर्गवास हो गया है और उसने दूसरा विवाह कर लिया है (३६, २३), वहां पहुँचा तो मालूम हुआ कि पाँच मिनट पहले निकल गये हो (१३, ६४)।

यहां यह कहना उचित होगा कि आधुनिक हिन्दी में पूर्णतावाची वर्तमान और अंग्रेज़ी भाषा के 'प्रैज़ेंट परफेक्ट' में यही अन्तर है। अंग्रेज़ी में पूर्ण समय के क्रियाविशेषण का प्रयोग संभव नहीं है।

असमापक क्रियाओं में, विशेषकर जब स्थैतिक क्रियाएं हों, वर्तमान में अवस्था का अर्थ मुख्य है जिसे व्यापार का कर्ता (या कर्म) इसलिए अनुभव करते हैं कि व्यापार ने उक्ति के क्षण से पहले पूर्णता तो प्राप्त कर ली है, लेकिन उक्ति के समय भी चल रहा है। इस प्रकार अगर पूर्ण व्यापार की हालत में व्यापार-प्रक्रिया होती है तो वहां व्यापार-अवस्था होती है जो कि व्यापार की कार्यान्विति के परिणामस्वरूप पैदा होती है।

इस तरह आधुनिक हिन्दी में पूर्णतावाची वर्तमान का व्यापार (क) उक्ति के क्षण में टेक ले सकता है अर्थात् उसको एक तरफ़ तक ही पहुंच सकता है और दूसरी तरफ़ जारी नहीं रह सकता, जो कि अपूर्णतावाची वर्तमान की हालत में होता है; (ख) उक्ति के क्षण तक समाप्त हो सकता है, और व्यापार की समाप्ति और उक्ति के क्षण के बीच एक अन्तराल रह सकता है, जिसकी शुरुआत पूर्ण काल के क्रियाविशेषण द्वारा व्यक्त की जाती है और (ग) परिणामी अवस्था की हैसियत से हो सकता है जो कि व्यापार की उक्ति के क्षण तक पूरी होती है। परिणामस्वरूप पूर्णतावाची वर्तमान के निम्नलिखित अर्थ हो सकते हैं : (१) पूर्णतावाची (शुद्ध पूर्ण वर्तमान), (२) समावेशी अर्थात् जिसमें उक्ति का क्षण भी शामिल हो और (३) पूर्णकालिक, जो कि पूर्व० (अ) +, सी० +, पूर्ण० +, अके० + चिह्नों द्वारा व्यक्त होता है।

ये चिह्न अलग-अलग स्तर पर पूर्णतावाची वर्तमान के अर्थ देते हैं। ऊपर उक्ति के क्षण के साथ इस काल के रूप के तीन प्रकारों के सम्बन्ध के बारे में उल्लेख किया गया था और पूर्णकालिक अर्थ में पूर्णतावाची छाया के कम होने के बारे में भी बताया गया था। यहां व्यापार की संभव पौनः पुनिकता के बारे में और कहना चाहिए जो कि एकल पृथक्कृत व्यापारों का 'गुच्छा' होता है। पौनः पुनिकता तब प्रकट होती है जब अलग-अलग पौनः पुन्यवाचक क्रियाविशेषण होते हैं (अकसर, हमेशा, कई बार आदि), या उद्देश्य या प्रधान कर्म होता है जो कि बहुवचन में आते हैं, उदाहरणार्थ : कलकत्ता तो कई बार गया हूं (३६, १३३), अकसर ज़मींदारों ने तो लगान वसूल करने से इंकार कर दिया है (६९, १०),...इस तरह के लोगों के प्रति नीला ने हमेशा अपनी विरक्ति ही दिखायी है (११२, ११),

उन्होंने बरसों तुम्हारा नमक खाया है, तुम्हारी रोटियां तोड़ी हैं (२६, ५५), नारायण ने तुमको बच्चे दिये हैं...(६६, १७०), इस अपनी बीमारी में भी मैंने निरन्तर हास्य-व्यंग्य की कहानियां लिखी हैं (१२, ६)।

आइये अब पूर्णतावाची वर्तमान के सब अर्थ क्रमानुसार देखें :

(१) **शुद्ध पूर्णतावाची अर्थ** जो कि खुद प्रत्यक्ष परिणामी और अप्रत्यक्ष परिणामी में बांटा जा सकता है।

प्रत्यक्ष परिणामी अर्थ में व्यापार के कर्ता या कर्म के प्रत्यक्ष परिवर्तन के साथ सम्बन्ध रहता है, अर्थात् व्यापार करने के परिणामस्वरूप कर्ता या कर्म की एक नयी अवस्था हो जाती है, उदाहरणार्थ : ऐसा जान पड़ा मानो उसके जन्म-जन्मान्तर के क्लेश मिट गये हैं; वह चिन्ता और माया के बन्धनों से मुक्त हो गया है (६६, ६०), मैं समझता हूं कि सस्ते में छूट गये हैं (३६, १६), समझू ने बैल को जान-बूझकर मारा है (६६, १६३), उसने एक शहर बसाया है...(२५, ५), मुझे तो सख़्त चोट आयी है।

कर्ता या कर्म की अवस्था के परिवर्तन के साथ नयी स्थिति भी उत्पन्न हो सकती है जो कि व्यापार के पूरा होने के परिणामस्वरूप होती है। उदाहरणार्थ : लेकिन औद्योगिक क्रान्ति के बाद पिछले डेढ़ सौ वर्षों में स्थिति पूर्णतः बदल गयी है (II, २०-५-१९६८, ५), भारत के श्रमिक संघों की दशा में गत वर्षों में सुधार की अपेक्षा निरन्तर पतन हुआ है। श्रम संघों में सुदृढ़ता की अपेक्षा कमज़ोरी आती गयी है (II, २०-५-१९६८, २०)।

पूर्णतावाची वर्तमान का प्रत्यक्ष परिणामी अर्थ मुख्यतः मूर्त शारीरिक प्रभाव की क्रियाओं के ऊपर तथा स्थानान्तरणवाचक, गतिवाचक, हरणवाचक व हस्तगणवाचक, वचनसूचक तथा अस्वीकारसूचक, आरंभवाचक तथा समापक-वाचक क्रियाओं के ऊपर आधारित होता है, उदाहरणार्थ : दुष्ट ने उनकी ओर बन्दूक तानी है (६६, १७८), क्या किया तुमने उसको ? उसका शव नदी में बहा दिया है (३६, ११),...वह किसी ऊंचे मीनार पर चढ़ गये हैं (६६, ११४), आपके दीवान साहब ने धन्धा बढ़िया पकड़ा है (१४७, ४६), पाजेब उसने छून्नू को दी है (४४, ५४), अम्मा ने आज आरम्भ किया है (६६, ८४)।

अप्रत्यक्ष परिणामी अर्थ कर्ता या कर्म की नयी स्थिति के उत्पन्न होने से सम्बन्धित नहीं है। यहां व्यापार कर्ता या कर्म द्वारा नयी सूचना, नया अनुभव अपनाने से सम्बन्धित है जो कि वर्तमान में भी अपना अर्थ सुरक्षित रखते हैं। इसी कारण यहां मुख्यतः चिन्तनवाचक क्रियाएं, भाव-चेतनावाचक, कथनवाचक और विभिन्न सम्बन्धवाचक क्रियाएं होती हैं, उदाहरणार्थ : आख़िर कुछ सोचा है, काम कैसे चलेगा (६६, २६), मैंने एक डरावना सपना देखा है (१०३, ५३), जैसा कि मैंने आपकी बातों से जाना है...(१४७, ४५), किसी ने बहुत ठीक कहा है कि...

(६४, ३७), मैं समझ गयी हूं कि मेरा यह व्यवहार ठीक नहीं है (३६, ९१), सुना है कि तुम्हारी आँखें खराब हो गयी हैं (३६, १०२), ...किसी ने इधर चार महीने से पेट भर रोटी खायी है ? (६९, ६९), दस्तयेव्स्की ने भी उपन्यासों के अतिरिक्त कहानियां लिखी हैं...(६४, २३), तुमने कहां तक उसे चाहा है ? (२८, १४५), तुम सब भाइयों को मैंने बहुत सताया है (६९, ७७)।

(२) **समावेशी अर्थ** जो कि मुख्यतः दशासूचक क्रियाओं के साथ सम्बन्धित होता है जो कि वर्तमान काल में कर्ता की दशा को बताती हैं जो कि व्यापार की कार्यान्विति के परिणामस्वरूप पैदा हुई है, उदाहरणार्थ : हम इस बार पहले से बैठे हैं (१७, २२२), हम 'ग्रेंड होटल' में ठहरे हैं (३६, ६४), मैं सारी रात जागा हूं (५४, ४९), डाकू जाग उठे हैं हर ओर (१५६, १९), अब मैं भी थक गया हूं (२९, ५९), सोचा शायद तू सो गया है (१०३, १९२), पराए मर्दों के साथ सोयी हूं (१०३, १४१), ज़रा आकाश की तरफ़ देखो, कैसी आँधी उठी है (७५, ८७), सुखराम घायल लेटा है (१०३, २१९)।

समावेशी अर्थ विशेषकर तब स्पष्टतः प्रकट होता है, जब पूर्णतावाची वर्तमान के रूपों के साथ वर्तमान के अपूर्णतावाची तथा संतत रूप इस्तेमाल होते हैं, उदाहरणार्थ : सिकन्दर का सेनानी फ़िलिपोस झेलम के किनारे बैठा है और अभी तक सिकन्दर के नाम पर राज्य कर रहा है (१५६, ३१)।

फिर भी पूर्णतावाची वर्तमान के इस अर्थ को शुद्ध वर्तमानकाल के साथ समान नहीं मानना चाहिए चूँकि अपूर्णतावाची वर्तमान के रूप मुख्यतः आवर्ती, नियमित, सामान्यकृत व्यापार को व्यक्त करते हैं, उदाहरणार्थ : ...वे बोलते कैसे हैं, बैठते कैसे हैं, चलते कैसे हैं, यह सब मुझे बताएं (१२२, ३०), ग्यारह बजे जब कुर्सी पर बैठता हूं तो शाम के छः बजे तक सिर उठाने की फ़ुर्सत नहीं मिलती (५९, १९)।

मूर्त एकल व्यापार को व्यक्त करते समय अपूर्णतावाची वर्तमान के रूप व्यापार-प्रक्रिया को भी व्यक्त करते हैं, लेकिन व्यापार-दशा नहीं, उदाहरणार्थ : थोड़ी देर में ख़ाली हो जायेगी तब तक मैं आपके पास बैठ जाता हूं (५९, २७)।

इस तरह, अपूर्णतावाची वर्तमान के रूप परिणामी दशा को व्यक्त नहीं करते चूँकि उनका व्यापार अपूर्ण होता है और पूर्णतः विकसित नहीं हो पाता।

(३) **पूर्णकालिक अर्थ** जो कि स्वयं पूर्णकालिक तथा पूर्णभूत में बाँटा जा सकता है।

पूर्णकालिक अर्थ आम तौर पर पूर्णकाल के क्रियाविशेषणों की उपस्थिति में प्रकट होता है, उदाहरणार्थ : कल मां और बाबा में बातचीत हुई है (३६, ८), अभी परसों घी आया है ! (६९, १४४), पिछले वर्ष उसके घर वाले का स्वर्गवास हो गया है और उसने दूसरा विवाह कर लिया है (३६, २३), भारत सरकार ने

जुलाई १९७२ में...नये मार्गदर्शक सिद्धान्त जारी किये हैं (१५३, २०), इसे कल ही स्कूल में डाला है (१०९, ८२)।

पूर्णतावाची वर्तमान का पूर्ण भूत का अर्थ उन स्थितियों में होता है, जब उसका व्यापार दूसरे सम्पन्न व्यापार का पूर्ववर्ती होता है, उदाहरणार्थ : वहां पहुँचा तो मालूम हुआ कि पाँच मिनट पहले निकल गये हो (१३, ६४), रामनाथ को कलकत्ता आये हुए दो महीने से ऊपर हो गये हैं (६५, १५५), मैंने थोड़ी ही देर पहले उन्हें देखा है (१५६, ४३), मुकाबला कीजिये—थोड़ी ही देर पहले मैंने उन्हें घोड़े पर जाते देखा था (१५६, ४५)।

'होना' क्रिया संयोजक क्रिया की हैसियत से पूर्णतावाची वर्तमान में लक्षण की पूर्णता का संकेत देती है जो कि नामिक हिस्से में होता है। इस तरह लक्षण की पूर्णता उक्ति के क्षण के लिए परिणामी अर्थ रखती है अर्थात् पूर्णतावाची योजक मुख्यतः समावेशी अर्थ व्यक्त करता है, उदाहरणार्थ : बाबूजी विश्वास संसार से न लुप्त हुआ है (६९, १०१), स्त्री, पुरुष के लिए उत्पन्न हुई है (७५, १०५),...यह गढ़ा तब जाकर तैयार हुआ है (६९, १९२),...ग्यारह लोग जख़्मी हुए हैं (IV, १८-६-१९७४)।

## पूर्णतावाची आभ्यासिक वर्तमान

यह काल रूप द्वितीय कृदन्त के विकारी रूप तथा संयुक्त वर्तमान सहायक क्रिया के विकारी-तिङन्ती रूपों के मेल से बनता है। यहां कृदन्तों और 'है' क्रिया के रूपों के साथ (संयुक्त सहायक क्रिया में) वही परिवर्तन होता है जो कि पूर्णतावाची वर्तमान में होता है :

**कर्तृ-सम्बन्धी रचना**

| | |
|---|---|
| मैं बैठा (-ठी) हो-ता (-ती) हूं | हम बैठे (-ठी) हो-ते (-ती) हैं |
| तू बैठा (-ठी) हो-ता (-ती) है | तुम बैठे (-ठी) हो-ते (-ती) हो |
| | आप बैठे (-ठी) हो-ते (-ती) हैं |
| वह बैठा (-ठी) हो-ता (-ती) है | वे बैठे (-ठी) हो-ते (-ती) हैं |

**कर्म-सम्बन्धी रचना**

एकवचन

मैं
तू
उस
हम ने पत्र (चिट्ठी) लिखा (लिखी) होता (होती) है

तुम
आप
उन्हों

बहुवचन

मैं
तू
उस
हम ने पत्र (चिट्ठियां) लिखे (लिखी) होते (होती) हैं
तुम
आप
वे

**भाववाचक रचना**

एकवचन तथा बहुवचन

मैं
तू
उस
हम ने पत्र-पत्रों को (चिट्ठी-चिट्ठियों को) लिखा होता है
तुम
आप
उन्हों

यह काल रूप सीमित विशेष प्रसंग से सम्बन्ध रखता है और बहुत ही कम पाया जाता है। यह एकल पृथक्कृत व्यापारों के 'गुच्छे' को व्यक्त करता है जिसकी निर्धारित और अनिश्चित कालान्तरों में पुनरावृत्ति होती है। चूँकि यहां आमतौर पर दशासूचक क्रियाएं होती हैं, इसलिए इस रूप के लिए मुख्यत: समावेशी अर्थ स्वाभाविक है, उदाहरणार्थ: संध्या के समय इतनी भीड़ होती है कि एक-एक कुर्सी पर दो-दो व्यक्ति बैठे होते हैं (७, ७४), मगर ताड़ और खजूर का यह रस यदि सूर्योदय के पहले ही पिया जाये, जबकि उसमें फेन नहीं आया होता तो बड़ा उपकारी होता है (५०, ५७-५८), वे इलाहाबादी सोसायटी के नवीन समाचारों से भरे होते हैं (६६, ६५), कई बार ऐसा होता है कि उन्होंने चाय पर कुछ मित्र बुला रखे होते हैं, पर वह मैटिनी देखने चला जाता है (६, ६४), पर ऊपर उसकी डालें फैली होती हैं (५०, ६४)।

जव द्वितीय कृदन्त के पक्ष-सम्बन्धी रूपों को ('चुकना' रंजक क्रिया के साथ) इस्तेमाल करते हैं तो सापेक्ष पूर्ववर्तितता की छाया मुख्य बन जाती है, उदाहरणार्थ:

...और जब आधे घंटे बाद अचार लेकर लौटती है, तो मैं उठ चुका होता हूं... (६, ८५), लेकिन फल सड़ चुके होते हैं (६, ८५),...हिम युग तब आरम्भ होता है कि जब उत्तरी ध्रुवीय महासागर की बर्फ़ पिघल चुकी होती है (८८, ८०)।

## पूर्णतावाची स्थैतिक वर्तमान

यह काल रूप द्वितीय कृदन्त के विकारी रूपों तथा संयुक्त पूर्णतावाची सहायक क्रिया के विकारी-तिङन्त रूपों के मिलन से बनता है। यहां कृदन्तों और 'है' क्रिया के रूपों के साथ (संयुक्त सहायक क्रिया में) वही परिवर्तन होते हैं जो कि पूर्णतावाची वर्तमान में होते हैं:

### कर्तृ-सम्बन्धी रचना

| | |
|---|---|
| मैं आया (आयी) हुआ (हुई) हूं | हम आये (आयी) हुए (हुई) हैं |
| तू आया (आयी) हुआ (हुई) है | तुम आये (आयी) हुए (हुई) हो |
| | आप आये (आयी) हुए (हुई) हैं |
| वह आया (आयी) हुआ (हुई) है | वे आये (आयी) हुए (हुई) हैं |

### कर्म-सम्बन्धी रचना

एकवचन

मैं
तू
उस
हम ने एक आदमी (एक औरत) रखा (रखी) हुआ (हुई) है
तुम
आप
उन्हों

बहुवचन

मैं
तू
उस
हम ने दो आदमी (दो औरतें) रखे (रखी) हुए (हुई) हैं
तुम
आप
उन्हों

## भाववाचक रचना

एकवचन तथा बहुवचन

मैं
तू
उस
हम ने आदमी-आदमियों को (औरत-औरतों को) रखा हुआ है।
तुम
आप
उन्हों

पूर्णतावाची स्थैतिक वर्तमान संयुक्त नामिक विधेय का व्याकरणिक समनाम समझा जा सकता है जो कि संयुक्त द्वितीय कृदन्त तथा 'है' योजक से बनता है। इस कारण, इसके बावजूद कि यह रूप सीमित विशेष प्रसंग से सम्बन्ध रखता है, यह अकसर पाया जाता है। यह बात उन रूपों की विशेषता है जो कि कर्तृ-सम्बन्धी रचना को बनाते हैं, उदाहरणार्थ : भाई, तारासिंह भी इस मेले में आया हुआ है (V, जनवरी, १९६३, ९२),...उनकी आँखें डबडबाई हुई हैं (६६, २७५), इतनी घटा उमड़ी हुई है, किन्तु बरसने का नाम नहीं लेती (६६, २३१), दुकान खुली हुई है, दस-पांच मित्र जमे हुए हैं (६६, १६७),...संसार के कलाकार कई किस्मों में बँटे हुए हैं (७९, ३४)।

कर्म-सम्बन्धी और भाववाचक रचना को बनाने वाले रूप बहुत कम पाये जाते हैं, उदाहरणार्थ : सरकार ने कई योजनाएं जारी की हुई हैं (IX, १८.१०.१९६२), उसने मुझे रखा हुआ है (२८, १५१),...राय साहब को बहुत दिन से बिरादरी ने च्युत किया हुआ है...(३, ५४), क्या अरब देशों ने इनके प्रति विरोधी रुख़ अपनाया हुआ है? (IX, ९.७.१९७१)।

पूर्णतावाची वर्तमान के विपरीत यह रूप पूर्णतावाची और समावेशी अर्थ रखता है, व्यापार उक्ति के क्षण तक पहुंचकर कर्ता या कर्म की दशा के रूप में उक्ति के क्षण पर भी जारी रहता है। जब इस रूप का संयुक्त नामिक विधेय से सम्बन्ध होता है तो व्यापार-दशा वर्तमानकाल से सम्बन्ध रखती है।

## संतत वर्तमान

यह काल रूप संतत कृदन्त के लैंगिक विकारी रूप तथा 'है' क्रिया के तिङन्ती रूपों के मेल से बनता है। इसलिए, संतत वर्तमान पुल्लिग के दो विकारी रूप, स्त्रीलिंग के एक विकारी रूप और 'है' क्रिया के चार तिङन्ती रूपों से व्यक्त होता है :

मैं लिख रहा (रही) हूं
तू लिख रहा (रही) है

वह लिख रहा (रही) है

हम लिख रहे (रही) हैं
तुम लिख रहे (रही) हो
आप लिख रहे (रही) हैं
वे लिख रहे (रही) हैं

निषेधात्मक वाक्यों में जब सहायक क्रिया 'है' को छोड़ देते हैं तो यह रूप चार विकारी रूपों द्वारा व्यक्त होता है।

मैं नहीं लिख रहा (रही)
तू नहीं लिख रहा (रही)

वह नहीं लिख रहा (रही)

हम नहीं लिख रहे (रही)
तुम नहीं लिख रहे (रही)
आप नहीं लिख रहे (रही)
वे नहीं लिख रहे (रही)

निषेधात्मक वाक्यों में सहायक क्रियाओं का छोड़ना एक संरचनात्मक तत्व है, लेकिन जैसा कि अपूर्णतावाची वर्तमान की स्थिति में होता है, व्याकरणिक मानक नहीं है, चूंकि सहायक क्रिया रह भी सकती है, जो कि इस रूप में अपूर्णतावाची वर्तमान की अपेक्षा काफ़ी अक्सर होता है, उदाहरणार्थ : एक पैसे में लूट नहीं रहा हूं (५, १११), क्या, तुझे चैन नहीं आ रहा है? (१०३, १९६), प्यारीजी नहीं रही हैं, दिन काट रही हैं (१०३, १८१)।

इस रूप का सामान्य अर्थ सह० +, सी० +, अके० +, प्र० + चिह्नों द्वारा व्यक्त होता है। इन चिह्नों में मुख्य, बेशक, प्र० + है। अपूर्णतावाची वर्तमान के विपरीत संतत वर्तमान व्यापार को उसके प्रत्यक्ष विकास में व्यक्त करता है। तब संतत व्यापार, आमतौर पर, उक्ति के क्षण पर ही जारी रहता है, जबकि अपूर्णतावाची वर्तमान का व्यापार उक्ति के क्षण के साथ प्रत्यक्ष रूप से मेल नहीं रख सकता, उदाहरणार्थ : (क) क्या करते हैं? वीणा बजाता हूँ (२८, ३६), उनके साथ के स्वयंसेवक क्या कर रहे हैं? खड़े हैं (६९, ४५); (ख) पंडित लच्छीराम बैठे हैं। पढ़ा रहे हैं। वे किताबों से कम पढ़ाते हैं, मौखिक अधिक (१०२, २७); (ग) दो बच्चे हैं, जो स्कूल चले जाते हैं (१११, १०२), मैं कांग्रेस के जलसे में जा रही हूं (६९, २१)।

दूसरी तरफ़ संतत वर्तमान, आमतौर पर, एकल व्यापार व्यक्त करता है। यह सामान्यकृत व्यापार व्यक्त नहीं कर सकता, उदाहरणार्थ : (क) सभापति ने कहा—एक बहन इस पैसे के दाम पांच रुपये दे रही है (६९, २३)—बनिया भी दादा कहने से गुड़ देता है (५४, ५); (ख) पीढ़ियों तक बाक़ायदा यही सिलसिला चलता है...(२८, १५८)—पिक्चर चलोगी? हम सभी चल रहे हैं (१११, १०६)।

संतत वर्तमान तथा अपूर्णतावाची वर्तमान के काल अर्थ समान हो सकते हैं, जब दोनों उस व्यापार को व्यक्त करते हैं, जो कि उक्ति के क्षण के साथ मेल खाता है, उदाहरणार्थ : (क) बिजलियां कड़कती हैं और मूसलाधार वर्षा हो रही है (१११, २५); (ख) वह रो रहा है...तुम क्यों रोते हो (१०३, १८६); (ग) आप ही लोगों के भरोसे से जी रही हूं (१११, ८३)—अभी त हम तुम्हारे बालक जीते ही हैं (६६, ७६)।

इस तरह, संतत वर्तमान एक मूर्त प्रक्रियात्मक व्यापार है, जो समय में सीमित होता है और उक्ति के क्षण पर भी जारी रहता है। उक्ति के क्षण की कालावधि विभिन्न हो सकती है : (क) व्यापार उक्ति के क्षण के साथ शत-प्रतिशत मेल खा सकता है और (ख) उक्ति के क्षण की सीमा के बाहर जा सकता है, जो कि उससे पहले शुरू होकर, उक्ति के क्षण पर भी जारी रह सकता है। इसी कारण संतत वर्तमान को दो प्रकारों में बाँट सकते हैं :

(१) उक्ति के प्रत्यक्ष क्षण का वास्तविक संतत वर्तमान, उदाहरणार्थ : दूर कहीं घंटे बज रहे हैं (१०३, १४४), आख़िर कहां जा रहे हैं आप ? ज़रा आगे जा रहा हूं (७५, २२५), क्या देख रहे हो ? (१११, ६७), न मैं कुछ भी नहीं सुन रही। किन्तु वह सुन रही है—वह नहीं जो गिरीश कह रहा है, किन्तु वह जो नहीं कहा जा रहा (५२, १०४), नहीं, मां, मैं तुम्हें नहीं कह रही। मैं तो औरों की बात कर रही हूं (७५, ११६)।

(२) विस्तारित व्यापार का वास्तविक संतत वर्तमान जो न केवल उक्ति के क्षण के साथ मेल ही खाता बल्कि काफ़ी बड़े काल-अर्थ को प्रभावित करता है जिसे काल के क्रियाविशेषणों द्वारा व्यक्त किया जा सकता है और जो काल सीमाओं को रख भी नहीं सकता, उदाहरणार्थ : (क) पन्द्रह साल से तो मैं तुम्हें देख रहा हूं (१०७, ३६),...मैं अर्से से कराची में रह रहा हूं (३, ८), मैं तो कब से कह रही हूं...(१११, १०४), तेरह साल की उम्र से कर रही हूं (१११, १२०), सवा घंटे से तो वह भी देख रहा है (२८, १५४); (ख) जब यह ज़ाहिर है कि कांग्रेस सरकार से दुश्मनी कर रही है तो कांग्रेस की मदद करना सरकार के साथ दुश्मनी करना है (६६, २५), शोभा इन दिनों रिसर्च कर रही है (१११, ६६), आजकल वह मेरा इलाज कर रहा है (१०३, २१७)।

संतत वर्तमान का एक प्रकार संतत रूपबद्ध वर्तमान है जो कि उस व्यापार को व्यक्त करता है जो कि मूर्त, लेकिन समय में असीमित होता है। अपूर्णतावाची वर्तमान के विपरीत यहां व्यापार के एकल प्रक्रियात्मक प्रकृति पर मुख्य बल होता है।

वास्तविक संतत वर्तमान के साथ रूपबद्ध संतत वर्तमान संलग्न होता है, जो कि मूर्त व्यापार को व्यक्त करता है, लेकिन रूपबद्ध अपूर्णतावाची वर्तमान के

विपरीत यह व्यापार के काल में सीमित होता है। हालांकि व्यापार सिर्फ़ रूपबद्ध तौर पर ही वर्तमान के अर्थ के साथ संबंध रखता है, लेकिन लगता है जैसे व्यापार उक्ति के क्षण के साथ हो रहा है। दर्शक, पाठक या श्रोता जैसे कि हो रहे व्यापार में हिस्सा ले रहे हों। यहां, निम्नलिखित प्रकारों में अन्तर जानना चाहिए :

(१) **'नाटक-सम्बन्धी'** संतत वर्तमान जो कि नाटकीय रचना के कार्य-व्यापार के ऊपर लेखक की टिप्पणी द्वारा व्यक्त होता है। 'नाटक-सम्बन्धी' संतत वर्तमान का व्यापार नाटक के संगत व्यापार के क्षणों के साथ मेल ही नहीं खाता, बल्कि ऐसा लगता है जैसे कि दर्शकों के सामने हो रहा हो और मौजूदगी का प्रभाव पैदा करता है, उदाहरणार्थ : सभी राक्षसनियां सीता को तरह-तरह की यातना देने लगीं, हनुमान जी यह सब देख रहे हैं (१३८, ४८), युवराज सुमन अकेले खड़े हैं। उनके सम्मुख राजमहल का संगमरमर से जड़ा आंगन विविध रंगों से भीगकर, बरसात के सायंकालीन आकाश के समान दिखाई दे रहा है। चारों ओर से सुगंध की लपटें-सी उठ रही हैं। युवराज एकटक दृष्टि से इस दृश्य को देख रहे हैं (३८, २७), रावण वाण छोड़ता है। सर्पों की तरह वाण जा रहे हैं (१३८, ५५), नागरिकों की एक भीड़ एकत्र है और शोर-गुल हो रहा है (८८, १०)।

(२) **'उक्ति-सम्बन्धी'** संतत वर्तमान जो कि किसी लेखक के शब्दों के साथ परिचय कराता है जो कि उक्ति के क्षण के साथ अधिकतम करीब होता है और यह भावना पैदा करता है जैसे कि पाठक भी उसमें मौजूद है, उदाहरणार्थ : दूसरे अध्याय में गीता की शिक्षा का आरम्भ होता है और शुरू में ही भगवान जीवन के महासिद्धांत बता रहे हैं (१२२, १७)।

बहुत ही कम स्थितियों में, मुख्यतः कारबारी और वैज्ञानिक भाषा में, संतत वर्तमान उस व्यापार को व्यक्त करता है जो कि उक्तियों के क्षण के साथ मेल नहीं खाता, बल्कि काल के क्षण के साथ मेल खाता है जो कि दूसरे व्यापार द्वारा निश्चित होता है। यहां व्यापार निरपेक्ष नहीं बल्कि सापेक्ष होता है, उदाहरणार्थ : ...भेजने वाले को यह स्वीकार करना पड़ता है कि वह जिस वस्तु को भेज रहा है उसके भेजने के लिए उसके पास एक माँग आयी है (१०१, १३५), उसे यह कदापि नहीं सोचना चाहिए कि शिकायत करने वाले असत्य लिख रहे हैं अथवा केवल कुछ कटौती ऐंठ लेने को ऐसा लिख रहे हैं (१०१, ४२३), जब किसी व्यक्ति को कोई निश्चित पता उस स्थान का न हो जिस स्थान को वह जा रहा है ...(१०१, १४८)।

कुछ वाक्य जिनका विधेय वर्तमान संतत द्वारा व्यक्त होता है, संरचनात्मक तौर पर उन वाक्यों से मेल खाते हैं जिनका विधेय अपूर्णतावाची वर्तमान द्वारा व्यक्त होता है यानी अवास्तविक व्यापार को व्यक्त करता है। ऐसी समानता सिर्फ़ बाह्य तौर पर ही होती है चूँकि संतत वर्तमान उस व्यापार को व्यक्त करता

...और मौजूदगी का प्रभाव इस तरह देता है

संतत वर्तमान

मान लीजिये कि एक खरगोश और एक कछुए की दौड़ हो रही है (३५...

मान लो कि हम १६ पृष्ठ वाले पत्र ... रहे हैं (१०१, ६६)।

... का अर्थ आंशिक रूप से खो... उदाहरणार्थ : आपका सर्वनाश ... हो रही है (...२५), ...उस वस्तु- ... हो रही है (...)।

... में उक्ति के क्षण ... कि नामिक हिस्से द्वारा ... होता है, उदाहरणार्थ : वह ... हो रही है (...)....राजपूत सेना... ... निर्णायक युद्ध हो रहा ...

... वर्तमान कालार्थ की ... और संतत वर्तमान के रूपों का लाक्षणिक ... और उक्ति के क्षण में उसके सम्बन्ध ... है

... प्रकार होते हैं :

... में व्यापार को व्यक्त ... कार्य के तौर पर व्यक्त ... होता है, ऐसा लगता है कि आपकी ... मैंने देखा कि मैं बहुत दूर तक ... आ रहा है (१४२, १४२), ... वह दबे पांव...धीरे- ... मैंने देखा कि मैं जंगल में चली जा रही ...

... संतत वर्तमान ... कि उक्ति के क्षण के ... काम में आता है। यहां दो प्रकार

पाये जाते हैं : (क) संदिग्ध व्यापार का संतत वर्तमान और (ख) भविष्यत् काल के व्यापार का संतत वर्तमान।

संदिग्ध व्यापार का संतत वर्तमान यह बात व्यक्त करता है कि व्यापार उक्ति के क्षण पर शुरू हो सकता है, परन्तु उक्ति के क्षण के बाद भी शुरू हो सकता है, यहां व्यापार को करने की इच्छा का अर्थ पहले स्थान पर आता है, उदाहरणार्थ : इस समझौते की दो प्रतियां आपको भेज रहे हैं (१०१, ४४५), मैंने सुना है कि तुम क़रीम से शादी कर रही हो (२८, १४१), हम धर्म संग्राम में जा रहे हैं (६९, ७८), सरकार वहां पर खुदाई का काम शुरू कर रही है (२८, १९५), कलकत्ता वे पहली बार जा रहे हैं (१०१, ४३६)।

संतत वर्तमान के इस पुनःअर्थ निरूपण के आधार पर 'जा रहा' व्याकरणिक रूप उत्पन्न हुआ जो कि सुपाईन (अविकारी क्रियार्थक संज्ञा) के साथ मिलकर व्यापार को पूर्ण करने की इच्छा व्यक्त करता है, जो कि सुपाईन द्वारा लक्षित होता है, उदाहरणार्थ : वह कुल्लू के किसी गांव में रहने जा रही थी (५२, १३५), ...मैं जो कुछ करने जा रहा हूं...(७१, ११६)।

भविष्यत् व्यापार का संतत वर्तमान यह बात बताता है कि व्यापार उक्ति के क्षण के बाद किसी भी कालावधि में होगा, जो कि विशेषकर स्पष्टतः भविष्यत् काल के शाब्दिक चिह्नों की उपस्थिति में प्रकट होता है, उदाहरणार्थ : तो रानी, कल तुम आ रही हो न चिट्ठी लेके (१, १३), मिस्टर ह्यूबर्ट, कल आप दिल्ली जा रहे हैं (५२, ११०),...श्री रमाकान्त आगामी ३० अगस्त से अवकाश ग्रहण कर रहा है (१०१, ४४१), मदाम, छुट्टियों में आप घर नहीं जा रहीं ? (५२, ८९)।

(३) **भूतकाल के अर्थ में संतत वर्तमान**—जो कि बहुत ही कम स्थितियों में उक्ति के क्षण से पहले भूतकाल में व्यापार को व्यक्त करने के काम आता है, उदाहरणार्थ : —ओह, आप ! नमस्ते !—नमस्ते ! इसी ट्रेन से आ रही हैं क्या ? —जी हां !—अकेली ही...—जी हां, अकेली ही आयी हूं (५९, १०४), मैं रोटी नहीं खाऊंगा।—क्यों ?—खाकर आ रहा हूं (७५, ४१)।

## आभ्यासिक संतत वर्तमान

यह काल रूप संतत कृदन्त के विकारी रूप तथा संयुक्त वर्तमान सहायक क्रिया के विकारी-तिङन्ती रूपों के मिलन से बनता है। इस तरह आभ्यासिक संतत वर्तमान पुल्लिग के दो विकारी रूप (मुख्य क्रिया तथा सहायक क्रिया का कृदन्त-परक रूप) स्त्रीलिंग के एक विकारी रूप (मुख्य क्रिया और सहायक क्रिया का कृदन्तपरक रूप) और 'है' क्रिया के चार तिङन्ती रूपों द्वारा व्यक्त होता है।

| | |
|---|---|
| मैं लिख रहा (रही) हो-ता (-ती) हूं | हम लिख रहे (रही) हो-ते (-ती) हैं |
| तू लिख रहा (रही) हो-ता (-ती) है | तुम लिख रहे (रही) हो-ते (-ती) हो |
| | आप लिख रहे (रही) हो-ते (-ती) हैं |
| वह लिख रहा (रही) हो-ता (-ती) है | वे लिख रहे (रही) हो-ते (-ती) हैं। |

यह रूप भी सीमित विशेष प्रसंग से सम्बन्ध रखता है और बहुत कम पाया जाता है। यह वह एकल व्यापार व्यक्त करता है जो कि काल के किसी क्षण होता है, अर्थात् रूप समय में सीमित होता है। व्यापार सापेक्ष होता है और उक्ति के क्षण के साथ नहीं, बल्कि काल के क्षण के साथ मेल खाता है, उदाहरणार्थ : तब... वह...किचन में पहुँचता है। मौसी रोटी बेल रही होती हैं या अँगीठी को पंखा कर रही होती हैं या आटा सान रही होती हैं (९, १०७), जब देखो वे किसी को मिलने जा रही होती हैं या कोई उन्हें मिलने आ रहा होता है (V, विशेषांक, १९६२, ५५), पता किस तरह हो सकता है। आप तो उस वक्त खर्राटे ले रहे होते हैं (१९, ७९), जब माल जहाज़ में आ रहा होता है तो वह आने पर बेचा जाता है (१०१, २४८), दीपवर्धन अभी कोई बहाना सोच ही रहे होते हैं कि शीला झट से रसोई घर की ओर चली जाती है (३८, २०)।

जैसाकि उदाहरणों से विदित है, यह रूप मुख्यतः मिश्र वाक्य में इस्तेमाल होता है जो कालवाचक होता है।

## भूतकाल के रूप

भूतकाल के निम्नलिखित काल रूप होते हैं :

(१) स्थिर सत्यवाचक भूतकाल; (२) अपूर्णतावाचक नियमित आवर्ती भूतकाल; (३) अपूर्णतावाचक भूतकाल; (४) अपूर्णतावाचक आभ्यासिक भूतकाल; (५) सामान्य भूतकाल (पूर्णकालिक, अनिश्चित भूत); (६) पूर्णतावाची भूतकाल; (७) पूर्णतावाची आभ्यासिक भूतकाल; (८) पूर्णतावाची स्थैतिक भूतकाल; (९) संतत भूतकाल; (१०) संतत आभ्यासिक भूतकाल। इस दस काल प्रकारों में पाँच सामान्य कहलाते हैं और पांच—सीमित विशेष प्रसंग के, जो कि वास्तव में सामान्य काल रूपों के विकार होते हैं। भूतकाल के समस्त रूप चिह्न पूर्व० (अ) + द्वारा वर्णित होते हैं। रूप, जो कि द्वितीय कृदन्त और संतत कृदन्त द्वारा व्यक्त होते हैं, सी० +. और अके० + द्वारा वर्णित होता है। रूप, जो कि संतत कृदन्त द्वारा व्यक्त होते हैं, प्र० + चिह्न द्वारा वर्णित होते हैं। रूप, प्रथम कृदन्त और संयुक्त अपूर्ण सहायक क्रिया के साथ आव० + चिह्न द्वारा व्यक्त होते हैं। 'था' का पक्ष-रहित विकारी रूप पूर्व (आ) +, सी० +, अके० + चिह्नों द्वारा वर्णित होता है।

हर उल्लेखित रूप के अपने प्रयोग की निश्चित विशेषता है, इसलिए हर एक के बारे में स्वतंत्र वर्णन किया जायेगा।

## स्थिर सत्यवाचक भूतकाल

यह काल रूप एकवचन और बहुवचन में पुंल्लिग तथा स्त्रीलिंग के चार विकारी रूपों द्वारा व्यक्त होता है।

मैं, तू, वह था (थी)  हम, तुम, आप, वे थे (थीं)

यह काल रूप द्रव्य या व्यक्ति की मौजूदगी और निषेधात्मक वाक्यों में उसके अभाव को जो कि वाक्य में उद्देश्य होते हैं, व्यक्त करने के काम आता है, उदाहरणार्थ : शाम का वक्त था (६६, ६१), कफ़न के लिए पैसे नहीं थे (१११, ६६), उसके हाथ में एक लम्बा लट्ठ था (१०३, १६५), रावी के पूर्वी तट पर जहां आज लाहौर है, उस समय लवपुर नाम का एक छोटा-सा नगर था (१५६, २१)।

संयोजक क्रिया के प्रकार्य में 'था' विधेय के नामिक हिस्से का भूतकाल के साथ परस्पर सम्बन्ध बनाता है, उदाहरणार्थ : आपका विचार एकदम ठीक था (१५६, २५), बाँके शेर की तरह खड़ा था (१०३, १६५), पहले उसके तीन भाई और थे, पर इस समय वह अकेली थी (६५, २), पर दुर्भाग्य से लड़का एक भी न था (६६, १४३)।

व्यापार जो 'था' क्रिया द्वारा व्यक्त होता है भूतकाल में समस्त काल-सतह पर स्थित होता है, इसके ऊपर निर्भर नहीं होता कि वह किस क्षण पूर्ण हुआ, वह भूतकाल में द्रव्य या व्यक्ति की सिर्फ़ मौजूदगी (या अभाव) के तथ्य को बताता है।

## अपूर्णतावाची भूतकाल

यह काल रूप प्रथम कृदन्त के विकारी रूप तथा 'था' सहायक क्रिया के विकारी रूपों के मिलन से बनता है। इस तरह अपूर्णतावाची भूतकाल पुंल्लिग के दो विकारी रूपों, स्त्रीलिंग के एक विकारी रूप और 'था' क्रिया के चार विकारी रूपों द्वारा व्यक्त होता है।

मैं  हम<br>
तू लिख-ता (-ती) था (थी)  तुम, आप लिख-ते (-ती) थे (थीं)<br>
वह  वे

यह रूप पूर्व० (अ) +, सी० +, अके० + मुख्य चिह्नों द्वारा व्यक्त होता है। वह असमापक अतीत व्यापार को व्यक्त करता है जो आम तौर पर भूतकाल

में होता है और वर्तमानकाल के साथ उसका कोई संबंध नहीं होता। वह भूतकाल में व्यापारों के क्रम को नहीं बताता है, बल्कि उन व्यापारों को बताता है जो कि एक काल-सतह पर स्थित होते हैं। इसीलिए यह रूप वर्णनात्मक भूतकाल की हैसियत से जाना जाता है।

अपूर्णतावाची भूतकाल के व्यापार के समय में सीमित होने के चिह्न के अनुसार दो प्रकार होते हैं : अपूर्णतावाची वास्तविक भूतकाल और अपूर्णतावाची अवास्तविक भूतकाल।

अपूर्णतावाची वास्तविक भूतकाल एकल, मूर्त व्यापार को व्यक्त करता है, जो कि भूतकाल के किसी विशेष क्षण पर होता है। व्यापार दिये गये क्षण के साथ विभिन्न तरीके से संबंध रखता है और इसीलिए अपूर्णतावाची वास्तविक भूतकाल के अपने प्रकार होते हैं :

(१) अतीत में किसी मूर्त क्षण का अपूर्णतावाची भूतकाल, उदाहरणार्थ : पाँचों रंगरूट एक-दूसरे से लिपटते थे, उछलते थे, चीखते थे...(६६, ७७), किसी के मुँह से बात न निकलती थी (६६, ३०),...वह उन पर कदम रखकर चलता था (२५, ६), नोहरी के पाँव ज़मीन पर न पड़ते थे (६६, ७६)।

व्यापार की सीमितता काल के शाब्दिक चिह्नकों की उपस्थिति से ज़्यादा हो जाती है। उदाहरणार्थ : १६४६ की बात है। उन दिनों मैं गाँव में रहता था (१०३, १), इस समय इस आवास में सात सौ सुन्दरियां रहती थीं (४, १३), इस वक्त गली में पियक्कड़ों के सिवा और कोई न आता था (६६, ६१), वह दफ़्तर में अब भी आता था, काम अब भी करता था...(१३६, २६-३०)।

(२) विस्तारित व्यापार का अपूर्णतावाची भूतकाल, जो कि भूतकाल में न केवल किसी क्षण के साथ मेल खाता है बल्कि इस क्षण तक शुरू भी हो सकता है और इस क्षण के बाद जारी भी रह सकता है, उदाहरणार्थ : उनके पुरखे पुराने ज़माने से ही गाँव में रहते थे (१०३, ६०), 'लाल चौधरी' मूल पुरुष के समय से ही सरकारी कागजों में लिखा जाता था (११६, ७)।

(३) नित्यतासूचक व्यापार का अपूर्णतावाची भूतकाल, जो भूतकाल में किसी क्षण को प्रभावित करता है और समय के किसी भी सीमा के बगैर नित्यतापूर्वक और निरन्तर जारी रहता है, जैसे कि वह भूतकाल का काल अर्थ भरता है और व्यापार के कर्ता के नित्यतासूचक लक्षण की ओर संकेत करता है हालांकि भूतकाल की कालावधि से सीमित होता है। उदाहरणार्थ : ...एक हरा-भरा समतल मैदान था, जहां मीठे पानी की एक छोटी-सी नदी बहती थी (४, ८६), दूसरी तरफ़ सीढ़ियां उतरती थीं (१०३, ११७)।

अपूर्णतावाची अवास्तविक भूतकाल अतीत में किसी भी क्षण के संबंध के बाहर व्यापार को व्यक्त करता है, व्यापार साधारणतः होता है और वास्तव में

भूतकाल के समस्त अर्थ को भरता है। अपूर्णतावाची भूतकाल के इस प्रकार का मुख्य अर्थ नियमबद्ध आवर्ती व्यापार को व्यक्त करता है जो कि नित्यतापूर्वक नहीं बल्कि सविराम होता है, उदाहरणार्थ : यहां पर...अधिकतर विदेशी टूरिस्ट आते थे (२८, १५३), शीतकाल के समय वहां इतनी ठंड पड़ती थी कि मनुष्य के शरीर का रक्त ही जम जाता था (४, ४५), वह किसान न थे, पर खेती करते थे; ज़मींदार न थे, पर ज़मींदारी करते थे; थानेदार न थे पर थानेदारी करते थे (६५, २)।

अपूर्णतावाची भूतकाल के इस प्रकार के आधार पर एक अर्द्धस्वतंत्र काल रूप अर्थात् नियमित आवर्ती का अपूर्णतावाची भूतकाल बनता है जो कि प्रथम कृदन्त के चार विकारी रूपों द्वारा व्यक्त होता है :

| | |
|---|---|
| मैं | हम |
| तू लिखता (लिखती) | तुम, आप लिखते (लिखतीं) |
| वह | वे |

नियमित आवर्ती का अपूर्णतावाची भूतकाल नियमित रूप से आवर्ती और सविराम व्यापार को व्यक्त करने के काम आता है। यह रूप आम तौर पर कई समान व्यापारों का वर्णन करने के काम आता है जो कि एक ही काल सतह पर स्थित हो सकते हैं या जब शाब्दिक चिह्नक होते हों, एक-दूसरे के बाद आते हैं। उदाहरणार्थ : वह अपने अभिभावक के ढोर-डंगर चराती, खेत गोड़ती, रोपती, डंगरों के लिए घास छीलती, समय पड़ने पर खाना पकाती, बर्तन मलती, नदी से पानी लाती (१७, ३६५), पहला युवक प्रायः आता, उसके पास बैठता और अनेक चेष्टाएं करता, किन्तु युवती अचल पाषाण-प्रतिमा की तरह बैठी रहती (३९, ८८), बुढ़िया बेचारी मुँह-अँधेरे उठती, चारपाई पर बैठी-बैठी दस-पंद्रह मिनट प्रार्थना करती, फिर गृहस्थी के काम में जुट जाती और रात गये तक जुटी रहती। कभी अंगीठी सुलगाती, कभी चाय बनाती, कभी बच्चों को नहलाती-धुलाती, कभी भोजन बनाती और कभी बर्तन समेटती। जो बहुओं से बन पड़ता, बहुएं करतीं... (१४२, ४१)।

शुद्ध कृदन्तपरक रूपों के साथ बहुत अकसर मिश्रित समापक रचनाएं भी प्रयोग होती हैं जब कृदन्तपरक रूपों के साथ-साथ वे रूप भी होते हैं जो कि कृदन्त और सहायक क्रिया के मिलन से बनते हैं, उदाहरणार्थ : जब कमरे में आती, लोग खड़े **हो जाते थे**, पर वह पिछली सफ़ से आगे न बढ़ती थी (६९, ३१), जब दोपहर में भोजन के बाद सारे गाँव में सन्नाटा छा जाता, लोग विश्राम करने लगते, तब सरला वहीं बैठी-बैठी पुराने ग्रंथों के पन्ने **उल्टा-पल्टा करती थी** (५, ९)।

मिश्रित रूप उन अलग-अलग वाक्यों में विशेषकर अक्सर मिलते हैं जब

उनमें से कुछ वाक्यों में सहायक क्रिया नहीं होती, और दूसरों में सहायक क्रिया होती है, उदाहरणार्थ : उस दिन से जालपा के पति-स्नेह में सेवा-भाव हुआ। वह स्नान करने जाता तो अपनी धोती धुली हुई मिलती। आले पर तेल और साबुन भी रखा हुआ पाता। जब दफ़्तर जाने लगता तो जालपा उसके कपड़े लाकर सामने रख देती। पहले पान माँगने पर मिलते थे, अब ज़बरदस्ती खिलाये जाते थे। जालपा उसका रुख देखा करती। उसे कुछ कहने की ज़रूरत न थी। यहां तक कि जब वह भोजन करने बैठता तो वह पंखा झला करती। पहले वह अनिच्छा से भोजन बनाने जाती थी और उस पर भी बेगार-सी टालती थी। अब बड़े प्रेम से रसोई में जाती (६५, ६१); वह बड़े प्रेम और यत्न से उन्हें पानी पिलाती, पुचकारती और चारा खिलाती थी। कभी-कभी वह जंगल से अपने हाथों से घास छील लाती और उन्हें खिलाती थी। लोकनाथ जब गाय दुहने बैठता, तो सरला उसके आगे खड़ी होकर उसके माथे को सहलाती रहती, और गाय चुपचाप बछड़े को चाटती रहती (५, ८)।

अपूर्णतावाची अवास्तविक भूतकाल में वह व्यापार एक विशेष स्थान रखता है जो कि 'होना' क्रिया के प्रथम कृदन्त से व्यक्त होता है, जिसमें भूतकाल में व्यापार की अभ्यासता पर मुख्य बल होता है, उदाहरणार्थ : पिंडारियों के अलग-अलग जत्थे होते थे (४७, ६), जब वे उनसे मिलतीं तो उनके हाथों पर व्यंग्य और विद्रूप की गहरी परतें होतीं...(१११, २१), उनके साथ बहुत से राजदूत, जनसाधारण और बालक होते थे (४, ५८),...मुझे उनसे घृणा होती थी (४, १३)।

'होना' क्रिया का यह कृदन्तपरक रूप 'था' विकारी क्रिया के मिलन से संयुक्त अपूर्ण योजक की हैसियत से आ सकती है, जहां यह रूप लक्षण की अभ्यासता को व्यक्त करता है। यह लक्षण नामिक हिस्से में होता है, उदाहरणार्थ : ...दयनाथ विचलित होते थे (६५, ४),...उसका काम सबसे अधिक और सबसे सुथरा होता था (१३६, २५), वे बड़े निर्दयी और चतुर होते थे (२, २८८)।

विश्लेषणात्मक क्रियाओं का क्रियार्थक घटक जो कि इस संयुक्त रूप द्वारा व्यक्त होता है, व्यापार के अपूर्णतावाची भूतकाल के दोनों प्रकारों को अभ्यासता की कोई भी छाया नहीं देता, उदाहरणार्थ : साथ ही समय पर पूरा रुपया भी वसूल नहीं होता था (२, २८०)—वास्तविक अपूर्णतावाची भूतकाल; हर साल अपने खेतों में लाखों मन गल्ला पैदा होता था (११६, ६३)—अवास्तविक अपूर्णतावाची भूतकाल।

अपूर्णतावाची भूतकाल के प्रत्यक्ष प्रयोग के साथ-साथ, जब व्यापार भूत-काल के अर्थ की सीमा के बाहर नहीं आता, इस काल रूप का लाक्षणिक प्रयोग भी होता है जो कि एक कृदन्त द्वारा व्यक्त होता है। यह आम तौर पर तब प्रकट होता है जबकि एकांगी नामिक वाक्यों के बाद कृदन्तपरक रूप आता है। तब कृदन्तपरक रूप उस व्यापार को व्यक्त करता है जो कि वर्तमान अर्थ के साथ

सम्बन्ध रखता है, उदाहरणार्थ : इन मैदानों को यहां की बोलचाल में 'खादर' कहते हैं। खादर में ऊँची-नीची लहरों की-सी ढलवां ज़मीन, कहीं हरी छोटी दूब और कहीं लहराते घास के झुरमुट और कहीं अकेला बरगद या पीपल का छायादार वृक्ष। दूर बसे गाँवों के मवेशी यहां चरने को आते। उनके पीछे डंडा लिए बालक कभी आँख-मिचौनी खेलते, कभी रेत में दौड़ लगाते और कभी थककर पेड़ के नीचे चना या मक्का चबाते (८०, ५५); नीचे घाटी में बहती नदी। उसमें पनचक्की। घाटी में फैले हरे-पीले धान के खेत। चीड़ के पेड़। जब उनकी सूखी मुड़वां ढलानों पर बिछ जातीं तो वह और उसकी सहेलियां उन पर फिसलतीं, लुढ़कती चली जातीं। गाँव के निकट एक जगह नदी का रुका हुआ पानी...उसमें वे जी-भर नहातीं, तैरतीं, कपड़े धोतीं, सुखातीं, गेंद उछालतीं, गातीं (१७, ३६५); ग्राम के दक्षिण में एक कच्चा रास्ता लगभग पाँच मील जाकर ग्रेंड ट्रंक रोड से मिलता (८०, ७८)।

## अपूर्णतावाची आभ्यासिक भूतकाल

काल का यह रूप प्रथम कृदन्त के विकारी रूप और सहायक क्रिया के संयुक्त अपूर्णतावाची और विकारी रूपों के मिलन से बनता है। इस तरह अपूर्णतावाची आभ्यासिक भूतकाल पुल्लिग के दो विकारी रूप (मुख्य और सहायक क्रिया), स्त्रीलिंग के एक विकारी रूप (मुख्य और सहायक क्रिया का कृदन्तपरक हिस्सा) और 'था' क्रिया के स्त्रीलिंग के दो रूपों द्वारा व्यक्त होता है :

| | |
|---|---|
| मैं लिख-ता (-ती) हो-ता (-ती) था (थी) | हम लिख-ते (-ती) हो-ते (-ती) थे थीं |
| तू | तुम, आप |
| वह | वे |

यह काल रूप सीमित विशेष प्रसंग से संबंध रखता है और बहुत कम पाया जाता है। वह मूर्त, एकल व्यापार का वर्णन करता है, जो आम तौर पर काल में सीमित होता है। अपूर्णतावाची भूतकाल के मुकाबले में यह काल रूप एकल व्यापार की अभ्यासता पर विशेष बल देता है। उदाहरणार्थ : वह दिलचस्प आदमी थे। जब हम उनकी दुकान पर पहुँचते, वे सोने-चाँदी का कोई ज़ेवर बनाते होते...(२०, ४२), सुभद्रा कोई काम करती होती तो सुमन स्वयं उसे करने लगती (७३, २८), उसे तो क्वार से शुरू होने वाले दिन अच्छे लगते जब आगे-आगे माँ भागती होती और पीछे-पीछे वह...उसे पकड़ने को दौड़ता होता...(८३, ४०), उसके होंठ जलते होते, उनमें कैसी भीषण ज्वाला होती ! (११६, १२५)।

जैसा कि उदाहरणों से विदित है, यह रूप आम तौर पर 'था' क्रिया के काल चिह्नक के बगैर आता है चूँकि भूतकाल के साथ व्यापार का संबंध पहले या बाद वाले प्रसंग द्वारा पक्का होता है।

# सामान्य भूतकाल (अनिश्चित भूत तथा पूर्णकालिक भूत)

काल का यह रूप सरल द्वितीय कृदन्त का समाकार है। इस तरह सामान्य भूत पुल्लिग के दो विकारी रूपों और स्त्रीलिंग के दो विकारी रूपों द्वारा व्यक्त होता है।

**कर्तृ-सम्बन्धी रचना**

| | |
|---|---|
| मैं | हम |
| तू आया (आयी) | तुम, आप आए (आईं) |
| वह | वे |

**कर्म-सम्बन्धी रचना**

एकवचन

मैं
तू
उस
हम ने पत्र (चिट्ठी) लिखा (लिखी)
तुम
आप
उन्हों

बहुवचन

मैं
तू
उस
हम ने दो पत्र (चिट्ठियां) लिखे (लिखी)
तुम
आप
उन्हों

**भाववाचक रचना**

एकवचन तथा बहुवचन

मैं
तू
उस
हम ने पत्र-पत्रों को (चिट्ठी-चिट्ठियों को) लिखा

तुम
आप
उन्हों

सामान्य भूतकाल पूर्व० (अ) +, सी० +, अके० + चिह्नों द्वारा व्यक्त होता है और उस व्यापार को बताता है जो कि उक्ति के क्षण तक पूर्ण हो जाता है। व्यापार भूतकाल में किसी तथ्य के बारे में वर्णन करता है जो एक बार होता है या पौनः पुन्यवाचक क्रियाविशेषणों द्वारा मूर्त तथ्यों के किसी समूह को व्यक्त करता है। प्रसंग में सामान्य भूतकाल के ये अर्थ एकल पृथक्कृत व्यापार के रूप में या क्रमबद्ध पृथक्कृत एक-दूसरे को बदलते व्यापारों की श्रृंखला के रूप में आते हैं। परिणामस्वरूप सामान्य भूतकाल के दो प्रकारों में भेद करना चाहिए : (१) पृथक्कृत एकल व्यापार का सामान्य भूतकाल और (२) 'कथनात्मक' सामान्य भूतकाल।

(१) सामान्य पृथक्कृत एकल भूतकाल उस एक ही तथ्य को व्यक्त करता है जो कि व्यापार की उक्ति के क्षण तक पूर्ण हो जाता है, चाहे पूर्ण व्यापार और उक्ति के क्षण के बीच कितना ही छोटा या बड़ा कालान्तर क्यों न हो, उदाहरणार्थ : अभी तक एक पैसा नहीं दिया (६५, ११२), मेरी जेब से तो आज तक एक पैसा न गिरा (६५, ११७), महीनों और सालों बीत गये। मैंने न तुरैया को और न उसके बाप को ही देखा (६६, १६८), परसों शहर में गोलियां चलीं (६६, १०)।

पौनः पुन्यवाचक क्रियाविशेषणों की उपस्थिति में सामान्य पृथक्कृत भूतकाल एकल तथ्यों के 'गुच्छे' अर्थात् किसी समूह को व्यक्त करता है, उदाहरणार्थ :... बड़े-बड़े विद्वानों ने उसे दो-दो, तीन-तीन बार पढ़ा (५, ४१), इस पड़ताल में कई बार मैं मरते-मरते बचा (६४, १८८-१८६)।

(२) 'कथनात्मक' सामान्य भूतकाल क्रमबद्ध, पृथक्कृत एक-दूसरे को बदलते व्यापारों के क्रम को व्यक्त करता है, और सारे कथन की विशेषता गति है, उदाहरणार्थ : यही सोचते हुए बाबू साहब उठे, रेशमी चादर गले में डाली, कुछ रुपये लिये, अपना कार्ड निकालकर एक दूसरे कुर्ते की जेब में रखा, छड़ी उठायी और चुपके से बाहर निकले (६६, १५), मिस्टर सेठ ने विलायती टूथ पाऊडर विलायती ब्रुश से दाँतों पर मला, विलायती साबुन से नहाया, विलायती चाय विलायती प्यालियों से पी, विलायती बिस्कुट, विलायती मक्खन के साथ खाया, विलायती दूध पिया। फिर विलायती सूट धारण करके विलायती सिगार मुँह में दबाकर वे निकले और मोटर साइकिल पर बैठकर फ़्लावर शो देखने चले गये (६६, २०)।

'होना' क्रिया का पूर्णकालिक रूप योजक की हैसियत से संयुक्त नामिक विधेय में आता है जहाँ वह उस लक्षण की पूर्णता का संकेत देता है, जो नामिक हिस्से में आता है, उदाहरणार्थ : वे ज़ख़्मी हुए (४, ८०), उसकी सहायता से सेल्यूकश पश्चिमी शत्रु पर विजयी हुआ (२, ४१), सरला का मुख और भी मधुर...हो उठा (५, ४९), पश्चिमी दिशा लाल हुई (४, ७७)।

विश्लेषणात्मक क्रियाओं में क्रियार्थक घटक, जो कि 'होना' क्रिया के पूर्णकालिक रूप द्वारा व्यक्त होता है, सामान्य भूतकाल का मुख्य अर्थ देता है, उदाहरणार्थ : देश में राष्ट्रीय जागरण का युग आरम्भ हुआ (११५, ५१), बादशाह को यह बात मालूम हुई (२४, १९०),...सेना सीमा-प्रदेश को रवाना हुई (१३९, १८४)।

सामान्य भूतकाल के प्रत्यक्ष प्रयोग के साथ-साथ इस कालिक रूप का लाक्षणिक प्रयोग भी होता है, जबकि रूप के कालार्थ और उक्ति के क्षण के सम्बन्ध में अन्तर होता है। सामान्य भूतकाल अपने लाक्षणिक अर्थ में भविष्यत् काल के अर्थ में आता है। यहां ऐसे प्रयोग के दो प्रकारों के बीच भेद जानना चाहिए : (१) सांदर्भिक-प्रतिबन्धित और (२) संरचनात्मक-प्रतिबन्धित।

सांदर्भिक-प्रतिबन्धित प्रयोग प्रसंग की विशेषताओं से सम्बन्ध रखता है जो यह बताता है कि व्यापार जो सामान्य भूतकाल के रूपों द्वारा व्यक्त होता है, भविष्यत्काल का अर्थ रखता है, और ज़्यादा ठीक, निकट भविष्य का अर्थ रखता है। सामान्य भूतकाल के रूप का सांदर्भिक-प्रतिबन्धित प्रयोग भविष्यत्काल के अर्थ में साधारणतः तब होता है जब :

(क) गति की क्रियाएं हों, उदाहरणार्थ : अब तो मैं चला (५, १६), यार, भाभी प्रतीक्षा में बैठी होंगी। मैं चल दिया (८, २३), मैं अभी दो मिनट में आया (१४२, १०७), अच्छा तो फिर मैं चली (७५, १४८);

(ख) 'अभी', 'कभी' क्रियाविशेषणों के साथ विभिन्न शब्दार्थक क्रियाएं होती हैं, उदाहरणार्थ : नीचे मत उतरो, गोविन्द ! अभी ऊपर आया (१२०, ११०), अभी आया सरकार...(१, ५०७), कहीं यह इन्कार कर गये तब ? (७३, ५५), अगर वह नहीं छोड़ता...तो मैं अभी रोई (१२०, ६४) ;

(ग) अलग-अलग शब्दार्थक क्रियाएं होती हैं और 'अब' क्रियाविशेषण मुख्यतः अविरत क्रिया के साथ आता है, उदाहरणार्थ : कोने की मस्जिद इतनी झुकी हुई है कि लगता है अब गिरी, अब गिरी (१, २५०), ऐसा लग रहा है जैसे दिल अब बैठा, अब बैठा (५९, ५८), मालूम होता था, अब गिरा (६५, १०६)।

सामान्य भूतकाल के रूपों का संरचनात्मक-प्रतिबन्धित प्रयोग भविष्यत् काल के अर्थ में मिश्र वाक्यों के संकेतवाचक उपवाक्य में आता है, जिनके मुख्य हिस्से का विधेय सरल भविष्यत्काल के रूपों द्वारा व्यक्त होता है, उदाहरणार्थ :

यदि अड़तालीस घंटे के अन्दर ये औरतें नहीं छूटीं तो फिर युद्ध होगा (३६, ८३-८४), अब अगर कुछ और कहा तो पोतड़े तेरे ही मुख पर फेंक मारूँगी (१११, ६०), ख़बरदार कुतिया, जो तुमने अकेले घर से बाहर कदम रखा तो तेरी टाँगें तोड़कर रख दूँगा (७१, १३३), पुजारीजी का प्रेत कभी नदी पार आ गया तो हम चरण छूएँगे (१४७, ५८)।

भविष्यत्काल के अर्थ में सामान्य भूतकाल के रूपों का संरचनात्मक-प्रतिबन्धित प्रयोग शाब्दिक चिह्नकों द्वारा पक्का हो सकता है, उदाहरणार्थ : कल अगर बुखार बिलकुल उतर गया तो मूँग की खिचड़ी दूँगी (५६, ७५)।

बहुत ही कम स्थितियों में सामान्य भूतकाल के रूपों का समान प्रयोग मिश्र वाक्य के विशेषण उपवाक्य में पाया जा सकता है, उदाहरणार्थ : जिस दिन तुमने कन्धा टेढ़ा किया, उसी दिन मार पड़ने लगेगी (६६, ७५)।

सामान्य भूतकाल के रूपों का प्रयोग विशेषण मिश्र वाक्य के दोनों हिस्सों में हो सकता है, हालाँकि ऐसा प्रयोग हमेशा सांदर्भिक-प्रतिबन्धित हो सकता है, उदाहरणार्थ : अगर तुम ना पिओगे तो मैं भी न पिऊँगा। जिस दिन तुमने पी उसी दिन फिर शुरू कर दी (६६, ३७)।

## पूर्णतावाची भूतकाल

यह काल का रूप कर्तृ-सम्बन्धी और कर्म-सम्बन्धी रचनाओं में द्वितीय कृन्दत के तीन लैंगिक रूपों (पुल्लिग के दो रूप और स्त्रीलिंग का एक रूप) और 'था' क्रिया के चार लैंगिक रूपों या भाववाचक रचना में एकवचन में पुल्लिग के एक लैंगिक रूप और 'था' क्रिया के एक समान रूप के मिलन से बनता है।

### कर्तृ-सम्बन्धी रचना

| | |
|---|---|
| मैं | हम |
| तू आया (आयी) था (थी) | तुम, आप आये (आयी) थे (थीं) |
| वह | वे |

### कर्म-सम्बन्धी रचना

एकवचन

मैं
तू
उस
हमने पत्र (चिट्ठी) लिखा (लिखी) था (थी)
तुम

आप
उन्हों

बहुवचन

मैं
तू
उस
हम ने दो पत्र (दो चिट्ठियां) लिखे (लिखी) थे (थीं)
तुम
आप
उन्हों

**भाववाचक रचना**

एकवचन और बहुवचन

मैं
तू
उस
हम ने पत्र-पत्रों को (चिट्ठी-चिट्ठियों को) लिखा था
तुम
आप
उन्हों

पूर्णतावाची भूतकाल उस व्यापार को व्यक्त करता है जो कि भूतकाल में काल के क्षण के साथ या उक्ति के क्षण के साथ मेल खाता है। जब काल के क्षण के साथ मेल खाता है तो पूर्णतावाची भूतकाल उस व्यापार को व्यक्त करता है, जो कि दूसरे विगत व्यापार से पहले पूर्ण हुआ हो, या भूतकाल में किसी विशेष क्षण से पहले हुआ हो, या भूतकाल में किसी पहले पूर्ण हुए व्यापार का परिणाम बताता है। जब उक्ति के क्षण के साथ मेल खाता है तो पूर्णतावाची भूतकाल उस व्यापार को व्यक्त करता है जो कि उक्ति के क्षण का पूर्ववर्ती हो। इस तरह पूर्णतावाची भूतकाल तीन अर्थों को रखता है: (१) पूर्ण भूत, (२) पूर्णतावाची (अर्थात् पूर्णतावाची-समावेशी), और (३) पूर्णकालिक।

जब पूर्ण भूत का अर्थ बताता है तो पूर्णतावाची भूतकाल दूसरे विगत व्यापार से परस्पर सम्बन्ध रखता है या अतीत में किसी विशेष क्षण के साथ परस्पर सम्बन्ध रखता है, जो कि इस बीते हुए व्यापार या क्षण से पहले पूर्ण हो गया हो, अर्थात् पूर्णतावाची भूतकाल के पूर्ण भूत के अर्थ में वह भूतकाल में किसी विशेष

काल केन्द्र से पहले पूर्ण हो जाता है।

काल केन्द्र एक ही वाक्य की सीमा में हो सकता है, उदाहरणार्थ : दिन निकलने से पूर्व वे बीस मील निकल गये थे (३६, ३२), आज से तीन वर्ष पूर्व बाबूजी को किसी प्रकार बुखार आ गया था (६६, ६०), मैनेजर ने पहले ही कह दिया था (२८, १८), सहसा वही अंधा लड़का, जिसे उसने एक पैसा दिया था, न जाने किधर से आया (६६, २२), सम्मेलन समाप्त होने तक उसने निश्चय कर लिया था...(३६, ६६), उस बच्ची को आज तक इतने ज़ोर से रोते हुए मैंने नहीं देखा था (५८, ४०)।

काल केन्द्र वाक्य के बाहर भी हो सकता है, उदाहरणार्थ : आप यहां क्यों आये ? मैंने तो आपसे कहा था, अपनी जगह से न हिलियेगा। मैंने तो आपसे मदद न माँगी थी ? (६६, ४४),...हम दोनों बैंच की तरफ़ बढ़े। बैंच पर एक दस-ग्यारह साल का लड़का बैठा था (१४२, ११६), वह वकील था। उन्होंने शिक्षा की ऊँची-से-ऊँची डिग्रियां पाई थीं (६६, ८०),...जंगली जातियों का एक-एक मनुष्य मुझे जानता था और मेरे खून का प्यासा था। यदि मैं उन्हें मिल जाता तो ज़रूर मेरा नाम-निशान दुनिया से मिट जाता। न जाने कितने अफ़रीदियों और गिल्ज़ाइयों को मैंने मारा था, कितनों को पकड़-पकड़कर सरकारी जेलख़ाने में भर दिया था और न मालूम उनके कितने गाँवों को जलाकर खाक कर दिया था (६६, १८५)।

संरचनात्मक-प्रतिबन्धित स्थितियों में, पूर्णतावाची भूतकाल जब कालवाचक मिश्र वाक्य के मुख्य हिस्से के विधेय में आता है, तो क्षणिक पूर्ववर्ती को व्यक्त करता है जो कि बीते हुए व्यापार का अनुवर्ती होता है, उदाहरणार्थ : वह अभी दो पग ही गया था कि उसको अपने कन्धे पर किसी का हाथ रखने का अनुभव हुआ (३६, ६), एक दिन शाम को क्षमा संध्या करने उठी थी कि देखा मृदुला सामने आ खड़ी हुई (६६, ६), बस, आकर ही बैठी थी कि तुम आ गयीं (७५, १४६)।

पूर्णतावाची भूतकाल जब समान रचनाओं में निषेध के साथ आता है तो उस व्यापार को व्यक्त करता है जो कि किसी-न-किसी कारण दूसरे बीते हुए व्यापार से पहले पूरा नहीं हो सका। इस तरह यहाँ शुद्ध संकेतवाचक पूर्ववर्तिता होती है, उदाहरणार्थ : कोदई ने अभी कोई जवाब नहीं दिया था कि नोहरी पीछे से आकर बोली...(६६, ७२), बड़े-बड़े वैद्यराज अभी रोग की परख भी न कर पाये थे कि मृत्यु ने काम तमाम कर दिया (६६, १०४), बेचारा जानवर अभी दम भी न लेने पाया था कि फिर जोत दिया (६६, १५६)।

क्षणिक पूर्ववर्तिता की संरचनात्मक-प्रतिबन्धित को और क्षणिक पूर्ववर्तिता प्रयोग शाब्दिक-प्रतिबन्धित प्रयोग के बीच जो कि 'अभी' क्रियाविशेषण से पक्के होते हैं, भेद करना चाहिए, उदाहरणार्थ : वे उस सड़क पर होकर आगे बढ़ रहे थे कि जिस पर होकर अभी-अभी चन्द्रगुप्त गये थे (१५६, ३७), ...रामू

धोबी...उसी नयी फ़िल्म के गीत गाता हुआ जो उसने अभी-अभी देखी थी, घर की ओर चला (२७, १८), घड़ी की ओर देखा था : अभी तीन बजे थे (६५, १९३), चूँकि पूर्णतावाची भूतकाल के प्रयोग के लिए व्यापार की पूर्णता तथा काल केन्द्र के बीच का कालान्तर निश्चित नहीं होता। व्यापार या तो काल केन्द्र से बिलकुल पहले पूर्ण हो सकता है, या काल केन्द्र से काफ़ी पहले भी समाप्त हो सकता है, उदाहरणार्थ : आज से पाँच दिन पहले उसको बुखार आया था (१११, ७०), आज से लगभग ६००० वर्ष पहले की सभ्यता का इतिहास हमें बहुत कुछ मालूम है। लेकिन हमारे देश में उसके लाखों वर्ष पहले ही मनुष्य रहने लगे थे (२, ६)।

जब अपूर्ण काल के क्रियाविशेषण होते हैं तो पूर्णतावाची भूतकाल का व्यापार पहले पूर्ण हुए व्यापार का परिणाम व्यक्त करता है। व्यापार जब पूर्णता को प्राप्त कर लेता है तो काल के क्षण में अपने परिणामी अर्थ का सहारा लेता है। इस तरह पूर्णतावाची भूतकाल के पूर्णतावाची-समावेशी अर्थ में, व्यापार जो कि काल केन्द्र से पहले ही पूर्ण हो चुकता है, काल के क्षण में भी हो सकता है जो कि पूर्ण हुए व्यापार की काल के क्षण तक की परिणामी अवस्था है। पूर्णतावाची भूतकाल का पूर्णतावाची अर्थ सबसे ज्यादा स्पष्ट असमापक क्रियाओं के कारण होता है, उदाहरणार्थ : शाम ही से जंगल का स्टेडियम पहलवानी के शौकीन लोगों से भर गया था (२८, १९१), बंगाली बहुत समय से सैनिक सेवा से वंचित रखे गये थे (११६, २७),...उसने भी बहुत दिन से वह आवाज़ नहीं सुनी थी (२५, ५०), भय्या, जब से तुमने मेरी पंचायत की, तब से मैं तुम्हारा प्राणघातक शत्रु बन गया था (६९, ६३)।

दशासूचक और भाववाच्य क्रियाएं अपनी अर्थ-शक्ति के अनुसार पूर्णतावाची अर्थ दे सकती हैं चाहे अपूर्ण काल के क्रियाविशेषण न भी हों, उदाहरणार्थ : सरदार...उदास बैठा था (२५, ३९), कई बोरे गुड़ और कई पीपे घी उन्होंने बेचे थे, दो-ढाई सौ रुपये कमर में बाँधे थे (६९, १६०),...ईश्वर की कृपा से हड्डी टूटी न थी (६९, १८९)।

पूर्णता पूर्ववर्तिता के साथ आ सकती है, उदाहरणार्थ : उसने (तुरैया) बड़े-बड़े मूँगे निकालकर मेज़ पर रख दिये। मेरी पत्नी मेरे साथ कमरे के भीतर आयी थी (६६, १९८) (अर्थात् पत्नी उस क्षण से पहले पहुँची जबकि तुरैया ने मूँगों को रखना शुरू किया और कमरे में तब तक रही जब तक तुरैया मूँगों को रख रही थी)।

पूर्णतावाची भूतकाल और पूर्णतावाची वर्तमान में ऐसी रचनाओं में भेद जहां एक ही क्रियाएं हों यह है कि पूर्णतावाची भूतकाल किसी-न-किसी तरह काल केन्द्र की तरफ़ स्थिर होता है, जबकि पूर्णतावाची वर्तमान काल के क्षण के सम्बन्ध के बग़ैर ही पूर्ण होता है। पूर्णतावाची वर्तमान के लिए दूसरे व्यापार का पूर्ववर्ती

होना ज़रूरी नहीं, व्यापार सिर्फ़ उक्ति के क्षण का पूर्ववर्ती होता है। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है पूर्णतावाची भूतकाल सापेक्ष काल रूप है जबकि पूर्णतावाची वर्तमान निरपेक्ष रूप है। उदाहरणार्थ: 'जाने शहर के विभिन्न मोहल्लों' से कितने जुलूस वहां पहुंचते थे। लगता था जैसे सारा शहर नाडीराम के तालाब पर पहुँचा है (१७, १३१)'—पहले वाक्य में कहा गया है कि उपन्यास का हीरो तालाव पर जब पहुंचा, वहीं पर ही वहुत से जुलूस पहुँचे थे। दूसरे वाक्य में कहा गया है कि सारा शहर, तालाब के पास पहुँचने पर, वहां है; 'उसने डिप्टी-कलेक्टरी के लिए दरखास्त दी थी (१४३, ९)' और 'अस्तभान—तूने डिप्टी-कलेक्टरी के लिए दरख़ास्त दी है (१४३, ११)'—पहले वाक्य में इस बात का संकेत देते हैं कि हीरो ने दरख़ास्त पहले ही दे दी है और चाहता था कि अस्तभान उसे नौकरी को देने में मदद करे, दूसरे वाक्य में इस बात पर ज़ोर है कि हीरो ने दरख़ास्त दे रखी है और कहीं उसके ऊपर गौर किया जा रहा है।

पूर्णकालिकता के अर्थ में पूर्णतावाची भूतकाल काल केन्द्र से मेल खाता है और इस तरह पूर्ववर्तिता को व्यक्त करता है लेकिन उक्ति के क्षण को। इस अर्थ में पूर्णतावाची भूतकाल अति प्राचीन काल की तरह प्रयोग में आता है और मुख्यत: उस व्यापार को व्यक्त करता है जो कि अतिप्राचीन काल में पूर्ण हुआ हो, उदाहरणार्थ: चन्द्रगुप्त के समय में एक चीनी यात्री फाह्यान आया था। वह ३९९ ई० में अपने देश से चला था (२, ६७), ६४३ ई० में उसने ह्वाँग-साँग के सामने भी एक ऐसी सभा कन्नौज में की थी (२, ८०)।

विवरण के शुरू में विभिन्न काल चिह्नकों को व्यक्त करते समय (अध्याय के शुरू में या पैराग्राफ़ के शुरू में) पूर्णतावाची भूतकाल स्वयं काल केन्द्र को बनाने लगता है, जिसके बाद बाकी घटनाएं होती हैं, उदाहरणार्थ: शाम हो गयी थी, कई मित्र आ गये (६९, १०३), संध्या हो गयी थी। कर्मचारी एक-एक करके जा रहे थे (६५, ९८), रात के दस बज गये थे। जालपा खुली छत पर लेटी हुई थी (६५, २१)।

पूर्णतावाची भूतकाल काल केन्द्र के प्रकार्य में उन घटनाओं को व्यक्त करने के लिए आ सकता है जो कि समय के चिह्नकों से सम्बन्ध नहीं रखतीं, उदाहरणार्थ: वाढ़ ने और भी विशाल रूप पा लिया था। सवेरे से रात तक बाढ़ की ख़बरों को छोड़कर कहीं और कोई चर्चा न होती थी (१, ६५), पानी थम गया था। इसकी चेतना जब हुई तो दोनों कारिडोर से निकल आये (१११, ६८)।

पूर्णतावाची भूतकाल के इस पूर्णकालिक अर्थ को सांदर्भिक-प्रतिबन्धित कह सकते हैं, जिसके साथ-साथ पूर्णतावाची भूतकाल का संरचनात्मक-प्रतिबन्धित अर्थ भी होता है, जब वह कालवाचक मिश्र वाक्य के मुख्य हिस्से में प्रयोग होता है। उसके आश्रित हिस्से में सामान्य भूतकाल होता है, उदाहरणार्थ: चन्द्रगुप्त ने जब

नन्दों का नाश किया तब शायद कलिंग स्वतन्त्र हो गया था (२, ४६), पिछले साल जब उसने अपने से ड्यौढ़े जवान को...दंगल में पछाड़ दिया, तो उन्होंने... अखाड़े में ही जाकर उसे गले से लगा लिया था, पाँच रुपये के पैसे भी लुटाये थे (६९, १४९)।

इन उदाहरणों में व्यापार जो कि पूर्णतावाची भूतकाल द्वारा व्यक्त किया गया है, उस व्यापार के अनुवर्ती है जो कि सामान्य भूतकाल द्वारा व्यक्त किया गया है।

पूर्णतावाची भूतकाल और सामान्य भूतकाल में भेद यह है कि पूर्णतावाची भूतकाल आम तौर पर क्रमबद्ध, एक-दूसरे को बदलते हुए व्यापारों को व्यक्त करने के काम नहीं आता। जब वह कथनात्मक प्रकार्य में आता है तो वह मानो वर्णन को तोड़ देता है और जिस व्यापार को वह व्यक्त करता है वह कहीं पहले कालार्थ में होता है, उदाहरणार्थ : तब हूण पश्चिम की ओर बढ़ने लगे। उन्होंने युचियों और शाकों को ठेलकर भारत की ओर **भेजा था**। इस समय वे स्वयं भारत पर आक्रमण करने लगे (२, ६८), संध्या समय पचास हज़ार आदमी जमा हो गये। आज का नेतृत्व मुझे **सौंपा गया था**।...एक अबला स्त्री, जिसे संसार का कुछ भी ज्ञान नहीं, जिसने घर से बाहर पाँव नहीं निकाला, आज अपने प्यारों के उत्सर्ग की बदौलत उस महान पद पर **पहुंच गयी थी**...निश्चित समय पर जुलूस ने प्रस्थान किया (६९, १५)।

पूर्णतावाची भूतकाल एक-जैसे व्यापारों को गिनवाते समय बताता है कि व्यापार एक-दूसरे को क्रमबद्ध नहीं बदलते, बल्कि एक ही लाइन में होते हैं और आंशिक रूप से अपने काल की गति के साथ मेल खाते हैं, उदाहरणार्थ : एक बार एक कड़ा व्याख्यान देने के लिए जेल हो आये थे...अब उसका विवाह हो गया था, दो-तीन बच्चे भी हो गये थे, दशा बदल गयी थी (६९, ८३), बहुत बार रोई थी वह इस बात को लेकर, बहुत बार उसने सिर फोड़े थे, मायके गयी थी और बहुत बार अपने बड़े लड़के प्रदीप को धुना था (१०७, ३२)।

उस स्थिति में भी जबकि ऐसा लगता है कि बाह्य तौर पर व्यापार एक-दूसरे को क्रमबद्ध बदल रहे हैं, पूर्णतावाची भूतकाल फिर भी पूर्ववर्ती व्यापारों को व्यक्त करता है जो कि समय की अपनी गति के साथ मेल खाते हैं, उदाहरणार्थ : पूटी गुरु कल सवेरे ही बड़े तड़के ही...किसी गाँव में गये थे। पाधा गली का बाचान महाराज भी उनके साथ गये थे। वह तो रात ही में किसी की साइकिल के पीछे बैठकर लौट आये थे और रात में उन्होंने रमेश की मां को सन्देशा भिजवा दिया था कि गुरु सवेरे आयेंगे (१, २४६)।

संयोजक क्रिया की हैसियत से 'होना' क्रिया पूर्णतावाची भूतकाल में लक्षण की पूर्णता का संकेत देती है, जो कि नामिक हिस्से में होता है। तब लक्षण की

पूर्णता ज़्यादा बाद के कालार्थ के परिणामी अर्थ को रखती है, अर्थात् पूर्ण भूत का योजक मुख्यत: पूर्णतावाची-समावेशी अर्थ व्यक्त करता है, उदाहरणार्थ :...दूसरे क़बीले के लोग इनकी पंचायत में आने के लिए तैयार हुए थे (३६, ७१), एक भी बाल सफ़ेद न हुआ था (६६, १८८), अभी उनका कर्तव्य पूर्ण नहीं हुआ था (४, ६४)।

विश्लेषणात्मक क्रिया के क्रियार्थक घटक में 'होना' क्रिया पूर्णतावाची भूतकाल में इस काल रूप की सभी छायाएं व्यक्त करती है, उदाहरणार्थ : गली की ज़िन्दगी शुरू हो गयी थी (१११, २६)।

## पूर्णतावाची आभ्यासिक भूतकाल

यह काल का रूप द्वितीय कृदन्त के पुल्लिग के दो लैंगिक रूपों (एकवचन तथा बहुवचन), और स्त्रीलिंग के एक लैंगिक रूप तथा कर्तृ-सम्वन्धी और कर्म-सम्बन्धी रचनाओं में संयुक्त अपूर्णतावाची सहायक क्रिया के चार लैंगिक रूपों या भाववाचक रचना में एकवचन में पुल्लिग के एक लैंगिक रूप तथा सहायक क्रिया के समान लैंगिक रूप के मिलन से बनता है।

### **कर्तृ-सम्बन्धी रचना**

मैं
तू बैठा (-ठी) हो-ता (-ती) था (-थी)
वह

हम
तुम, आप बैठे (बैठी) हो-ते (-ती) थे (थीं)
वे

### **कर्म-सम्बन्धी रचना**

एकवचन

मैं
तू
उस
हम ने पत्र (चिट्ठी) लिखा (लिखी) हो-ता (-ती) था (थी)
तुम
आप
उन्हों

बहुवचन

मैं
तू
उस
हम ने दो पत्र (दो चिट्ठियां) लिखे (लिखी) हो-ते (-ती) थे (थीं)
तुम
आप
उन्हों

**भाववाचक रचना**

एकवचन तथा बहुवचन

मैं
तू
उस
हम ने पत्र-पत्रों को (चिट्ठी-चिट्ठियों को) लिखा होता था
तुम
आप
उन्हों

यह काल रूप सीमित विशेष प्रसंग से सम्बन्ध रखता है और बहुत कम प्रयोग में आता है। यह एकल पृथक्कृत व्यापारों के 'गुच्छे' को व्यक्त करता है जो कि निश्चित या अनिश्चित कालावधि में आवर्ती होते हैं और पूर्णभूत या पूर्णतावाची-समावेशी अर्थ व्यक्त करते हैं।

पूर्णतावाची आभ्यासिक भूतकाल पूर्णभूत के अर्थ में उस व्यापार को व्यक्त करता है जो कि दूसरे व्यापार तक जो कि साधारणतया या नियमित तौर पर होता है, आमतौर पर पूर्ण हो जाता है। उदाहरणार्थ: उसके बाद १० दिन उन लोगों को दान दिया जाता था जो दूर-दूर से आये होते थे (२, ८०), जिन देहातियों ने कभी शहर में फ़िल्म देखी होती थी वे ज़रूर शुरू से लेकर अन्त तक पूरा खेल देखते (V, जनवरी, १९६३, ९६)।

पूर्णभूत का अर्थ विशेषकर स्पष्ट द्वितीय कृदन्त के पक्ष-सम्बन्धी रूपों को ('चुकना' रंजक क्रिया के साथ) इस्तेमाल करने से होता है, उदाहरणार्थ: दोपहर के समय जब वह खाना खाने घर पर आता तो प्रायः उसकी मां लखने के लिए रोटी लेकर खेतों पर जा चुकी होती थी (७५, ७३), तारो और कीशू तब तक अपने स्कूलों को जा चुके होते थे (१, ५७०), जब वे घर आते तो उसका बच्चा सो चुका होता...(७, ८२)।

पूर्णतावाची आभ्यासिक भूतकाल का पूर्णतावाची-समावेशी अर्थ वह व्यापार व्यक्त करता है जो आम तौर पर काल के क्षण तक अधिकतम हो चुका हो और काल के क्षण के बाद साधारण परिणामी अवस्था के रूप में जारी रहे, उदाहरणार्थ : कई बार महरोत्रा स्टूडियो से आता तो उसकी बीवी नीचे झोंपड़ी के दरवाज़े पर अमृता बहन के पास बैठी होती (८, ९६),...जो अपनी चारपाई पर आराम से लेटे होते थे (७५, ५६), धोती उसकी घुटने के ऊपर और आस्तीनें कोहनियों पर चढ़ी होतीं (१७, २८७), ऊँटों पर...शामियाने लदे होते थे (७३, ८)।

## पूर्णतावाची स्थैतिक भूतकाल

काल का यह रूप द्वितीय कृदन्त के पुल्लिग के दो (एकवचन तथा बहुवचन) लैंगिक रूपों और स्त्रीलिंग के एक लैंगिक रूप तथा कर्तृ-सम्बन्धी और कर्म-सम्बन्धी रचनाओं में संयुक्त पूर्ण भूत सहायक क्रिया के चार लैंगिक रूपों के मिलन या भाववाचक रचना में एकवचन में पुल्लिग के एक लैंगिक रूप और सहायक क्रिया के समान लैंगिक रूप के मिलन से बनता है।

### कर्तृ-सम्बन्धी रचना

मैं
तू बैठा (बैठी) हुआ (हुई) था (थी)
वह
हम
तुम, आप बैठे (बैठी) हुआ (हुई) था (थीं)
वे

### कर्म-सम्बन्धी रचना

एकवचन

मैं
तू
उस
हम ने पत्र (चिट्‌ठी) लिखा (लिखी) हुआ (हुई) था (थी)
तुम
आप
उन्हों

बहुवचन

मैं

तू

उस

हम ने दो पत्र (दो चिट्ठियां) लिखे (लिखी) हुए (हुई) थे (थीं)

तुम

आप

उन्हों

**भाववाचक रचना**

एकवचन तथा बहुवचन

मैं

तू

उस

हम ने पत्र-पत्रों को (चिट्ठी-चिट्ठियों को) लिखा हुआ था

तुम

आप

उन्हों

यह काल रूप पूर्णतावाची-समावेशी अर्थ रखता है : व्यापार काल के क्षण से पहले अधिकतम होता है और काल के क्षण के बाद भी परिणामी अवस्था के रूप में जारी रहता है। पूर्णतावाची स्थैतिक भूतकाल संयुक्त नामिक विधेय का व्याकरणिक समनाम है, जो कि संयुक्त द्वितीय कृदन्त तथा 'था' योजक से बना होता है। इस सूरत में व्यापार-अवस्था जो कि संयुक्त कृदन्त द्वारा व्यक्त होती है मूर्त भूतकाल से सम्बन्ध रखती है।

इसके बावजूद कि यह रूप सीमित विशेष प्रसंग से सम्बन्ध रखता है, यह रूप काफ़ी पाया जाता है, यह बात उन रूपों के लिए विशेषकर स्वाभाविक है जो कि कर्तृ-सम्बन्धी रचना को बनाते हैं, उदाहरणार्थ : लाला कानपुर गये हुए थे (१, ७७), इस समय तक स्टीवनसन डाक बंगले में पहुंचा हुआ था (३६, १४४), सभी के चेहरे मुर्झाए हुए थे (६९, १७४), जालपा खुली छत पर लेटी हुई थी (६५, २१)।

पूर्णतावाची स्थैतिक वर्तमान के मुकाबले पूर्णतावाची स्थैतिक भूतकाल के रूप जो कि कर्म-सम्बन्धी और भाववाचक रचना बनाते हैं, अक्सर पाये जाते हैं, उदाहरणार्थ : औरतों ने बाल सँवारे हुए थे (३६, २७), इन लोगों ने एक कोठरी किराये पर ली हुई थी (९७, २४),...उसने एक प्रेमिका पाली हुई थी (३०,

११८),...उसने सिंगार भी बहुत कौशल से किया हुआ था (३६, १२३), सीढ़ियों से सटे जंगले पर ह्यूबर्ट ने अपना सिर रखा हुआ था (५२, १२३)।

## संतत भूतकाल

यह काल का रूप संतत कृदन्त के पुल्लिग (एक वचन तथा बहुवचन) के दो लैंगिक रूपों और स्त्रीलिंग के एक लैंगिक रूप तथा सहायक क्रिया 'था' के चार लैंगिक रूपों से बनता है।

मैं
तू लिख रहा (रही) था (थी)
वह
हम
तुम, आप लिख रहे (रही) थे (थीं)
वे

इस रूप का सामान्य अर्थ पूर्व० +, सी० +, अके० + और प्र० + चिह्नों द्वारा वर्णित होता है; जिनमें से प्र० + मुख्य है। अपूर्णतावाची भूतकाल के विपरीत संतत भूतकाल व्यापार को उसके प्रत्यक्ष विकास में व्यक्त करता है जो कि भूतकाल में, ठीक दिये गये समय पर होता है जो कि बीते हुए व्यापार के ज़रिये निश्चित होता है या शाब्दिक चिह्नक के द्वारा व्यक्त होता है। इस तरह भूतकाल में काल के क्षण को मालूम कर सकते हैं: (१) काल चिह्नक द्वारा, उदाहरणार्थ: एक दिन संध्या समय मैं रामायण पढ़ रही थी (६६, ८१), दोपहर हो गयी थी। चरवाहे दूर कहीं पहाड़ पर पुकार रहे थे (१०३, १०३); (२) आश्रित वाक्य द्वारा (मुख्यतः काल के), उदाहरणार्थ: राम दफ़्तर से घर पहुँचा तो चार बज रहे थे (६५, ३८), बाप-बेटे दोपहर में पहुँचे तो बिन्दु सोना से बातें कर रही थी (३७, १६); (३) पूर्ववर्ती प्रसंग के द्वारा, उदाहरणार्थ: रामो को देखते ही लड़कों ने ताश को टाट के नीचे छिपा दिया और पढ़ने लगे। सिर झुकाए चपत की प्रतीक्षा कर रहे थे (६५, २१), उसने खिड़की खोल दी और नीचे की तरफ़ झांका। होली अब भी जल रही थी और एक अंधा लड़का गा रहा था (६६, १६)।

इस तरह अपूर्णतावाची भूतकाल के विपरीत संतत भूतकाल आम तौर पर एकल व्यापार को व्यक्त करता है और सामान्यीकृत व्यापार को व्यक्त नहीं कर सकता।

संतत और अपूर्णतावाची भूतकाल के व्यापार एक-दूसरे से मेल तब खा सकते हैं जब वे किसी मूर्त व्यापार को व्यक्त करते हैं जो कि भूतकाल में किसी निश्चित क्षण पर होता है, उदाहरणार्थ: (क) 'एक स्वप्न देख रही थी'... 'क्या स्वप्न देखती थी?' (६५, २५); (ख) '...अनुभवी योद्धा...सोना फेंकते हुए

अकड़ते फिर रहे थे...लुटेरों की टोलियाँ...बाज़ारों में घूमती फिरती थीं' (४, ४१, ४२); (ग) 'उसका चपल अश्व हवा में उछल रहा था' (४, १२८), और 'पाँचों रंगरूट...उछलते थे...' (६६, ७७)।

दोनों काल रूपों में भेद यह है कि संतत भूतकाल हमेशा किसी काल केन्द्र अर्थात् काल के क्षण के साथ सम्बन्ध रखता है, जबकि अपूर्णतावाची भूतकाल किसी उक्ति के क्षण के साथ परस्पर सम्बन्ध रखता है न कि काल के क्षण के साथ अर्थात् अपूर्णतावाची भूतकाल निरपेक्ष काल है और संतत भूतकाल सापेक्ष।

इस तरह संतत भूतकाल एक मूर्त प्रक्रियात्मक व्यापार है जो समय में सीमित होता है और भूतकाल में किसी विशेष समय में होता है जो कि किसी दूसरे बीते हुए व्यापार या काल के शाब्दिक चिह्नक के साथ परस्पर सम्बन्ध रखता है। इस तरह संतत भूतकाल उस व्यापार को व्यक्त करता है जो कि प्रत्यक्ष रूप से काल के क्षण में होता है।

काल के क्षण की कालावधि विभिन्न हो सकती है : (क) व्यापार काल के क्षण के साथ ठीक मेल खा सकता है और (ख) व्यापार काल के क्षण की सीमा के बाहर आ सकता है, उससे पहले शुरू होके काल के क्षण में जारी रह सकता है। इसी कारण संतत भूतकाल को निम्नलिखित प्रकारों में बाँट सकते हैं :

(१) काल के प्रत्यक्ष क्षण का वास्तविक संतत भूतकाल, उदाहरणार्थ : कुछ देर में उसने सिर उठाकर देखा तो युवक का सारा शरीर काँप रहा था (५, ४८), बाबूजी उस समय ऊपर कमरे में बैठे कुछ पढ़ रहे थे (६६, ६८), महाराज महासेनापति का ध्यान उधर गया...अमीर के हाथी दीवार बनाकर चल रहे थे (४, १७३), कजरी मेरी ताकत जानती थी। वह आराम से खड़ी गाली दे रही थी...(१०३, ११०)।

(२) विस्तारित व्यापार का वास्तविक संतत भूतकाल, जो कि न केवल काल के क्षण के साथ मेल खाता है, बल्कि काफ़ी विस्तृत कालार्थ को लिए होता है, जो आम तौर पर काल के क्रियाविशेषणों की मदद से व्यक्त होता है, उदाहरणार्थ : बेचारा चार साल से रँडुआ चला आ रहा था...(१७, ५१), पिछले दस वर्षों से बिल्टू रिक्शा चला रहा था (११०, ७०), वह फ़र्स्ट क्लास के डिब्बे में बैठा अपनी पत्नी के साथ पिछले आधा घंटे से ताश खेल रहा था (८, ९६), जहां वह सात साल से रह रहा था (१४२, १४०),...जो उस समाधि में आठ सौ वर्ष से तपस्या कर रहे थे (२८, १३४)।

संतत भूतकाल नित्यतासूचक व्यापार को व्यक्त नहीं कर सकता जो सिर्फ़ उक्ति के क्षण को शामिल करता है और समय की किसी भी सीमा के बिना अविराम जारी रहता है जैसा कि अपूर्णतावाची भूतकाल की स्थिति में होता है। वह उस

व्यापार को व्यक्त करता है जो हमेशा काल के क्षण की टेक लेता है, हालाँकि उसकी शुरुआत काल के क्षण के बहुत पहले हो सकती है। इसीलिए व्यापार ऐसे वाक्यों में जैसे '...यहां से ऊपर को सीढ़ियां उस छिद्र तक जा रही थीं' (४, १६६), 'तट पर एक बहुत बड़ा प्राचीन वट वृक्ष था, उसकी अनगिनत जटायें जल तक छू रही थीं' (४, १५०), '...कालीन बिछे थे, जिन पर सुनहरी तारों का काम हो रहा था' (४, ४३), काल के प्रत्यक्ष क्षण से परस्पर संबंध रखता है, वह भूतकाल के समस्त अर्थ को भरता नहीं है जिसमें व्यापार नित्यतापूर्वक और अविराम जारी रहता है परन्तु काल के निश्चित समय पर होता है अर्थात् उद्देश्य का नित्यतासूचक नहीं बल्कि क्षणिक लक्षण प्रस्तुत करता है।

'होना' क्रिया जब संतत भूतकाल में आती है तो वह आंशिक रूप से अस्तित्व का अर्थ खो बैठती है और नित्यताबोधक क्रिया का अर्थ व्यक्त करती है, उदाहरणार्थ : लड़कियों का आदान-प्रदान हो रहा था (३६, २३),... भीतर गाना हो रहा था (७२, १५३), अब मुख्य युद्ध जल ही में हो रहा था (४, १७३)।

'होना' क्रिया जब संयोजक प्रकार्य में आती है तो संतत भूतकाल में वह उस लक्षण के साथ परस्पर संबंध की ओर संकेत करती है जो कि नामिक हिस्से में भूतकाल में किसी निश्चित क्षण में व्यक्त होता है। इस स्थिति में लक्षण स्थैतिक नहीं होता बल्कि गतिक होता है, उदाहरणार्थः वह अत्यन्त दुर्बल हो रहे थे (६६, ६१),...उसका मुख पीला हो रहा था (४, २२), वह तो हर्षोन्मत्त हो रहा था (१०३, ३०८)।

## संतत आभ्यासिक भूतकाल

काल का यह रूप संतत कृदन्त के स्त्रीलिंग के एक लैंगिक रूप और पुल्लिग (एकवचन तथा बहुवचन) के दो लैंगिक रूप तथा अपूर्णतावाची संयुक्त सहायक क्रिया के चार लैंगिक रूपों के मेल से बनता है।

मैं
तू लिख रहा (रही) हो-ता (-ती) था (थी)
वह
हम
तुम, आप लिख रहे (रही) हो-ते (-ती) थे (थीं)
वे

यह रूप सीमित विशेष प्रसंग से संबंध रखता है और कम पाया जाता है। यह किसी मूर्त, एकल व्यापार को व्यक्त करता है जो आम तौर पर काल के किसी निश्चित क्षण पर होता है। व्यापार सविराम नहीं होता, बल्कि व्यापारों का जोड़, सजातीय 'गुच्छा' होता है, जो कि ठीक दिये गये कालक्षण में होते हैं, जो कि दूसरे

बीते हुए व्यापार द्वारा निर्धारित है, उदाहरणार्थ : कभी मलहोत्रा छुट्टी के दिन बारह-एक बजे इधर से गुज़रते, तो लल्लन नल पर नहा रही होती। कभी गीली धोती में उभरा बदन छिपाती, अपनी कोठरी की ओर आ रही होती। मलहोत्रा देखकर भी न देखते। कभी ऐसे में उसका पति हरिया अपनी कोठरी के आगे बैठा बीड़ी पी रहा होता (१३, ३८)। हम लोग उसके यहां पहुँचते, तो उसके कमरे से सितार की आवाज़ आ रही होती...मगर जब वह इन दोनों कामों में से कोई भी न कर रही होती, अपने तख्त पर...लेटी छत की तरफ देख रही होती (५२, १३२), चेतन जब कभी पानी भरने या कुएं पर नहाने जाता और उनमें से कोई पानी भर रही होती...(१७, ११६), जब घर आता, वे वहीं एकान्त में बैठी अपनी बच्ची से उलझती होतीं। कभी दूध पिला रही होतीं या कभी तेल लगाकर गर्म पानी से नहला रही होतीं (१०८, ७५)।

जैसा कि उदाहरणों से विदित है, सहायक संयुक्त अपूर्णतावाची क्रिया यहां, आम तौर पर, बगैर 'था' काल के चिह्नक के कृदन्तपरक रूप में आती है।

## भविष्यत् काल के रूप

भविष्यत् काल के निम्नलिखित रूपों में भेद होता है :

(१) सामान्य भविष्यत् काल (सरल भविष्यत् काल), (२) अपूर्णतावाची भविष्यत् काल (द्वितीय भविष्यत् काल), (३) पूर्णतावाची भविष्यत् काल (तृतीय भविष्यत् काल), (४) संतत भविष्यत् काल। ये सभी रूप सामान्य होते हैं और निम्नलिखित चिह्नों द्वारा व्यक्त होते हैं : पर० +, सी० +, अके० ±, और प्र० ± । रूप जो कि प्रथम कृदन्त द्वारा व्यक्त होता है, वह अतिरिक्त चिह्न आव० + द्वारा व्यक्त होता है, रूप जो कि द्वितीय कृदन्त द्वारा व्यक्त होता है, संभाव्य चिह्न पूर्ण० ± द्वारा व्यक्त होता है।

हर रूप का अपने प्रयोग की निश्चित विशेषता है, इसलिए उनका स्वतंत्र वर्णन करना ज़रूरी है।

## सरल (सामान्य) भविष्यत् काल

काल का यह रूप पुल्लिग तथा स्त्रीलिंग के चार तिङन्त-विकारी रूपों द्वारा व्यक्त होता है :

| | |
|---|---|
| मैं लिखूं-गा (-गी) | हम लिखें-गे (-गी) |
| तू लिखे-गा (-गी) | तुम लिखो-गे (-गी) |
| | आप लिखें-गे (-गी) |
| वह लिखे-गा (-गी) | वे लिखें-गे (-गी) |

सामान्य भविष्यत् काल निम्नलिखित मुख्य चिह्नों द्वारा वर्णित होता है :

पर० + और सी० +। वह उस व्यापार को बताता है जिसकी शुरूआत या कार्यान्विति उक्ति के क्षण के बाद होगी या उक्ति के क्षण के साथ मेल खायेगी। सामान्य भविष्यत् काल किसी घटना को बताता है जो कि वक्ता की राय में भविष्यत् काल में ज़रूर होगी। सामान्य भविष्यत् काल का व्यापार मूर्त, एकल हो सकता है, और आवर्ती और अमूर्त भी हो सकता है, जो शाब्दिक चिह्नकों और प्रसंग द्वारा निर्धारित होता है।

एकल, मूर्त व्यापार का सामान्य भविष्यत् काल एकल, मूर्त तथ्य को व्यक्त करता है जो कि उक्ति के क्षण के बाद होगा या उक्ति के क्षण के साथ शुरू होगा, उदाहरणार्थ : इस जुमेरात को जाऊँगी (६६, १६५), तुम कोलाबा नहीं जाओगे, हमारे साथ जाओगे (२८, १६४), अगले मंगल को सवा सेर लड्डू चढ़ाऊँगा (१११, ७८), आज नहीं तो कल वह खुले ही गा (३, ३०), बहुत बक-बक करोगी तो अब मारूँगी (१०६, ५२)।

सामान्य अमूर्त भविष्यत् काल को बाँटा जा सकता है : (१) अमूर्त आवर्ती भविष्यत् काल और (२) अमूर्त सामान्यकृत भविष्यत् काल।

अमूर्त आवर्ती भविष्यत् काल सविराम व्यापार को व्यक्त करता है जो कि भविष्य में कई बार हो सकता है, उदाहरणार्थ : जो ख़र्च वह तुम्हें देते थे मैं दूँगा (२८, १७२),...तुम्हारे आर्केस्ट्रा में वायलिन बजाऊँगा (२८, १६५), कभी सूखा पड़ेगा तो ऐसा पड़ेगा कि मीलों किसी कुएँ में पानी नहीं बचेगा (१११, ६६), क्या तुमने मुझे पहचान लिया? आपको नहीं पहचानूँगी तो भला किसे पहचानूँगी? (७५, २२३)।

अमूर्त सामान्यकृत भविष्यत् काल वह व्यापार व्यक्त करता है जो भविष्यत् काल भी कभी भी हो सकता है, उदाहरणार्थ : मेरे घर में या तो धर्मपत्नी आयेगी और मैं उसके आते ही सही अर्थों में एक शरीफ़ पति बन जाऊँगा, वरन यूँ भी ज़िन्दगी क्या बुरी है (१, ४३०),...किसी-न-किसी दिन उसे इस द्वीप को छोड़ना ही पड़ेगा (११५, ४५३)।

'होना' क्रिया सामान्य भविष्यत् काल में दो अर्थों में आती है : (१) जब किसी मूर्त तथ्य को बताना होता है, जो, वक्ता की राय में, अवश्य ही भविष्य में होगा, उदाहरणार्थ : प्रजा की रक्षा कैसे होगी? नहीं होगी महाराज (४, १०१), ऐसे तमाशे होंगे कि देखकर तेरी आँखें खुल जायेंगी (६६, ६), वह दुनिया कितनी अच्छी होगी, जिसमें पुलिस नहीं होगी (१०३, १५४), और (२) जब किसी कल्पना को या किसी तथ्य या घटना की भविष्यत् काल या वर्तमान काल में संदिग्धता व्यक्त करते हैं, जबकि वक्ता उसके बारे में सिर्फ़ कल्पना करता है, लेकिन पक्का विश्वास व्यक्त नहीं करता, उदाहरणार्थ : माइकु ने कहा—बड़ी भीड़ है। वे कोई दो-तीन सौ आदमी होंगे (६६, ६१), मेरा अनुमान है कि खिड़की के सामने

गुज़रने वाला पहला व्यक्ति एक पुरुष होगा (३५, ५९), सब मिल के ढाई-तीन हज़ार मज़दूर होंगे। फिर भी तो उनकी यूनियनें होंगी। और उनके नेता भी होंगे (१, ५७५)।

बहुत ही कम स्थितियों में कल्पना भूतकाल के अर्थ के साथ संबंध रखती है, उदाहरणार्थ : यह विवाह नहीं था, शोभा। तुम्हारे लिए न होगा, मेरे लिए था। अब भी है (२८, १५०)।

'होना' क्रिया संयोजक क्रिया के प्रकार्य में सामान्य भविष्यत काल में उस लक्षण को व्यक्त करता है जो कि नामिक हिस्से में आता है, जो वक्ता की राय में, थोड़ी ज़्यादा विश्वस्तता से भविष्य में प्रकट होगा, अर्थात लक्षण मूर्त तथा काल्पनिक भी हो सकता है, उदाहरणार्थ : एक पहर दिन चढ़े बाद पातान पर मेरी सत्ता स्थापित होगी (४, १०८), यह सेना हमारे पृष्ठ का बल होगी (४, १०९), किन्तु हमारे बेटे-पोतों का धर्म ऐसा होगा जहां सब समान होंगे, कोई छोटा-बड़ा न होगा (४, १३२), कैसी भी हो। होगा तो जवान ही? (१०३, ३१३), होटल वाले बदमाश तो न होंगे (६५, २३१)।

भविष्यत् काल में 'होना' क्रिया जब विश्लेषणात्मक क्रियाओं के क्रियार्थक घटक में आती है तो इस काल रूप की सभी छायाएँ व्यक्त कर सकते हैं, उदाहरणार्थ : समाधि अभी भंग नहीं होगी (४, १२९)।

## अपूर्णतावाची भविष्यत् काल (द्वितीय भविष्यत्)

काल का यह रूप प्रथम कृदन्त के पुल्लिग के दो लैंगिक रूपों (एकवचन तथा बहुवचन) और स्त्रीलिंग के एक लैंगिक रूप तथा 'होना' क्रिया के पुल्लिग के चार तिङन्त-विकारी रूपों एवं स्त्रीलिंग के चार समान रूपों द्वारा व्यक्त होता है।

| | |
|---|---|
| मैं लिख-ता (-ती) हूंगा (-गी) | हम लिख-ते (ती) हों-गे (-गी) |
| तू लिख-ता (-ती) हो-गा (-गी) | तुम लिख-ते (-ती) हो-गे (-गी) |
| | आप लिख-ते (-ती) हों-गे (-गी) |
| वह लिख-ता (-ती) होगा (-गी) | वे लिख-ते (-ती) हों-गे (-गी) |

अपूर्णतावाची भविष्यत् काल पर० +, सी० +, आव + मुख्य चिह्नों द्वारा व्यक्त होता है। यह अपने प्रत्यक्ष अर्थ में वास्तविक या अवास्तविक नित्यताबोधक व्यापार बताता है जिसकी कार्यान्विति उक्ति के क्षण के बाद होती है या उक्ति के क्षण के साथ मेल खाती है, उदाहरणार्थ : और आज भी तुम्हारी बेटियों को लेकर जब तुम्हारी बीवी से लड़ाई होती होगी और यह तुम्हारी पूज्य मां बैठी-बैठी चौखट से सिर फोड़ती होगी...(१०७, १७)—वास्तविक व्यापार; जितने पैसे आप किराये में बचाते हैं उससे छः गुने को डाक्टरों को दे देते होंगे (१११, ६५)—

अवास्तविक व्यापार।

परन्तु आधुनिक हिन्दी में काल का यह रूप मुख्यतः अपने लाक्षणिक अर्थ में आता है, जो कि प्रयोग में इस रूप का मुख्य अर्थ बन गया है। प्रथम कृदन्त के साथ 'होना' क्रिया आने के कारण जो कि यहां अपने वृत्तिवाचक अर्थ में आती है, यह काल रूप सुनिश्चितता-संबंधी अर्थ से वंचित होता है जो कि सामान्य भविष्यत् काल के लिए स्वाभाविक है और व्यापार की काल्पनिकता की छाया व्यक्त करता है। इस तरह रूप की वृत्तिवाचक छाया होती है और वह प्रसंग के आधार पर वर्तमान भूत, भविष्यत् के अर्थ में कल्पना व्यक्त करता है। इस तरह व्यापार पूर्णतः वास्तविक होता है, लेकिन वक्ता पूर्णतः विश्वस्त नहीं होता कि व्यापार होता है (हुआ या होगा)। व्यापार का काल्पनिक चरित्र 'होना' क्रिया के सामान्य भविष्यत् काल के रूपों की उपस्थिति में प्रबल होता है।

वाक्य में 'अवश्य', 'ज़रूर' वृत्तिवाचक शब्दों की उपस्थिति में काल्पनिकता का अर्थ कमज़ोर पड़ जाता है और पहले स्थान पर विश्वस्तता और स्वीकारात्मकता की छाया आती है, हालांकि वक्ता का पूरी तरह से शक ख़त्म नहीं होता, उदाहरणार्थ :...वे आपको ज़रूर जानते होंगे (१०, ११८),...अवश्य ही फाटक पर उसके पत्तों का मेहराब लगाया जाता होगा (५०, ७८)।

**वर्तमान में कल्पना** : 'दुनिया में सब सोते होंगे', माधो बोला, 'बस हम ही जागते हैं' (१०२, १११),—तो खाते क्या होंगे ?—बेटी, यह लोग हवा पर रहते हैं (६६, २८६), वे आपको ज़रूर जानते होंगे (११६, ११८)।

**भूतकाल में कल्पना** : मैं अम्मा के पास गयी ही क्यों ? भाभी ज़रूर पहले से जानती होंगी (१०८, १३२), वहां तो तनख़ाह भी ज़्यादा मिलती होगी ? जी हां, सवा दो सौ मिलते थे (१४२, ३४), चेतन उन्हें आँख भर देखता हुआ उन दिनों की कल्पना करता था, जब वे लाठी चलाते होंगे (१७, ४७)।

**भविष्यत् काल में कल्पना** : (मुख्यतः निकट भविष्यत्) : ...वह कपड़े बदलने गयी है और आती होगी (१०८, ५३), गंधा ने अनुमान लगाया कि अंत्येष्टि क्रिया के बाद वे लोग अब यहीं आते होंगे (८७, ३०१), लच्छू बोला, 'अरे आती होगी बारात भी' (१, ८६), मुझसे जो कुछ कहोगे, मैं करती जाऊँगी (१०८, १२७), लड़का लाता होगा चिलम भरकर (१४७, १२)।

'होना' क्रिया अपूर्णतावाची भविष्यत् काल में प्रस्तुत व्यापार की अभ्यासता व्यक्त करती है, लेकिन उसकी छाया काल्पनिक होती है, उदाहरणार्थ : ननदों से हँसी-मज़ाक होता होगा (१४०, ७५), शत्रु के वार ख़ाली करने वाले सेनानायक के यहां उतनी तल्लीनता नहीं होती होगी, जितनी ताश या चौपड़ खेलते वक्त वड्डे की आँखों में होती है (१७, ४३), उनसे बच्चे क्यों नहीं होते हैं, यदि होते हैं, तो कहां होते होंगे (११६, १२)।

'होना' क्रिया संयोजक क्रिया के प्रकार्य में अपूर्णतावाची भविष्यत् काल में लक्षण की अभ्यासता की ओर संकेत करती है, जो कि नामिक हिस्से द्वारा काल्पनिक छाया सहित व्यक्त होता है, उदाहरणार्थ : तो लड़कियां बहुत ख़राब होती होंगी (६६, ५), वह...कितनी उदास और निराश होती होगी (३२, २०)।

जैसा कि उदाहरणों से विदित है, 'होना' क्रिया स्वतंत्र प्रयोग में और योजक के प्रकार्य में काल्पनिक व्यापार को व्यक्त करती है, जो कि वर्तमान के अर्थ से ज़्यादा और भूतकाल से कम, परस्पर संबंध रखता है, चूँकि भविष्यत् काल में काल्पनिकता सामान्य भविष्यत् काल की 'होना' क्रिया के रूपों द्वारा व्यक्त होती है।

## पूर्णतावाची भविष्यत् काल (तृतीय भविष्यत)

यह काल का रूप द्वितीय कृदन्त के पुल्लिग (एकवचन तथा बहुवचन) के दो लैंगिक रूपों और स्त्रीलिंग के एक लैंगिक रूप तथा कर्तृ-संबंधी रचना में सामान्य भविष्यत् काल में 'होना' क्रिया के पुल्लिग तथा स्त्रीलिंग के चार-चार तिङन्त-विकारी रूपों के मेल से बनता है; कर्म-संबंधी रचना में द्वितीय कृदन्त के पुल्लिग के दो लैंगिक रूपों और स्त्रीलिंग के एक लैंगिक रूप तथा सामान्य भविष्यत् काल में 'होना' क्रिया के पुल्लिग तथा स्त्रीलिंग के दो तिङन्त-विकारी रूपों के मिलने से या भाववाचक रचना में पुल्लिग के एक लैंगिक रूप तथा सामान्य भविष्यत् काल में 'होना' क्रिया के समान विकारी-तिङन्त रूप के मेल से बनता है।

### कर्तृ-सम्बन्धी रचना

मैं आया (आई) होऊंगा (-गी)
तू आया (आई) हो-गा (-गी)
वह आया (आई) हो-गा (-गी)

हम आए (आई) हों-गे (-गी)
तुम आये (आई) हो-गे (-गी)
आप आए (आई) हों-गे (-गी)
वे आये (आई) हों-गे (-गी)

### कर्म-संबंधी रचना

एक वचन

मैं
तू
उस
हम ने पत्र (चिट्ठी) लिखा (लिखी) हो-गा (-गी)
तुम

आप
उन्हों

बहुवचन

मैं
तू
उस
हम ने दो पत्र (दो चिट्ठियां) लिखे (लिखी) हों-गे (-गी)
तुम
आप
उन्हों

**भाववाचक रचना**

एकवचन तथा बहुवचन

मैं
तू
उस
हम ने पत्र-दो पत्रों को (चिट्ठी-दो चिट्ठियों को) लिखा होगा
तुम
आप
उन्हों

पूर्णतावाची भविष्यत् पर० +, पूर्व० (आ) +, सी० +, अके० + मुख्य चिह्नों द्वारा वर्णित होता है। अपने मुख्य अर्थ में वह वास्तविक व्यापार को व्यक्त करता है जो कि भविष्य में दूसरे व्यापार से पहले होता है, उदाहरणार्थ :...तुम मेरे पास आओगे लेकिन मैं उस समय तुमसे बहुत दूर चला गया होऊँगा (४७, ४२), सुखदेव ने बताया कि यदि उसकी गिरफ़्तारी के समाचार से मकान बदल न लिया गया होगा तो प्रभात (शिव वर्मा) वहां मिल जायेगा (६७, ५), मन्दिर की मूर्ति चोरी होगी, यह कल्पना भी पहले से इनके दिमाग में नहीं रही होगी (१४७, ५०), सोचा कि सहारनपुर में तो अख़बार ख़रीदा गया होगा, पहुँचकर पढ़ लेंगे (६७, १२)।

मगर आधुनिक हिन्दी में यह काल रूप मुख्यत: अपने लाक्षणिक अर्थ में आता है, जो कि प्रयोग के कारण मुख्य अर्थ बन गया है। सामान्य भविष्यत् में यह रूप जब 'होना' क्रिया के साथ आता है, जो वृत्तिवाचक अर्थ रखती है तो निरपेक्षता (सुनिश्चितता) का अर्थ खो बैठता है और व्यापार की काल्पनिकता का अर्थ व्यक्त करता है। तब व्यापार समाप्त हुआ दिखता है। वह ज़्यादातर भूतकाल के अर्थ

से संबंध रखता है, और बहुत कम स्थितियों में वर्तमान या भविष्यत् काल के अर्थ से संबंध रखता है। व्यापार पूर्णतया वास्तविक और एकल दिखता है, लेकिन वक्ता को पूर्ण विश्वास नहीं होता कि व्यापार वास्तव में कार्यान्वित हुआ, वक्ता को ऐसा लगता है कि व्यापार ने पूर्णता प्राप्त की।

अगर वाक्य में 'ज़रूर' और 'अवश्य' वृत्तिवाचक शब्द होते हैं तो कल्पना का अर्थ कमज़ोर पड़ जाता है और पहले स्थान पर विश्वस्तता की छाया होती है, हालांकि वक्ता शक से पूर्णतः वंचित नहीं होता। उदाहरणार्थ : तुमने मई-जून में शहर के बाज़ारों में अंडे के आकार के लाल-लाल फल बिकते देखे होंगे (५०, १८), बीरबल—डी०एस०पी० ने मेरा नाम नोट कर लिया है। मिट्ठन भाई—ज़रूर कर लिया होगा (६६, ५४)।

**भूतकाल में कल्पना** : मैंने पन्द्रह सेर से ऊपर दुहकर आपके सामने दे दिया था। दे दिया होगा (६४, १२०), वैशाली का नाम तुमने तो सुना ही होगा (५०, १८), शायद मोर्चे से बहुत बुरी ख़बर आयी होगी (२६, ८८), बाक़ी सवाल उसने कैसे किये होंगे, इसकी कल्पना की जा सकती है (१७, ४२), कहार सो गये होंगे (७३, ३२), कितनी देर सोया होऊँगा ? दो-चार मिनट (१०२, १११)।

संरचनात्मक-प्रतिबन्धित स्थितियों में जब कालवाचक मिश्र वाक्य के मुख्य हिस्से के विधेय में आता है तो पूर्णतावाची भविष्यत् काल पूर्णतावाची भूतकाल के समान क्षणिक पूर्ववर्तिता को, जो कि व्यापार का अनुवर्ती होता है, व्यक्त करता है। इन दोनों काल रूपों के प्रयोगों में सिर्फ़ यही भिन्नता होती है कि पूर्णतावाची भविष्यत् काल के लिए काल्पनिकता की छाया और विश्वास का अभाव स्वाभाविक है, उदाहरणार्थ : लीजिये अभी कुछ कदम ही चला होऊँगा कि श्री शम्भूनाथ ने अपनी बारीक आवाज़ में पुकारते हुए कहा...(१६, ६०), अभी बीस मिनट भी न गुज़रे होंगे कि एक स्वयंसेवक आकर खड़ा हो गया (६६, ४३), लेकिन शायद अभी गार्ड के डिब्बे तक पहुँचे भी न होंगे कि इंजन ने सीटी दे दी (८, ३६)।

जब समान निषेधात्मक रचनाओं में आता है तो पूर्णतावाची भविष्यत् काल उस व्यापार को व्यक्त करता है जो कि वक्ता की राय में या कल्पना में, अभी पूर्णतया कार्यान्वित न हुआ हो, उदाहरणार्थ : लेकिन वे शायद अभी गार्ड के डिब्बे तक पहुँचे भी न होंगे कि इंजन ने सीटी दे दी (८, ३६), अभी बीस मिनट भी न गुज़रे होंगे कि एक स्वयंसेवक आकर खड़ा हो गया (६६, ४३)।

**वर्तमान में कल्पना** : लेकिन दूसरा आदमी भी तो भूखा बैठा होगा (१०८, १३६), जब बाज़ार के चौक में जायें तो एक सफ़ेद दाढ़ी वाला आदमी वहां बैठा होगा (२४, ११०)। जैसा कि उदाहरणों से विदित है, यहां मुख्यतः दशासूचक क्रियाएं आती हैं और समस्त रूप समावेशी अर्थ धारण करता है : व्यापार उक्ति

के क्षण तक पूर्णता प्राप्त करता है और उक्ति के क्षण में भी कर्ता की परिणामी दशा के रूप में होता है। यह बात स्पष्टत: तब प्रकट होती है जबकि पूर्णतावाची अर्थ में पूर्णतावाची वर्तमान के रूपों के साथ पूर्णतावाची भविष्यत् काल का प्रयोग होता है, उदाहरणार्थ : मैं समझा सो गयी होगी। और तो सब सो गए हैं ? (७५, ८२)।

**भविष्यत् काल में कल्पना** : आज़ाद ने वीरभद्र तिवारी और सतगुरु दयाल अवस्थी दोनों को ही संदेश भेजा कि वे आकर अपने व्यवहार की सफ़ाई दें, इस समय कोई केन्द्रीय समिति तो थी नहीं। सम्भवत: सुरेन्द्र और आज़ाद के भी सामने यह बात हुई होगी। आज़ाद के संदेश के उत्तर में अवस्थी ने पत्र लिखकर उत्तर दिया कि उस पर किए गए संदेह झूठे और निराधार हैं पर मिलने नहीं आया (९७, १३०-१३१), हां, घर की हवा से इतना ज़रूर लग गया कि बाद में उस बात पर खूब महाभारत हुआ होगा। हूं...हमने किया है ! हुआ होगा (१०८, ८०), फिर उसे अपनी चार इंच वाली टोप की याद आयी। कौन जाने, उसे चलाने की ज़रूरत पड़ी होगी (११६, ७४), ऐसे वस्त्र तो शायद मुझे अपने विवाह में भी न मिले होंगे (६९, १६७)।

## संतत भविष्यत् काल

काल का यह रूप संतत कृदन्त के पुल्लिग (एकवचन तथा बहुवचन) के दो लैंगिक रूपों और स्त्रीलिंग के एक लैंगिक रूप तथा सामान्य भविष्यत् काल में 'होना' क्रिया के पुल्लिग तथा स्त्रीलिंग के चार-चार रूपों के मिलन से बनता है :

| | |
|---|---|
| मैं लिख रहा (रही) होऊँ-गा (-गी) | हम लिख रहे (रही) हों-गे (-गी) |
| तू लिख रहा (रही) हो-गा (-गी) | तुम लिख रहे (रही) हो-गे (-गी) |
| | आप लिख रहे (रही) हों-गे (-गी) |
| वह लिख रहा (रही) हो-गा (-गी) | वे लिख रहे (रही) हों-गे (-गी) |

यह काल रूप पर० +, सी० +, अके० +, प्र० + मुख्य चिह्नों द्वारा वर्णित होता है। अपने प्रत्यक्ष अर्थ में वह वास्तविक एकल प्रक्रियात्मक व्यापार को व्यक्त करता है जिसकी शुरुआत या कार्यान्विति उक्ति के क्षण के बाद होती है या उक्ति के क्षण के साथ मेल खाती है, उदाहरणार्थ : तू पहली गाड़ी से जाना। आदमी स्टेशन पर प्रतीक्षा कर रहा होगा (९७, ९१), अब वह आ रहा होगा, उसका प्यारा मदन ! (२८, २००), अगर ये मुसाफ़िर भी उसी तरफ़ ही जा रहे होंगे, तो हमारा सफ़र मज़े में कट जायेगा (४७, ८२), तुम्हीं ने कहाँ सोचा होगा कि जो आदमी बस में बैठकर आगे चला गया था, वह घंटा भर बाद तुम्हारे कमरे में बैठा तुमसे बातें कर रहा होगा। (५२, १३८), आ ही रहे होंगे (६६, ८६)।

आधुनिक हिन्दी में यह काल रूप लाक्षणिक अर्थ में भी आ सकता है। यह रूप भी निश्चितता की छाया खो बैठता है और व्यापार की काल्पनिकता को व्यक्त करना शुरू करता है। तब व्यापार एकल तथा वास्तविक होता है। वह वर्तमान या भूतकाल के किसी निश्चित क्षण के साथ सम्बन्ध रख सकता है। वक्ता व्यापार के सम्बन्ध में अपनी कल्पना व्यक्त करता है जो कि किसी विशेष समय में पूर्ण होता है।

**वर्तमान में कल्पना :** तब उसे याद आया कि नीलो के पास बैठा हुआ विमल उसकी प्रतीक्षा कर रहा होगा (५९, ५२), आपको यहां बैठने में तकलीफ़ हो रही होगी (१४९, १८), कुछ चमारों में शोर तो हो रहा है। होने दे यार ! साली रो रहीं होगी और क्या (१०३, ३१५), मिट्ठो इस वक्त मुझे दिल में कितना कायर और नीच समझ रही होगी (६९, ५७)।

**भूतकाल में कल्पना :** चेतन समझ गया, वह कैसे जागा और वह हुंकार क्या थी !—उसका छोटा भाई परसराम ज़रूर ही वहां कसरत कर रहा होगा (१७, १५), वह कल्पना कर रही थी कि शहज़ादी बाक्स में क्या सोचती हुई बही चली जा रही होंगी (१०३, २६२),...खाँसी की तरह हँस रहे थे...हँस क्या रहे होंगे बेचारे ! मुँह से चाहे हँसें, दिल तो रोता ही होगा (६५, २२२)।

## संभावनार्थ

आधुनिक हिन्दी में संभावनार्थ चार रूपों का वर्ग है, उनमें से एक संश्लेषणात्मक तिङन्ती है, और बाकी तीन विश्लेषणात्मक विकारी-तिङन्ती रूप हैं। संभावनार्थ के सभी रूप कालवाचक नहीं होते, बल्कि काल सापेक्षता के अधिक सामान्य अर्थ को व्यक्त करते हैं।

संभावनार्थ के रूपों को प्राकारिक विवरण की दृष्टि से प्राकारिक रूपों में, जो कि कृदन्तपरक विश्लेषणात्मक रूपों द्वारा व्यक्त होते हैं, और अप्राकारिक रूपों में, जो कि तिङन्ती संश्लेषणात्मक रूप द्वारा व्यक्त होता है, बाँट सकते हैं।

| रूप/प्रकार | अप्राकारिक | अपूर्ण | पूर्ण | संतत |
|---|---|---|---|---|
| संश्लेषणात्मक | लिखे | — | — | — |
| विश्लेषणात्मक | — | लिखता हो | लिखा हो | लिख रहा हो। |

## संश्लेषणात्मक (सरल) रूप

यह रूप क्रिया के चार तिङन्ती रूपों द्वारा व्यक्त होता है, जो कि क्रिया की धातु के साथ पुरुषवाचक प्रत्यय जोड़ने से बनते हैं : 'ऊँ'—एकवचन, उत्तम पुरुष; 'ए'—मध्यम तथा अन्य पुरुष, एकवचन; 'एं'—उत्तम तथा अन्य पुरुष, बहुवचन

तथा मध्यम शिष्ट पुरुष, बहुवचन; 'ओ'—मध्यम पुरुष, बहुवचन।

| | |
|---|---|
| मैं लिख-ऊं (लिखूँ) | हम लिख-एँ (लिखें) |
| तू लिख-ए (लिखे) | तुम लिख-ओ (लिखो) |
| | आप लिख-एँ (लिखें) |
| वह लिख-ए (लिखे) | वे लिख-एँ (लिखें) |

अगर क्रिया की धातु दीर्घ स्वर (ई या ऊ) में समाप्त होती है तो दीर्घ स्वर लघु स्वर में परिवर्तित हो सकता है। उदाहरणार्थ :

सी-ए=सि-ए      पी-ए=पि-ए      छू-ए=छु-ए

'देना', 'लेना', तथा 'होना' क्रियाएं अनियमित तौर पर संभावनार्थ के संश्लेषणात्मक रूप बनाती हैं : 'देना' और 'लेना' क्रियाओं के पुरुषवाचक प्रत्यय अंत्यलोप धातु के साथ मिलते हैं (जिसमें स्वर नहीं होता); 'होना' क्रिया के साथ उत्तम पुरुष के एकवचन तथा मध्यम पुरुष के बहुवचन के पुरुषवाचक प्रत्यय जुड़ते हैं, मध्यम पुरुष तथा अन्य पुरुष के रूप धातु के साथ समाकार हैं, और उत्तम, अन्य तथा मध्यम पुरुष के शिष्ट रूप बहुवचन में नासिकीकृत धातु होते हैं।

| | |
|---|---|
| मैं दूं, लूं, होऊं | हम दें, लें, हों |
| तू दे, ले, हो | तुम दो, लो, हो |
| | आप दें, लें, हों |
| वह दे, ले, हो | वे दें, लें, हों |

साधारणतया यह समझा जाता है कि धातु जिसका दीर्घ स्वर में अन्त होता है (आ, ई, ऊ, ओ) और पुरुषवाचक प्रत्यय (ए, एँ) के बीच सुश्रव्य ध्वनि 'य' और 'व' आ सकती है, और सुश्रव्य ध्वनि 'य' पुरुषवाचक प्रत्यय 'ए', 'एं' का स्थान ले भी सकती है और बहुवचन में नामिकीकरण अपना सकती है, उदाहरणार्थ : जाए-जाये, जावे-जाय (एकवचन) और जाएँ-जायें, जावें-जायँ (बहुवचन)। यह बात उपभाषाओं के प्रभाव से सम्बन्धित है और अप्रचलित है। इसलिए सुश्रव्य ध्वनियों को अनियमित गिना जायेगा।

संभावनार्थ का संश्लेषणात्मक रूप छिपे हुए संभाव्य तथा वांछनीय व्यापार व्यक्त करता है, जो कि मुख्यतः वर्तमान तथा भविष्यत् काल के अर्थ के साथ सम्बन्ध रखता है, उदाहरणार्थ : (वर्तमान कालार्थ में)—आप लोग यहाँ भीड़ न लगायें और न किसी को भला-बुरा कहें (६६, ३६), आज यहां...कौन पंडित ऐसा है जो मेरे तलुवे सहलाने में अपनी इज्ज़त न समझे ? (७३, ४१),...उन सबमें कोई-न-कोई बात छिपी रहती है, चाहे वह आजकल हमारी समझ में न आये (७३, १०८); (भविष्यत् काल के अर्थ में)—मेरी समझ में सवेरे चलें (७३, ६७),

अगर वह माया से विवाह करे तो तुम्हें खुशी होगी ? (१४७, ६०), इन्द्रमणि—...जाऊं उसे बुलाऊं ? सुखद—तुम क्यों जाओगे, मैं आप चली जाऊंगी (६६, २२८)।

संभावनार्थ के ये रूप वह संभाव्य या वांछनीय व्यापार को कम व्यक्त करते हैं जो कि भूतकाल के अर्थ में आता है, उदाहरणार्थ : निश्चय न कर सके कि हाथ मिलाएँ या झुककर सलाम करें (६६, ६६-१००),...यह नहीं हो सकता था कि वे न आएँ (१०६, ४४)।

संभावनार्थ के संश्लेषणात्मक रूप आम तौर पर एकल संभाव्य या वांछनीय व्यापार को व्यक्त करते हैं, उदाहरणार्थ : भीतर-ही-भीतर मृणाल बेहद डर भी रही थी कि कहीं एकदम फूटकर रो न पड़े (१०६, ४२), नहीं, नहीं, ठहरिये मैं देख लूँ (७३, ७२), अभी तो कोशिश थी उसे उसके घर ही भेज दूँ (१०८, १२)।

ये रूप सामान्यकृत संभाव्य या वांछनीय व्यापार को कम ही व्यक्त करते हैं, उदाहरणार्थ : यदि कोई मांस न खाये तो बकरे की गर्दन पर छुरी क्यों चले (७३, ११०), भोजन एक ही समय बने...(७३, ५१)।

## संभावनार्थ का अपूर्ण रूप

यह रूप संभावनार्थ में प्रथम कृदन्त के लैंगिक विकारी रूपों तथा 'होना' क्रिया के तिङन्ती रूपों के मिलन से बनता है। इस तरह, संभावनार्थ का अपूर्ण रूप पुल्लिग के दो लैंगिक रूपों (एकवचन और बहुवचन) और स्त्रीलिंग के एक लैंगिक रूप एवं संभावनार्थ में 'होना' क्रिया के चार तिङन्ती रूपों के मिलन से बनता है।

| | |
|---|---|
| मैं लिख-ता (-ती) होऊँ | हम लिख-ते (-ती) हों |
| तू लिख-ता (-ती) हो | तुम लिख-ते (-ती) हो |
| | आप लिख-ते (-ती) हों |
| वह लिख-ता (-ती) हो | वे लिख-ते (-ती) हों |

संभावनार्थ के अपूर्ण रूप संभाव्य नित्यताबोधक अपूर्ण व्यापार को व्यक्त करते हैं जो कि मुख्यतः निश्चयार्थ में विधेय-क्रिया के साथ एक ही काल सतह पर होता है, उदाहरणार्थ : ...उसका मन ऐसा प्रसन्न था मानो वह किसी बड़े रमणीक स्थान की सैर करके आता हो (७३, १४५)—भूतकाल के अर्थ में; यदि उसे भय ही लगता हो तो भी कहने की क्या आवश्यकता है (७५, ४८)—वर्तमान के अर्थ में; विधान-निर्माण के इस कार्य में जनता का प्रत्यक्ष योगदान तभी मिल सकेगा जब जनता पढ़ी-लिखी हो, राजनीति में रुचि लेती हो और राजनीतिक पार्टियों के

साथ अपनी सहमति या अपना विरोध प्रकट करने का साहस रखती हो (१५६, २२०)—भविष्यत् काल के अर्थ में।

संभावनार्थ का अपूर्ण रूप बहुधा संभाव्य एकल व्यापार को व्यक्त करता है, उदाहरणार्थ : ...बड़े अनुरोध और भर्राये गले से मानो शब्दों को बलात् ठेलकर कहते हों, वे बोले थे...(१०६, ४०),...मछलियां ऐसी मालूम होती थीं मानो किसी सुन्दरी के चंचल नयन महीन घूँघट से चमकते हों (७३, ६७), साईदास को इस समय यह ख़याल हुआ कि कदाचित् परसाल से रुपये आते हों (६६, १०३)।

मगर यह रूप संभाव्य सामान्यकृत व्यापार को भी व्यक्त कर सकता है, उदाहरणार्थ : यदि प्रतिद्वन्द्वी का कोई मोहरा मरता हो तो उसे मारना आवश्यक है...(७, ८६), संभव है कभी-कभी बाज़ार की तरफ़ चला जाता हो...(७३, ८६), यह सुकुमारी, जिसके कोमल अंगों में शायद हवा भी चुभती हो...(६६, ३२)।

## संभावनार्थ का पूर्ण रूप

यह रूप द्वितीय कृदन्त के पुल्लिग (एकवचन तथा बहुवचन) के दो लैंगिक रूपों तथा स्त्रीलिंग के एक लैंगिक रूप एवं कर्तृसम्बन्धी रचना में संभावनार्थ की 'होना' क्रिया के चार तिङन्ती रूपों के मेल से बनता है; सकर्मक द्वितीय कृदन्त के पुल्लिग के दो लैंगिक रूपों तथा स्त्रीलिंग के एक लैंगिक रूप तथा कर्म-सम्बन्धी रचना में 'होना' क्रिया के संभावनार्थ की दो तिङन्ती रूपों के मेल से बनता है, भाववाचक रचना में पुल्लिग के एक लैंगिक रूप तथा संभावनार्थ की 'होना' क्रिया के एक रूप के मेल से बनता है।

### कर्तृ-सम्बन्धी रचना

| | |
|---|---|
| मैं आया (आयी) होऊं | हम आये (आयी) हों |
| तू आया (आयी) हो | तुम आये (आयी) हो |
| | आप आये (आयी) हों |
| वह आया (आयी) हो | वे आये (आयी) हों |

### कर्म-सम्बन्धी रचना

एकवचन

मैं
तू
उस
हम ने पत्र (चिट्ठी) लिखा (लिखी) हो

तुम
आप
उन्हों

बहुवचन

मैं
तू
उस
हम ने दो पत्र (दो चिट्ठियां) लिखे (लिखी) हों
तुम
आप
उन्हों

**भाववाचक रचना**

एकवचन तथा बहुवचन

मैं
तू
उस
हम ने पत्र-दो पत्रों को (चिट्ठी-दो चिट्ठियों को) लिखा हो
तुम
आप
उन्हों

संभावनार्थ का पूर्ण रूप संभाव्य व्यापार को व्यक्त करता है, जो कि निश्चयार्थ में साथ आने वाली सहायक क्रिया के पूर्ववर्ती हो सकता था, अगर वास्तव में होता, तो, उदाहरणार्थ : कौन जानता। शायद मर भी गये हों (६६, १६५), सोचा, गुप्ताजी के यहां न चली गयी हो (१०६, ४१), इस तरह लौट आऊंगा जैसे कुछ भी न हुआ हो (१०८, २६)।

संभावनार्थ का पूर्ण रूप संभाव्य व्यापार को व्यक्त करता है जो कि दूसरे संभाव्य व्यापार के पूर्ववर्ती होता है, जो आम तौर पर संभावनार्थ के संश्लेषणात्मक रूप द्वारा व्यक्त होता है, उदाहरणार्थ : जी, अगर यहां का काम समाप्त हो गया हो तो चलिये आपको जीवनजी से मिला दूं (१४७, ४४), मेरी आंखें फूट जायें, अगर मैंने उनकी तरफ़ ताका भी हो। मेरी जीभ गिर जाये, अगर मैंने उससे एक बात भी की हो (७३, ३४), अपने पिता से पहले तुमने किसी ऐसे आदमी को मरते देखा है जिसे सांप ने काटा हो ? (१४७, ३८)।

संभावनार्थ का पूर्ण रूप पूर्णतावाची अर्थ का संभाव्य व्यापार कम ही व्यक्त

करता है, उदाहरणार्थ : एक बार उसकी ओर दबी आँखों से देखा, फिर जैसे हाथ-पाँव फूल गये हों (७३, ८०), संभव है अब उन्होंने घर बसा लिया हो...(७५, ८), महाशय विट्ठलदास इस समय ऐसे खुश थे मानो उन्हें कोई सम्पत्ति मिल गयी हो (७३, ६६)।

संभावनार्थ का पूर्ण रूप उस संभाव्य व्यापार को व्यक्त कर सकता है जो कि दूसरे संभाव्य व्यापार के साथ एक ही काल की सतह पर हो सकता है या निश्चयार्थ में साथ आने वाली क्रिया के व्यापार के साथ हो रहा हो, उदाहरणार्थ : ...परन्तु जब उन्होंने देखा हो कि ज़मीन ख़रीदने की बात केवल एक ढकोसला ही था, तो उनका ध्यान पृथ्वीपाल सिंह की बात की ओर गया हो (७५, ११७), जब वह ज़मीन पर गिर पड़ी तब उसे जैसे होश आ गया हो (६६, ४७), फिर सोचा, कहीं यहां कोई दुर्घटना तो नहीं हो गयी—आग लग गयी हो या किसी ने किसी का खून कर दिया हो (१०८, १३५)।

## संभावनार्थ का संतत रूप

यह रूप संतत कृदन्त के लैंगिक रूपों से तथा संभावनार्थ में 'होना' क्रिया के तिङन्त रूपों के मेल से बनता है। इस तरह संभावनार्थ का संतत रूप पुल्लिग (एकवचन तथा बहुवचन) के दो लैंगिक रूपों और स्त्रीलिंग के एक लैंगिक रूप एवं 'होना' क्रिया के चार तिङन्त रूपों के मिलन से बनता है।

| | |
|---|---|
| मैं लिख रहा (रही) होऊं | हम लिख रहे (रही) हों |
| तू लिख रहा (रही) हो | तुम लिख रहे (रही) हो |
| | आप लिख रहे (रही) हों |
| वह लिख रहा (रही) हो | वे लिख रहे (रही) हों |

संभावनार्थ का संतत रूप संभाव्य अपूर्ण व्यापार को व्यक्त करता है जो कि ठीक दिये गये काल के क्षण पर होता हो, जो कि दूसरे व्यापार द्वारा निर्धारित होता है जो आम तौर पर पूर्ववर्ती प्रसंग या निश्चयार्थ में क्रिया द्वारा दिया गया होता है। इस तरह, यह मान सकते हैं कि संभावनार्थ के संतत रूप का व्यापार, आम तौर पर, वास्तविक व्यापार की पृष्ठभूमि या पूर्ववर्ती प्रसंग की पृष्ठभूमि में होता है, उदाहरणार्थ : फिर तो उसने एक-एक संदूक, एक-एक कोना छान मारा, मानो कोई सूई ढूँढ़ रही हो...(७३, ८३), मुझे लगा, जैसे वह निरन्तर मेरी ओर देख रहा हो (१३, १५), भय लगा हुआ था कि देहातियों का कोई दल पीछे से न आ रहा हो (६६, १७४), और जो कोई देख रहा हो ! (१०२, ११५)।

आधुनिक हिन्दी में संभावनार्थ क्रियार्थक श्रेणी में आता है जो कि अधिकतर स्थितियों में मिश्र वाक्य की संरचना के साथ संबंधित होती है। वाक्य के प्रकार

के आधार पर संभावनार्थ के रूप में भेद कर सकते हैं। उदाहरणार्थ : संभावनार्थ का संतत रूप तुलनात्मक आश्रित वाक्यों में संभाव्य तुलना को व्यक्त करने के काम आता है।

वैसे कई स्थितियों में मुख्य वाक्य का वृत्तिवाचक सार आश्रित वाक्य में संभावनार्थ के प्रयोग को प्रतिबन्धित करता है। मुख्य वाक्य में मुख्य शब्दों के अर्थ भी संभावनार्थ के प्रयोग को प्रतिबंधित करते हैं। ये सब बातें मिश्र वाक्यों की संरचनात्मक श्रेणियों को बनाने में मदद करती हैं जिनमें मुख्य वाक्य की किसी भी रचना में, मुख्य वाक्य की विशेष रचना के लिए या मुख्य वाक्य के मुख्य शब्दों के विशेष अर्थ में संभावनार्थ का प्रयोग अपरिहार्य है। दूसरी तरफ़ मिश्र वाक्यों के संरचनात्मक प्रकारों को बता सकते हैं, जिनमें संभावनार्थ का प्रयोग संभव है लेकिन ज़रूरी नहीं। यों एक तरफ़ से संभावनार्थ के रूपों का प्रयोग संरचनात्मक-प्रतिबन्धित और शब्दार्थक-प्रतिबन्धित हो सकता है और दूसरी तरफ़ वैकल्पिक हो सकता है। आइये, मिश्र वाक्य के मुख्य प्रकारों में संभावनार्थ के रूपों के प्रयोग का अध्ययन करें।

**सह-सम्बन्धी-सार्वनामिक वाक्य** (संयोजक-सार्वनामिक प्रकार)। इस मिश्र वाक्य के इस प्रकार में विधेय में निषेध की उपस्थिति संभावनार्थ के प्रयोग को अनिवार्य कर देती है, उदाहरणार्थ : इतना सब्र न था कि उन्हें ठंडा हो जाने दे (१५७, १२),...हमारे इतना भी वश नहीं कि उस यंत्र को चाबी न दें (१५८, १६), फिर हर किसान के पास इतनी भूमि नहीं होती कि वह ट्रैक्टर का पूरा उपयोग कर सके (११५, २८), ऐसी बात नहीं थी कि वह ताश का खेल बिलकुल न जानता हो (१५८, १८)।

**निश्चयात्मक वाक्यों में** संभावनार्थ का प्रयोग वैकल्पिक होता है, उदाहरणार्थ :

| **संभावनार्थ** | **निश्चयार्थ** |
|---|---|
| ऐसी चीख-पुकार, भाग-दौड़ मच गयी जैसे कहीं भूचाल आ गया हो... (१०८, ७); | तुम तो ऐसी बात करते हो मानो इस देश में पैदा ही नहीं हुए...(७३, १०७); |
| उन्हें ऐसा जान पड़ा कि सारी प्रकृति एक विराट व्यापक नृत्य की गोद में खेल रही हो (६६, ६६)। | ऐसा मालूम होता था मानो उसका कायाकल्प हो गया (६६, १४०)। |

**व्याख्यात्मक वाक्य** मिश्र वाक्यों के इस प्रकार में संभावनार्थ के रूपों का प्रयोग शब्दार्थक-प्रतिबन्धित होता है, और यह प्रतिबन्ध मुख्य वाक्य की संरचना द्वारा पक्का होता है। मुख्य शब्द 'कि' स्वरूपवाचक समुच्चयबोधक की उपस्थिति

में अपने शब्दार्थ में अनिवार्य रूप से काल्पनिकता की छाया रखते हैं। इन शब्दों को काल्पनिक अर्थ की प्रकृति के कारण निम्नलिखित वर्गों में बाँट सकते हैं :

(१) आवश्यकताबोधक अर्थ के शब्द : 'आवश्यक', 'ज़रूरी', 'योग्य', 'लायक', 'क़ाबिल', 'चाहिए' आदि जो कि उद्देश्यवाचक मिश्र वाक्य के मुख्य हिस्से में आते हैं जैसे : इसलिए यह भी आवश्यक है कि इस पर सरकारी नियंत्रण हो (११५, २६०), अत: यह ज़रूरी है कि...योजनाएं अपनायी जाएं (१५३, १२), हमारा कर्तव्य है कि हम उन्हें सुमार्ग पर लायें...(७३, १४८), वह खुद इस योग्य नहीं कि सारनो उसे चाहे (७५, १०६), और क्या बातें वास्तव में इस लायक थीं कि उन पर बैठकर...यों रोया जाये (१८, ४६), इसके लिए लाज़मी है कि यह काम अधिकार सम्पन्न लोगों को सौंपा जाये (IV, ८.४.१६७४),...मंत्री इसके लिए बाध्य तो नहीं है कि वह...कोई ग़ैर-कानूनी और अनैतिक काम करें (IV, ७.६.१६७४),...हमें इसकी ज़रूरत है कि उस क्षेत्र में हम घटनाओं को प्रभावित कर सकें (IV, ५.६.१६७४), लेकिन उद्योग यह होना चाहिए कि उन कुप्रथाओं का सुधार किया जाये (७३, ७५)।

(२) शब्द जिनका अर्थ इच्छाबोधक होता है जो कि खुद बाँटे जा सकते हैं : (क) क्रियाएं और संज्ञाएं जिनका प्रत्यक्ष अर्थ इच्छाबोधक होता है : 'चाहना', 'इच्छा (इच्छा करना)', 'जी चाहना', 'मन करना' 'अभिलाषा (अभिलाषा रखना)', 'इरादा (इरादा रखना, करना)' आदि। उदाहरणार्थ : तुम चाहती हो कि मैं मर जाऊं ? (१५८, २७), मैं नहीं चाहता कि कोई मुझे हिन्दुस्तानी कहे या समझे (६६, १८), जी चाहता है कि विष खा लूं (७३, ११२), मुझे यह हार्दिक अभिलाषा रहती है कि आपकी कोई सेवा करूं (७३, १०६), हमारी इच्छा यह थी कि वह हम लोगों को साहब समझे (६६, ४०), मन होता था कि अभी छज्जे से कूदकर आत्महत्या कर डालूं (१०८, १०२), मन में एक प्रबल आवेश उठा कि किसी से जाकर पूछूं (१०८, ४६), उत्सुकता हुई कि देखूं (१०८, ४७), अब भी उनका इरादा था कि कुछ सजावट के सामान और मोल ले लें (६६, १०२); (ख) संज्ञाएं जो कि संकल्प की प्रक्रियाएं व्यक्त करती हैं : 'कोशिश', 'प्रयत्न', 'प्रयास', 'यातना', 'निश्चय', 'निर्णय', 'फ़ैसला', 'चिन्ता' आदि। उदाहरणार्थ : अभी तो कोशिश करूँगा कि उसे उसके घर ही भेज दूं (१०८, १२), निश्चय न कर सके कि हाथ मिलाएं या झुककर सलाम करें (६६, ६६-१००),...उसे चिन्ता हुई कि रुपयों का क्या प्रबन्ध करूं (७३, १६६), मेरी ज़िद थी कि मसाला बनाने का काम मैं करूँ (६७, ३४),...तय हुआ कि मैं जुलाई के पहले सप्ताह में दिल्ली पहुँच जाऊँ (६७, ८६), कोई इसी धुन में है कि शूद्र और चंडाल सब क्षत्रिय हो जायें (७३, १०८), वह इसी संकल्प-विकल्प में पड़े हुए थे कि सुमन के पास चलूँ या न चलूँ (७३, ८५); (ग) निश्चित गुण का अर्थ अपनाने वाले विशेषण :

'अच्छा', 'उचित', 'मुनासिब', 'ठीक', 'महत्वपूर्ण' आदि, जो कि इन वाक्यों में इच्छा का बोध कराते हैं, उदाहरणार्थ : इससे कहीं अच्छा है कि आप मुझे यह काम सौंपें (६९, ३२), इससे तो कहीं उत्तम यही है कि डूब जाऊं (७३, १५५), ...यही उचित है कि आप भी सदान के लिए कोई बात उठा न रखें (७३, ५२), मुनासिब यह है कि साहब अभी अपना लिबास बदल डालें (२४, २१)।

(३) 'डर, भय, अनिच्छा' के अर्थ के शब्द—'डरना', 'डर', 'भय', 'घबराना', 'हैरान' आदि, उदाहरणार्थ : भीतर-ही-भीतर मृणाल बेहद डर रही थी कि कहीं एकदम फूटकर रो न पड़े...(१०९, ४२), मुझे डर था कि कोई दूसरा आदमी न रख लिया हो (७५, १७०), घबराते थे कि बात करते बने या न बने (६९, ६९), पाली हैरान था कि अब वह क्या करे (७५, १७४), भय लगा हुआ था कि देहातियों का दल पीछे से न आ रहा हो (६९, १७४)। संरचनात्मक तौर पर ये वाक्य मुख्यतः निश्चयात्मक मुख्य हिस्से और निषेधात्मक आश्रित हिस्से से बने होते हैं। मुख्य शब्द में निषेध की उपस्थिति में आश्रित हिस्से में आम तौर पर निश्चयार्थ के रूप आते हैं।

(४) उद्बोध के अर्थ के शब्द जो बाँटे जा सकते हैं :

(क) शब्द जो कि उद्बोध के प्रत्यक्ष अर्थ में आते हैं—'माँगना', 'कहना' ('हुक्म' के अर्थ में), 'देना' ('अनुमति' के अर्थ में, 'इजाज़त' के अर्थ में), 'आदेश', 'हुक्म', 'हिदायत', 'आज्ञा' (स्वतंत्र रूप से या 'देना' क्रिया के साथ), 'माँग', 'आग्रह', 'प्रार्थना', 'अपील', 'आह्वान', 'निवेदन', 'अनुरोध', 'मिन्नत' (स्वतंत्र रूप से या 'करना' क्रिया के साथ), उदाहरणार्थ : भारतीय टीम के सदस्यों से कहा गया कि दस सितम्बर तक यहां पहुँच जाएं (IV, १.९.१९७४), डाक्टर कहते हैं कि इतना परिश्रम न करूँ (१०९, १०४), मुझे भी आज्ञा दो कि कहीं चलकर चार पैसे कमाने का उपाय करूँ (७३, ११७),...मंत्रालय ने निर्देश भी दे दिया कि...चावल ही केरल को बेचा जाए (IV, २४.६.१९७४), श्री गुप्ता ने प्रधानमंत्री से अपील की कि वे विदेशों में अपने दूतावासों को निर्देश दें कि वे सरकारी स्तर पर भारत के पक्ष को समझाएं (IV, २२ ८.१९७४), मित्र लोग आग्रह कर रहे हैं कि धूमधाम से आनन्दोत्सव किया जाये (७३, ७१), मैं फिर खुदा से दुआ करती हूं कि वह हमारे दिलों को अपनी रोशनी से रोशन करे (७३, २२०), कार्यकारिणी ने...राज्य सरकार से यह माँग भी की कि वह...सख्त कदम उठाये (IV, २४.६.१९७४), मैं तो भगवान से यही प्रार्थना करती हूं कि मुझे सद्बुद्धि दे, बल दे (१०९, १०६), कई दिन से वह चैनलाल पंसारी से तकाज़ा कर रहा था कि वह उसे शहर की सैर करा लाये (७५, ३०),...हाथ जोड़ने लगी कि किसी को न बताऊँ (७५, १८३); (ख) शब्द जो कि प्रसंग में उद्बोध का अर्थ रखते हैं। जहां पर इस अर्थ का पता नहीं चलता, वहां निश्चयार्थ के रूप प्रयोग

होते हैं; मुख्य शब्दों की हैसियत से यहां पर विभिन्न शब्दार्थ के शब्द आते हैं, उदाहरणार्थ : उन्होंने कांग्रेसी सदस्यों पर इस बात के लिए दबाव डाला है कि वे संसदीय समिति द्वारा जाँच कराने की माँग को छोड़ दें (IV, २.९.१९६४), अध्यक्ष ने...सुझाव दिया कि अभी...फिर बैठक हो (IV, ७.९.१९७४), जयचन्द्रजी ने परामर्श दिया कि मैं अपने सदस्यों की संख्या और हथियारों का संग्रह बढ़ाता जाऊं (९७, ३१), एक दिन इन्द्रपाल को सावधान कर दिया कि वह आने वाली रात किसी मुसाफ़िर को अपने पास टिक जाने के लिए उत्साहित न करे (९७, ५०), धर्मपाल ने सुझाया कि हंसराज शायद कोई ऐसा प्रबन्ध कर दे कि बिना बिजली के तार लगाये ही काम हो जाये (९७, ६२)।

(५) 'उद्देश्य और अभिप्राय' के अर्थ के शब्द—'अभिप्राय', 'प्रयोजन', 'उद्देश्य', 'लक्ष्य', 'मकसद', 'मतलब', 'अर्थ' आदि; उदाहरणार्थ : अभिप्राय यह था कि हमारी योजना और प्रयत्न को एक व्यक्तिगत चीज न समझ लिया जाये (९७, ४९),...प्रस्ताव का एकमात्र मकसद यही है कि...किसी तरह मामले को ख़त्म कर दिया जाये (IV, ६.९.१९७४), प्रयोजन था कि...टिकट की ओर ध्यान आकर्षित न हो (९७, १५),...नीति का मुख्य लक्ष्य यह है कि अमरीका... कच्चा माल व व्यापारिक सुविधाएं प्राप्त हों (IV, ५.९.१९७४)।

(६) 'शक, अप्रामाणिकता' के अर्थ के शब्द—'संदेह', 'शंका', उदाहरणार्थ : तिस पर भी उसको यह संदेह हो रहा था कि कहीं इस बहाने से उसे छिपा न दिया हो (७३, ४८),...शंका हुई कि उसी ने हँसी में छिपाकर रखा हो (७३, ८३)।

(७) 'संभावना' के अर्थ के शब्द—'संभव', 'मुमकिन', 'अवसर', 'मौका', उदाहरणार्थ : संभव है कि वह...मेम्बरों से आश्रम की प्रशंसा करे (७३, १३८),...आज तक कभी वह मौका नहीं आया कि मुझे युद्ध क्षेत्र छोड़ना पड़ा हो...(१०८, ५७),...यह नहीं हो सकता था कि वे न आयें (१०९, ४४),...यह असंभव है कि पकड़ने वाले न आयें (९७, ७५), यह गैर-मुमकिन है कि वे औरतें... मेहनत और मज़दूरी की ज़िन्दगी बसर करने पर राज़ी हो जायें (७३, १८३)।

(८) निकट अनुभव के अर्थ के शब्द—'लगना', 'जान पड़ना', 'प्रतीत होना', 'विदित होना', 'मालूम होना' आदि, जिनका सामान्य अर्थ 'मालूम होना' होता है। आश्रित वाक्य यहां समुच्चयबोधक 'कि', 'जैसे' और 'मानो' के द्वारा जुड़ते हैं, उदाहरणार्थ : इन्हें यह नीति-संगत मालूम होता है कि खालाजान को माहवार ख़र्च दिया जाये (६९, १५७), माया को लगता था मानो समय का चक्र रुक गया हो (१४७, ६१), मुझे लगा जैसे उन्होंने भरे बाज़ार में मुझे गाली दे दी हो (१०८, १५१),...सुखराम को लगा था जैसे पुरवैया के थपेड़ों से बादल झूमकर चमके हों...(१०३, १३४)।

(९) शर्त के अर्थ में शब्द—'शर्त', 'दांव' (दाँव करना), 'उपाय', 'तरीका'

आदि, उदाहरणार्थ : शर्त केवल यह है कि हम समस्याओं को यथार्थ दृष्टि से देखें...(IV, ११.६.१९७४), सरकार को सबसे सीधा उपाय यही सूझता कि पाबन्दी लगा दी जाये...(IV, २४.६.१९७४)।

जैसा कि उदाहरणों से विदित है व्याख्यात्मक वाक्य यहां चार संरचनात्मक रूपांतरों में आता है : व्याख्यात्मक-कर्म-सम्बन्धी [तुम चाहती हो कि मैं मर जाऊं ? (१५८, २७) ]; व्याख्यात्मक-उद्देश्य-सम्बन्धी [सबसे जरूरी यह है कि उन लोगों की तेज़ी से तलाश की जाये...(IV, ११.६.१९७४) ]; व्याख्यात्मक-विधेयवाचक [सरकार का हुक्म है कि लगान किराये के साथ वसूल किया जाये (६६, १०) ]; व्याख्यात्मक-तुलनावाचक [मुझे लगा जैसे वह निरन्तर मेरी ओर देख रहा हो (१३, १५) ]।

संभावनार्थ के रूपों का शब्दार्थक-प्रतिबन्धित प्रयोग का यह मतलब नहीं है कि वाक्यों में ऊपर गिनाये गये शब्दों के वर्गों के अन्तर्गत ही संभावनार्थ के रूप अवश्य आ सकते हैं। यह बात सिर्फ़ उन शब्दों के वर्गों के लिए ही पक्की तरह से कह सकते हैं जिनमें आवश्यकताबोधक, इच्छाबोधक (मुख्य श्रेणी) और उद्बोधक (मुख्य श्रेणी) अर्थ के शब्दों का वर्ग आता है। बाक़ी शब्दों के वर्गों में, विशेषकर जब व्यापार का भविष्यत् काल का अर्थ होता है निश्चयार्थ के रूप आ सकते हैं। संभावनार्थ के रूप आम तौर पर भूतकाल के अर्थ में व्यापार के लिए ज़्यादा प्रयोग में आते हैं।

**उद्देश्यवाचक वाक्य।** इन मिश्र वाक्यों की श्रेणी में संभावनार्थ के रूपों का प्रयोग शब्दार्थक-प्रतिबन्धित के अलावा संरचनात्मक-प्रतिबन्धित होता है, जो कि विशेषकर आश्रित वाक्यों के लिए सही है, जो 'ताकि' समुच्चयबोधक द्वारा जोड़े जाते हैं, उदाहरणार्थ : मैंने अपने कमरे का दरवाज़ा बन्द कर लिया ताकि बाहर किसी प्रकार की आवाज़ न जाये (१०९, १०१), अगले दिन किले को एक पुलिस गार्ड भेजने के लिए लिखा गया ताकि मूर्ति संरक्षण में नयी दिल्ली जा सके (१४७, १६३), वह जल्दी से उठे कि घड़ी को ठीक कर दें (६६, ९३)।

**अनुमतिवाचक वाक्य।** संभावनार्थ के रूपों का मिश्र वाक्यों की इस श्रेणी में प्रयोग शब्दार्थक और संरचनात्मक दृष्टि से अनिवार्य होता है अगर आश्रित वाक्य 'चाहे', 'भले' शब्दों द्वारा जोड़े जाते हैं, उदाहरणार्थ : लेकिन आज उसने मुलाकात करने का निश्चय कर लिया है, चाहे कितनी देर क्यों न हो जाये (७३, ६६), दूसरों की मज़दूरी करते उन्हें नहीं रुचता भले ही भूखे रह जायें (११५, ३६७),...वह चाहे धन्नासेठ ही क्यों न हों, उसकी ओर आँख उठाकर न देखूं (७३, १६५), भले ही तेरी नकेल प्यारी की पूँछ में बँधी हो, पर मेरी नकेल तो तेरी पूँछ से बँधी है (१०३, ९२)।

अनुमतिवाचक समुच्चयबोधक के संभाव्य छोड़ने में संभावनार्थ के रूपों

का प्रयोग मुहावरेदार पदबंध 'कितना...(कैसा...) क्यों न हो' द्वारा संभव किया जाता है, उदाहरणार्थ : वह कितना ही कुकर्मी, अधर्मी क्यों न हो, पर आप उसे जिस ओर चाहें ले जा सकते हैं (६६, १०२)।

**संकेतवाचक वाक्य।** संभावनार्थ के रूपों का मिश्र वाक्यों की इस श्रेणी में प्रयोग शब्दार्थक तौर पर अनिवार्य है, अगर आश्रित वाक्य में या वाक्यों के दोनों हिस्सों में संभाव्य व्यापार भविष्यत् काल के अर्थ में व्यक्त होता है, उदाहरणार्थ : यदि मेरे प्राण भी आपके काम में आ सकें तो मुझे आपत्ति न होगी (७३, १०६), जी, मेरा बस चले तो उन्हें टाउन में भी घुसने न दूँ (१४७, २५), एक कुआँ बनवा दिया जाये तो सदा के लिए नाम हो जायेगा (७३, १११), मानो तो एक बात कहूँ (१४७, ३६)।

इस श्रेणी के वाक्यों में मुख्यतः संभावनार्थ के सरल संश्लेषणात्मक रूप प्रयोग होते हैं। पूर्ण रूपों का प्रयोग इस बात की ओर संकेत देता है कि संभाव्य व्यापार दूसरे संभाव्य व्यापार से पहले भी हो सकता था, जो कि भविष्यत् काल का अर्थ रखता है, उदाहरणार्थ : मेरी आँखें फूट जाएँगी, अगर मैंने उसकी तरफ़ ताका हो। मेरी जीभ गिर जाए, अगर मैंने उससे एक बात की हो (७३, ३४)।

**तुलनावाचक वाक्य।** संभावनार्थ के रूपों का मिश्र वाक्यों की इस श्रेणी में प्रयोग शब्दार्थक तौर पर उन स्थितियों में अनिवार्य है जब कि तुलना काल्पनिक उपाधि के साथ हो रही हो जो कि आश्रित वाक्य में आती है, अर्थात् मिश्र वाक्यों की इस श्रेणी में वास्तविक रूप से मौजूदा घटना कैसी हो सकती है जो कि मुख्य वाक्य में दी जाती है अगर आश्रित वाक्य में काल्पनिक उपाधि होती है। आश्रित वाक्य 'जैसे' तथा 'मानो' समुच्चयबोधकों द्वारा जोड़े जाते हैं। वाक्य का विधेय-वाचक हिस्सा मुख्यतः संभावनार्थ के पूर्ण रूपों, अपूर्ण रूपों या संतत रूपों द्वारा दिया जाता है।

आश्रित हिस्से में संभावनार्थ के पूर्ण रूप इस बात का संकेत देते हैं कि वास्तविक घटना जो कि वाक्य के मुख्य हिस्से में व्यक्त होती है, काल्पनिक पूर्ववर्ती उपाधि का परिणाम हो सकती थी। उदाहरणार्थ : उसका खून खोलने लगा, मानो उसके सिर पर खून सवार हो गया हो (६६, ४७), आज मैंने पिता में एक विह्वलता देखी थी, जैसे वह पुराना बरगद का पेड़ हिल उठा हो (१०३, १३), मोहनसिंह चौंक पड़े जैसे किसी ने चुटकी काट ली हो...(७३, १०५), इक्कों और तांगों का कहीं पता न था, जैसे शहर लुट गया हो (६६, ५६)।

आश्रित वाक्य में संभावनार्थ के संतत रूप इस बात का संकेत देते हैं कि वास्तविक घटना, जो कि मुख्य बात में व्यक्त होती है, की उस काल्पनिक उपाधि से तुलना कर रहे हैं, जो कि मुख्य वाक्य की विधेय-क्रिया के व्यापार के साथ एक ही काल सतह पर है। उदाहरणार्थ :...वह...इधर-उधर देखने लगे मानो छिपने

के लिए कोई बिल ढूंढ रहे हों (७३, ८०), नोहरी के पाँव ज़मीन पर न पड़ते थे, मानो विमान पर बैठी हुई स्वर्ग जा रही हो (६६, ७६), रोहित मर गया... रोहित मर गया...रोहित मर गया, जैसे ख़राब रिकार्ड की सुई बार-बार इसी लाईन पर घूम रही हो...(१०६, ५०),...लोग आते और जाते थे...जैसे सब कुछ अपने आप होता चला जा रहा हो (१०७, २)।

तुलनावाचक वाक्यों में संभावनार्थ के सरल (संश्लेषणात्मक) और अपूर्ण रूप कम ही पाये जाते हैं।

आश्रित वाक्य में सरल रूप मुख्य वाक्य के उद्देश्य की संभाव्य अवस्था की ओर संकेत करता है जिससे उस उद्देश्य की वास्तविक अवस्था की तुलना करते हैं, जो मुख्य वाक्य में व्यक्त होती है, उदाहरणार्थ : समूह स्थिर भाव से खड़ा हो गया, जैसे बैठा हुआ पानी मेड़ से रुक जाये (६६, ७४)।

संभावनार्थ के अपूर्ण रूप संभाव्य व्यापार व्यक्त करता है जो कि मुख्य वाक्य में विधेय-क्रिया के वास्तविक व्यापार के साथ काल अर्थ में मेल खाता है। यहां अपूर्ण रूप कुछ हद तक संतत रूप का पर्याय-सा लगता है, उदाहरणार्थ :... बड़े अनुरोध और भर्राये गले से, मानो शब्दों को बलात् ठेलकर कहते हों, वे बोल उठे...(१०६, ४०), बस, सब-का-सब मन एक दृढ़ संकल्प लिये लपके चले जा रहे थे, मानो कोई घटा उमड़ी चली आती हो (६६, ५२), कुत्ता निरीह भाव से खड़ा था मानो वह समझता हो कि...(१०६, १०५)।

**कालवाचक वाक्य।** मिश्र वाक्यों के इस प्रकार में संभावनार्थ के रूपों का प्रयोग संरचनात्मक रूप से प्रतिबन्धित तथा वैकल्पिक हो सकता है।

आश्रित कालवाचक वाक्यों में संभावनार्थ के रूपों का संरचनात्मक रूप से प्रतिबंधित प्रयोग निषेध समेत समुच्चयवोधक 'जब तक', (जब तक कि) और संयुक्त संयोजक शब्द 'इससे (के) पहले (पूर्व) कि' के साथ संबंधित होता है।

कालवाचक वाक्य, जो कि विधेयवाचक हिस्से में हुए निषेध के साथ 'जब तक' द्वारा जोड़ा जाता है, इस बात का संकेत देते हैं कि मुख्य वाक्य का व्यापार आश्रित वाक्य में संभाव्य व्यापार से पहले नहीं हो सकता, उदाहरणार्थ : ...आप मन्दिर में उस समय तक मत आना जब तक कि मैं न बुलाऊं (१४७, ५३-५४), परन्तु तब भी मैं भला आदमी ही बना रहूंगा जब तक कि मेरे अपराधों का भंडा न फूट जाये (१४७, ४६), मैंने सरल रीति से उतने दिनों तक आश्रय देना उचित समझा जब तक उसके पति का क्रोध न शान्त हो जाये (७३, ६१)।

कालवाचक वाक्य, जिनमें संयुक्त संयोजक शब्द—'इससे (के) पहले (पूर्व) कि' आते हैं, संभाव्य व्यापार को व्यक्त करते हैं जो कि मुख्य वाक्य की विधेय-क्रिया के व्यापार के पूर्ववर्ती होता है, उदाहरणार्थ : मगर इसके पहले कि वे किसी पर हाथ चलाएं, सभी लोग हुर्रे हो गये (६६, ७१), और इससे पहले कि कजरी

कुछ कहे वह बाहर निकल आया (१०३, ४३३)।

अगर समुच्चयबोधक शब्द 'जब' आश्रित वाक्य में आता है और अपने परपद 'तो' के साथ आता है जो कि मुख्य वाक्य में आता है तो शब्दार्थ और रचना में समस्त मिश्र वाक्य संकेतवाचक वाक्य के निकट आ जाता है, सिर्फ़ एक भिन्नता होती है कि संभाव्य व्यापार संतत हो सकता है और काल के किसी भी अर्थ से सम्बन्ध रख सकता है। आश्रित वाक्य में संभावनार्थ के रूपों के संगत मुख्य वाक्य में निश्चयार्थ के रूप होते हैं, उदाहरणार्थ : ऐसा व्यक्ति जान-बूझकर जब किसी पर कीचड़ फेंके तो इसके सिवाय क्या कहा जा सकता है कि...(७३, ४६), और जब मन्दिर अच्छी तरह चलता हो, तो उसकी वार्षिक आय किसी तरह भी एक अच्छी-खासी फैक्टरी की आय से कम नहीं होती (२८, १४०-१४१)।

संभावनार्थ के रूपों का वैकल्पिक प्रयोग संभाव्य व्यापार को व्यक्त करने से नहीं, बल्कि वांछनीय व्यापार व्यक्त करने से संबंधित है। इस हालत में संभावनार्थ के रूप आश्रित एवं मुख्य वाक्यों में आ सकते हैं (कई बार सिर्फ़ मुख्य वाक्य में), उदाहरणार्थ : आप जब तक चाहें रहें...(७३, ११५), शायद ही कोई ऐसा दिन ख़ाली जाता हो जबकि समाचार-पत्र के पृष्ठ हड़ताल की सूचनाओं में शून्य रहते हों (११५, ६६), जब तक वह आनन्द मिलता है तब तक उसे क्यों न भोगूँ (७३, ७७)।

**विशेषण वाक्य।** मिश्र वाक्यों के इस प्रकार में संभावनार्थ के रूपों का प्रयोग बहुत हद तक वैकल्पिक होता है, हालाँकि विशेषण वाक्यों के विभिन्न संरचनात्मक प्रकार अक्सर संभावनार्थ के रूपों के साथ अधिकतर आते हैं।

उनमें से एक प्रकार है आश्रित वाक्य की परस्थिति जबकि उसका मुख्य वाक्य 'ऐसा' पूर्वपद के साथ आता है। बहुधा मुख्य वाक्य का विधेय निषेधात्मक होता है, उदाहरणार्थ : कोई ऐसा फल न था जिसे वे बीमारी का कारण समझते हों (६६, १६६),...ऐसी करुणा नहीं जो भीतर की ओर मुड़ी हुई हो और दूसरों की दया चाहती हो (१५८, १६), कोई आँख ऐसी न थी जो आँसू से लाल न हो (६६, ५६)।

अगर इन वाक्यों का विधेय बग़ैर किसी निषेधात्मक निपात के आता है, तो आश्रित वाक्य में, आम तौर पर, विधेय निषेधात्मक होता है, उदाहरणार्थ : आज यहां...कौन पंडित ऐसा है जो मेरे तलुए सहलाने में अपनी इज़्ज़त न समझे ? (७३, ४१), लोग मुझे बिलकुल बेकार का ऐसा आदमी मानने लगे हैं कि जिसे कोई काम-धाम न हो, दिन-भर बस मन-भर का मुँह बनाये घूमता रहता हो (१०८, ३४)।

दोनों विधेयों में भी निषेध हो सकता है : कोई आँख ऐसी न थी जो आँसू से लाल न हो (६६, ५५), कोई...चमार ऐसा न बचा जिसके संबंध में शर्मा जी ने

कुछ-न-कुछ पूछा न हो (७३, ४८)।

विशेषण वाक्यों के दूसरे प्रकार में जिनके आश्रित हिस्से में संभावनार्थ के रूप आते हैं, आश्रित वाक्य की परस्थिति के साथ ऐसे वाक्य हो सकते हैं, जिनमें मुख्य वाक्य का सार खुलता है, ज़्यादा ठीक होगा अगर कहेंगे कि मुख्य वाक्य के उद्देश्य की दशा का सार खुलता हो, उदाहरणार्थ : गंगाधर प्रसाद की दशा उस मनुष्य की-सी थी जो चोरों के बीच में अशर्फ़ियों की थैली लिये बैठा हो (७३, २३),... उस मनुष्य की-सी दशा हो गयी जो किसी नदी के तट पर बैठा उसमें कूदने का विचार कर रहा हो (६६, ११५)।

विशेषण वाक्यों के तीसरे प्रकार में जिनके आश्रित हिस्से में संभावनार्थ के रूप आते हैं, ऐसे वाक्य होते हैं जो आश्रित वाक्य की पूर्वस्थिति के साथ होते हैं, जिनका संभाव्य व्यापार भविष्यत् काल के अर्थ में होता है, उदाहरणार्थ : जो मेरे साथ रह सके वह रहे...(१०८, १२), जो ये कहे सो करो (१०८, ४४)।

बाकी स्थितियों में संभावनार्थ के रूप मुख्यत: संभाव्य नहीं, बल्कि वांछनीय व्यापार व्यक्त करते हैं, उदाहरणार्थ : जिसके पास धन हो, वह धन से सेवा करे (७३, ८६), आपको जो आज्ञा हो करूं (६६, ८४), तुम्हारी जो धारणाएं हों तुम बड़े शौक से लिख सकते हो (१४७, २७), इस अपराध के लिए मुझे जो सज़ा चाहें दें (७३, ४६)।

विशेषण वाक्यों और उन अनुमतिवाचक वाक्यों के बीच भेद जानना चाहिए जो कि संयुक्त समुच्चयबोधकों 'जो कुछ भी' और 'जो भी' के साथ आते हैं, जो आम तौर पर संभावनार्थ के रूपों के साथ आते हैं, उदाहरणार्थ : जो कुछ भी हो, मेरा तुम्हारे साथ जाना नामुमकिन है (५६, ८४), खैर, जो भी हो अपने पुरखों को यों याद करना अच्छा नहीं लगता (१०८, २२२)।

**संबंधवाचक-संयोजक वाक्य**। मिश्र वाक्यों के इस प्रकार में संभावनार्थ के रूपों का प्रयोग जिसमें संयोजक शब्द 'जिससे' और 'जिसमें' आते हैं संरचनात्मक तौर पर अनिवार्य होता है, उदाहरणार्थ : जमाख़ोरों ने...साज़िश की है जिससे चीनी का भाव और बढ़ जाये (IV, ८.६.१६७४), इस कार्यक्रम का उद्देश्य रबि के उत्पादन में इतनी वृद्धि करना है जिससे ख़रीफ़ के उत्पादन में कुछ हानि लगभग पूरी हो जाये (१५३, १३), वह अपनी भाभी के इशारों पर दौड़ती थी जिसमें वह माता को कुछ कह न बैठे (७३, १०२)।

संभावनार्थ के रूपों का प्रयोग जिन मिश्र वाक्यों में समुच्चयबोधक नहीं होते, इन वाक्यों की विशेष रचना के साथ संबंधित है। इस तरह संभावनार्थ के रूप विशिष्ट संरचना के समुच्चयबोधक रहित मिश्र वाक्यों में आते हैं जिन्हें खुद, बाँट सकते हैं : (क) वाक्य जिनमें परस्थित अन्वादेशक शब्द आते हैं और (ख) वाक्य जिनमें वाक्यविन्यासात्मक स्थिति पूरी नहीं होती।

उन वाक्यों में जिसमें परस्थित अन्वादेशक शब्द होते हैं, संभावनार्थ के रूप समुच्चयबोधक रहित वाक्यों के पहले हिस्से में आते हैं, दूसरे हिस्से में अन्वादेशक संबंध-तत्व 'यह' और 'ऐसा' आते हैं जिनमें से पहले का अर्थ 'अभिप्रेरित स्पष्टीकरण' होता है और दूसरा समरूपता व्यक्त करने के काम आता है, उदाहरणार्थ : एक किसान किसी पुलिस के आदमी के साथ इतनी बेअदबी करे, **इसे** भला वह कहीं बर्दाश्त कर सकता है (६६, ११),...इसके लिए दंड की कौन-सी प्रक्रिया अपनाई जाये, **इस पर** मतभेद था (IV, ६.६.१६७४); वह बहुत देर पहले से गाती रही हो, **ऐसा** तो नहीं लगा...(१५८, ३०),...उन्होंने बाहर वालों पर कृपा कर दी हो, **ऐसा** भी नहीं है (१८, १५२)।

जिन वाक्यों में वाक्यविन्यासात्मक स्थिति पूरी नहीं है, वे संरचनात्मक दृष्टि से व्याख्यात्मक वाक्यों से मिलते हैं, उनमें सिर्फ़ एक ही अंतर है कि समुच्चयबोधक छोड़ देते हैं (मुकाबला कीजिए इन दो वाक्यों में : 'मेरा मन होता है, उसके कंधे पकड़कर उसको झकझोर दूं...(१०६, ६५)', और 'मन होता था कि अभी छज्जे से कूदकर आत्महत्या कर डालूं (१०८,१०२)'। संरचनात्मक निकटता की वजह से संभावनार्थ के रूपों का प्रयोग उन्हीं शब्दों के वर्गों की उपस्थिति में शब्दार्थक तौर पर अनिवार्य होता है, जो कि व्याख्यात्मक वाक्य में भी होता है, उदाहरणार्थ : जी चाहता है, तुम्हारे पैरों पर गिरकर रोऊं (७३, ८६), मन करता है, मैं भी एक कुत्ता पाल लूं...(१०६, १०५), इच्छा हुई, इस बुढ़िया से ही सब कुछ पूछ डालूं...(१०६, ६५), संभव है, अब उन्होंने घर बसा लिया हो (७५, ८), मुमकिन है, लगान की तेज़ी से इंतज़ाम न हो सका हो (७३, १०६)।

सरल वाक्य में संभावनार्थ के रूपों का प्रयोग बहुधा वैकल्पिक होता है, हालाँकि संभावनार्थ के रूप व्यावहारिक तौर पर निम्नलिखित शाब्दिक-व्याकरणिक चिह्नकों की उपस्थिति में अनिवार्य होते हैं : 'शायद', 'कहीं' ('कभी भी', 'कहीं भी' के अर्थ में), 'क्यों न', उदाहरणार्थ : शायद वहां घूमने गया हो... (६६, १६४), शायद वह उस प्रकार की बातों से सचमुच ही कोरी हों (७५,४६), कहीं मैं हार न जाऊं (१०८, ११), कहीं इस आघात से बीमार न पड़ गयी हो (१०६, ४१), क्यों न उसे बेच डालूं ? (७३, १६६), क्यों न यह कंगन सुमन बाई की नज़र करूं ? (७५, ७२)।

संभावनार्थ के रूप व्याकरणिकीकृत विस्मयादिबोधक 'काश' के साथ आ सकते हैं, जिनके साथ मुख्यतः संकेतार्थ के रूप आते हैं, उदाहरणार्थ : काश, वह कभी उसे समेट कर अपनी बांहों में ले सके...(७५, ६५), काश कि मैं और रानी यूरोपीय जवानों की तरह खुले आम साथ-साथ घूम सकें (१, १७६)।

संभावनार्थ के रूप स्थिर अभिव्यक्तियों में प्रयोग होते हैं जो कि 'जानना' क्रिया के संभावनार्थ के रूपों द्वारा व्यक्त होती हैं जिसके साथ सार्वनामिक संज्ञा

और क्रियाविशेषण मिलते हैं ('क्या जाने', 'कौन जाने', 'न जाने क्या', 'न जाने क्यों', 'कैसे जाने' आदि) तथा 'चाहे' (चाहे जो कुछ हो) समुच्चयबोधक के साथ स्थिर अभिव्यक्ति द्वारा व्यक्त होती हैं, उदाहरणार्थ : न जाने क्या कर बैठूं ! (१५८, २२), तुम्हारे मन का हाल कौन जाने ? (७३, ६५),...लेकिन न जाने क्यों मुझे उनकी गुस्ताख़ी बुरी लग रही थी (१५७, २१),...जाने कैसे मेरे मुँह से निकला...(१०८, ६७); चाहे जो कुछ हो, उससे कदापि न पूछना (७३, ८४)।

बाक़ी स्थितियों में संभावनार्थ के रूपों का प्रयोग काल्पनिक वांछनीय व्यापार की विभिन्न छायाओं के साथ संबंध रखता है, जिनको बाँट सकते हैं :

(१) व्यापार को पूरा करने की कल्पना या इच्छा की छाया, उदाहरणार्थ : मेरे समाज में सवेरे चले (७३, ६७), गरीब किसान लगान कहां से दे (६६, १०), लेकिन अब इस वर्तमान का क्या करूं ? (१०८, ११),...मोहिनी में अपने को फँस जाने दूँ या इस झड़ी से कतराकर निकल जाऊँ (१०८, ११);

(२) आवश्यकता या अनिवार्यता की छाया, उदाहरणार्थ : मातृभाषा ही शिक्षा का माध्यम हो। शिक्षा किसी दस्तकारी अथवा हाथ के काम को केन्द्र बनाकर उसके आधार पर दी जाये (११५, ३४४), भोजन एक ही समय बने,... (७३, ५१), खैर साहब, आपका काम है आप जानें (१४७, ४६);

(३) मिलकर व्यापार करने के उद्‌बोध की छाया, उदाहरणार्थ : आओ देखें...(१०८, ६२), चलो, लौट चलें (१०३, १२२);

(४) अनुमति की छाया, उदाहरणार्थ : तो हम लोग चलें इंस्पेक्टर ? (१४७, २४), कह दूँ हुज़ूर ? (१४७, ५६), एक बात पूछूँ प्यारी ? (१०३, १४६);

(५) शिष्ट प्रार्थना की छाया, उदाहरणार्थ : आप लोग यहां भीड़ न लगायें और न किसी को भला-बुरा कहें (६६, ३६), भैय्या, ईश्वर के लिए आप मेरे संबंध में ऐसा विचार न करें (७३, १०६), कृपया इनके अतिरिक्त अन्य सब चीजों को दस-दस सेर रखने की कृपा करें (६२, ३८०),

(६) कामना की छाया, उदाहरणार्थ : ईश्वर तुम्हारी रक्षा करे और तुमको अपने बच्चों से मिलाये (६६, १६२), भाई साहब, तुम धन्य हो (७३, ८६)।

व्यापार की काल्पनिकता जो कि संभावनार्थ के रूपों द्वारा व्यक्त होती है, इस व्यापार को संभवनीय व्यापार के निकट कर देती है, जो कि अपूर्णतावाची और पूर्णतावाची भविष्यत् काल के रूपों द्वारा व्यक्त होता है (द्वितीय भविष्यत् और तृतीय भविष्यत् काल)। यह बात निम्नलिखित उदाहरणों से प्रमाणित होती है : उसे संशय होने लगा कि कहीं सुमन बाई को ये सब समाचार मालूम तो न हो गये हों। वह वहां स्वयं तो न रही होगी, लोगों ने उसे अवश्य ही त्याग दिया होगा, लेकिन उसे विवाह की सूचना ज़रूर दी होगी। ऐसा हुआ होगा तो कदाचित् वह मुझसे सीधे मुँह बात न करेगी। संभव है मेरा तिरस्कार भी करे

(७३, १४६), मैं चाहे उसे न देख पाया होऊँ उसने ज़रूर ही मुझे देख लिया होगा (१०६, १६), 'शायद मर भी गयी हो (६६, १६५)', और 'वह भी शायद मर चुकी होगी (३१, ६६)'।

संभावनार्थ के रूपों के अर्थों तथा अपूर्णतावाची और पूर्णतावाची भविष्यत् काल के रूपों के बीच समानता नहीं कह सकते चूँकि भविष्यत काल के रूप वास्तविक व्यापार को व्यक्त करते हैं, जो कि होता है (हुआ था या होगा), लेकिन वक्ता किन्हीं कारणों से पूर्णतः विश्वस्त नहीं है कि काल के किस क्षण में व्यापार हो सकता है, उदाहरणार्थ : मैं तो समझता हूं कि विषयी मुसलमान बादशाहों के समय उसका जन्म हुआ होगा (७३, ८७)—भूतकाल में व्यापार हुआ, कोई पैदा हुआ, लेकिन यह बात निश्चित नहीं कि वक्ता के कहे अनुसार वह उस कालावधि में पैदा हुआ। संभावनार्थ सिर्फ़ काल्पनिक व्यापार को व्यक्त करता है जो न हो सका था और न ही होगा, चूँकि वह छिपे तौर पर संभाव्य या वांछनीय होता है। संभावनार्थ के रूपों का संबंध किसी भी वास्तविक मौजूदा वस्तुगत काल के साथ नहीं होता, वे किसी-न-किसी तरह सापेक्ष काल से संबंध रखते हैं, अर्थात् काल के क्षण के साथ। भविष्यत् काल के रूप वस्तुगत वास्तविक काल के साथ संबंध रखते हैं, उदाहरणार्थ : ऐसे वस्त्र तो शायद मुझे अपने विवाह में भी न मिले होंगे (६६, १६७)—वक्ता को शादी के समय वस्त्र मिले, उक्ति के क्षण से पहले व्यापार सचमुच हुआ, लेकिन वक्ता को पक्का विश्वास नहीं कि उसे भी ऐसे कपड़े मिले।

इस तरह संभावनार्थ के रूपों को तथा अपूर्णतावाची और पूर्णतावाची भविष्यत् काल के रूपों को जिनका शब्दार्थक रूप से समान अर्थ होता है, व्यापार के वास्तविक या अवास्तविक चिह्न द्वारा पता लगाते हैं।

## संकेतार्थ

आधुनिक हिन्दी में संकेतार्थ चार रूपों का वर्ग होता है। उनमें से एक तो संश्लेषणात्मक विकारी होता है और बाकी तीन विश्लेषणात्मक विकारी होते हैं : संकेतार्थ के सब रूप भी काल संबंधी नहीं होते, बल्कि काल सापेक्षता का ज़्यादा सामान्य अर्थ व्यक्त करते हैं।

प्राकारिक विवरणों की दृष्टि से संकेतार्थ के रूप प्राकारिक रूपों से संबंध रखते हैं, तब संश्लेषणात्मक रूप बहुप्राकारिक होते हैं चूँकि संकेतार्थ के पूर्ण और अपूर्ण प्राकारिक रूपों के अर्थ को व्यक्त करता है।

### संश्लेषणात्मक (सरल) रूप

यह रूप पुल्लिग (एक वचन और बहुवचन) के दो विकारी रूपों द्वारा व्यक्त

होता है जो कि प्रथम कृदन्त के समाकार होते हैं एवं स्त्रीलिंग के दो विकारी रूपों (एक वचन और बहुवचन), जिनमें से एक प्रथम कृदन्त का समाकार होता है और दूसरा स्त्रीलिंग के प्रथम कृदन्त का नासिकीकृत रूप होता है।

| | |
|---|---|
| मैं | हम |
| तू लिखता (लिखती) | तुम, आप लिखते (लिखतीं) |
| वह | वे |

संकेतार्थ का संश्लेषणात्मक रूप छिपे हुए संभाव्य या वांछनीय व्यापार को व्यक्त करता है जो मुख्यतः भूतकाल या वर्तमान काल के अर्थ से संबंध रखता है। उदाहरणार्थ : (भूतकाल के अर्थ में)—चाहता तो अब तक हज़ारों रुपये जमा कर लेता (६५, ५२), तुम कम-से-कम इतना तो कर ही सकते थे कि उन पर डंडा न चलाने देते (६९, ५४), चाहिए तो यह था कि मैं लज्जा से वहीं गड़ जाती (७३, ८९); (वर्तमान काल के अर्थ में)—तुम मेरी जगह होते तो इस समय क्या जवाब देते ? (७३, ११०), परन्तु चाहता हूं कि वह अब न आते तो अच्छा होता (६९, ९६)।

संकेतार्थ का यह रूप भविष्यत् काल के अर्थ में व्यापार को कम ही व्यक्त करता है, उदाहरणार्थ : ऐसे कुमानसों के बीच में बेचारी निर्मला की न जाने क्या गति होती। अपने नसीबों को रोती (६६, ३७), मैं आज तेरे घर में रहने के लिए आयी थी। मैं तुझसे विवाह करती और तेरी होकर रहती (६९, १९९), कहीं उसके नाम कोई लाटरी निकल आती ! (६५, २८)।

संकेतार्थ का संश्लेषणात्मक रूप संकेतवाचक वाक्य के दोनों हिस्सों में आकर उस व्यापार को व्यक्त कर सकता है जो कि विभिन्न कालार्थों से संबंध रखता है, उदाहरणार्थ : अगर मैं पहले ही सावधान हो जाता तो आज तुम लोगों की यह दुर्दशा न होती (७३, १५६), यदि मैं पाप से न डरता तो आज मुझे यों ठोकरें न खानी पड़तीं (७३, ७), पैसे अगर दो-चार मिल जाते तो इस वक्त वह ज़रूर दे देती (६९, २०)।

संकेतार्थ का संश्लेषणात्मक रूप एकल संभाव्य या वांछनीय व्यापार व्यक्त कर सकता है, उदाहरणार्थ : अगर इस वक्त कोई उसके दोनों हाथ काट डालता, कोई उसकी आँखें लाल लोहे से फोड़ देता, तब भी वह चूँ न करता (६९, ४७), चाहता तो प्रधान होता (७३, १३७), अगर मेरी दाढ़ी होती तो आपको दे देती (७३, ९२)।

यद्यपि काफ़ी अक़सर यह रूप संतत व्यापार को व्यक्त करता है, उदाहरणार्थ : अगर वह मुझसे वीणा सीखती, तो मुझे तीन सौ रुपये महीना मिलते (२८, १४८), और कौन ऐसा निठल्ला था जो रात-रात भर उससे शतरंज खेलता

(६५, ३२), कोई साधारण मकान पाँच रुपये किराये पर ले लेता, तो क्या काम न चलता ? मैं और साथ के सब आदमी आराम से रहते (६६, ११२), अगर भगवान ने उसे इतना अपंग न कर दिया होता, तो आज झोंपड़े लीपतीं, द्वार पर बाजे बजवातीं, कढ़ाव चढ़ा देतीं, पूरियां बनवातीं...(६६, ६७)।

## संकेतार्थ का अपूर्ण रूप

यह रूप प्रथम कृदन्त के लैंगिक विकारी रूपों तथा संकेतार्थ में 'होना' क्रिया के विकारी संश्लेषणात्मक रूपों के मेल से बनता है। इस तरह संकेतार्थ का अपूर्ण रूप पुल्लिग (एकवचन तथा बहुवचन) के दो लैंगिक रूपों तथा स्त्रीलिंग के एक लैंगिक रूप और संकेतार्थ में क्रिया 'होना' के चार विकारी रूपों के मेल से बनता है।

मैं
तू लिख-ता (-ती) हो-ता (-ती)
वह
हम
तुम लिख-ते (-ती) हो-ते (-तीं)
आप
वे

संकेतार्थ का अपूर्ण रूप संभाव्य संतत अपूर्ण व्यापार को व्यक्त करता है जो आम तौर पर वर्तमान काल के अर्थ में आता है, उदाहरणार्थ : यदि आज यह पुरुष जीता होता तो पचास या पचपन वर्ष का होता (५, ३७), आपने न बचाया होता तो आज शराब या ताड़ी की जगह हल्दी-गुड़ पीते होते (६६, ४३)।

भूतकाल के अर्थ में यह रूप कम आता है, उदाहरणार्थ : यही सब यदि जानता होता तो नन्दा, मैं भी सिद्ध हो गया होता (१७, ८७), अगर वह जानती होती कि आनन्द के पास सात-आठ दिनों तक रहने में ही उसकी यह हालत हो जायेगी, तो वह यहां कभी नहीं आती (५६, १२२)।

संकेतार्थ का अपूर्ण रूप अक़सर संभाव्य एकल व्यापार को व्यक्त करता है, उदाहरणार्थ : वकील साहब जीते होते तो शर्माते-शर्माते भी पन्द्रह-बीस हज़ार दे मारते (६६, २५), तू मुझे मन से न चाहता होता, तो तू मुझे मारता क्यों (१०३, ४५)।

## संकेतार्थ का पूर्ण रूप

यह रूप द्वितीय कृदन्त के पुल्लिग (एकवचन तथा बहुवचन) के दो लैंगिक रूपों तथा स्त्रीलिंग के एक लैंगिक रूप एवं कर्तृ-सम्बन्धी रचना में 'होना' क्रिया

के संकेतार्थ के चार विकारी रूपों के मेल से बनता है। पुल्लिग तथा स्त्रीलिंग के समान कृदन्तपरक रूपों और कर्म-सम्बन्धी रचना में 'होना' क्रिया के संकेतार्थ के दो विकारी रूपों से बनता है और पुल्लिग के एक लैंगिक रूप एवं भाववाचक रचना में 'होना' क्रिया के संकेतार्थ के एक रूप के मिलन से बनता है।

**कर्तृ-सम्बन्धी रचना**

मैं आया (आयी) हो-ता (-ती)
तू
वह
हम
तुम, आप आये (आयी) हो-ते (-तीं)
वे

**कर्म-सम्बन्धी रचना**

एकवचन

मैं, तू, उस, हम, तुम, आप, उन्हों ने पत्र (चिट्ठी) लिखा (लिखी) हो-ता (-ती)

बहुवचन

मैं, तू, उस, हम, तुम, आप, उन्हों ने दो पत्र (दो चिट्ठियां) लिखे (लिखी) हो-ते (-तीं)

**भाववाचक रचना**

एकवचन तथा बहुवचन

मैं, तू, उस, हम, तुम, आप, उन्हों ने पत्र-दो पत्रों को (चिट्ठी-दो चिट्ठियों को) लिखा होता

संकेतार्थ का पूर्ण रूप संभाव्य व्यापार को व्यक्त करता है जो कि दूसरे संभाव्य व्यापार के पूर्ववर्ती हो सकता था, जो आम तौर पर संकेतार्थ के संश्लेषणात्मक रूप द्वारा व्यक्त होता है, उदाहरणार्थ : जुलूस निकलने से स्व-राज्य मिल जाता तो अब तक कब का मिल गया होता (६६, ४७), यदि मैंने उसे घर से निकाल न दिया होता तो इस भाँति उसका पतन न होता (७३, ६१), अगर तुमने यह बात मुझसे कही होती तो मैं अवश्य ही तुम्हें भगा ले जाता (७५, २३७)।

संकेतार्थ का पूर्ण रूप उस संभाव्य व्यापार को व्यक्त करता है जो निश्चयार्थ की साथ आने वाली क्रिया के व्यापार के पूर्ववर्ती हो सकता है अगर यह पूर्ववर्ती

व्यापार सचमुच हुआ होता है, उदाहरणार्थ : भारत सरकार की सुरक्षा से वे बच गये हैं, अन्यथा गीर सिंह भी भारत से लुप्त हो गये होते (१५०, १९), मैं चला गया होता, मगर मुझे सवाक की प्रतीक्षा थी (१३६, ६१),...हम लोगों ने...कहा कि हम कर चुके होते, केवल गणेश शंकर विद्यार्थी के अनुरोध से स्थगित कर देनी पड़ी (९७, ६६)।

संकेतार्थ का पूर्ण रूप संभाव्य, पूर्णतावाची प्रकृति का व्यापार कम ही व्यक्त करता है, उदाहरणार्थ : भगवान ने दिया होता तो तुम्हें कहना न पड़ता (६९, ६७), तभी तो मेरे प्राण बच पाये हैं, नहीं तो विजय के उठाये हुए तूफ़ान से बचना मुश्किल था। लोगों ने मेरी जान ले ली होती ! (१२०, ४६), यदि यही करना था तो आज से पच्चीस साल पहले ही क्यों न किया, अब तक सोने की दीवार खड़ी कर दी होती (७३, ९)।

संकेतार्थ का पूर्ण रूप बहुत ही कम स्थितियों में संभाव्य व्यापार को व्यक्त करता है, जो कि दूसरे संभाव्य व्यापार या निश्चयार्थ में साथ आने वाली क्रिया के व्यापार के साथ एक ही काल की सतह पर हो सकता है, उदाहरणार्थ : काश, वह इस घर में न पैदा हुई होती ! काश, उसकी मां सचमुच मां होती ! (५९, ८५-८६), यही सब जानता यदि होता तो नन्दा, मैं भी सिद्ध हो गया होता (१०७, ८७), इससे तो कहीं अच्छा था कि आपने हमारे ही ऊपर अपना गुस्सा उतारा होता (६९, ६४)।

## संकेतार्थ का संतत रूप

यह रूप संतत कृदन्त के लैंगिक विकारी रूपों तथा संभावनार्थ में 'होना' क्रिया के विकारी संश्लेषणात्मक रूपों के मेल से बनता है। इस तरह संकेतार्थ का संतत रूप पुल्लिग (एकवचन और बहुवचन) के दो लैंगिक रूपों और स्त्रीलिंग के एक लैंगिक रूप तथा संकेतार्थ में 'होना' क्रिया के चार विकारी रूपों के मेल से बनता है।

मैं
तू लिख रहा (रही) हो-ता (-ती)
वह
हम
तुम लिख रहे (रही) हो-ता (-तीं)
आप
वे

संकेतार्थ का संतत रूप संभाव्य अपूर्ण व्यापार को व्यक्त करता है, जो कि

ठीक दिये गये काल के क्षण में हो सकता है, जो कि आम तौर पर दूसरे संभाव्य व्यापार द्वारा निर्धारित होता है, या काल के चिह्नक द्वारा या पूर्ववर्ती प्रसंग द्वारा व्यक्त होता है। इस तरह, संकेतार्थ के संतत रूप का व्यापार दूसरे व्यापार की, या काल सूचक की या प्रसंग की पृष्ठभूमि में होता है, उदाहरणार्थ :...वह किसी...सुन्दरी और उसके प्रेमी को देखता जो अँधेरे में खड़े बातें कर रहे होते तो उसके दिल में हूक-सी उठने लगती...(३०, १०९), लच्छू मन-ही-मन इतना उखड़ चुका था कि अगर दूसरी कोई ट्रेन लखनऊ जा रही होती तो वह उसी दम लौट पड़ता (१, २०२), यदि बिन्दो जग रही होती, तो कदाचित् उसे भी लता की ओर से यही अनुभव होता (१४९, ९३), लच्छू, मैं भारतीय हूं और मुझे अभी रूस की हवा नहीं लगी, समझे ! वह विवाह कर रही होती तो हम पूरी सहायता देते (१, ५५५)।

संकेतवाचक वाक्य जो कि अवास्तविक हेतुमद्-संबंध को व्यक्त करते हैं, संकेतार्थ के रूपों के प्रयोग का वाक्यविन्यासात्मक मानक है। तब अवास्तविक हेतुमद्-संबंध हो सकता है : (क) स्थितिपरक और (ख) सामान्य।

जब अवास्तविक स्थितिपरक हेतुमद् संबंध होता है तो व्यापार की अवास्तविकता विशेष स्थिति द्वारा सीमित हो जाती है जिसके कारण व्यापार नहीं था (या नहीं है, या नहीं होगा), उदाहरणार्थ : अगर दूसरे ने यह हरकत की होती तो आज उसका खून पी जाता (७३, ९२), यदि तुमने उनकी बातें चुपचाप न सुन ली होतीं, तो मुझे बहुत ही दुख होता (६९, ८४), रोशनी होती तो भागना कठिन हो जाता (१३९, १७२)।

जब सामान्य अवास्तविक हेतुमद् संबंध होता है तो अवास्तविकता, जैसी भी है, व्यापार का मुख्य विवरण होती है। व्यापार छिपे तौर पर संभाव्य नहीं रहता, बल्कि वांछनीय होता है, उदाहरणार्थ : जुलूस निकलने से स्वराज्य मिल जाता तो अब तक कब का मिल गया होता (६९, ९७), यदि प्राण देने से पापों का प्रायश्चित हो जाता तो मैं अब तक कभी का प्राण दे चुका होता (७३, १७३)। दूसरी तरफ़, व्यापार वास्तव में और तार्किक तौर पर वास्तविकता से पूर्णतया विरोध में होता, उदाहरणार्थ : अगर इस वक्त कोई उसके दोनों हाथ काट डालता, कोई उसकी आँखें लाल लोहे से फोड़ देता, तब भी वह चूँ न करता (६९, ४७), सुमन—मेरी दाढ़ी होती तो आपको दे देती (७३, ९२)।

स्थितिपरक अवास्तविक हेतुमद् संबंध में व्यापार आम तौर पर भूतकाल के अर्थ के साथ संबंध रखता है, उदाहरणार्थ : काश उस समय पन्द्रह दिन को कहीं कलकत्ता-बम्बई, पूना-हरिद्वार, कहीं भी भाग गया होता तो सब क्यों होता ? (१०८, ९), तुम लोग बीच में न क़ूद पड़ते, तो मैंने उन सबों को ठीक कर लिया होता (६९, ४३), अगर तुमने उसके जीवन का अन्त कर दिया होता तो उसकी

यह दुर्दशा न हुई होती (७३, १६०)।

स्थितिपरक अवास्तविक हेतुमद् संबंध विभिन्न काल अर्थों से (भूतकाल, वर्तमान काल) संबंध रख सकता है, उदाहरणार्थ : श्री रामचन्द्र ने यदि अपना जीवन सुखभोग में बिताया होता, आज हम उनका नाम भी न जानते (६६, ११३), आपने न बचाया होता तो आज शराब या ताड़ी की जगह हल्दी-गुड़ पीते होते (६६, ४३)।

यह व्यापार वर्तमान या निरपेक्ष काल अर्थ से कम ही सम्बन्ध रखता है, उदाहरणार्थ : अगर वही गाना...साज़ के साथ किसी महफ़िल में होता तो रुपये बरसते, लेकिन सड़क पर गाने वाले अंधे की कौन परवाह करता है (६६, २२)—वर्तमान काल के अर्थ में; अगर दस-बीस आदमी जमा हो जाते, तो पुलिस कहती, हमसे लड़ने आये हैं। डंडे चलाने शुरू करती और अगर कोई आदमी क्रोध में एक-आध कंकड़ फेंक देता, तो गोलियां चला देती। दस-बीस भुन जाते। इसीलिए लोग जमा नहीं होते (६६, ११)—निरपेक्ष काल का अर्थ।

बहुत ही कम स्थितिपरक अवास्तविक व्यापार भविष्यत् काल के अर्थ में आता है, उदाहरणार्थ : ज़रा-सा घी दाल में अधिक पड़ जाता, तो सारे घर में शोर मच जाता, ज़रा खाना ज़्यादा पक जाता, तो सास दुनिया सिर पर उठा लेती (६६, ३७), अहमदाबाद चलते तो कैसा रहता ! (१०३, ४७३)।

जब सामान्य अवास्तविक हेतुमद् सम्बन्ध होता है तो व्यापार मुख्यत: वर्तमान काल के, भविष्यत् काल के या निरपेक्ष काल के अर्थ से सम्बन्ध रखता है, उदाहरणार्थ : परन्तु चाहता हूं कि वह अब न आते तो अच्छा होता (६६, ११२)—वर्तमान काल का अर्थ; अगर तुम्हें सुबह-सुबह किसी कारख़ाने या दफ़्तर के लिए तैयार होना पड़ता तो देखती कि तुम दो घंटे कैसे भगवान की पूजा करते ! (२८, १११)—भविष्यत् काल का अर्थ; क्या अच्छा होता, अगर यह फुलवाड़ी हमेशा ही ऐसी ही गुलज़ार बनी रहती...(८३, १८)—निरपेक्ष काल का अर्थ।

बहुत ही कम यह व्यापार भूतकाल के अर्थ में आता है, उदाहरणार्थ : कोई साधारण मकान पाँच रुपये किराये पर ले लेता, तो क्या काम न चलता ? (६६, ११२)।

जैसा कि पता है कि अवास्तविक हेतुमद् सम्बन्ध में संकेतवाचक वाक्य में संभावनार्थ के रूप हो सकते हैं। संकेतार्थ तथा संभावनार्थ के रूपों के प्रयोग में अन्तर मुख्यत: सिर्फ़ काल के अर्थ में है : संकेतार्थ के रूप बहुधा भूतकाल के अर्थ में आते हैं जबकि संभावनार्थ के रूप बहुधा भविष्यत् काल के अर्थ में आते हैं। यही मुख्य अन्तर वाक्यों की दूसरे समान प्रकारों की संरचना में भी है, उदाहरणार्थ : बजाय इसके कि मेरा शुक्रिया अदा करो, जो सात मील जाकर चला आया हूं... शुक्रिया अदा तो मैं तब करती जो तुम उसी समय उतर जाते और मुझे बस में

सीट ले लेने देते (५२, १३७), गन्ने कैसे भी क्यों न हों, ज़रूर मिलते (१७, १०४)। इस तरह संकेतार्थ के रूप संभाव्य व्यापार को व्यक्त करते हैं जो हो सकता था, लेकिन हुआ नहीं, और संभावनार्थ के रूप उस व्यापार को व्यक्त करते हैं जो भविष्यत् काल में हो सकता था जो कि वक्ता के लिए वांछनीय परिणाम हो सकता है। यह बात यहां बतानी उचित होगी कि यह मुख्य अन्तर सबसे ज़्यादा सरल संश्लेषणात्मक रूपों में दिखायी पड़ता है। विश्लेषणात्मक रूपों में यह अन्तर कम पड़ सकता है, और किन्हीं विशेष संरचनात्मक-शब्दार्थक स्थितियों में एक ही कालार्थ हो सकता है।

संकेतार्थ के रूपों के प्रयोग के व्याकरणिक मानक उन स्थितियों में संरक्षित रहते हैं, जबकि उपाधि और परिणाम मिश्र वाक्य के एकल सेट में नहीं होते, बल्कि वाक्य के अलग-अलग दूसरे संरचनात्मक प्रकारों के साथ आते हैं या बाह्य रूप से पृथक्कृत होते हैं। इस तरह काल्पनिक उपाधि का परिणाम वाक्यों में संकेतवाचक वाक्य के बाहर भी हो सकता है, उदाहरणार्थ : सुमन, तुम सच कहती हो, बेशक हिन्दू जाति अधोगति को पहुँच गयी, और अब तक वह कभी की नष्ट हो गयी होती, पर हिन्दू स्त्रियों ही ने अभी तक उसकी मर्यादा की रक्षा की है (७३, ६३), मैं अकेली नहीं जाऊँगी—तो पहले कह दिया होता (२८, ११२), तभी तो मेरे प्राण बच पाये हैं, नहीं तो विजय के उठाये हुए तूफ़ान से बचना मुश्किल था। लोगों ने मेरी जान ले ली होती। (१२०, ४६)।

दूसरी तरफ़, संकेतवाचक वाक्य का आश्रित हिस्सा स्वतंत्र रूप से आ सकता है और काल्पनिक उपाधि को व्यक्त कर सकता है, लेकिन यह ज़रूरी नहीं कि परिणाम व्यक्त हो, उदाहरणार्थ : काश, तुमने मुझे एक मौका दिया होता, केवल मौका ! (७५, २३६), अगर तुम मना कर देतीं...(१, ५२३)।

संकेतार्थ के रूपों के प्रयोग के व्याकरणिक मानक उन स्थितियों में भी सुरक्षित रहते हैं जबकि संकेतवाचक वाक्य के एक हिस्से में (मुख्य या आश्रित में) निश्चयार्थ में क्रिया आती है।

निश्चयार्थ के रूप आश्रित हिस्से में आम तौर पर आवश्यकताबोधक की तुमर्थ वृत्तिवाचक रचनाओं द्वारा व्यक्त होते हैं जो कि विशेषक क्रिया 'होना' के साथ होती हैं, उदाहरणार्थ : तुझे मरना ही था तो घर पहुँचकर मरता। (६६, १५०), नहीं लगाने थे तो पहले ही कह दिया होता (७३, १३७)।

मुख्य हिस्से में निश्चयार्थ के रूप आम तौर पर 'था' क्रिया के रूपों द्वारा व्यक्त होते हैं जो कि संयोजक क्रिया या अर्थपूर्ण क्रिया की हैसियत से आती है, उदाहरणार्थ : अगर वह इस वक्त अपनी जान बचाकर हट जाता, तो शराबियों की खैरियत न थी (६६, ४०), अगर तुमने आग से कहीं दाग दिया होता तो इससे अच्छा था (७३, ४२), तुमने मुझे बल न दिया होता, तो मैं कहां कामयाब होने

वाला था (१११, ६४)।

जैसा कि उदाहरणों से विदित है, मिश्रित संकेतवाचक वाक्यों में आम तौर पर संकेतार्थ का सरल संश्लेषणात्मक या पूर्ण विश्लेषणात्मक रूप आते हैं।

सरल वाक्य जिनकी विशिष्ट संरचना होती है, संयुक्त वाक्य जिनमें विरोधात्मक समुच्चयबोधक होते हैं और कुछ विशिष्ट मिश्र वाक्य (मुख्यत: व्याख्यात्मक) कुछ और वाक्यात्मक संरचनाओं में आते हैं जिनमें संकेतार्थ के रूप प्रयोग होते हैं।

संकेतार्थ के रूप जब सरल वाक्य में प्रयोग होते हैं, वाक्य की प्रत्यक्ष अवास्त-विकता को व्यक्त नहीं करते, बल्कि यह अवास्तविकता दूसरे अवास्तविक (या वास्तविक) व्यापार के माध्यम से व्यक्त होती है जो कि वास्तव में हो भी नहीं सकती, चूँकि वक्ता की कल्पना हो सकती है।

संकेतार्थ के रूप सरल वाक्य में विभिन्न संभाव्य व्यापार की छायाएं व्यक्त कर सकते हैं जो कुछ स्थितियों में सरल वाक्य की संरचना को भी प्रतिबंधित करती हैं।

पहले तो, संकेतार्थ के रूप उस संभाव्य व्यापार को व्यक्त कर सकते हैं जो कि वास्तविकता से मेल नहीं रखता, अर्थात व्यापार की प्रतिबंधित अवास्तविकता को व्यक्त कर सकते हैं। तब स्वयं उपाधि व्यक्त या अव्यक्त रह सकती है, और किसी-न-किसी हद तक संकेतार्थ के रूप सरल वाक्य में परिणाम के अर्थ को अपना सकते हैं, जो कि व्यक्त किये हुए या निहित उपाधि के फलस्वरूप निकलता है।

जब उपाधि को व्यक्त करते हैं तो वह या तो सरल वाक्य के अन्दर एक गौण अंग की हैसियत से होती है या अलग वाक्य में हो सकती है जो कि मुख्यत: वाक्य के साथ सन्निहित स्थिति में होता है, जिसमें संकेतार्थ के रूप प्रयोग होते हैं।

सरल वाक्य के अन्दर उपाधि आम तौर पर क्रियाविशेषण होती है। उदाहरणार्थ : कंकाल-मात्र होने के बावजूद, वह पूरी तरह सिंगार करती (१७, २८६), इस तरह तो हम लोग भी छूट जाते (६६, ६)।

उपाधि जब स्वतंत्र वाक्य में आती है तो वह (क) उस वाक्य के पूर्ववर्ती हो सकती है जिसमें संकेतार्थ के रूप होते हैं, उदाहरणार्थ : मुझे क्या वह एक ख़त तक नहीं लिख सकती थी ? शायद मैं पढ़ता और उपेक्षा से फाड़कर फेंक देता (१०८, ४१), मैं आज तेरे घर में रहने के लिए आयी थी। मैं तुझसे विवाह करती और तेरी होकर रहती (६६, १६६); (ख) उस वाक्य के बाद में हो सकती है जिसमें संकेतार्थ के रूप होते हैं (संरचनात्मक तौर पर यहां संयुक्त वाक्य होते हैं, जिनमें विरोधात्मक समुच्चयबोधक 'परन्तु', 'पर', 'मगर', 'लेकिन' आदि होते हैं), उदाहरणार्थ : मैं चला गया होता, मगर मुझे सवाक की प्रतीक्षा थी (१३६, ६१), बचत तो ज़रूर होती और अच्छी होती, लेकिन जब अहलकारों के मारे बचने

भी पाये (६५, ४८), नहीं चाची, मैं तो आज ही चला जाता, पर मां ने कहा है कि पिताजी शायद आज आएँ (१७, ३३)।

वाक्य का एक विशेष प्रकार जिसमें व्यापार की प्रतिबंधित अवास्तविकता होती है, वे संयुक्त वाक्य होते हैं जिसमें 'नहीं तो', 'वरन्', 'अन्यथा' विरोधात्मक समुच्चयबोधक होते हैं, और जिनके दूसरे हिस्से में संकेतार्थ के रूप होते हैं, उदाहरणार्थ : मैं बहुत बचा, नहीं तो कहीं का न रहता (७३, ४७), पानी इतना गहरा न था, नहीं तो वह खत्म हो गया होता (१०, ११६), कजरी ने उसे पकड़ा, वरन् वह गिर गया होता (१०३, ३७९), भारत सरकार की सुरक्षा से वे बच गये हैं, अन्यथा गीर सिंह भी भारत से लुप्त हो गये होते (१५०, १९)।

कुछ हालतों में संयुक्त वाक्यों के हिस्से जिनमें उल्लेखित समुच्यबोधक होते हैं, स्वतंत्र वाक्य की हैसियत से आ सकते हैं, उदाहरणार्थ: मुझे क्या मालूम था कि आप मेरे सिर यह मुसीबतों की टोकरी पटक देंगे ? वरन् मैं उन चीजों को कभी न ले जाने देता (६५, २०), विदाई के समय यदि न दिया तो अच्छा ही किया। नहीं तो और गहनों के साथ यह भी चला जाता (६५, ४०)।

निहित उपाधि के साथ वाक्य कम ही मिलते हैं, उदाहरणार्थ: तुम ज़रा डॉ० चटर्जी को फ़ोन करतीं (१३, १३१)—अगर पत्नी को पहले डाक्टर के निदान में शक था तो वह डॉ० चटर्जी को फ़ोन कर सकती थी; लोगों ने मेरी जान ले ली होती (१२०, ४६)—इससे पहले नायक ने एक खुशखबरी गाँव में ले पहुँचायी। उसने न ले पहुँचायी तो लोगों ने उसी की जान ले ली होती।

दूसरे तो, संकेतार्थ के रूप उस संभाव्य व्यापार को व्यक्त कर सकते हैं जो कि वक्ता का व्यापार की ओर वृत्तिवाचक मूल्यांकन का सम्बन्ध व्यक्त करता है। यह व्यापार एक प्रश्नालंकार होता है और इस कारण प्रश्नवाचक या विस्मयादिबोधक वाक्यों में होता है, जिनमें प्रश्नवाचक सार्वनामिक संज्ञाएं और क्रियाविशेषण होते हैं, उदाहरणार्थ : कुन्ती भी क्या करती ? (१०९, ७६), बेटे को अकेला कैसे छोड़ती ? (६९, १४), गोपी कलकत्ते की सैर का ऐसा अच्छा अवसर पाकर क्यों न खुश होता (६५, ६३०), गाँव वालों की फ़रियाद कौन सुनता (६९, ११), कार्य क्यों न सिद्ध होता (६६, ३८)।

इन व्यापारों की मुख्य विशेषता यह है कि वे सब भूतकाल के अर्थ में पूर्ण होते हैं, उदाहरणार्थ : मैं क्या करता उस वक्त (६९, ५४), कुछ कार्य भी सिद्ध हुआ या रास्ता ही नापना पड़ा ? कार्य क्यों न सिद्ध होता (६६, ३८)। संकेतार्थ और संभावनार्थ के रूपों में यही अन्तर है। संभावनार्थ के रूप मुख्यतः उस संभाव्य व्यापार को व्यक्त करते हैं जो कि वर्तमान या भविष्यत् काल के अर्थ में आते हैं, उदाहरणार्थ : तो फिर क्या करूं ? (१११, ५१), तो क्या चुप बैठा रहूं ? तू चला जायेगा तो मेरा क्या होगा ? (१०३, १९३)।

तीसरे तो, संकेतार्थ के रूप उस संभाव्य व्यापार को व्यक्त कर सकते हैं जो कि वक्ता के लिए वह अभिलाषित स्थिति होता है, जो भूतकाल में हो सकती थी। व्यापार उस विशेष उपाधि को व्यक्त करता है जिसका परिणाम निकल भी सकता था अगर उपाधि वास्तविकता से विरोध न रखती। दूसरी तरफ़ अवास्तविक उपाधि का परिणाम नहीं भी हो सकता जो कि सिर्फ़ शुद्ध कामना बनकर रह जाती है।

इस प्रकार के वाक्यों में, आम तौर पर अवधारक निपात 'काश' या समुच्चय-बोधक 'कहीं' ('अगर' के अर्थ में), 'यदि', 'अगर' और कुछ दूसरे संरचनात्मक तत्व प्रयोग होते हैं, उदाहरणार्थ : काश, उस समय पन्द्रह दिन को ही कहीं कलकत्ता-बम्बई, पूना-हरिद्वार—कहीं भी भाग गया होता तो यह सब क्यों होता? (१०८, ६), कहीं उसके नाम कोई लाटरी निकल आती! फिर तो वह जालपा को आभूषणों से लाद देता (६५, २८), कहीं तुम मुझे मिल जाते, मैं तुम्हें पकड़ पाती, फिर देखती कि मुझसे कैसे भागते हो? (७३, १७७), काश, वह इस घर में न पैदा हुई होती! काश, उसकी माँ सचमुच माँ होती! (५६, ८५-८६), काश, तुमने मुझे एक मौका दिया होता (७५, २३६)।

व्याख्यात्मक वाक्यों में संकेतार्थ के रूपों का प्रयोग और ऐसे ही संभावनार्थ के रूपों का प्रयोग शब्दार्थक रूप से प्रतिबंधित होता है। यहां मुख्य शब्द 'कि' स्वरूप-वाचक समुच्चयबोधक की उपस्थिति में काल्पनिकता की विभिन्न छायाएं देते हैं और उनको निम्नलिखित श्रेणियों में बांट सकते हैं :

—जहां पर आवश्यकताबोधक शब्द होते हैं : 'आवश्यक', 'ज़रूरी', 'योग्य', 'लायक', 'क़ाबिल', 'चाहिए' आदि जो कि व्याख्यात्मक-उद्देश्यवाचक वाक्यों में आते हैं, उदाहरणार्थ : इसलिए आवश्यक था कि मैं ज्ञान के अभाव को अपने प्रेम और भक्ति से पूरा करता (७३, ११२), वह इस योग्य थी कि किसी बड़े घर की स्वामिनी बनती (७३, १५८), तुम्हें तो चाहिए था कि डूब मरते चुल्लू भर पानी में (६६, ७२)।

—जिसमें अभिलाषा के अर्थ के शब्द होते हैं जो कि खुद क्रियाओं और संज्ञाओं में बाँटे जा सकते हैं जो कि इच्छा के प्रत्यक्ष अर्थ को बताते हैं : 'चाहना', 'इच्छा' (इच्छा करना), 'जी चाहना', 'मन चाहना' आदि, उदाहरणार्थ : जी चाहता कि उन्हीं की भाँति मैं भी निःसंकोच हो जाती (६६, ८७), और विशेषण जो कि सकारात्मक गुण का अर्थ रखते हैं, उदाहरणार्थ : बहुत ही अच्छा होता कि तुम इस प्रश्न को मुझसे पूछने के बदले अपने ही हृदय से पूछ लेती (६६, ६४), इससे तो कहीं अच्छा था कि आपने हमारे ही ऊपर अपना गुस्सा उतारा होता (६६, ६४), इससे तो यही बेहतर था कि तजवीज़ पेश न की जाती (७३, १८४)।

—जिसमें संभावना के अर्थ के शब्द होते हैं : 'संभव', 'मुमकिन' आदि,

उदाहरणार्थ : मुमकिन है कि इस मौके पर उस्ताद का अपमान हद तक पहुँच जाता, अगर उसी वक्त राजा मदनसिंह न आ पड़ते (५४, ५१)।

संभावनार्थ के रूपों के विपरीत जो कि ऐसी ही रचनाओं में आते हैं संकेतार्थ के रूप उस व्यापार को बताते हैं जो कि भूतकाल के अर्थ से सम्बन्ध रखता है, जिनका सबूत सबसे पहले भूतकाल के निश्चयार्थ के रूप हैं, जो मुख्य वाक्य में आते हैं।

संकेतार्थ के रूपों का मिश्र वाक्यों के बाकी प्रकारों में प्रयोग बहुधा वैकल्पिक होता है।

संकेतार्थ के रूप निम्नलिखित मिश्र वाक्यों में प्रयोग होते हैं :

**सह-सम्बन्धी सार्वनामिक वाक्य** (संयोजक सार्वनामिक तथा सर्वसम वाक्य), उदाहरणार्थ : तुम कम-से-कम इतना तो कर ही सकते थे कि उन पर डंडे न चलाने देते (६६, ५४), उनमें स्वयं इतना साहस न था कि इस प्रस्ताव को इतनी स्पष्टता से व्यक्त कर सकते (६६, १६८), जितना रुपया उसके पेट में झोंक चुका उतने से तो अब तक गाँव मोल ले लेते (६६, १५३)।

**अनुमतिवाचक वाक्य,** उदाहरणार्थ : जवाब तो कुछ-न-कुछ ज़रूर ही देता, चाहे तुक मिलती या न मिलती (७३, ११०), उल्टे पाँव अपनी ससुराल वापस लौट आती, वहां उसे घुट-घुटकर चाहे मरना ही क्यों न पड़ता ! (५६, १२२)।

**विशेषण वाक्य,** उदाहरणार्थ : उसके खून से तर कपड़े पहने हुए मुझे वह नशा हो रहा था जो शायद उसके विवाह में गुलाल से तर रेशमी कपड़े पहनकर भी न होता (६६, १३), और कौन ऐसा निठल्ला था जो रात-रात भर उनसे शतरंज खेलता (६५, ३२), यह कौन था जो बीच में बोलता ? (१०३, १५६)।

**कालवाचक वाक्य** जो कि बहुधा संयुक्त समुच्चयबोधकों 'इसके (से) पहले (पूर्व) कि' द्वारा व्यक्त होते हैं, उदाहरणार्थ : इससे पहले कि कोई कुछ कहता... देबू उछला (१७, २२०), इससे पहले कि वह लड़का चेतन पर झपटता...सभी आ पहुँचे...(१७, २१३)।

संकेतार्थ रूपों के साथ जो और दूसरे कालवाचक समुच्चयबोधक प्रयोग होते हैं, उनमें से एक है 'जब भी', उदाहरणार्थ : जब भी मौका मिलता, दोनों उन्हें संभलकर चलने की सलाह देते थे (१७, २८०)।

**उद्देश्यवाचक वाक्य,** उदाहरणार्थ : उनसे भी कोई बुरी हरकत नहीं हुई जिससे मुझे कोई शिकायत होती (२४, ८६)।

संभावनार्थक के रूपों के विपरीत, जो कि ऐसी ही रचनाओं में आते हैं, यहां भी संकेतार्थ के रूप उस व्यापार को व्यक्त करते हैं, जो कि भूतकाल के अर्थ के साथ सम्बन्ध रखता है।

निश्चयार्थ के निम्नलिखित कालवाचक रूप संकेतार्थ के रूपों के पूर्णतया व्याकरणिक समनाम होते हैं :

| संकेतार्थ | निश्चयार्थ |
|---|---|
| (सरल रूप) | (अपूर्णतावाची नियमित आवर्ती भूतकाल) |
| तुम मेरी जगह होते तो इस समय क्या जवाब देते ? (७३, ११०), | सोने जाते तो कोई-न-कोई पुस्तक साथ लेते (६९, ८०), |
| (अपूर्ण रूप) | (अपूर्णतावाची आभ्यासिक भूतकाल) |
| तू मुझे मन से न चाहता होता, तो तू मुझे मारता क्यों ? (१०३, ४५)। | सुभद्रा कोई काम करती होती तो सुमन स्वयं उसे करने लगती (७३, २८)। |
| (पूर्ण रूप) | (पूर्ण आभ्यासिक भूतकाल) |
| उसने पाया होता तो कह न देता ? (७३, ८४)। | हर जिन देहातियों ने कभी शहर में फ़िल्म देखी होती वे ज़रूर शुरू से लेकर अन्त तक पूरा खेल देखते (V, जनवरी, १९६३, ६६)। |
| (संतत रूप) | (संतत आभ्यासिक भूतकाल) |
| अगर उनके हाथ से पत्ते फिसल रहे होते तो लेकर समेट देती (१५९, १८)। | कभी मल्होत्रा छुट्टी के दिन बारह-एक बजे इधर से गुज़रते तो लल्लन नल पर नहा रही होती (७३, ३८)। |

इस तरह, संकेतार्थ के रूप भूतकाल के उन रूपों के व्याकरणिक समनाम होते हैं जिनमें किसी-न-किसी प्रकार्य में (मुख्य और सहायक क्रिया की हैसियत से) प्रथम कृदन्त आता है। उन रूपों में भिन्नता कैसे मालूम करते हैं ?

संकेतार्थ का सरल रूप और अपूर्णतावाची नियमित आवर्ती भूतकाल के बीच निम्नलिखित लक्षणों द्वारा अन्तर मालूम करते हैं :

(१) **नियमित आवर्ती और एकल व्यापार**—सरल रूप आवर्ती व्यापार तथा एकल व्यापार को व्यक्त करते हैं, जबकि अपूर्णतावाची नियमित आवर्ती भूतकाल सिर्फ़ आवर्ती व्यापार को व्यक्त करता है। निश्चयार्थ में आवर्ती व्यापार का लक्षण 'कभी' क्रियाविशेष हो सकता है, जो आम तौर पर संकेतार्थ में प्रयोग नहीं होता। यह क्रियाविशेषण मिश्र वाक्य में भी आ सकता है तथा सरल वाक्य में भी, उदाहरणार्थ : कभी जी घबराता, तो कोई उपन्यास लेकर पढ़ने लगती (६९, ८६), और तोता कभी इस डाल पर जाता, कभी उस डाल पर जाता, कभी पेड़ पर आ बैठता...(६९, १२४)।

(२) **व्यापार की अवास्तविकता-वास्तविकता**—सरल रूप उस संभाव्य या वांछनीय व्यापार को व्यक्त करते हैं जो कि वास्तविकता के विरोध में होता है, जबकि नियमित आवर्ती अपूर्णतावाची भूतकाल वास्तविक, नियमित आवर्ती

व्यापार को व्यक्त करता है। दोनों रूपों के बीच अंतर काफ़ी हद तक प्रामाणिकता से पाठ के निम्नलिखित खंड से मालूम होता है : लेकिन इतना परिश्रम का अभ्यास न होने के कारण कभी-कभी सिर में दर्द होने लगता। कभी पाचन क्रिया में विघ्न पड़ जाता, कभी ज्वर चढ़ आता। तिस पर भी वह मशीन की तरह काम में लगे रहते। भाभी कभी-कभी झुँझलाकर कहतीं—अजी लेटे भी रहो, बड़े धर्मदाता बने हो। तुम्हारे जैसे दस-पाँच और होते, तो संसार का काम ही बन्द हो जाता (६६, १३२)। आख़िरी वाक्य संकेतार्थ के सरल रूप द्वारा व्यक्त हुआ है, चूंकि यहां वास्तविक नहीं बल्कि संभाव्य व्यापार व्यक्त है (चाहे कुछ और आदमी मिल भी जाते, तब भी संसार का काम हर हालत में समाप्त न होता)।

(३) **कई कालार्थ और एक कालार्थ**—संकेतार्थ के सरल रूप उस संभाव्य व्यापार को व्यक्त करते हैं जो कि सभी तीनों काल अर्थों में आ सकते हैं (भूत, भविष्यत् तथा वर्तमान), जबकि नियमित आवर्ती अपूर्णतावाची भूतकाल सिर्फ़ भूतकाल के अर्थ में आ सकता है।

(४) **संरचनात्मक-वाक्यात्मक भिन्नता**—नियमित आवर्ती अपूर्णतावाची भूतकाल मुख्यत: उन मिश्र वाक्यों में आता है जिनमें कालवाचक आश्रित वाक्य होता है जो 'जब' समुच्चयबोधक द्वारा जोड़ा जाता है, या सरल वाक्य में जिसमें एक-दो एकजातीय विधेय होते हैं जबकि संकेतार्थ का सरल रूप मुख्यत: उन मिश्र वाक्यों में आता है, जिनमें संकेतवाचक आश्रित वाक्य होता है और उन वाक्यों में जिनकी विशिष्ट संरचना होती है जो कि निश्चयार्थ के रूपों के प्रयोग की संभावना को समाप्त कर देते हैं।

जब नियमित आवर्ती अपूर्णतावाची भूतकाल के रूप संकेतवाचक वाक्यों में आते हैं, उनमें और संकेतार्थ के सरल रूपों के बीच भिन्नता वास्तविकता-अवास्तविकता, आवर्ती-एकल व्यापार, एक कालार्थ—कई कालार्थ के लक्षणों द्वारा मालूम करते हैं, उदाहरणार्थ :

| **निश्चयार्थ** | **संकेतार्थ** |
|---|---|
| स्त्रियों को यदि गहने बनवाने होते तो उमानाथ से कहतीं (७३, १००)। | ...ईश्वर मुझे भी ऐसी ही एक झोंपड़ी दे देता, तो मैं उसी पर संतोष करता (७३, १९५)—भविष्यत् काल के अर्थ में। |
| यदि कभी वह मुझे दर्पण के सामने देख लेती, तो धिक्कारने लगती...(६६, ८२)। | अगर इस वक्त उसे जाली नोट बनाना आ जाता, तो वह अवश्य बनाकर चला देता (६५, २८)—वर्तमान काल के अर्थ में; |
| | अगर कोई होते, तो मुझे यों ही न छोड़ देते (६५, ३०)—भूतकाल के अर्थ में। |

दूसरी तरफ़, जब संकेतार्थ का सरल रूप कालवाचक वाक्यों में आता है, तो उसमें और नियमित आवर्ती अपूर्णतावाची भूतकाल के रूपों के बीच अन्तर अवास्तविकता-वास्तविकता, एकल-आवर्ती व्यापार, एक कालार्थ में—भिन्न काल अर्थों के लक्षणों द्वारा मालूम करते हैं जो कि निम्नलिखित उदाहरण में समझा जा सकता है: अगर भगवान ने उसे इतना अपंग न कर दिया होता, तो आज झोंपड़ी तो लीपती, द्वार पर बाजे बजवाती, कढ़ाव चढ़वा देती, पूरियां वनवातीं और जब वे लोग खा चुकते, तो अंजलि-भर रुपये उनकी भेंट कर देती (६६, ६७)।

संकेतार्थ का अपूर्ण रूप और अपूर्णतावाची आभ्यासिक भूतकाल निम्नलिखित लक्षणों द्वारा भिन्न होते हैं: व्यापार की अवास्तविकता-वास्तविकता, एक कालार्थ में—भिन्न कालार्थ में और संरचनात्मक-वाक्यात्मक भिन्नता में। व्यापार की अवास्तविकता-वास्तविकता के अर्थ में भिन्नता के बारे में ज़्यादा कहने की आवश्यकता नहीं, चूँकि यह संकेतार्थ के सरल रूप तथा नियमित आवर्ती अपूर्णतावाची भूतकाल के रूप वर्णन करते समय निरीक्षण किया गया था और वह संकेतार्थ तथा निश्चयार्थ के सभी रूपों को मालूम करने के लिए समान है।

कालार्थ में भिन्नता (वर्तमान तथा भूतकाल के अर्थ में—संकेतार्थ के अपूर्ण रूप और सिर्फ़ भूतकाल के अर्थ में—अपूर्णतावाची आभ्यासिक भूतकाल) जटिल इस कारण हो जाती है, कि अपूर्णतावाची आभ्यासिक भूतकाल का व्यापार दूसरे अपूर्ण व्यापार की पृष्ठभूमि में होता है जो कि संकेतार्थ के रूपों के लिए स्वाभाविक नहीं है। दूसरी तरफ़, व्यापार की अभ्यासता की धारणा संकेतार्थ के अपूर्ण रूप के लिए स्वाभाविक नहीं है।

जहां तक संरचनात्मक-वाक्यात्मक भिन्नता का सम्बन्ध है, तो संकेतार्थ का अपूर्ण रूप आम तौर पर संकेतवाचक वाक्यों में आता है, और अपूर्णतावाची आभ्यासिक भूतकाल के रूप आम तौर पर कालवाचक वाक्यों में आते हैं।

संकेतार्थ के पूर्ण रूपों के बीच और पूर्णतावाची आभ्यासिक भूतकाल के बीच निम्नलिखित लक्षणों द्वारा अन्तर मालूम करते हैं: व्यापार की अवास्तविकता-वास्तविकता, व्यापार का अनावर्ती-आवर्ती (नियमित) होना और संरचनात्मक-वाक्यात्मक भिन्नता।

दोनों रूप जिनके बीच तुलना की जा रही है, मुख्यतः पूर्णभूत और पूर्णतावाची भूत का अर्थ देते हैं, उनमें अन्तर यह है कि उनमें से एक तो एकल अनावर्ती व्यापार (संकेतार्थ का पूर्ण रूप) व्यक्त करता है और दूसरा नियमित आवर्ती व्यापार को (पूर्णतावाची आभ्यासिक भूतकाल):

| संकेतार्थ | निश्चयार्थ |
| --- | --- |
| यदि प्राण देने से पापों का प्रायश्चित हो जाता तो मैं अब तक कभी प्राण दे चुका होता (७३, १६३)। | जब वे घर आते तो उसका बच्चा सो चुका होता (७, ८२)। |

संरचनात्मक-वाक्यात्मक अर्थ में दोनों रूप जिनकी तुलना की जा रही है, मिश्र तथा सरल वाक्यों के विभिन्न संरचनात्मक प्रकारों में आते हैं : संकेतार्थ का पूर्ण रूप—मुख्यतः संकेतवाचक वाक्यों और उन सरल वाक्यों में आता है जिनकी विशिष्ट संरचना होती है। पूर्णतावाची आभ्यासिक भूतकाल मुख्यतः कालवाचक वाक्यों में आता है।

संकेतार्थ का संतत रूप और संतत आभ्यासिक भूतकाल के बीच अन्तर निम्नलिखित लक्षणों द्वारा मालूम करते हैं : व्यापार की अवास्तविकता-वास्तविकता, व्यापार का अनावर्ती-आवर्ती (नियमित) होना और संरचनात्मक-वाक्यात्मक भिन्नता।

पहली दो भिन्नताएं ऊपर अध्ययन की हुई भिन्नताओं से मेल खाती हैं। जहां तक तुलना होने वाले रूपों की संरचना का सम्बन्ध है, तो संकेतार्थ का संतत रूप आम तौर पर संकेतवाचक वाक्यों में होता है, जबकि संतत आभ्यासिक भूतकाल आम तौर पर कालवाचक रचनाओं में आता है :

| संकेतार्थ | निश्चयार्थ |
| --- | --- |
| यदि तुम पढ़ रहे होते तो उन्नति कर जाते (III, मार्च, १९६९, ११२)। | हम लोग उसके यहां पहुंचे तो उसके कमरे से सितार की आवाज़ आ रही होती (५२, १३२)। |

संकेतार्थ के संतत रूप के विपरीत संतत आभ्यासिक भूतकाल का सरल वाक्यों में प्रयोग हो सकता है, उदाहरणार्थ : कभी ऐसे में उसका पति हरिया अपनी कोठरी के आगे बैठा बीड़ी पी रहा होता (१३, ३८), वे अन्दर बिस्तर पर लेटे धीरे-धीरे बातें कर रहे होते और वह बाहर बैठा उन्हें सुनने का प्रयास किया करता (७, ६४)।

संकेतार्थ का सरल रूप अपूर्णतावाची वर्तमान का रूपात्मक व्याकरणिक समनाम है जो कि बग़ैर सहायक क्रिया 'है' के निषेधात्मक वाक्यों में आता है। इस स्थिति में दो रूप का जिनके बीच तुलना हो रही है निम्नलिखित लक्षणों द्वारा अन्तर जान सकते हैं : व्यापार की अवास्तविकता-वास्तविकता, विभिन्न कालार्थ—एक कालार्थ, संरचनात्मक-वाक्यात्मक प्रतिबन्धितता—संरचनात्मक-वाक्यात्मक अप्रतिबन्धितता।

अपूर्णतावाची वर्तमान, जो कि वास्तविक व्यापार व्यक्त करता है और उक्ति के क्षण के साथ मेल खाता है, व्यावहारिक रूप से सभी संरचनात्मक रचनाओं में आ सकता है, अर्थात् हर प्रकार के सरल तथा मिश्र वाक्यों के प्रकारों में, जबकि संकेतार्थ का सरल रूप, जो कि अवास्तविक व्यापार को बताता है जो विभिन्न कालार्थों में हो सकता है सीमित रचनाओं में आता है (मुख्यतः संकेतवाचक वाक्यों में और कुछ-एक दूसरे विशिष्ट सरल और मिश्र वाक्यों में)।

## आज्ञार्थ

आधुनिक हिन्दी में आज्ञार्थ छः संश्लेषणात्मक रूपों का एक समूह है, जिनमें से चार तो नियत होते हैं अर्थात् एक सर्वनाम के साथ सम्बन्धित होते हैं और दो अनियमित रूप जो कि दो सर्वनामों से सम्बन्धित होते हैं। वह रूप जो धातु का पर्याय होता है 'तू' सर्वनाम से संबंधित होता है, 'ओ' वाला रूप—'तुम' सर्वनाम से, 'इये', 'इयेगा', वाले रूप 'आप' सर्वनाम से संबंधित होते हैं। 'इयो' रूप तथा रूप जो कि तुमर्थ का समाकार है, 'तू' और 'तुम' सर्वनामों से सम्बन्धित हैं। इस तरह 'तू' सर्वनाम तीनों रूपों से परस्पर संबंध रखता है : (१) धातु का समाकार, (२) 'इयो' रूप तथा (३) तुमर्थ का समाकार; 'तुम' सर्वनाम भी तीन रूपों से संबंध रखता है : (१) 'ओ' रूप से, (२) 'इयो' से और (३) तुमर्थ का समाकार; 'आप' सर्वनाम दो रूपों से संबंध रखता है : (१) 'इये' और (२) 'इयेगा' रूपों से।

सब उल्लेखित रूप किसी-न-किसी प्रकार उद्बोध को व्यक्त करते हैं जो कि मध्यम पुरुष के साथ संबंध रखता है। तीन रूप (धातु का समाकार, 'ओ' तथा 'इये' वाले रूप) उस उद्बोध को व्यक्त करते हैं जो कि उक्ति के क्षण के साथ मेल खाता है। बाकी तीन उस उद्बोध को व्यक्त करते हैं जो कि उक्ति के क्षण का अनुवर्ती होता है।

उद्बोध जो कि उत्तम तथा अन्य पुरुष के सर्वनाम से सम्बन्धित है, संभावनार्थ के रूपों द्वारा व्यक्त होता है।

## धातु का समाकार

जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, यह रूप 'तू' सर्वनाम से संबंधित होता है। वह आज्ञार्थ का रूप है जो कि सिर्फ़ एक पुरुष के साथ संबंध रखता है। यह रूप प्रयोग होता है जब :

(१) परिवार या समाज का बड़ा आदमी किसी छोटे आदमी को संबोधित करता है, या अध्यापक छात्र को संबोधित करता है, जैसे : जा बेटी, भागकर भीतर से अचार ले आ भाई के लिए (७५, ४६), भाई, अच्छा हुआ तू वापस आ गया। अपनी मां की हालत न पूछ...(७५, ४०), चल बेटा ! साज़ को तांगे में रख दे

(५४, ८)।

(२) घनिष्ठ मित्रगण को संबोधित करते हुए या निकट संबंधियों के बीच जब सम्बोधन होता है, उदाहरणार्थ : अहा बेटा पाली !...आ इधर बैठ जा चारपाई पर (७५, ८९), फिर कान में कहा...तू अपना है...बैठ (१, ३७३), नज़ीर तू रंज न कर (६९, २०३), प्यारी, तू जा ! सो जा (१०३, २१६)।

(३) ऐतिहासिक तौर पर उनको 'तू' से संबोधित कर सकते हैं जो कि समाज के नीचे स्तर के लोग होते हैं या जो कि सामाजिक स्तर पर ज़्यादा नीचे होते हैं, उदाहरणार्थ : 'पहले यह बतला', सहज तीव्र स्वर से महाराजा बोले (५४, १५), 'बस कर', उस्ताद ने गुस्ताख़ ताँगे वाले को डाँटा (५४, १२), अरी चल नटनी ! (१०३, २३०), 'भीतर चल' सिपाही ने कहा (१०३, ४१)।

(४) जानवरों को संबोधित करते हैं, उदाहरणार्थ : छोड़ गुस्सा...माफ़ कर (१०३, १२३)—घोड़े को संबोधित करते हुए; आ बेटा (१०३, २२९)—कुत्ते को संबोधित करते हुए।

(५) परिष्कृत संबोधन भगवान को, भिक्षुओं को या उनको करते हैं जो कि सामाजिक स्तर पर ज़्यादा ऊंचे हैं, उदाहरणार्थ : हे भगवान, जैसे तूने मेरी सुनी, वैसे ही सबकी सुन ! (११, ७८), हे महादेव, प्यारी को अच्छा कर दे, उसे बचा ले (१०३, ३९८), तू राजा हो जा...(५४, २८)।

(६) तिरस्कारबोधक संबोधन करते हैं या गंदी गाली देते हैं, उदाहरणार्थ : राजा !...सुन...राजा सच मान (५४, ५१), बोल हरामजादे, बोल ! (७५, १३२), रख दे कड़ा ! कमीन ! (१०२, १२५), भाड़ में जा गिर (१०७, ६३)।

आज्ञार्थ का यह रूप 'तू' के साथ भी आ सकता है, उसके बगैर भी। 'तू' सर्वनाम की उपस्थिति उद्बोध की प्रकृति को तेज़ कर देती है, विशेष कर जब क्रिया से पहले सर्वनाम आता है, उदाहरणार्थ : प्यारी तू जा ! (१०३, २१६), अरे चुप रह तू (१०३, २०८), जा तू कल गिरफ़्तार हो जा (१०३, ३६२)।

निषेधात्मक वाक्यों में जहां मनाही होती है, आज्ञार्थ का यह रूप निषेधात्मक निपात 'न' या 'नहीं' के साथ (आम मनाही) आता है या 'मत' (स्पष्ट मनाही) के साथ आता है। तब निपात 'न' और 'नहीं' एक निर्धारित जगह पर होते हैं : 'न' तो क्रिया के आगे होता है, 'नहीं' क्रिया के बाद और निपात 'मत' स्वतंत्र जगह ले सकता है, उदाहरणार्थ : तू न डर (१०३, ४१७), रो नहीं कजरी (१०३, १८९), पहले मान जा, बहस न कर (१०३, २१७), चलने दे गरीब को, मार मत (५९, ९) ऐसा मत कर ! (१०३, ४६३)।

आज्ञार्थ के इस रूप में 'ज़रा' निपात का प्रयोग शिष्टता की छाया देता है या हुक्म को हल्का कर देता है, उदाहरणार्थ : तू यहीं ठहरा रह ज़रा (१०३, ४३०), अरे बहू ज़रा संभलकर मल (८३, ४७)।

आज्ञार्थ का धातु का समाकार रूप सामान्य पुरुषवाचक अर्थ में आ सकता है। तब उसका निरपेक्ष कालवाचक अर्थ होता है, उदाहरणार्थ : नेकी कर और कुएं में डाल (७७, २२५), यूँ भी देखा वूँ भी देखा (७७, ३३५), सूरत न शक्ल, भार से निकल (७७, ३७७)। जैसा कि उदाहरणों से विदित है यहां मुख्यत: मुहावरे और लोकोक्तियां आते हैं।

## 'ओ' का रूप

आज्ञार्थ का यह रूप क्रिया की धातु के साथ परपत्यय 'ओ' लगाने से बनता है। 'देना' और 'लेना' क्रियाओं के साथ यह परप्रत्यय अंत्यलुप्त धातु के साथ लगाते हैं : 'ओ' परप्रत्यय धातु के स्वर की जगह आता है (दे-द + ओ-दो, ले-ल + ओ-लो)। कई धातुओं में जो 'ओ' पर समाप्त होती हैं, वहां 'ओ' परप्रत्यय को छोड़ सकते हैं, लेकिन यह मानक नहीं है, जो कि निम्नलिखित उदाहरणों से प्रमाणित होता है, तुम न रोओ, काका ! (८३, ७१), तू रो नहीं कजरी (१०३, ४१७)। जैसा कि रचना से विदित है, आज्ञार्थ का यह रूप संभावनार्थ का बहुवचन में मध्यम पुरुष का पर्याय रूप है, हालांकि दोनों रूप अपनी शब्दार्थक और वाक्यात्मक विशेषताओं से जाने जाते हैं। इस तरह संभावनार्थ के रूप वांछनीय या संभाव्य व्यापार को व्यक्त करते हैं लेकिन व्यापार के लिए उद्बोध व्यक्त नहीं करते। वे ऐसी विशिष्ट रचनाओं में प्रयोग में आते हैं जहां आज्ञार्थ का प्रयोग नहीं होता उदाहरणार्थ : मैं नहीं चाहता कि तुम वहां जाओ (६६, २१), अच्छा नहीं लगता कि तुम काम करो और मैं बैठकर देखती रहूं (५६, ३८), मैं तुम्हारी बात मान सकती हूं अगर तुम मेरी एक बात मान लो (५६, ८८)। दूसरी तरफ़ आज्ञार्थ का मिश्र वाक्य के दोनों अंगों में प्रयोग नहीं हो सकता जो कि सिर्फ़ संभावनार्थ के लिए स्वाभाविक है, उदाहरणार्थ : चाहो तो तुम भी कुछ माँग लो (५६, ६३)। तीसरे, अगर आज्ञार्थ में सर्वनाम को छोड़ देना व्याकरणिक मानक है तो संभावनार्थ में सर्वनाम, आम तौर पर, छोड़ा नहीं जाता।

आज्ञार्थ का बहुवचन में मध्यम पुरुष के रूप का प्रयोग एक आदमी या कई आदमियों को संबोधित करते हुए हो सकता है, उदाहरणार्थ : तुम लोग हट जाओ, वरन् मैं फ़ायर कर दूंगा (७१, १५७), जाओ, जल्दी जाओ किशन (१२०, ४५)।

यह रूप शिष्टता का आम रूप है और निम्नलिखित स्थितियों में प्रयोग होता है :

(१) परिवार (या समाज) के सामान्य शिष्ट संबोधन में—बड़े छोटों को संबोधित कर सकते हैं, और छोटे भी बड़ों को ऐसे ही संबोधित कर सकते हैं, उदाहरणार्थ : अम्मा थोड़ा-सा गुड़ दे दो (७५, १४१), गुड़ मत खाओ भैय्या (७०, १२), तुम आज ही पृथ्वीपाल के बाप से मिल आओ (७५, १४१), भय्या ! चल-

कर कुछ खाना खा लो (१२०, ४२), पाली बेटा, अचार ले लो ना ?(७५, १४६), अम्माजी, तुम ले लो...(६५, ६३), एक बूढ़े ने कहा, 'हाथ-मुँह धोकर ठंडा लो, बेटा' (८३, ७१);

(२) जब दोस्तों के बीच शिष्ट संबोधन होता है, उदाहरणार्थ : कहो भाई चेतन, कैसे हो (१७, ३५), गोविन्द ! तुम मेरी नाव में बैठ जाओ (१२०, ५१), जगतपुर के दोस्तो ! मेरी एक बात सुनकर मुझे गालियां दो (१२०, ३७), एक मेहमान है मिस पाल, दरवाज़ा खोलो (५२, १३६), सुनो जी, ज़रा बाबू रामनाथ को बुला लाओ (६५, १३९);

(३) (ऐतिहासिक तौर पर) जब वे लोग जो कि सामाजिक तौर पर ज़्यादा ऊँचे स्तर पर होते हैं, उन लोगों को संबोधित करते हैं जिनका सामाजिक स्तर ज़्यादा नीचा है, उदाहरणार्थ : औरतों की-सी बात न करो सुखराम (१०३, ४९५), मैं कहता हूं, 'दादू चलो, मेरे साथ चलो' (१०७, ६), बादशाह ने... फ़रमाया—'अब जाओ ज़्यादा मुझे न सताओ' (२४, ८);

(४) जब अध्यापक छात्र को शिष्टता से संबोधित करता है, उदाहरणार्थ : जूली, ज़रा मुझे लिफ़ाफ़ा दिखलाओ (५२, ११६);

(५) जब उनका दोस्ताना मित्रतापूर्ण संबोधन है जो कि पदवी में छोटे होते हैं, या ज़्यादा निम्न स्तर के हैं, जब वे ज़्यादा ऊँची पदवी वालों को या ज़्यादा ऊँचे स्तर के लोगों को संबोधित करते हैं, उदाहरणार्थ : माफ़ करो उस्ताद (५४, १०), बोलो, उस्ताद (१०३, २१५), आज बाबू भैया, मेरे संग घूमने चलो (१०३, २), ठाकुर जल्दी चलो (६९, २१०)।

(६) भगवान को आम शिष्टतापूर्वक संबोधित करते हुए, उदाहरणार्थ : हे भगवान, बदला चुकाओ (५१, २१), हे भगवान, मुझे भी उनके चरणों में पहुँचा दो ! (८३, २६);

(७) अशिष्ट तिरस्कारबोधक संबोधन, उदाहरणार्थ : चुप रहो यू ब्लडी (६९, २७), अब निकल जाओ मेरे घर से...जाओ ज़ालिम ! (७५, २४२), आज तो अपनी ज़बान को बंद रखो मां ! (५९, १४);

(८) दो या उससे ज़्यादा लोगों या जानवरों को संबोधित करते समय, उदाहरणार्थ : सिपाहियों, तलवार दो पागलों को (५४, ७६), तुम दोनों यहीं रहो (१०३, ३४५), चलो भैया (५२, ३८)—बैलों को संबोधित करते हुए; इसी बीच विजय ने सबको चुप करते हुए कहा, 'चुप रहो, अगर कारण सुनने की हिम्मत हो तो बैठो, नहीं तो कहीं चले जाओ !' (१२०, १२), तुम लोग उन्हीं से कहो (८३, ११)।

आज्ञार्थ का यह रूप 'तुम' सर्वनाम के बग़ैर भी आ सकता है, उसके साथ भी आ सकता है। 'तुम' सर्वनाम लगाने से उद्‌बोध की प्रकृति तेज़ हो जाती है, विशेष

कर उन स्थितियों में जब वह क्रिया के आगे होता है, उदाहरणार्थ : तुम जाओ (१२०, ७८), तुम भी बैठो (५२, ४६), अरे रहने दो तुम ! (१०३, २४)।

निषेधात्मक वाक्यों में जब मनाही को व्यक्त करना होता है तो आज्ञार्थ का यह रूप निषेधात्मक निपातों 'न' और 'नहीं' के साथ आता है (जब सामान्य मनाही होती है) और निपात 'मत' के साथ (जब स्पष्ट मनाही होती है)। 'न' और 'नहीं' निपातों का स्थान निश्चित होता है—'न' क्रिया से पहले आता है और 'नहीं' क्रिया के बाद, लेकिन 'मत' निपात स्वतंत्र स्थान रखता है, उदाहरणार्थ : तुम फ़िक्र न करो (१७, ३३), डरो नहीं, बीबी जी ! डरो नहीं (१०३, ४६३), मुझे मत छूओ (१०३, ५५६), बको मत (१७, ११४)।

आज्ञार्थ के इस रूप में 'ज़रा' निपात का प्रयोग शिष्टता की छाया को ज़्यादा कर देता है या हुक्म को कमज़ोर कर देता है, उदाहरणार्थ : जूली, ज़रा मुझे लिफ़ाफ़ा दिखलाओ (५२, ११६), तुम ज़रा घूम-घुमा कर अपना जी वहला आओ। (६५, ८१)।

आज्ञार्थ का 'ओ' रूप सामान्य पुरुषवाचक अर्थ में हो सकता है। तब वह निरपेक्ष कालवाचक अर्थ अपना लेता है, उदाहरणार्थ : मुँह से बोलो सिर से खेलो (७७, ३२२), रोटी वहां खाओ और पानी यहां पीओ (७७, ३४०), इन लड़कियों को खिलाओ-पिलाओ, पाल-पोस कर वड़ी करो...(७५, १३६), इन कमीनों को दो जूता दो, अभी बोल लेंगे (१०३, ४१)। जैसा कि उदाहरणों से विदित है, यहां आम तौर पर मुहावरे और लोकोक्तियां आते हैं।

बहुत ही कम स्थितियों में आज्ञार्थ के इस रूप के साथ 'आप' सर्वनाम आता है, हालाँकि इस प्रयोग को भाषिक मानक नहीं कहा जा सकता, उदाहरणार्थ : आप मानो चाहे न मानो, मैं एक सयाने को लाऊँगा (६५, १८६), अब जब तक मान लो, आप यहां रहो...(२४, १३२)।

## 'इये' (इए) रूप

आज्ञार्थ का यह रूप क्रिया की धातु के साथ परप्रत्यय 'इये' (इए) लगाने से बनता है। 'देना', 'लेना', 'करना', 'पीना', 'होना', 'सीना' क्रियाएं आज्ञार्थ के उस रूप को 'जिये' (जिए) लगाने से वनाती हैं जो कि स्वर विसंधि के फलस्वरूप बहुत कम स्थितियों में 'जे' रूप को अपना सकता है : दीजिये (दीजिए, दीजे); लीजिये (लीजिए, लीजे); कीजिये (कीजिए, कीजे); पीजिये (पीजिए, पीजे); होजिये (होजिए, होजे); सीजिये (सीजिए, सीजे)। जैसा कि आज्ञा के दिये गये रूपों से प्रकट होता है, 'देना', 'लेना', 'करना' क्रियाएं परप्रत्यय को विकृत धातु के साथ लगाती हैं। 'करना' और 'होना' क्रियाएं अनियमित रूप के साथ नियमित रूप भी बना सकती हैं : करिये (करिए), होइये (होइए)।

'इये' (इए) रूपों को बहुवचन में मध्यम पुरुष का शिष्ट रूप मान सकते हैं जो कि कई लोगों या एक आदमी के लिए परिष्कृत शिष्टता को व्यक्त करने के काम आता है, उदाहरणार्थ : आप लोग आराम से इधर बैठिये (१२०, ५३), मिस लतिका, ज़रा अपना लैम्प ले आइए (५२, १२३)। इस रूप का प्रयोग हो सकता है :

(१) जब घर में छोटे बड़ों को परिष्कृत शिष्टता से सम्बोधित करते हैं या धर्मपत्नी पति को सम्बोधित करती है, उदाहरणार्थ : अपना उपदेश आप अपने ही लिए रखिए (६५, ४२)—पिता को सम्बोधित करते हुए; आप उन्हें सीधे मेरे पास भेज दीजिए (६५, १४६)—ससुर को सम्बोधित करते हुए; सन्दूक की चाबी लीजिए, सौ-सवा सौ रुपये पड़े हुए हैं, निकाल ले जाइए (७३, ५२)—पति को सम्बोधित करते हुए; थोड़ा-सा खाने-पीने का सामान ले चलिए (७३, १०५)—बड़े भाई को सम्बोधित करते हुए; जीजाजी, आप रुक जाइए (५६, ८८६)—बड़ी बहन के पति को सम्बोधित करते हुए; आप घबराइए नहीं पिताजी (२७, १३१);

(२) जब समान स्तर के लोग परिष्कृत शिष्टता से बोलते हैं या परिचितों के बीच परिष्कृत शिष्टता से सम्बोधन होता है। अबुलवफ़ा बोले, आइये जनाब !... आइये कुछ दूर साथ ही चलिये ! शर्माजी ने उत्तर दिया, मैं इस समय घूमा करता हूं, क्षमा कीजिए (७३, ५९), मिस लतिका, लैम्प ज़रा और नीचे झुका दीजिए (५२, १२३);

(३) जब अपरिचित या कम परिचित लोग परिष्कृत शिष्टता से सम्बोधन करते हैं, उदाहरणार्थ : उस पुरुष ने गाड़ी चलाते हुए काइरी से कहा, 'लीजिए मेरा रूमाल, अपने आँसू पोंछ डालिये' (२८, १०८), इस साले से बीस बार कहा है कि बिना देखे दोस्तों को पीछे से झपट्टा न मारा करो। कई बार यह हमारे साथ भी ऐसा करता है। मारिए उतारकर चार जूते इसके सिर पर...(१७, २४७), यूसुफ़ ने फिर पहले युवक से हिन्दी में कहा : 'अब कृपया, आप मेरी रूसी बात का हिन्दी अनुवाद इन्हें समझा दीजिये (१, ४२५);

(४) कारबारी शिष्ट सम्बोधन में, उदाहरणार्थ : सुपरिन्टेन्डेन्ट बोला— 'फ़रमाइए, क्या काम है ?' —'देखिए', मैंने कहा, 'मैं सहायता माँगने आया हूं' (२७, ३३-३४), चेयरमैन...बोले, 'अब आप बनिये नहीं। साफ़-साफ़ बताइए, क्या काम है ?' (२७, २८);

(५) जब बड़ों को या अपने से बड़े ओहदे वालों से अधिक शिष्टता से सम्बोधित करते हैं, उदाहरणार्थ : घबराइए नहीं पंडितजी (१२०, ७२), माफ़ कीजिए, सरकार (५४, १३), जी बोलिए, क्या आज्ञा है (१, ९१);

(६) जब ज़ोर देकर शिष्टता से या हास्यपूर्वक शिष्टता से बड़े लोग, जिनका समाज में ज़्यादा ऊँचा ओहदा होता है, उन लोगों को सम्बोधित करते हैं जिनका

सामाजिक स्तर नीचा होता है, या ज़ोर देकर शिष्टता से या हास्यपूर्वक शिष्टता से उम्र में बड़े लोग अपने से कम उम्र वाले लोगों को सम्बोधित करते हैं, उदाहरणार्थ : महाराज ने प्रसन्न होकर साधु को ललकारा, 'ज़रा लखनऊ के उस्ताद की नकल भी कीजिए (५४, २३), आइए, आइए, बाबू रामनाथ साहब, बहादुर ! (६५, ३३), वकील—रतनबाई को बाल-समाज से बड़ा स्नेह है...अगर आपको बच्चों से प्यार हो, तो जाइए (६५, १०४), डॉक्टर आत्माराम मुसकराए, बोले, '...अपनी नयी दुनिया बसाते वक्त इस पुरानी राजनीति की चालों पर गौर न कीजिए। भगाइये यहां से (१, ४७५);

(७) दुकानदारों का ख़रीददारों को शिष्ट-चाटुकारिताबोधक सम्बोधन, उदाहरणार्थ : दलाल ने बड़े विनीत भाव से कहा—'बाबूजी, देख तो लीजिये (६५, ६२), जौहरी ने हार को उलट-पुलटकर देखा और हिचकते हुए बोला—'साढ़े ग्यारह सौ कर दीजिए' (६५, १२२)।

आज्ञार्थ का यह रूप 'आप' सर्वनाम के बग़ैर भी आ सकता है तथा 'आप' सर्वनाम के साथ भी। 'आप' सर्वनाम उद्‌बोध को ज़्यादा बल देता है, विशेषकर उन स्थितियों में जबकि वह क्रिया से पहले आये, उदाहरणार्थ : आप ही न कह दीजिए (६५, १४१), मेरी ख़ातिर आप इसे स्वीकार कर लीजिये (२७, ६६), आप लोग जाइए (४४, २५)।

निषेधात्मक वाक्यों में आज्ञार्थ में मनाही व्यक्त करने के लिए 'इये' (इए) के साथ 'न' और 'नहीं' निषेधात्मक निपात (सामान्य मनाही) या 'मत' निपात (स्पष्ट मनाही) आते हैं। 'न' और 'नहीं' निपातों का निर्धारित स्थान होता है : 'न' क्रिया से पहले आता है और 'नहीं' क्रिया के बाद और 'मत' निपात स्वतंत्र स्थान रखता है, उदाहरणार्थ : अमीर मुझे न बनाइये (५४, १६), घबराइये नहीं (६५, १०५), आप मुझे गुरुजी मत कहिये (५२, ५५), हँसिये मत दरोगाजी (६५, २२४)।

आज्ञार्थ का यह रूप सामान्य पुरुषवाचक अर्थ में आ सकता है। तब वह निरपेक्ष कालवाचक अर्थ अपनाता है, उदाहरणार्थ : अपना घर रखिये, चोर न किसी को कहिये (७७, १६), खाइये मन भाता, पहनिये जग भाता (३७, ८६), पनीर के साथ खुश्क खाइये (७७, २३२), वकील साहब ने फिर कहा—'...बंधनों से समाज का पैर न बाँधिये, उसके गले में कैद की जंजीर न डालिये। विधवा-विवाह का प्रचार कीजिये...(६५, १०४), वतन की देखिये तकदीर कब बदलती है (६६, १६)। जैसा कि उदाहरणों से विदित है, यहां आम तौर पर मुहावरे तथा लोकोक्तियां आते हैं।

आज्ञार्थ के इस रूप के साथ 'ज़रा' निपात का प्रयोग, वास्तव में फालतू है, चूंकि 'ज़रा' अधिक शिष्टता की किसी भी अतिरिक्त छाया को व्यक्त नहीं

करता; 'ज़रा' निपात का प्रयोग महज़ भाषिक प्रयोग की देन है, उदाहरणार्थ : 'ज़रा पता तो लगाइये (५९, १०६), मिस लतिका, ज़रा अपना लैम्प ले आइये (५२, १२३)।

## इयो (इओ) वाले रूप

आज्ञार्थ का यह रूप क्रिया की धातु के साथ 'इयो' (इओ) परप्रत्यय लगाने से बनता है। आज्ञार्थ का यह रूप 'देना', 'लेना', 'करना', 'होना', 'पीना', 'सीना' क्रियाओं के साथ 'जियो' (जिओ) परप्रत्यय लगाने से बनता है जो कि स्वर विसंधि के परिणामस्वरूप 'जो' का रूप अपना सकता है : दीजियो (दीजिओ), (दीजो); लीजियो (लीजिओ), (लीजो); कीजियो (कीजिओ), (कीजो); हूजियो (हूजिओ), (हूजो); पीजियो (पीजिओ), (पीजो); सीजियो (सीजिओ), (सीजो)। जैसा कि दिए गए उदाहरणों से विदित है 'देना', 'लेना', 'करना', 'होना' क्रियाएं विकृत धातु के साथ परप्रत्यय लगवाती हैं। 'करना' और 'होना' अनियमित के साथ नियमित रूप बना सकते हैं : करियो (करिओ), होइयो (होइओ)।

'इयो' (इओ) वाला रूप 'तू' तथा 'तुम' दोनों ही सर्वनामों के साथ सम्बन्ध रख सकता है, उदाहरणार्थ : तू उससे अलग-ही-अलग भुगत लीजो। मेरा नाम न लीजिओ (१०३, १३०), कारोबार राज्य का ईमानदारी और होशियारी से तुम किया कीजो (२६, १२६)। यहां, यह उल्लेख करना उचित होगा कि अधिकतर स्थितियों में यह रूप 'तू' सर्वनाम से सम्बन्ध रखता है, इसीलिए आम तौर पर एक ही पुरुष को सम्बोधित करते समय इसका प्रयोग कर सकते हैं।

यह रूप जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, उस उद्बोध को व्यक्त करता है, जो कि उक्ति के क्षण का अनुवर्ती होता है, जो कि काल के संगत क्रिया-विशेषणों की उपस्थिति में विशेषकर अच्छी तरह प्रकट होता है, उदाहरणार्थ : फिर किसी दिन सुखराम पर हाथ साफ़ कर लीजियो (१०३, २१७), अरी कल ले आइयो (१०३, ४५८), कल मुझे जंगल ले चलियो (१०३, १९३), जो तुम्हारे जी में आयेगा सो कीजो (२४, १४२)।

'इयो' (इओ) वाले रूप को आज्ञासूचक-प्रार्थनासूचक या आज्ञासूचक-उपदेशसूचक रूप कहा जा सकता है, जो कि उन रूपों से कम ज़ोरदार होता है जो धातु का समाकार होता है या 'ओ' से बनता है, उदाहरणार्थ : जब मरे हमसे कह दीजियो। बिना कहे मत मरियो (४४, ७९), मुझे भूल न जाइओ (२४, १४३), देख तेज़ धागा लाइओ, देर न करिओ (५४, ६), फिर तू मेरी बोटी बोटी काट के चील, कौओं को खिला दीजो (१०३, ९२), तू राज़ी न हूजियो (२४, १००)।

आज्ञार्थ का यह रूप उन अर्थों में आता है जिनमें 'तू' और 'तुम' सर्वनामों के

साथ वे रूप आते हैं जिनका ऊपर अध्ययन किया गया था। सिर्फ़ एक अपवाद को छोड़कर कि यह रूप तिरस्कारबोधक सम्बोधन और गंदी गाली में नहीं आता एवं जानवरों को इस रूप द्वारा संबोधित नहीं कर सकते ।

'इयो' (इओ) वाला रूप 'तू' या 'तुम' सर्वनाम के बग़ैर और साथ भी आ सकता है। 'तू' या 'तुम' सर्वनाम उद्‌बोध की प्रकृति को और तेज़ कर देते हैं, विशेषकर क्रिया से पहले जब सर्वनाम आता है, उदाहरणार्थ : तू आ जाइयो (७५, १४६), सच तू बताइयो (१०३, ३१६), कारोबार राज्य का ईमानदारी और होशियारी से तुम किया कीजो (२४, १२६)।

निषेधात्मक वाक्यों में जब आज्ञार्थ का यह रूप मनाही व्यक्त करता है तो 'न' निषेधात्मक निपात (सामान्य मनाही) और 'मत' (स्पष्ट मनाही) निपात के साथ आता है, जो कि (विशेषकर 'न' निपात) निर्धारित जगह पर अर्थात् क्रिया के पहले आते हैं। उदाहरणार्थ : नागा न करिओ (१०३, ४५६), भागते जाइयो, पैसों का मुँह न देखियो (५४, ६),इतनी सर्दी में मेरे कपड़े मत भिगोइयो ! (७५, १२५), अब मत आइयो यहां (१०३, ६१७)।

आज्ञार्थ के इस रूप में 'ज़रा' निपात का प्रयोग शिष्टता की एक छाया देता है : सरनो ! ज़रा अन्दर आइयो (७५, १३०)।

बहुत ही कम 'इयो' (इओ) रूप सामान्य-पुरुषवाचक अर्थ में आता है। तब वह निरपेक्ष कालवाचक अर्थ अपना लेता है, उदाहरणार्थ : जब दाँत न थे तब दूध दीजो, जब दाँत दिये तब अन्न भी देय है (३७, ६७)।

## तुमर्थ क्रिया का समाकार

आज्ञार्थ का यह रूप 'तुम' एवं 'तू' सर्वनामों से सम्बन्ध रखता है। 'तुम' सर्वनाम से जब सम्बन्ध रखता है तो यह रूप एक पुरुष को या कई पुरुषों को सम्बोधित करते समय प्रयोग होता है, जब 'तू' सर्वनाम के साथ यह रूप प्रयोग होता है तो सिर्फ़ एक पुरुष को सम्बोधित कर सकते हैं, उदाहरणार्थ : तुम आज ज़रा मिस्त्री से कह देना कि...(५२, ६८), तुम सब अन्दर घुस आना...(७५, १६६), तू ही जाना ! (६६, ७६)।

यह रूप जैसा कि ऊपर बताया गया है, उस उद्‌बोध को व्यक्त करता है जो कि उक्ति के क्षण का अनुवर्ती होता है, जो कि काल के संगत क्रियाविशेषणों की उपस्थिति में विशेषकर अधिक प्रकट होता है, उदाहरणार्थ : कल शाम को...रुपये दे आना (६६, १३३), कल दादा को कहला भेजना...(६६, ७१), कल रुपये जुटा रखना (६५, १०७)। कालार्थ में आज्ञार्थ के 'ओ' रूप और तुमर्थ क्रिया के समाकार रूप के बीच अन्तर स्पष्टतः तब प्रकट होता है, जब दोनों रूप एक ही वाक्य में आते हैं, उदाहरणार्थ : तुम यहां रहकर कुछ अच्छी-अच्छी चीजें बना

लो, फिर दिल्ली आकर अपनी प्रदर्शनी करना (५२, १५१), जाओ फिर कभी उधर आकर बात करना (५२, १४५)।

आज्ञार्थ के रूप को जो कि तुमर्थ क्रिया का समाकार है आज्ञासूचक-उपदेश-सूचक या आज्ञासूचक-प्रार्थनासूचक रूप कह सकते हैं जो कि मुख्यतः 'तुम' सर्वनाम से सम्बन्ध रखता हो लेकिन 'ओ' रूप के विपरीत कम ज़ोरदार होता है। इसलिए तिरस्कारबोधक सम्बोधन में उसका प्रयोग नहीं होता। बाकी स्थितियों में वह उन्हीं अर्थों में प्रयोग होता है जैसा कि आज्ञार्थ का 'ओ' रूप होता है।

आज्ञार्थ का यह रूप 'तुम' और 'तू' सर्वनामों के साथ या बग़ैर भी आ सकता है। 'तू' और 'तुम' सर्वनामों से उद्बोध तेज़ हो जाता है, विशेषकर जब वे क्रिया से पहले आते हैं। उदाहरणार्थ : तुम अपने बच्चों के पास जाना (६६, १६६), उस्ताद, तुम सोचते रहना (१०३, २२४), तू घर न जाना (१०३, २१७)।

आज्ञार्थ का यह रूप जब निषेधात्मक वाक्यों में निषेध व्यक्त करता है तो 'न' तथा 'नहीं' (सामान्य मनाही) एवं 'मत' (स्पष्ट मनाही) निपातों के साथ आता है। 'न' और 'नहीं' निपातों की जगह निर्धारित है : 'न' क्रिया से पहले तथा 'नहीं' क्रिया के बाद आता है, 'मत' निपात स्वतंत्र जगह रखता है, उदाहरणार्थ : 'न पसन्द होगी, तो न करना' (११, ५६), रामनाथ, भाईजान, नाराज़ न होना (६५, २६२), तुम रोना नहीं (१०३, ६२३), भगवान का भरोसा मत छोड़ना... (६६, ७५), अपनी भाभी को भूल मत जाना लाला (५६, ६०), रास्ते में रोना मत (६५, २३८)।

आज्ञार्थ के इस रूप में 'ज़रा' निपात शिष्टता की विशेष छाया देता है, उदाहरणार्थ : ज़रा इधर आना (६५, २१२), वह निकले तो ज़रा बता देना (११, ४२)।

## 'इयेगा (इएगा)' रूप

आज्ञार्थ का यह रूप आज्ञार्थ के 'इये (इए)' रूप के साथ 'गा' परप्रत्यय लगाने से बनता है जिसको लैंगिक विकारी रूपिम 'गा' से भिन्न करना चाहिए, जो कि निश्चयार्थ का भविष्यत् काल का चिह्नक है चूंकि 'गा' परप्रत्यय रूपात्मक तौर पर अविकारी है। 'गा' परप्रत्यय क्रिया के नियमित तथा अनियमित के रूपों साथ-साथ लगता है। जाना-जा-जाइये-जाइएगा, करना-कर-कीजिये-कीजिएगा आदि।

यह रूप जैसा कि ऊपर बताया गया है, उस उद्बोध को व्यक्त करता है जो कि उक्ति के क्षण का अनुवर्ती होता है जो कि काल के संगत क्रियाविशेषणों की उपस्थिति में विशेषकर प्रकट होता है, उदाहरणार्थ : कल जालपा को लाइयेगा (६५, १०५), आप फिर आ जाइयेगा (२७, ७७), कल आप अपने सब रुपये ले

जाइयेगा (६५, ६६)। कालार्थ में आज्ञार्थ के इस रूप तथा आज्ञार्थ के 'इये (इए)' रूप के बीच अन्तर भी उन स्थितियों में स्पष्टत: प्रकट होता है जब दोनों रूप एक ही वाक्य में आते हैं, उदाहरणार्थ : बाबूजी, देख तो लीजिए। पसन्द आए तो लीजिएगा, नहीं तो न लीजिएगा (६५, ६२), अभी ठहरिये। तब मार दीजिएगा (१०३, ३३५)। यहां यह कहना उचित होगा कि 'इये (इए)' रूप उस उद्बोध को व्यक्त कर सकता है जो कि उक्ति के क्षण का अनुवर्ती होता है, उदाहरणार्थ : कल आकर हिसाब कर जाइये (६५, १०६)।

'इएगा (इयेगा)' रूप शुद्ध कालार्थ में भी आ सकता है, जैसे कि वह सामान्य भविष्यत् काल का शिष्ट रूप हो। यह प्रयोग प्रश्नवाचक वाक्यों के लिए विशेष कर स्वाभाविक है, उदाहरणार्थ : यह लेकर आप क्या करिएगा ? (५२, ४४), इस वक्त जगाकर क्या कीजिएगा (६५, १४५), गीत ज़रूर ही सुनिएगा ? नहीं मानिएगा ? (५२, ५७)। हालांकि यह अर्थ कथात्मक वाक्यों में भी हो सकता है, उदाहरणार्थ : मगर इतना कहे देता हूं कि ऐसा सौदा फिर न पाइयेगा (६५, १२०), लेकिन आप आये हैं तो अंग्रेज़ी साम्राज्य की अतुल शक्ति का परिचय ज़रूर ही दीजिएगा (६६, ३६)।

'इयेगा (इएगा)' रूप उस उद्बोध को भी व्यक्त कर सकता है जो कि उक्ति के क्षण के साथ मेल खा सकता है। इस हालत में वह अति सूक्ष्म शिष्टता को व्यक्त करता है, जिसकी छाया अत्यन्त तन्मय सम्मान की होती है, उदाहरणार्थ : माफ़ कीजिएगा हुज़ूर (१, ४८८), 'माफ़ कीजिएगा', 'माफ़ कीजिएगा', कहता हुआ वह उनके पैरों पर झुक गया...(१७, २४१)।

आज्ञार्थ का यह रूप 'आप' सर्वनाम के बग़ैर या साथ आ सकता है। 'आप' सर्वनाम के साथ उद्बोध की प्रकृति तेज हो जाती है, विशेषकर जब क्रिया से पहले आता है, उदाहरणार्थ : आप दे दीजियेगा (६५, ३६), आप आथारिटीज़ से शिकायत कीजिएगा (८, ४०)।

निषेधात्मक वाक्यों में जब आज्ञार्थ का यह रूप मनाही व्यक्त करता है तो 'न' तथा 'नहीं' (सामान्य मनाही) तथा 'मत' (स्पष्ट मनाही) निषेधात्मक निपातों के साथ आता है। आम तौर पर 'न' निपात क्रिया से पहले आता है, उदाहरणार्थ : माफ़ कीजिएगा, बुरा न मानिएगा (१७, २४१)। 'नहीं' निपात उद्बोध व्यक्त करने के लिए क्रिया के बाद आता है, उदाहरणार्थ : अब आधा मिनट बिलकुल हिलिएगा नहीं (६६, १०५); और भविष्य काल को व्यक्त करने के लिए क्रिया से पहले आता है, उदाहरणार्थ : मुझे ईनाम नहीं दीजिएगा (४४, २५)। 'मत' निपात आम तौर पर क्रिया से पहले आता है, उदाहरणार्थ : ऐसा मत कीजिएगा (५६, ७३), देखिए, राज्य की बातों का बुरा मत मान जाइएगा (५६, ११०)।

आज्ञार्थ के इस रूप के साथ 'ज़रा' निपात लगाना, वास्तव में, फालतू होता है वह सिर्फ़ भाषाई व्यवहार की देन है. उदाहरणार्थ : मेरे पीछे-पीछे आये पर ज़रा दूर रहियेगा (१७, २३७)।

शब्दार्थक दृष्टि से आज्ञार्थ का सामान्य अर्थ—व्यापार की तरफ़ उद्बोध—कई छायाओं में बांटा जा सकता है, जो कि आवाज़ के उतार-चढ़ाव के परिवर्तन के साथ आती हैं। आधुनिक हिन्दी में उद्बोध की निम्नलिखित छायाएं होती हैं, जो आज्ञार्थ के सारे रूपों द्वारा व्यक्त होती हैं : (१) धातु का समाकार रूप, (२) 'ओ' रूप, (३) 'इये (इए)' रूप, (४) 'इयो (इओ)' रूप, (५) तुमर्थ क्रिया का समाकार रूप, और (६) 'इयेगा (इएगा)' का रूप :

(१) सरल उद्बोध : (१) मैंने कहा : 'कह तो' (१०३, ७१); (२) मुझे भी बताओ बेटा (१२०, ३४); (३) आप यह बताइये कि...(२७, १११); (४) उससे पूछ लीजो (१०३, १६६); (५) सच कहना बेटा (५४, ११); (६) मेरी ओर से बहुत विनय के साथ कहिएगा...(६६, १९)।

(२) अनुमति—(१) तू भी कह ले (१०३, २०६); (२) तुम भी बैठो (५२, ४९); (३) आप लोग जाइए (४४, २५); (४) जो तुम्हारा जी चाहे सो कीजो (२४, १२६); (५) दवा खाने के थोड़ी देर बाद पी लेना (५९, ७५); (६) उधर से ही अमोला चले जाइएगा (७३, १०७)।

(३) प्रार्थना, याचना—(१) इस वक्त चल ज़रा (१०३, ४५४); (२) तुम तो सो जाओ (१०३, २१६); (३) आप कृपा करके घर जाइये (७३, ६५); (४) छोटे सेठ, मुझे गोली मत मारियो (७५, १७७); (५) हमें गिरफ़्तार न कराना (१०३, ४६७); (६) माफ़ कीजिएगा हुज़ूर (१, ४८८)।

(४) हुक्म—(१) निकल यहां से, चल (१०३, २०६); (२) पकड़ लाओ बदमाश को (५४, १५); (३) भागिये यहां से (१, ४७५); (४) सरनो, ज़रा अन्दर आइयो (७५, १३०); (५) स्कूल से सीधे घर आना (११, १०५); (६) जैसे-जैसे कहें, करते जाइयेगा (५१, ७५)।

(५) चेतावनी—(१) गाली न दे उसे कजरी (१०३, ६९); (२) ऐसी बात मुँह से न निकालो प्यारे !(६५, २९३); (३) महाराज, आप यहां न आया कीजिये (७३, ११४-११५); (४) दगा न करियो (१०३, ४५६); (५) अब यह काम न करना (४४, ९८); (६) अब कभी यहां न आइयेगा (७३, ९२)।

(६) इच्छा—(१) भाड़ में जा गिर (१०७, ६७); (२) आराम से रहो (७३, ४१); (३) ईश्वर पर भरोसा रखिये (७३, ५६); (४) खुश होइये (१०८, १५१); (५) तुम आराम से रहना (६५, २५५); (६) आप मुझे संभाले रहियेगा (७३, ८८)।

(७) मनाही—(१) ऐसा मत कर (१०३, ४६९); (२) गाली मत दो

(१, ३५२); (३) आप मुझे गुरुजी मत कहिये (५२, ५५); (४) इतनी सर्दी में मेरे कपड़े मत भिगोइयो ! (७५, १२५); (५) तो तू आज मत जाना (१०३, १३०); (६) ऐसा मत कीजिएगा (५६, ३३)।

## व्यापार के पक्ष

आधुनिक हिन्दी में व्यापार के पक्ष की श्रेणी के अन्तर्गत मुख्य तथा विशेषक क्रिया के विभिन्न वर्ग आते हैं, जिसके परिणामस्वरूप मुख्य क्रिया का अर्थ अतिरिक्त पक्ष-सम्बन्धी छायाओं द्वारा जटिल हो जाता है, जो कि व्यापार के होने के चरित्र को निर्धारित करती हैं या उसे अतिरिक्त वृत्तिवाचक अर्थ देती हैं।

विश्लेषणात्मक क्रियाओं का अधिकतर हिस्सा, जो व्यापार के पक्षों को आधुनिक हिन्दी में व्यक्त करता है, रूपात्मक तौर पर अभिव्यक्त होता है चूंकि ये विश्लेषणात्मक रचनाएं विधेयवाचक तौर पर और नामिक तौर पर प्रयोग होती हैं। वे विश्लेषणात्मक पक्ष-सम्बन्धी क्रियाएं इनसे छोटा वर्ग बनाती हैं जो कि व्यापार के पक्ष को सिर्फ़ विधेयवाचक रूपों में व्यक्त करती हैं।

संरचनात्मक तौर पर विश्लेषणात्मक पक्ष-सम्बन्धी क्रियाएं मुख्य अर्थगत क्रिया (धातु के रूप में, क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त धातु, सरल प्रथम तथा द्वितीय कृदन्त, सरल प्रथम तथा द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त और क्रियार्थक नाम, जो कि सरल द्वितीय कृदन्त का समाकार है) तथा अनेक विशेषक क्रियाओं के मिलन से बनती हैं, जिनका ऊपर उल्लेख हुआ है।

आधुनिक हिन्दी में प्रयोग की आवृत्ति के आधार पर तथा रूपप्रक्रियात्मक अभिव्यक्ति के आधार पर व्यापार के निम्नलिखित पक्ष होते हैं :

### (१) व्यापार का नित्यताबोधक पक्ष

यह विश्लेषणात्मक क्रियाओं द्वारा व्यक्त होता है, जो कि प्रथम सरल कर्तृवाच्य तथा कर्मवाच्य कृदन्त एवं 'रहना' क्रिया के मिलन से बनती हैं। ये पुरुषवाचक तथा अविधेय क्रियार्थक रचनाओं में आती हैं। 'रहना' विशेषक क्रिया काल-प्रक्रिया की पूर्ण रूपावली रखती है।

ये पक्ष-सम्बन्धी क्रियाएं उस व्यापार का वर्णन करती हैं जो कि नित्यताबोधक प्रक्रिया में आता है। व्यापार समय में तथा उसके पूर्ण होने में सीमित हो सकता है। अर्थात् व्यापार हमेशा तक हो सकता है और विशेष कालान्तर में सीमित हो सकता है। व्यापार का निरन्तर विकास व्यापार के गुणात्मक या मात्रात्मक परिवर्तन से जटिल नहीं होता।

जब पुरुषवाचक क्रियार्थक रचनाओं में निरन्तरताबोधक अविच्छिन्न व्यापार व्यक्त होता है तब ये पक्ष-सम्बन्धी क्रियाएं काल के संगत क्रियाविशेषणों के साथ

या बग़ैर आ सकते हैं, उदाहरणार्थ : (क) काल के क्रियाविशेषणों के साथ : पति से कैसे भी झगड़ती हो पर उनके घर में सदा नम्रता से मिनमिनाती रहती थी (१३, ६८),...ऐसा मालूम होता है जैसे हमेशा यहीं रहती रही हूं (७२, २७), हर महीने पगार मिलने पर आपको १०० रुपया महीना देता रहूँगा (८, ६५), निरन्तर शून्य में तकती रही...(१३, १६)....लेकिन उन्हें लगातार सीने के दाईं ओर चुभन-सी महसूस होती रही (१३, ४२), लल्लन, तुम क्यों लड़ती रहती हो रोज़ हरिया से ? (१३, ४६); (ख) काल क्रियाविशेषणों के बग़ैर : उनकी पत्नी उनके पास कुर्सी पर बैठी कुछ काढ़ती-बुनती रहती (१३, १८८), यों पार्टियाँ होती ही रहती थीं...(६६, ६७),...और बीच में रावी का वही पानी बह रहा है जो इस धरती पर हिन्दुओं और मुसलमानों के आने से पहले भी बहता रहा है (३१, १२१), मैं हेम से प्यार करती हूं और उसी से प्यार करती रहूँगी (१३, २५), उत्तरी ध्रुव-प्रदेश के ठंडे किन्तु उर्वर किनारों पर लोग रहते रहे हैं (८८, ७३)।

यहां यह बताना उचित होगा कि 'रहना' विशेषक क्रिया के पूर्ण रूप अक्सर बग़ैर काल चिह्नकों के आते हैं।

जब नित्यताबोधक व्यापार व्यक्त होता है, जो कालावधि में सीमित होता है, तब ये पक्ष-सम्बन्धी क्रियाएँ, आम तौर पर, संगत क्रियाविशेषण के साथ आती हैं, मुख्यतः 'तक' तथा 'भर' परसर्गों समेत संज्ञाओं के साथ, उदाहरणार्थ : कुछ देर तक लोग टिप्पणियाँ ही करते रहे (७१, १३३), देर तक बहस होती रही (७१, १३०), आया क्षण भर खड़ी उसे देखती रही (१३, १५२), ज़िन्दगी भर तुम मेरे लिए रोते रहोगे और ज़िन्दगी भर मैं तुम्हारे लिए रोती रहूँगी (३१, १६), सारे दिन स्कूल में दीनानाथ को अपने जादू से चकित करता रहा था और सारा दिन चेतन उससे इस खेल का राज़ पूछता रहा था (१७, ८०), चाय पर दोनों मित्र इस घटना के विभिन्न पहलुओं का रस लेते रहे (८, २३)।

यह बात यहां बतानी उचित होगी कि व्यापार जब कालावधि में सीमित होता है तो 'रहना' विशेषक क्रिया आम तौर पर पूर्णतावाची भूतकाल तथा सामान्य भूतकाल के रूपों में आती है और सामान्य भविष्यत् काल के रूप में आती है। वर्तमान तथा भूतकाल के अपूर्णतावाची रूप यहां आम तौर पर नहीं आते।

जैसा कि उदाहरणों से विदित है, प्रथम कृदन्त जो कि विश्लेषणात्मक क्रिया में आता है, वह उद्देश्य से नियमित तौर पर अन्वित होता है। आज्ञार्थ के विश्लेषणात्मक रूपों के लिए भी यह उचित है जहां 'रहना' क्रिया तुमर्थ क्रिया के समाकार रूप द्वारा व्यक्त होती है, उदाहरणार्थ : वे लोग जब खाएं, तुम खिलाती रहना (६६, ३६)।

अविधेय क्रियार्थक रचनाओं में ये पक्ष-सम्बन्धी क्रियाएं आम तौर पर नित्यताबोधक अविच्छिन्न व्यापार को व्यक्त करती हैं, जो कि संगत क्रिया-

विशेषणों के साथ आता है, उदाहरणार्थ : बराबर लड़ाई होती रहने के कारण सिखों को तीन लाभ हुए (२, २०६),...उसे...निरन्तर सहायता मिलती रहने की आशा थी (II, ५. ४. १६६६, ६), एक ही विषय पर लगातार सोचते-विचारते रहने से उस विषय से प्रेम हो जाया करता है (७३, १०४), हालाँकि ये क्रियाएं बगैर संगत क्रियाविशेषणों के भी आ सकती हैं, उदाहरणार्थ : भगवान ने ये बाधाएं हमारी शक्ति को मंजते रहने के लिए रखी हैं (१०८, ११),...खाद्यान्न की मांग तेज़ी से बढ़ते रहने के कारण भारत में समय-समय पर अन्न का संकट आता रहा है (II, २५. ८. १६६६, ६), बस तुझे देखता रहना चाहता हूं (६६, १३१), वह किसी बहाने से उसकी मदद करते रहना चाहती थी (६५, १८२), चक्कर लगाती रहने वाली आपकी सहेली क्यों नहीं आयी ? (५८, ३४)।

उस व्यापार को व्यक्त करते हुए जो कि कालावधि में सीमित होता है ये क्रियाएं आम तौर पर संगत क्रियाविशेषणों के साथ आती हैं, उदाहरणार्थ : थोड़ी देर उसका लिखना तकते रहकर लड़के ने...पत्रिका निकालकर उसके सामने रख दी (५२, १३), ऐसे में अधिक देर तक घूमते रहना संभव नहीं था (१४२, १४३), एक पल यों ही देखते रहकर...वे बोले थे (१०६, ४०)।

दिये गये उदाहरणों से जैसा विदित है, प्रथम कृदन्त के साथ जो कि निर्धारित शब्द के साथ नियमित तौर पर अन्वित होता है, अविधेय रचनाओं में मुख्य क्रिया की हैसियत से प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदंत आ सकता है, उदाहरणार्थ :

| **प्रथम कृदन्त** | **प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त** |
|---|---|
| बस तुझे देखता रहना चाहता हूं (६६, १३१), | वह किसी बहाने से उसकी मदद करते रहना चाहती थी (६५, १८२), |
| बराबर लड़ाई होती रहने के कारण सिखों को तीन लाभ हुए (२, २०६), | ...खाद्यान्न की मांग तेज़ी के साथ बढ़ते रहने के कारण भारत में समय-समय पर अन्न-संकट आता रहा है (II, २६. ८. १६६६, ६), |
| ...उसे...निरन्तर सहायता मिलती रहने की आशा थी (II, ५. ४. १६६६, ६)। | भगवान ने ये बाधाएं हमारी शक्तियों को मंजते रहने के लिए रखी हैं (१०८, ११)। |

अगर यह पक्ष-सम्बन्धी क्रिया वाक्य के उद्देश्य के प्रकार्य में आती है, तो मुख्य क्रिया आम तौर पर अविधेय रचनाओं में प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के रूप में आती है, उदाहरणार्थ : जब तक पैदावार के साधन सीमित हैं, उनके बढ़ने की उम्मीद से ही आबादी **बढ़ाते रहना** उचित नहीं है (१४२, ६६),...भारत का

परक-विधेयवाचक प्रकार्य में 'रहना' संयोजक क्रिया के साथ आती हैं और दशा का कर्मवाच्य का अर्थ व्यक्त करती हैं। इस स्थिति में द्वितीय कृदन्त नियमित तौर पर प्रकट होता है अर्थात् वाक्य के उद्देश्य के साथ अन्वित होता है, उदाहरणार्थ :

| पक्ष-सम्बन्धी क्रिया | नामिक विधेय |
|---|---|
| यही ख़्याल अचेतन में उसे पलंग के साथ बांधे रहा (७, १२१), | प्रत्येक कार्ड पर एक तारीख़ लिखी होती है और ये कार्ड क्रमानुसार रखे रहते हैं (१०१, १०२), |
| ...वह अपने आपको रोके रही (५६, १३५)। | पंचांग में साफ़ लिखा रहता है (२०, ३१)। |

## (३) व्यापार का नित्यताबोधक-सीमित पक्ष

व्यापार के इस पक्ष को वे विश्लेषणात्मक क्रियाएं व्यक्त करती हैं जो कि सरल प्रथम कृदन्त तथा 'आना', 'चला आना' क्रियाओं के रूपों के मिलन से बनती हैं और मुख्यतः सिर्फ़ पुरुषवाचक रचनाओं में आती हैं। 'आना', 'चला आना' क्रियाएं मुख्यतः पूर्णतावाची और संतत भूत और वर्तमान काल में आती हैं।

ये पक्ष-सम्बन्धी क्रियाएं उस नित्यताबोधक व्यापार को व्यक्त करती हैं जो कि उक्ति के क्षण तक शुरू हो चुका होता है या काल के क्षण तक शुरू हो चुका होता है और उक्ति के क्षण या काल के क्षण पर समाप्त हो जाता है (विशेषक क्रिया के पूर्ण रूपों में), या उक्ति के क्षण या काल के क्षण में भी जारी रहता है (विशेषक क्रिया के संतत रूपों में), उदाहरणार्थ : (क) पूर्ण रूप : हम इस धरती पर रहेंगे और इसी का यश गायेंगे जैसा सात पीढ़ियों से करते चले आये हैं।... आप तो सात पीढ़ियों से आराम करते और यश गाते आएं हैं, लेकिन आपकी रैयत आपके लिए काम करती और आपसे फ़रियाद करती आयी है (३१, ३८), चेतन रामदत्त को बचपन से चाचा कहकर पुकारता आया था (१७, ४५), इसी जगह वह ३० साल से बराबर बैठते चले आये थे (६५, ४३); (ख) संतत रूप : मैं इसी नाम से बचपन ही से इसे पुकारता आ रहा हूं (५३, ११), कोई मेज ख़ाली न थी, वह मेज भी जिस पर पिछले साल भर से लगातार बैठता आ रहा हूं (५६, २६), बहुत दिनों से सुनते आ रहे थे कि उसमें घने में जोगी रहते हैं (१०३, २६), दोनों सहेलियां बचपन से चुहलें करती आ रही थीं (७५ १२४)।

जैसा कि उदाहरणों से विदित है, पक्ष-सम्बन्धी क्रियाएं काल के क्रियाविशेषण के साथ आती हैं जो कि संज्ञा के साथ 'से' परसर्ग लगाने से बनता है। 'से' परसर्ग पक्ष-सम्बन्धी क्रिया के व्यापार के समय का हिसाब रखने के लिए आता है।

इन क्रियाओं में काल का क्रियाविशेषण 'तक' परसर्ग के साथ कम ही आता

है। तब वह नित्यताबोधक व्यापार की सीमा की ओर संकेत करता है जो पक्ष-सम्बन्धी क्रिया द्वारा व्यक्त होता है। यह निश्चित है कि यहां विशेषक क्रिया के संतत वर्तमान के रूप नहीं आ सकते, बल्कि आम तौर पर वर्तमान तथा भूतकाल के पूर्णतावाची रूप एवं भूतकाल का संतत रूप आ सकते हैं, उदाहरणार्थ : और तू अपने दर के भिखारी महमूद को उसी तरह अपने मुबारक हाथों से एक डबल रोटी देती रह जैसा कि सत्रह दिन में आज तक देती आयी थी (४, २५२), जयकिशन खुद बचपन से लेकर अब तक यह सब अपनी आंखों से देखता आया था (४६, ७), अब तक मैं तुम्हें अपनी वेटी समझती आ रही थी चन्द्रा...(५६, ८३)।

बहुत कम स्थितियों में, मुख्यतः पूर्णतावाची वर्तमान में व्यापार का नित्यता-बोधक-सीमित पक्ष की क्रियाएं बगैर किसी काल क्रियाविशेषण के आ सकती हैं। यहां यह प्राथमिक स्थान पर नित्यताबोधक व्यापार की समाप्ति की बात आती है और इस बात का संकेत नहीं मिलता कि व्यापार कब शुरू हुआ और उसकी पूर्णता का क्षण क्या था, उदाहरणार्थ : हम तो बूढ़े-बड़ों से यही सुनते आये हैं कि शाम के समय नहीं सोना चाहिए (७५, १८१),...पर्दा करना कोई बहुत अच्छी चीज़ नहीं, मगर घर में चलता आया है (१०८, ६६), मुझे सदा घर में सब शक्को कह कर पुकारते आये हैं (१३, २७), उसमें तथा उनकी तमाम प्रणालियों में ज़रा समरूपता नहीं है जिनकी राजनीति के शास्त्री तथा दार्शनिक कल्पना करते आये थे (१४५, २)।

व्यापार के नित्यताबोधक-सीमित पक्ष की क्रियाएं अविधेय रचनाओं में आम तौर पर कृदन्त के रूप में बहुत ही कम पायी जाती हैं, उदाहरणार्थ :...योजनाओं के आरम्भ से महँगाई के कुचक्र में पिसता आया उपभोक्ता अब कुछ राहत की सांस ले सकेगा (II, ५.५.१९६८, ९)।

## (४) व्यापार का नित्यताबोधक-घटमान पक्ष

व्यापार के इस पक्ष को विश्लेषणात्मक क्रियाओं द्वारा व्यक्त करते हैं जो कि सरल प्रथम कृदन्त तथा 'जाना' क्रिया के रूपों के मेल से बनती हैं और पुरुषवाचक तथा अविधेय क्रियार्थक रचनाओं में आ सकती हैं। 'जाना' क्रिया काल-प्रक्रिया की पूर्ण रूपतालिका रखती है।

ये पक्ष-सम्बन्धी क्रियाएं नित्यताबोधक, घटमान, अभ्यासबोधक व्यापार को व्यक्त करती आती हैं जो कि व्यापार के कर्ता में गुणात्मक तथा मात्रात्मक परिवर्तन की ओर संकेत करता है। व्यापार आम तौर पर कालावधि से सीमित नहीं होता, उदाहरणार्थ : हर बार वह गिनती बढ़ाता गया (१७, ८३), पानी बराबर बढ़ता ही जा रहा था (१, २६९), सावित्री—समय गुज़रता जाता है, भविष्यत बिगड़ता जाता है और आशा कम होती जाती है (१३९, १५९), हिंस्र

पशुओं से भरपूर वन आते गये, जाते गये (४, २५१), ढोलों की आवाज़ ऊंची होती और पास आती गयी (३१, ४)।

अविधेय क्रियार्थक रचनाओं में इस पक्ष-सम्बन्धी क्रिया के कृदन्तपरक रूप अपने निर्धारित शब्द से नियमित तौर पर अन्वित होते हैं, उदाहरणार्थ : एक भारी-भरकम सांड...तेज़ी से भागता जाता हुआ दिखायी दिया (३, २५२)।

अविधेय रचनाओं में जो कि संश्लिष्ट क्रियार्थक विधेय के घटक में आती हैं विश्लेषणात्मक पक्ष-सम्बन्धी क्रिया का मुख्य घटक जब नामिक प्रकार्य में आता है तो वह प्रथम कृदन्त तथा प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त का रूप अपना सकता है, उदाहरणार्थ :...वह अपना सब कुछ को खो देने को तैयार होती जाने लगी (४४, ८८), सेठी उसे खिलाते जाना चाहता था (६६, १६)।

नामिक प्रकार्य में जब पक्ष-सम्बन्धी क्रिया का घटक वाक्य के उद्देश्य की हैसियत से आता है, तो वह आम तौर पर सिर्फ़ क्रियाविशेषण कृदन्त का रूप लेता है, उदाहरणार्थ : ...उन्होंने उनको भी 'पालागन' करते जाना उचित समझा (१७, ५१)।

'जाना' विशेषक क्रिया के साथ-साथ व्यापार के इस पक्ष में विशेषक क्रियाओं के प्रकार्य में 'चलना', 'आना', 'फिरना' क्रियाएं और 'चला जाना', 'चला आना' विश्लेषणात्मक क्रियाएं भी आ सकती हैं।

'चलना' क्रिया मुख्यतः उस नित्यताबोधक व्यापार को व्यक्त करने के काम आती है जो कि कालावधि से सीमित नहीं है और जो विकसित नहीं होता और जो इसी कारण व्यापार के उद्देश्य में गुणात्मक या मात्रात्मक परिवर्तन नहीं करता, उदाहरणार्थ : बस निरुद्देश्य जीते चलो और जो कुछ भी सामने आ जाये, उसे स्वीकारते चलो (११०, २८),...वह पहिया घूमता है और मोमी कागज़ पर छिद्र करता चलता है (१०१, ५८), दस-बारह पंक्तियां लिखता चला (१, १२१)।

'चलना' क्रिया बहुत ही कम विकासमान् छाया लिए होती है, उदाहरणार्थ : सड़क के किनारे खड़ी हुई तमाशाइयों की भीड़ और उनका शोर धीरे-धीरे दूर होता चला (१, २४६), वह निडर होती चली (२४, ११५)।

'चला जाना' क्रिया अकसर उन क्रियाओं के साथ प्रयोग में आती है जो कि गति या स्थानान्तर की ओर संकेत करती हैं। तब वह अविच्छिन्न नित्यताबोधक व्यापार की छाया देती है और मात्रात्मक पक्ष को बल देता है, उदाहरणार्थ : वे चलते चले गये (४, १८५), वह मशोबरा, थियोग, नरकंडा और बागी होता हुआ चलता चला जा रहा था (६६, ४५), वह अपने विचारों में डूबी बढ़ती चली गयी (७५, १५०)।

'चला जाना' क्रिया जब दूसरे शब्दार्थक वर्गों की क्रियाओं के साथ आती है तो अपना मुख्य अर्थ सुरक्षित रखती है। उदाहरणार्थ : दादी...प्रेम से एक के बाद

दूसरा ख़रबूज़ा खाती चली जा रही थी (१, ७७), स्त्री कहती चली गयी... (६६, ७६),...लोग आते और जाते थे...जैसे सब कुछ अपने आप होता चला जा रहा हो...(१०७, २)।

'आना' और 'चला जाना' क्रियाएं उल्लेखित विशेषक क्रियाओं के स्थान पर तब आती हैं जबकि व्यापार, व्यापार के कर्ता की ओर से नहीं, बल्कि कर्ता की ओर संकेतिक होता है। तब 'आना' क्रिया नित्यताबोधक-सीमित अर्थ को व्यक्त नहीं करती, बल्कि व्यापार के मात्रात्मक या गुणात्मक वर्णन को व्यक्त करती है, उदाहरणार्थ : उसके पैरों की आवाज़ और मशाल का प्रकाश क्रमशः बढ़ता आ रहा था (५८, ८३), वह इस प्रकार चलती आ रही थी...(२८, ३३), कभी-कभी मोटर भागती आती और धूल उड़ाती हुई भागती चली जाती है... (४४, ८३)।

'चला आना' क्रिया मुख्यतः गतिसूचक या स्थानान्तर क्रियाओं के साथ आती है, उदाहरणार्थ : वह सीधा उसी की ओर भागा चला आ रहा था (७५, १५१), चुनरी नीचे सीढ़ियों के तख़्तों पर घिसटती चली आ रही थी (७५, ४२), पति पास आये। दोनों हाथ आगे बढ़ाकर चाहा कि कोई उन्हें थामे और उनके सहारे उठता चला आये (४४, ७१)।

'आना' तथा विशेषकर 'चला आना' क्रियाएं शुद्ध मात्रात्मक या गुणात्मक छाया कम देती हैं तथा वे व्यापार की दिशा का संकेत नहीं देतीं, उदाहरणार्थ : दिन खुलता आता था (४४, ७१),...राज्य सरकारों से होने वाली आमदनी में वृद्धि होती आ रही है...(१५३, ५३),...उसकी लालसा इसी कारण दिन-दिन प्रबल होती आयी थी (४६, २६), ढाई मील के रास्ते में बस बरातें ही बरातें देखते चले आये हम लोग (१, ७३)।

'फिरना' क्रिया व्यापार में शुद्ध मात्रात्मक छाया लाती है। तब वह सिर्फ़ उसकी कालावधि को व्यक्त करती है। 'फिरना' क्रिया अक़सर गतिसूचक और स्थानान्तर क्रियाओं के साथ प्रयोग होती है, हालांकि वह दूसरे शब्दार्थक वर्गों के साथ भी आ सकती है, उदाहरणार्थ : उसकी आत्मा...परेशान भटकती फिरेगी (६७, ३०६),...वे सारा दिन मोटरें चलाती फिरती हैं? (७५, ६१), मुन्नी उन्हें पहनकर खुशी के मारे यहां-से-वहां घूमती फिरी (४४, ४६), 'भय्या-भय्या' मत करते फिरो, सबकी बातें ग़ौर से सुन लो, बस (४६, ११०)।

'फिरना' क्रिया काल-प्रक्रिया के पूर्ण रूपतालिका रखती है और अविधेय रचनाओं में भी आ सकती है, उदाहरणार्थ : यही कहलाती है झंडे दिखाते फिरने की परम्परा (IV, ११.१२.१६७३), पुलिस के सूँघते फिरने का कारण...(६७, ४२), अपने कार्यक्रम के भेद बताते फिरना हम लोगों को पसन्द न था (६७, ६१)। जैसा कि आख़िरी उदाहरण से विदित है, पक्ष-सम्बन्धी क्रिया का मुख्य

घटक जब उद्देश्य के प्रकार्य में आता है तो प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त का रूप अपना लेता है।

बहुत ही कम स्थितियों में 'फिरना' क्रिया के इसी ही प्रकार्य में 'डोलना' क्रिया भी आ सकती है, उदाहरणार्थ : दिन-भर बगीचे में माली के साथ उसके काम में हाथ बँटाता डोलता (१, ६७), तू तो चाहता है कि मैं ऐसी ही जूतियां खाती डोलूं (१०३, ४८)।

## (५) व्यापार का घटमानपूर्ण परिणामी पक्ष

यह व्यापार का पक्ष मुख्यतः विश्लेषणात्मक क्रियाओं द्वारा व्यक्त होता है जो कि अकर्मक क्रिया के सरल द्वितीय कृदन्त या सकर्मक क्रिया के द्वितीय क्रिया-विशेषणात्मक कृदन्त एवं 'जाना' क्रिया के रूपों के मिलन से बनती हैं और आम तौर पर पुरुषवाचक रचनाओं में आती हैं। यहां 'जाना' की काल प्रक्रिया की पूर्ण रूप तालिका नहीं होती और वह आम तौर पर काल के अपूर्णतावाची तथा संतत रूपों में आती है।

ये पक्ष-सम्बन्धी क्रियाएं नित्यताबोधक दशा को बताती हैं, जो कि पूर्ववर्ती व्यापार के परिणामस्वरूप प्रकट होती है जिससे कर्ता में कुछ गुणात्मक तथा मात्रात्मक परिवर्तन आये हैं। वे परिवर्तन हालाँकि पूर्ण नहीं होते, बल्कि विकसित होते हैं, और घटमान होते हैं। व्यापार का घटमानपूर्ण परिणामी पक्ष कालावधि से सीमित नहीं होता, उदाहरणार्थ : इस काल कोठरी में दम घुटा जाता था (६९, २२९), चाय ठंडी हुई जा रही है (११२, ८), वह चाबी भरे रिकार्ड की तरह बोले जा रहा था (१०७, १२), उसकी मां रोये जाती, उसे चूमे जाती, रोये जाती है (७, १२२), तुम अस्पताल से निकलकर आये हो और मैं हूं कि अपने बारे में ही बातें किये जाती हूं (५२, १३४)।

ये पक्ष-सम्बन्धी क्रियाएं जब विशेषण की हैसियत से अविधेय क्रियार्थक रचनाओं में आती हैं तो अपने निर्धारित शब्द के साथ नियमित तौर पर अन्वित होती हैं, उदाहरणार्थ : निराश्रय होकर प्रवाह में बहे जाते रावत जैसे सहसा किनारे आ लगे (९६, ८८), परीक्षा-फल की उतावली में भागते जाते एक नवयुवक ने मुझ नव-वृद्ध को अनचेता धक्का दे दिया (१, १२४)।

पक्ष-सम्बन्धी क्रिया जब तृतीय क्रियाविशेषणों के प्रकार्य में आती है तो ऐसा मुख्य घटक रखती है, जो कि द्वितीय क्रियाविशेषण द्वारा व्यक्त होता है, उदाहरणार्थ : कुछ दूर उसके पीछे **भागे जाकर** गालियां देते और हाँफते चाचा डालचन्द वापस लौट आया (१७, १०६)।

पक्ष-सम्बन्धी क्रिया जब उद्देश्य के प्रकार्य में आती है तो द्वितीय क्रिया-विशेषण कृदंत के रूप में मुख्य घटक रखती है, उदाहरणार्थ : चौथी योजना में

१००० करोड़ रुपये इस मद से **जुटाये जाना** बहुत कठिन प्रतीत होता है (II, २५.११.१९६५, १७)।

'चला जाना' क्रिया मुख्य क्रिया को अधिक नित्यता की छाया प्रदान करती है, उदाहरणार्थ : वह कल्पना कर रही थी कि शहज़ादी बाक्स में क्या सोचती हुई बही चली जा रही होगी (१०३, २६२), मैं इस तरह सारे काम क्यों किये चला जा रहा हूं (१०८, २३५)।

'आना' तथा 'चला जाना' क्रियाएं तब आती हैं, जब व्यापार कर्ता की ओर संकेतिक होता है, उदाहरणार्थ : आप हर स्टेशन पर मेरे पास भागे आते हैं (८, ३९), बघेर बढ़ा आ रहा था (१०३, ५३४),...जो जिसके हाथ आता था, लूटे लिए आ रहा था (१०, ९८), चारपाई न हो तो मैं डाले आती हूं (१०८, ५३), आँखों में आँसू उमड़े चले आ रहे थे (१०७, ११७),...लेकिन एक के बदले अनेक चित्र एक-दूसरे के ऊपर बरसाती बादलों-से उमड़े चले आये...(७, १२१)।

'फिरना' क्रिया कर्ता की उस नित्यताबोधक दशा को बताती है जो कि कालावधि में सीमित नहीं होती, बल्कि विकसित होती है, और घटमान होती है, उदाहरणार्थ : क्या यहां तुम गाँव-गाँव भटके फिरते हो ! (४४, २१), हवा के पैरों पर वह उड़ा फिरता (१७, ८५)।

## (६) व्यापार का स्थैतिक पक्ष

यह पक्ष उन विश्लेषणात्मक क्रियाओं से बनता है, जो कि सरल द्वितीय कृदन्त तथा 'पड़ना' विशेषक क्रिया के मिलन से बनती हैं और मुख्यतः पुरुषवाचक क्रियार्थक रचनाओं में आती हैं।

ये पक्ष-सम्बन्धी क्रियाएं परिणामी दशा को बतातीं हैं जो कि पूर्ववर्ती व्यापार के कारण उत्पन्न होती है। परिणामी दशा नित्यताबोधक नहीं, बल्कि स्थैतिक होती है। 'पड़ना' क्रिया के साथ आम तौर पर अकर्मक सरल द्वितीय कृदन्त आते हैं, उदाहरणार्थ : उसने होंठ बन्द करने का प्रयत्न किया, परन्तु स्वभावानुसार दाँत निकले पड़ते थे (७५, ७६), वे आँखें अब फटी पड़ती थीं (१०३, ५५४), वे इच्छाएं...बँधे पानी की भाँति राह पकड़ उबली पड़ती थी (६९, १०५), भारत के इतिहास के पन्ने उन गरीबों के लहू से लाल हुए पड़े हैं (३२, १२६),...हमीद का कमरा पत्र-पत्रिकाओं और पुस्तकों से अटा पड़ा था (१७, १५७), भक्तों से मन्दिर भरा पड़ा है (१११, ३०)।

अविधेय रचनाओं में ये पक्ष-सम्बन्धी क्रियाएं मुख्यतः कृदन्तों के रूप में आती हैं जो कि नियमित तौर पर अपने को प्रकट करते हैं, उदाहरणार्थ : ...बाहर को निकली पड़ती बड़ी-बड़ी कौड़ियों-सी आँखों के पपोटे भारी हो गये हैं (१७, ९९), इच्छा हुई कि नज़दीक में सोये पड़े साथियों को भी जगा दे (४९, ११)।

अगर मुख्य क्रिया सकर्मक होती है तो वह द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त के रूप में आती है, हालाँकि ऐसी क्रियाएं बहुत ही कम प्रयोग में आती हैं, उदाहरणार्थ : यह आदत डाले नहीं पड़ती है (११६, ८३)।

'पड़ना' विशेषक क्रिया जब गति या स्थानान्तरण की क्रिया के साथ आती है तो वह व्यापार के घटमानपूर्ण परिणामी पक्ष के अर्थ में आती है। इसका कारण यह है कि 'पड़ना' का अर्थ 'गिरना' भी है, उदाहरणार्थ : पानी (ओले) पड़ना। इस अर्थ में 'पड़ना' क्रिया इस बात का संकेत करती है कि मुख्य क्रिया का शुरू हुआ व्यापार संतत है, उदाहरणार्थ :...जी क्यों बीच में कूदे पड़ते हो (६६, ३८), खुशी प्रभा के रोम-रोम से फूटी पड़ रही थी (१०८, १७७), ...जब कि दूसरों के लिए क्रोध उमड़ा पड़ता था (१६६, ७३),...जब कि आकृति पद उल्लास फूटा पड़ता था (१३, ७२)।

जैसा कि दिये गये उदाहरणों से विदित है, इस अर्थ में 'पड़ना' क्रिया काल के अपूर्णतावाची तथा संतत रूपों में आती है, जैसा कि 'जाना' क्रिया व्यापार के घटमानपूर्ण प्रकार में आती है।

## (७) व्यापार का संभाव्य पक्ष

यह पक्ष विश्लेषणात्मक क्रियाओं द्वारा व्यक्त होता है जो कि धातु क्रिया और 'सकना' क्रिया के मेल और क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु तथा 'पाना' क्रिया के मेल से बनती हैं। ये पुरुषवाचक और अविधेय क्रियार्थक रचनाओं में आती हैं। 'सकना' और 'पाना' क्रियाएं काल और प्रक्रिया की अपूर्ण रूपतालिका रखती हैं : 'सकना' क्रिया संतत काल रूपों में नहीं आती, और 'पाना' क्रिया कर्मवाच्य में नहीं आती और सिर्फ़ कर्तृवाच्य की कर्तृ-सम्वन्धी रचना में आ सकती है, उदाहरणार्थ : खड़ी बात कह सबसे सकता हूं (६१, ६३), अब तक वह मजबूर थी, कहीं आ-जा न सकती थी (६५, ७०), अनवर साहब उन्हें हटा देना चाहते हैं, लेकिन हटा नहीं पाते (१, ५२६),...चल पड़ने की इच्छा को वह रोक पायी (१०७, ११२)।

शब्दार्थक तौर पर 'सकना' तथा 'पाना' विशेषक क्रियाएं इसमें भिन्न हैं कि 'सकना' क्रिया पुरुष के सामर्थ्य को व्यक्त करती है जो कि पुरुष की शारीरिक, उसकी दिमागी, उसके ज्ञान की संभावनाओं आदि द्वारा प्रतिबंधित होता है। 'पाना' क्रिया लक्ष्य की प्राप्ति को व्यक्त करती है या सोचे हुए व्यापार की पूर्णता का परिणाम। निषेधात्मक वाक्यों में वे व्यापार सम्पन्न करने की अयोग्यता या दिये गये लक्ष्य की प्राप्ति की अयोग्यता को व्यक्त करती हैं, उदाहरणार्थ :

| सकना | पाना |
| --- | --- |
| तुम मुझे ऐसी स्त्री मालूम होती हो जिससे आदमी बोर हुए बिना दस मिनट तक बात कह सकता है (३०, ४२), | ...और जब उसका श्वास ठीक चलने लगता तब कहीं वह उससे बात कर पाता (३०, १०८), |
| ...स्त्री भुलाने पर भी कुछ भूल नहीं सकती (३०, ५४)। | भूलना चाहती हूं, भूल नहीं पाती (३०,५२)। |

दोनों विशेषक क्रियाओं के बीच अंतर विशेष कर तब प्रकट होता है, जब दोनों क्रियाएं एक ही वाक्य में या एक ही विचारखंड में आती हैं, उदाहरणार्थ : अपनी ज़िन्दगी में इतनी सुबह उठने की कभी कोशिश मैंने नहीं की। उठ नहीं सकता ऐसी तो कोई बात नहीं, लेकिन उठ नहीं पाता था इसलिए कि दो-ढाई बजे रात के पहले कभी सोने का मौका नहीं मिलता था (५६, १०२), इन नेत्रों से क्या मैं इस तस्वीर को नहीं देख सकता ? संभव है देख लो, संभव है न देख पाओ... (३०, ६४)।

'सकना' क्रिया इसके अलावा योग्यता (अयोग्यता) को व्यक्त करने के लिए आ सकती है, जो कि परिस्थितियों के संयोग के कारण उत्पन्न होती है, उदाहरणार्थ : अब न हिन्दुस्तान वाले पाकिस्तान जा सकते हैं और न पाकिस्तान वाले यहाँ आ सकते हैं (३०, १६),...पर अँधेरे में अख़बार नहीं पढ़ सकता था (१२०, ३८)।

'पाना' क्रिया 'सकना' क्रिया के समान अर्थ में भी आ सकती है, उदाहरणार्थ : रेणु को ज़रा-सी बात पर इतना पीटा था कि वह कई दिन तक पढ़ने को न आ पायी थी (१२, ६६)।

अविधेय रचनाओं में ये पक्ष-संबंधी क्रियाएं कृदन्तों के रूप में आती हैं जो 'वाला' रूपिम के साथ आते हैं या तुमर्थ क्रिया के रूप में आती हैं। कृदन्तपरक रूप में ये क्रियाएं विशेषण की हैसियत से आती हैं, और तुमर्थ क्रिया के रूप में कर्म और उद्देश्य की हैसियत से, उदाहरणार्थ : खेती के अन्तर्गत लायी जा सकने वाली भूमि भी सीमित थी (II, २६-११-१९६७, ८१),...न सो पाने वाले अपने पति को स्नेह से थपक कर वह सुला देती है (९, २४), क्या...वह रुपया उससे ले सकना संभव होगा ? (९६, ८३),...उसे कहानी में ला पाना बड़ा मुश्किल लगता था (१३, १७९),...उसने लायलपुर जाकर ही यंत्र बना सकना संभव बताया (९७, ६४)।

'सकना' क्रिया ही आधुनिक हिन्दी में एकमात्र क्रिया है जो स्वतंत्र रूप से प्रयोग में नहीं आ सकती। 'सकना' क्रिया के प्रतीयमान स्वतंत्र प्रयोग के अवसर, उदाहरणार्थ : तब मैंने अपने आप से प्रश्न किया था—'सकोगे ?' और मैंने स्वयं

उत्तर दिया था—'सकूंगा।' ...और मैं सका ! (८, ७१), वास्तव में विश्लेषणात्मक वाक्यांशों के अंश-विभाजन के उदाहरण होते हैं, जिनमें मुख्य क्रिया पूर्ववर्ती (अनुवर्ती) वर्णन में प्रयोग होती है और जिसको प्रसंग में से आसानी से लिया जा सकता है।

## (८) व्यापार का प्रभावी पक्ष

यह पक्ष विश्लेषणात्मक क्रियाओं द्वारा व्यक्त होता है जो कि धातु क्रिया (कालक्रमिक दृष्टि से तृतीय क्रियाविशेषण कृदन्त) तथा 'चुकना' क्रिया के रूपों के मिलन से बनती हैं और पुरुषवाचक तथा अविधेय रचनाओं में आ सकती हैं। 'चुकना' क्रिया की काल-प्रक्रिया की अपूर्ण रूपतालिका होती है। वह मुख्यतः वर्तमान तथा भूतकाल के पूर्णतावाची रूपों तथा भविष्यत् काल के रूपों में प्रयोग होती है, लेकिन काल के संतत रूप में कभी भी प्रयोग नहीं हो सकती।

ये पक्ष-संबंधी क्रियाएं इस बात का संकेत देती हैं कि व्यापार जो कि मुख्य क्रिया द्वारा व्यक्त हुआ है, पूर्ण हो चुका है। उदाहरणार्थ: हूणों का जिक्र हम पहले कर चुके हैं (२, ६८), मैं ऐसे कितने ही मुकदमे देख चुकी (६६, ५), तारो और कीथू तब तक अपने स्कूलों को जा चुके होते थे (१, ५७०), गोरेलाल भोजन कर चुके होंगे (६६, १३६)।

'चुकना' विशेषक क्रिया एक ही समय में दो धातुओं से संबंध रख सकती है, उदाहरणार्थ : हमारे देश में अतिथि-सत्कार की जो परम्परा चली आती है, वह हमारे जन-जीवन के संस्कारों में रच-बच चुकी है (१४२, ४३)।

अविधेय रचनाओं में यह पक्ष-संबंधी क्रिया कृदन्त (द्वितीय कृदन्त, आम तौर पर) के रूप में और तुमर्थ क्रिया के रूप में आती है। कृदन्त विशेषण की हैसियत से आता है और तुमर्थ क्रिया क्रियाविशेषण की हैसियत से और क्रियार्थक विधेय के संयुक्त घटक की हैसियत से, उदाहरणार्थ : मैंने जल चुकी सिगरेट को रखा (५६, १४६), प्रस्तुत पुस्तक का उद्देश्य यह है कि इन प्रश्नों तथा पहले प्रस्तुत किये जा चुके प्रश्नों का विश्लेषण किया जाये (१४५, ५-६), देवताओं के पी चुकने के बाद शायद उनकी बारी आये (८४, २३), बहुत कुछ निरुद्देश्य घूम चुकने पर हम सड़क के किनारे की बेंच पर बैठ गये (४४, ३४), अब तक यह स्पष्ट हो चुका होना चाहिए कि...(IV, १७-६-१९७३)।

जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, 'चुकना' क्रिया के साथ कालक्रमिक दृष्टि से धातु नहीं, बल्कि तृतीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त आता है जो कि निम्नलिखित उदाहरणों द्वारा प्रमाणित होता है : चाय पीकर चुके ही थे कि फिर जीप के आकर रुकने की आहट हुई (१४७, ८०), अभी तो तबीयत ख़राब होकर चुकी है (१०६, ५७), परन्तु श्यामा को टाइफाइड होकर चुका था (११२, ५५),...

अभी-अभी कुछ कहा-सुनी होकर चुकी है (१०६, १०६), हालाँकि इसको आधुनिक हिन्दी में कालदोषी कह सकते हैं चूँकि मानक धातु का प्रयोग है जो कि विशेषकर स्पष्टत: इस पक्ष संबंधी क्रिया के अविधेय रूपों और कर्मवाच्य के पुरुषवाचक रूपों के प्रयोग में प्रकट होता है। ऐसे उदाहरण यह प्रमाणित करने की संभावना प्रदान करते हैं कि 'चुकना' क्रिया के साथ शुद्ध-धातु नहीं, बल्कि क्रियाविशेषण धातु आती है।

'चुकना' क्रिया स्वतंत्र रूप से भी प्रयोग में आ सकती है, पुरुषवाचक रचनाओं में भी तथा अविधेय रचनाओं में भी, उदाहरणार्थ : मराठों की सेना की रसद चुकती जा रही थी (४७, २२), घर में काफ़ी हो-हल्ला चुकने के बाद इस ओर से लोगों को समझौते का भाव धारण करना पड़ा (१०८, ६७), और मैंने जीवन की सारी चुकी सामर्थ्य बटोर, बच्चे को श्यामू की गोदी से ले लिया था (११६, ४२)।

## (९) व्यापार का अभ्यासबोधक पक्ष

यह पक्ष उन विश्लेषणात्मक क्रियाओं द्वारा व्यक्त होता है जो कि कृदन्तपरक संज्ञाओं, जो कि रूप में पुल्लिग, एकवचन सरल द्वितीय कृदन्त के समान हैं तथा 'करना' क्रिया के मेल से बनती हैं। ये अक़सर पुरुषवाचक रचनाओं में आती हैं। 'करना' क्रिया के काल-प्रक्रिया की पूर्ण रूप तालिका होती है, हालाँकि काल और अर्थ के अपूर्णतावाची रूपों में अक़सर आती है और व्यावहारिक तौर पर संतत रूपों में नहीं आती। यह बात कि 'करना' क्रिया के साथ कृदन्तपरक संज्ञा आती है, लेकिन कृदन्त नहीं, निम्नलिखित उदाहरणों से प्रमाणित हो जाती है : मैं थोड़ी देर बैठी रहा करूँगी (६५, २३०), हम इकट्ठे खेला करते थे (१३, ३६), वह मिस बुड के ख़ाली कमरे में चोरी-छुपके सोने चली जाया करती थी (५२, ६६)।

ये पक्ष-संबंधी क्रियाएं उस व्यापार को व्यक्त करती हैं जो कि आवर्ती होता है या आंतरायिक होता है जो कि अभ्यासता और नियमितता से जटिल हो जाता है, उदाहरणार्थ : पुस्तकालय क्यों नहीं चले जाया करते ? (६५, ५), जब महाराज रहा करते थे, वह महल में हवा करने जाया करता था (१४७, ४८),...उसने यही फ़ैसला किया था कि वह उसके घर बहुत कम जाया करेगा (७३, ७६), अभागिनी को ज़रूर याद कर लिया करना (६६, ६), साँपों से पहले भले ही डरा करती होऊँ अब तो रमा डर नहीं लगता (१०८, १४२), सुबह तक बेइख़्तियार रोया किया और आँसुओं से मुँह धोया किया (२४, ६४), इस खेल में हम केवल हारा किये (१३६, ७४)।

अविधेय रचनाओं में ये क्रियाएं बहुत कम आती हैं, मुख्यत: कृदन्त के रूप में आती हैं, उदाहरणार्थ : इस अचानक मुसीबत से रात-दिन रोया करता चालीस

दिन ज्यूँ-त्यूँ करके कटे (२४, १४)।

'करना' विशेषक क्रिया एक ही समय दो कृदन्तपरक संज्ञाओं से संबंध रख सकती है, उदाहरणार्थ : उस ज़माने में मैं कृष्ण और बेदी एक दूसरे को अपनी कहानियां सुनाया और उनके बारे में वाद-विवाद किया करते थे (९, १६)।

## (१०) व्यापार का अवधारण पक्ष

यह पक्ष विश्लेषणात्मक क्रियाओं द्वारा व्यक्त होता है जो कि क्रियाविशेषण धातु और १६ विशेषक क्रियाओं के मेल से बनती हैं (विशेषक क्रियाएं—'आना', 'जाना', 'लेना', 'देना', 'रखना', 'रहना', 'पड़ना', 'उठना', 'बैठना', 'डालना', 'निकालना', 'चलना', 'मरना', 'मारना', 'छोड़ना', 'ले जाना')। इनमें से ज़्यादातर पुरुषवाचक तथा अविधेय क्रियार्थक रचनाओं में आ सकती हैं। उल्लेखित विशेषक क्रियाएं काल-प्रक्रिया की पूर्ण रूपतालिका रखती हैं। परन्तु वे अक्सर पूर्णता-वाची काल रूपों में आती हैं। यह कहना उचित रहेगा कि ये पक्ष-संबंधी क्रियाएं बहुत ही कम निषेधात्मक वाक्यों में आती हैं।

विशेषक क्रियाएं मुख्य क्रिया के व्यापार में विभिन्न अतिरिक्त छायाएं दे सकती हैं, व्यापार के होने की प्रकृति तथा उसकी पूर्णता के विभिन्न स्तर की ओर संकेत दे सकती हैं। 'आना', 'जाना', 'देना', 'लेना' क्रियाएं इन सबमें सबसे ज़्यादा प्रचलित हैं और विशेषक अर्थ में सामान्य होती हैं। ये क्रियाएं व्यापार की शुद्ध परिणामिकता की ओर संकेत करती हैं। बाकी विशेषक क्रियाओं का क्रिया-विशेषण कृदन्त-धातु के साथ का मिलन दोनों संयुक्त घटकों के अर्थ के सामान्य झुकाव से निर्धारित किया जाता है एवं प्रचलित भाषिक प्रयोग द्वारा भी, चूँकि कालक्रमिक दृष्टि से ये पक्ष-संबधी क्रियाएं दो पृथक्कृत क्रियाएं होती हैं (तृतीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त तथा समापक क्रिया)। ये अधिकाधिक स्पष्टत: व्यापार की विभिन्न अर्थगत छायाओं को व्यक्त करने का प्रयास करती रहती थीं जो कि आधुनिक हिन्दी में शब्द-रचनात्मक क्रियार्थक पूर्वप्रत्ययों के अभाव के कारण होता था। आज काल में व्यापार जो इन क्रियाओं द्वारा व्यक्त होता है, संलीन प्रतीत होता है : क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु मुख्य अर्थगत भार देती है और विशेषक क्रिया समस्त व्याकरणिक भार अपनाती है, और व्यापार के होने की प्रकृति और उसकी पूर्णता की ओर संकेत करती है, हालाँकि तृतीय क्रिया-विशेषणात्मक कृदन्त आज तक प्रयोग में आता है :

एक किस्सा आँखों के आगे उभरकर आता है (१०७, ३२),

...उनके माथे पर बल उभर आये (१०७, ४८),

...मैंने शरणार्थी कैम्पों की रिपोर्ट लिख

मैंने अपनी सारी जायदाद अपने भतीजे

कर दी थी (१, ३००), जुम्मन के नाम लिख दी थी (६१, १५५),
मैं सामान लेकर जाता हूं (६६, २१), ...जूते भी वे लोग ले गये (६६, ८२),
...उन्होंने...शकुन्तला जी को लेकर आने...का वचन ले लिया (१०, ७३)। ...वे उसे ले आये (१०, १०४)।

एक ही विशेषक क्रियाओं का प्रयोग करने की नियमितता, मुख्य तथा विशेषक क्रिया के व्यापार की संलीनता ने इस पक्ष-संबधी क्रियाओं के अनेक व्याकरणिक गुणों को बनाया है।

पहले तो, जैसा कि ऊपर लिखा गया था कि वे निषेधात्मक वाक्यों में बहुत ही कम प्रयोग होती हैं।

दूसरे तो यह कि एक विशेषक क्रिया एक समय में ही दो या ज़्यादा क्रिया-विशेषणात्मक कृदन्त-धातुओं के साथ प्रयोग हो सकती है, जो कि एकमूलीय, पर्यायवाची और भिन्नार्थक क्रियाओं से बनती हैं, उदाहरणार्थ :...तो ठीक है, कुछ कर करा लो (१०७, १२७), उसने फिर पत्रिका निकालकर पूरी उलट-पुलट डाली (५२, १८), यहाँ वह थक-हार जाने की स्थिति की पहचान थी ? (V, जनवरी, १९६३, ८१),...मुझे शीघ्र ही समझा-सिखा दिया (१४२, २६)।

तीसरा यह कि अगर इन पक्ष-संबंधी क्रियाओं के संयुक्त घटकों में से एक अकर्मक होता है तो वे पूर्णतावाची काल रूपों में सिर्फ़ कर्तृ-संबंधी रचना बनाती हैं, उदाहरणार्थ :

| **प्रथम अकर्मक** | **द्वितीय अकर्मक** |
|---|---|
| मैं तुरैया के साथ चल दिया (६६, १९६), | ...नये रिवाज़ भी चलन पा गये थे (२, ८७), |
| मैं उसके पीछे लग लिया (२४, १३९)। | ...बरौज देख आया कि बस्ती में एक ही बंगला और है (३६, १२८)। |

इन पक्ष-संबंधी क्रियाओं और 'आना', 'जाना' क्रियाओं से बनी क्रिया-विशेषणात्मक कृदन्त-धातुओं के उन स्थिर शाब्दिक पदबंधों के बीच अंतर जानना चाहिए जो विभिन्न अकर्मक तथा सकर्मक क्रियाओं के साथ आते हैं और अपनी शाब्दिक और व्याकरणिक स्वतंत्रता नहीं खो बैठते। उदाहरणार्थ, यह बात पूर्णतावाची काल रूपों में तब प्रकट होती है जब वे कर्म-संबंधी या भाववाचक रचनाओं में आते हैं, उदाहरणार्थ : हमने आगे जाने वाली बस को जा लिया था (९, ११९), रास्ते में लड़कों को बुख़ार ने आ दबाया (७, ३३), डाकुओं ने उन्हें आ घेरा (१७, ४७),...राजपूत योद्धा भी...अपने-अपने मोर्चों पर जा जमे...लोग निर्धारित मोर्चों पर जा डटे। धीरे-धीरे अमीर की सेना का सारा भार मध्य द्वार

पर आ जमा (४, १५२)।

इन पक्ष-संबंधी क्रियाओं और उन क्रियाओं के दूसरे पदबंधों के बीच अंतर जानना चाहिए जो कि क्रियाविशेषण कृदन्त-धातु के रूप में आती हैं चूँकि उन्होंने भी अपनी शाब्दिक स्वतंत्रता नहीं खोयी, उदाहरणार्थ : विज्ञान ने कैसा करिश्मा कर दिखाया है ! (६६, १३), ...कब नींद ने मुझे धर दबाया ज़रा भी मुझे याद नहीं (६६, २००), मेरी माँ को मेरा बाप अपने कंधे पर उठा लाया (६६, २००)।

ये संयुक्त पदबंध निषेधात्मक वाक्यों में भी आ सकते हैं, उदाहरणार्थ : ...मैं किसी के साथ निकल तो नहीं भागी (५६, १५)।

१६ विशेषक क्रियाओं में हर एक मुख्य क्रिया को अपनी छाया देती है, इसीलिए हर एक क्रिया के बारे में अलग से वर्णन करना ज़रूरी है।

(१) **'आना' विशेषक क्रिया** निम्नलिखित स्थितियों में प्रयोग होती है :

(१) अपने अर्थ को सुरक्षित रखकर—जबकि व्यापार की दिशा वक्ता की ओर होती है और व्यापार की पूर्णता पर बल होता है, उदाहरणार्थ : फिर, उसकी टहनियों पर उभरा हुआ-सा कुछ निकल आता है (५०, ६४), ...लेकिन आधे रास्ते से लौट आया (७३, १८८), पालसिंह...घर से निकल आया (७५, ५३), घोषणा होने पर विमान में चढ़ आये (६६, २५), ...आँखों में आँसू भर आये (६६, १६६)।

कुछेक हालत में पक्ष-संबंधी क्रिया संयुक्त रचना के साथ अपना शेष संबंध सुरक्षित रखती है, उदाहरणार्थ : ...उसे अपनी कोठरी में रख आया (६६, १२७),...बाप उसे अथाह पानी में डाल आया (४६, २५), दो साल विलायत रह आया हूँ (७३, १७२), इस जगह तो मैं कई बार हो आया हूं (६६, १६५), रावत दो महीने जेल भी हो आया था (४६, ८२), मैं मिस्टर स्टिवनसन के साथ चाय पी आयी थी (३६, ५४)।

(२) आंशिक तौर पर या पूर्ण रूप से अपना अर्थ खो बैठती है, जब व्यापार की परिणामी पूर्णता व्यक्त की जाती है, उदाहरणार्थ : बरौज देख आया कि बस्ती में एक ही बंगला और है (३६, १२८), जाकर माँ से पहले कह आओ कि मैं आ रहा हूं (५६, ४३), राजकुमारी रुआँसी हो आयी (१०७, ८२), प्रभा पिछली साँझ ही लीला के साथ फ़िल्म देख आयी थी (६६, ६५), कभी-कभी चित्त मेरा बुरा हो आता है (४४, ७०),...वह रोने को हो आया...(४४, ५३)।

अविधेय रचनाओं में पक्ष-संबंधी क्रिया विशेषक क्रिया 'आना' के साथ मुख्यतः कृदन्तों के रूप में आती है, उदाहरणार्थ : बाहर निकल आया आदमी... बोला (६६, ४७), डबडबा आयी आँखों को ऊपर उठाकर...(५६, ६८),...चेतन की निगाहें उनकी नाक के दोनों ठोड़ी तक खिच आने वाली लकीरों पर अटक गयीं...(१७, १०६)।

जैसा कि उदाहरणों से विदित है 'आना' क्रिया सकर्मक तथा अकर्मक क्रियाओं के साथ आती है।

(२) **'जाना' विशेषक क्रिया** निम्नलिखित स्थितियों में आती है :

(१) अपना अर्थ सुरक्षित रखती है—जब व्यापार की दिशा वक्ता की ओर से होती है और व्यापार की परिणामिकता पर ज़ोर होता है, उदाहरणार्थ : इसलिए हम अपना सारा सामान उसी में छोड़ गये थे (६६, २५), देखिये वही औरत यह सोने की तावीज़ दे गयी है (६६, २००), ...जब नाज़ी फ़ौजें लौट गयीं...(६६, ३८)।

(२) अपने अर्थ को पूर्णत: खो बैठती है, जब व्यापार का परिणाम या पूर्णता व्यक्त करना होता है, उदाहरणार्थ : बूढ़ा मेरे पास आ गया (१०३, १२३), विचारों का ताँता टूट गया (६६, २४), वसन्त ऋतु के आते ही यह फूलों से लद जाता है (५०, ६४), ...वह समय पर मिल गया (६६, ६), सभी लोग.. आकर पी जाते थे (६६, ३७), उसे लकवा मार गया (२, १२२)।

अविधेय रूपों में पक्ष-संबंधी क्रिया 'जाना' विशेषक क्रिया के साथ कृदन्तों या तुमर्थ क्रिया की हैसियत से आती है। कृदन्त की हैसियत से यह वाक्य में क्रिया-विशेषण के रूप में आती है-जैसे : पीले पड़ गए बेला के फूल का हार अब भी मौजूद था (६६, ८६), घुन की भाँति भीतर-ही-भीतर खा जाने वाली वेदना (७५, १०५)। तुमर्थ क्रिया की हैसियत से वह वाक्य में निम्नलिखित प्रकार्यों में आ सकती है : (क) उद्देश्य—...जैसे, टाँग का कट जाना हर रोज़ की बात थी (३०, ११३); (ख) कर्म—मैं...लिखने बैठ जाना चाहता था (१, ५३); (ग) विशेषण—अब सिर्फ़ मर जाने का उत्साह मेरे मन में है (१४३, १८); (घ) क्रियाविशेषण—दल के भंग हो जाने पर मुझसे आज़ाद ने कहा...(६७, ११८)।

'जाना' क्रिया 'आना' क्रिया की अपेक्षा सकर्मक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्तों-धातुओं से मेल अधिक खाती है, उदाहरणार्थ : वह बात को ताड़ गये (६६, १६२), समझ गया, औरत पैसे न लेगी (६६, २८), ...मैं धीरे-धीरे अपनी सब मुसीबतें भूल गया (६६, १६७-१६८), एक बार पराया धन लेकर सीख गया (६६, १४१), अब उसे लगा कि वह गलती कर गया है (१०३, २२६)।

'जाना' क्रिया जब उस क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु से मेल खाती है जो दशा को व्यक्त करती है, तो वह प्रक्रियात्मक परिणाम या व्यापार की पूर्णता की छाया देती है। यह बात काल के पूर्णतावाची रूपों में विशेषकर अच्छी तरह प्रकट होती है :

| पक्ष-रहित क्रिया | पक्ष-संबंधी क्रिया |
|---|---|
| सुखराम घायल लेटा है (१०३, २१६) | दोनों अपने-अपने बिस्तर में...लेट गये (६६, २१), |
| कजरी बैठी है पास (१०३, २१६), | सरदार साहब और मैं कुर्सियों पर बैठ गये (६६, १८६), |
| पराये मर्दों के संग सोयी हूं (१०३, १४१), | बल्लू भीतर सो गया था (६६, २०), |
| वही...होटल में ठहरे हैं न? (६६, १०८)। | इक्का सड़क पार जाकर ठहर गया (६६, १४०)। |

प्रक्रियात्मक परिणाम या व्यापार की पूर्णता की छाया के अलावा 'जाना' विशेषक क्रिया व्यापार की एकलता की छाप देती है। यह बात भी सबसे ज़्यादा स्पष्टतः काल के पूर्णतावाची रूपों में प्रकट होती है।

| पक्ष-रहित क्रिया | पक्ष-संबंधी क्रिया |
|---|---|
| मैंने तो सुना है कि अभी सिर्फ़ दिल्ली ही में रेडियो स्टेशन खुला है (१७, १६६), | नहीं इसी जनवरी से लखनऊ में भी खुल गया है (१७, १६६), |
| कुँवर साहब पलंग पर लेटे थे (६६, १११), | लाचार, बेचारे गाड़ी पर ही लेट गये (६६, १६१), |
| मैं सारी रात जागा हूं (५४, ४६) | वह जैसे जाग गया (१०३, ३६४), |
| ...कई बार मैं मरते-मरते बचा (६६, १८६)। | बच गये—राजा ने कहा (१०३, ३८७)। |

अपूर्णतावाची काल रूपों में जितनी भी 'जाना' क्रिया की छायाएं गिनवाई गयी हैं, वे सब थोड़ी अप्रकट हो जाती हैं, सिर्फ़ व्यापार की पूर्णता की छाया ही ज़्यादा स्पष्ट प्रकट होती है :

| पक्ष-रहित क्रिया | पक्ष-संबंधी क्रिया |
|---|---|
| फिर अंडे के आकार के छोटे फल आते हैं (५०, ५४), | अप्रैल-मई में फल आ जाते हैं (५०, ६५), |
| फ़रवरी से अप्रैल तक फल पकते हैं (५०, ३४), | एक महीने में इसके फल पक जाते हैं (५०, २३), |
| उसके सिर पर बड़े-बड़े पत्ते निकलते हैं, (५०, ५०)। | ...इसका मूल बाहर निकल जाता है (५०, ५१)। |

कुछ स्थितियों में 'जाना' विशेषक क्रिया क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त धातु को अतिरिक्त छाया प्रदान नहीं करती, और पक्ष-संबंधी क्रिया पक्ष-रहित क्रिया के साथ-साथ प्रयोग होती है, उदाहरणार्थ : हरनाम मरा, धूपो मरी, रुस्तम खां मरा, बाँके मर गया, और दीवान भी मर गया ! (१०३, ४५६), अगली बस अचानक रुकी तो हमारी भी रुक गयी (६, ११६)।

(३) **'लेना' विशेषक क्रिया** जब क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु से मिलती है तो अपना अर्थ व्यावहारिक तौर पर खो बैठती है और मुख्य क्रिया को व्यापार का परिणाम या उसकी पूर्णता का अर्थ कर्तृगामी छाया के साथ देती है, अर्थात् यह संकेत देती है कि व्यापार की दिशा कर्ता की ओर है, उदाहरणार्थ : उसने सिंध नदी के पश्चिम का सारा देश छीन लिया और उन्हें अपने साम्राज्य में मिला लिया (२, १६५),...पेटियां बाँध लीजिये (६६, ११),...बंदूक उसके हाथ से छीन ली (६६, १७६), ...तुम इस प्रश्न को...अपने ही हृदय से पूछ लेतीं (६६, ६४), उसका जवाब मैं दे लूँगा (६५, ८५), मैं उसके पीछे लग लिया (२४, १३६)।

जैसा कि दिये गए उदाहरणों से विदित है 'लेना' क्रिया सकर्मक तथा अकर्मक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातुओं से मिलती है। परंतु बहुधा यह क्रिया सकर्मक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातुओं से मिलती है।

'लेना' क्रिया अपनी क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु से मिल सकती है, उदाहरणार्थ : ये दोनों मैंने पहले ही ले लिए थे (६६, १०)।

अविधेय रूपों में यह पक्ष-संबंधी क्रिया मुख्यत: तुमर्थ क्रिया के रूप में आती है जो कि वाक्य में निम्नलिखित प्रकार्यों में आ सकती है : (क) उद्देश्य—मेरा कंगन पहन लेना बहू को अच्छा नहीं लगा...(६५, ६५); (ख) कर्म—...बुढ़िया ने अपनी डलिया छीन लेनी चाही (४४, ८०); (ग) विशेषण—शत्रु ने काबू कर लिए जाने की ख़बर पकड़...लौट आया (६७, १२); (घ) क्रियाविशेषण—इन्द्रपाल के स्वीकार कर लेने पर दिल्ली से मथुरा जाने वाली सड़क पर गये (६७, ४७)।

(४) **'देना' विशेषक क्रिया** भी जब क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु से मिलती है तो अपना अर्थ खो बैठती है और मुख्य क्रिया को व्यापार के परिणाम या पूर्णता की छाया देती है। तब यह क्रिया इस बात का संकेत देती है कि व्यापार की दिशा कर्ता की ओर से है, उदाहरणार्थ : स्कन्द्रगुप्त ने उनको भी हरा कर भगा दिया (२, ६८), ...हम लोगों ने कमर से पेटियां खोल दीं (६६, ११), जुम्मन पर अपना घर छोड़ देते थे (६६, १५२),...नहीं तो यह इसे खो देगा (६६, २०)।

जैसा कि दिये गये उदाहरणों से विदित है, विशेषक क्रिया अपने मुख्य अर्थ में आम तौर पर सकर्मक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातुओं से मिलती है।

'देना' क्रिया जब अकर्मक क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातुओं से मिलती है

जो वह सिर्फ़ व्यापार के परिणाम या पूर्णता की ओर संकेत देती है, उदाहरणार्थ : वह भी रो दिया (१०३, ४६०), वह मन-ही-मन हँस दिया (१७, ३६४), मैं तुरैया के साथ साथ चल दिया (६६, ४६)।

काल के अपूर्णतावाची रूपों में 'देना' क्रिया की सारी छायाएं थोड़ी अप्रकट हो जाती हैं :

| **पक्ष-रहित क्रिया** | **पक्ष-सम्बन्धी क्रिया** |
|---|---|
| इन्हें बारहमासी कहते हैं (५०, १५), | छोटे बाघ को लैपर्ड और बड़े को पैंथर कह देते हैं (१५०, २७), |
| ...ये बहुत देर में बड़े होकर फल देते हैं (५०, ५०), | क़लमी अमरूद दो वर्षों में ही फल दे देते हैं (५०, २२), |
| बाघ...मारने की ख़ातिर ही मरता है (१५०, २६)। | बड़ा बाघ तो भैंस को मार देता है (१५०, २६)। |

'देना' क्रिया अपनी क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु से मिल सकती है, उदाहरणार्थ : उसने किस तरह सब कुछ दे दिया है (६६, २३)।

अविधेय रूपों में यह पक्ष-सम्बन्धी क्रिया तुमर्थ क्रिया के रूप में आती है जो कि वाक्यों में निम्नलिखित प्रकार्यों में आ सकती है : (क) उद्देश्य—...आदमी की मौत...कह देना एक भारी अपराध लगता है (११६, ३७); (ख) कर्म—...पिस्तौल भगवती भाई ने आत्म-रक्षा के लिए मुझे सौंप देनी चाही (६७, २२); (ग) विशेषण—वैश्यों को नगर से बाहर निकाल देने का प्रस्ताव स्वीकृत हो जायेगा (७२, १७१); (घ) क्रियाविशेषण-—...बिजली बुझा देने के बाद अँधेरे में प्रभा को साँझ की पार्टी की बातें याद आने लगीं (६५, ६६)।

(५) **'रखना' विशेषक क्रिया**—जब क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु से मिलती है तो अपना अर्थ खो बैठती है और मुख्य क्रिया को व्यापार के परिणाम या पूर्णता की छाया देती है। 'रखना' क्रिया आम तौर पर सिर्फ़ सकर्मक क्रियाओं से मिलती है और इस तरह भूतकाल तथा वर्तमान काल के सिर्फ़ पूर्णतावाची रूपों में ही आती है। व्यापार जो कि मुख्य क्रिया द्वारा व्यक्त होता है, उस व्यापार से पहले समाप्त होता मालूम पड़ता है जो विशेषक क्रिया द्वारा व्यक्त होता है और व्यापार जो विशेषक क्रिया द्वारा व्यक्त होता है मुख्य क्रिया की परिणामी दशा को सुरक्षित रखता है, उदाहरणार्थ : शेख जुम्मन ने पहले से ही फ़र्श बिछा रखा था (६६, १५५), उसने पैबन्द लगे मैले-कुचैले कपड़े पहन रखे थे (१४२, ११६),...तुमने आजकल घर में यह क्या उपद्रव मचा रखा है? (६६, १४६), दुर्लभ राय ने...अमीर को दुर्गम घाटियों में फँसा रखा है (४, ११४), तूने सिर

चँढ़ा रखा है (१६३, २१७), बलूची औरतों की तरह रूमाल बाँध रखा थाँ (६६, १८७)।

'रखना' विशेषक क्रिया जब 'देखना', 'सुनना', 'कहना' आदि जैसी उक्ति और अनुभूति की क्रियाओं के साथ आती है, तो ऐसा लगता है जैसे वह वक्ता की चेतना में मुख्य क्रिया के व्यापार के लिए एक कालावधि निर्धारित करती है, अर्थात् देख रखना (देखना तथा याद रखना), सुन रखना (सुनना और याद रखनँा), कह रखना (कहना और याद रखना), उदाहरणार्थ : मैंने यह नाटक देख रखा है (१४२, ४२), उसने यह सुन रखा था कि...(१४, ६०),...उसने कई महीने पहले कह रखा था कि...(७, २५)।

'रखना' क्रिया अपनी क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु से मिल सकती है, उदाहरणर्थ : कपड़ों के ढेर के नीचे मिस पाल ने अपने बनाये हुए खाके रख रखे हैं (५२, १३७)।

अविधेय रूपों में यह पक्ष-सम्बन्धी क्रिया आम तौर पर सिर्फ़ तुमर्थ क्रिया के रूप में आती है, उदाहरणार्थ : सेठी बिना कुछ बोले उसे सामने बिठा रखना चाहता है (६६, २३)।

(६) **'रहना' विशेषक क्रिया**—क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु के मिलने से अपना अर्थ प्रायः सुरक्षित रखती है और मुख्य क्रिया को व्यापार के परिणाम या पूर्णता की छाया प्रदान करती है। 'रहना' क्रिया सिर्फ़ अकर्मक क्रियाओं से ही मिलती है, और मुख्यतः सामान्य भूतकाल के रूप में आती है। 'रहना' क्रिया अकर्मक क्रिया के साथ उन्हीं प्रकार्यों में आती है जैसा कि 'रखना' क्रिया सकर्मक क्रियाओं के साथ आती है, अर्थात् 'रहना' क्रिया मुख्य क्रिया की परिणामी दशा को सुरक्षित रखती है जिसका व्यापार विशेषक क्रिया के व्यापार से पहले समाप्त हो जाता है, उदाहरणार्थ : मिस्टर सेठ...आख़िर मुँह फेरकर लेट रहे (६६, २२),...सन्तराम मन्दिर में आने के स्थान साधु की झोंपड़ी में जाकर सो रहा (३६, ३७),...सोना भाभी को साथ लेकर उसकी माँ भी उसके साथ आ रही (१०७, ४३), बच्चे डर गये और सहमे-से चुप हो रहे (१०३, २६३), ससुरा बीच रास्ते ही में मर रहा !(६६, १६०)

अविधेय रूपों में यह पक्ष-सम्बन्धी क्रिया आम तौर पर तुमर्थ क्रिया के रूप में ही आती है, उदाहरणार्थ : ...अभी से पड़ रहना ठीक नहीं...(२४, १३), लाचार बैठ रहना पड़ा (४४, ७३)।

आधुनिक हिन्दी में इस पक्ष-संबंधी क्रिया का द्वितीय कृदन्त एक स्वतंत्र संतत कृदन्त की तरह प्रयोग में आता है, जो कि विश्लेषणात्मक काल रूपों में आता है। इस कारण यह पक्ष-सम्बन्धी क्रिया पुरुषवाचक रचनाओं में संतत कृदन्त के सामान्य भूतकाल की हैसियत से जानी जा सकती है।

(७) **'पड़ना विशेषक क्रिया**—जब क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु से मिलती है तो अपना अर्थ सुरक्षित रखती है और मुख्य क्रिया को व्यापार के परिणाम और पूर्णता की छाया प्रदान करने के अलावा व्यापार की तात्कालिकता तथा उसकी कार्यान्विति की संभावना की भी छाया देती है। यह बात वैसे हर जगह नहीं पायी जाती। जब स्थानान्तर और गति की क्रियाओं के साथ आती है तो 'पड़ना' क्रिया व्यापार की पूर्णता और परिणाम की छाया देती है जो कि विशेषकर उन क्रियाओं के बारे में स्पष्ट प्रकट होती है, जिनका अर्थ 'पड़ना' क्रिया के निकट होता है, उदाहरणार्थ : मालूम नहीं कब और कहां गिर पड़े (६६, १३६),...फल पेड़ से टपक पड़ते हैं (५०, ४४), तब लंगूर पेड़ से नीचे कूद पड़ता है और बाघ एकदम उसके ऊपर टूट पड़ता है (१५०, ३०), पतझड़ में इसके ज़्यादा पत्ते झड़ पड़ते हैं (५०, ७४)।

'पड़ना' क्रिया वही अर्थ सुरक्षित रखती है जब वह स्थानान्तर और गति की बाकी क्रियाओं के साथ मिलती है, उदाहरणार्थ : हातिम...कोह-काफ़ की तरफ़ चल पड़ा (२५, ६६), वह...घर से निकल पड़ा (६६, ४२),...हम लोग बस से उतर पड़े (६६, ३०), तुरैया...लौट पड़ी (६६, १६७), बन्दूक भी हाथ से छूट पड़ी है (६६, १७७)।

'पड़ना' क्रिया का यह प्रकार्य काफ़ी हद तक 'जाना' विशेषक क्रिया के समान है। यह बात निम्नलिखित उदाहरणों से प्रमाणित हो जाती है :

| पड़ना | जाना |
|---|---|
| मालूम नहीं कब और कहां गिर पड़े (६६, १३६), | क्या जाने कहीं गिर गये (६६, १३६), |
| पतझड़ में इसके ज़्यादा पत्ते झड़ पड़ते हैं (५०, ७४), | जाड़े के अन्तिम दिनों में सभी पत्ते झड़ जाते हैं (५०, ६४), |
| पतझड़ में इसके तमाम पत्ते गिर पड़ते हैं (५०, ४१)। | अप्रैल तक इसके सारे पत्ते गिर जाते हैं (५०, ४४)। |

'पड़ना' विशेषक क्रिया जब आन्तरिक दशा की क्रियाओं के साथ आती है तो उनको व्यापार की तात्कालिकता का अर्थ प्रदान करती है, उदाहरणार्थ : वह रो पड़ी (१०३, ७५), और स्त्रियां ठठाकर हँस पड़ीं (१०७, १८७)।

जब 'पड़ना' क्रिया 'जानना' और 'सुनना' जैसी अनुभूतिवाचक क्रियाओं के साथ आती हैं तो व्यापार की तात्कालिकता की छाया नहीं देती। ये क्रियाएं 'पड़ना' क्रिया के साथ मिलकर भाववाचक प्रकृति अपना लेती हैं, उदाहरणार्थ : ... जान पड़ता था, गिर पड़ेंगे (६६, ८६), उन्हें जान पड़ा कि...(६६, ८६), उन्हें

उनके मुँह पर उनके हृदय के समस्त भाव अंगित देख पड़ते थे (७३, १७०), उनके कानों में कुछ असाधारण शब्द सुन पड़े (४, ५८)।

ये क्रियाएं अपने इस अर्थ में 'दीख पड़ना' या 'सूझ पड़ना' जैसी अकर्मक भाववाचक क्रियाओं के समान हैं, उदाहरणार्थ : बस्ती दीख पड़ने लगी (६०, २८), कोई उपाय न सूझ पड़ता था (६६, २६७)।

'पड़ना' विशेषक क्रिया जब 'आना' क्रिया के साथ मिलती है तो मुख्य क्रिया को नकारात्मक छाया प्रदान करती है, जिसका व्यापार, कुछ हद तक, अकस्मात प्रतीत होता है, उदाहरणार्थ : कुछ ऐसा ही काम आ पड़ा है (७३, १५८), समस्या ही ऐसी आ पड़ी है (७३, ७६)।

'पड़ना' विशेषक क्रिया जब 'बनना' क्रिया की क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु से मिलती है तो व्यापार को करने की संभावना की छाया देती है, और प्रकार्य में 'पाना' संभाव्य क्रिया के निकट होती है या 'बनना' विशेषक क्रिया के निकट होती है अगर वह व्यापार के योग्यताबोधक पक्ष में आये, उदाहरणार्थ : जो बहुओं से बन पड़ता है बहुएं करतीं...(१४२, ४१), जितने रुपये हमसे बन पड़ेंगे, हम हर महीने भेज दिया करेंगे (१, ५१)।

अविधेय रूपों में यह पक्ष-सम्बन्धी क्रिया कृदन्त, तुमर्थ क्रिया और सुपाइन के रूप में आती है, उदाहरणार्थ : छत पर से अचानक गिर पड़ने वाले आदमी के सामने सारी दुनिया...चक्कर लगा जाती है...(५२, १६), जैसे वह टूट पड़ने के पहले बादल ने...श्वास खींचा था (१०३, ३००), रावत को केवल आत्म-प्रवंचना जान पड़ने लगी (६६, ८३), पानी में कूद पड़ना ऐसा क्या कठिन है (७३, १५७)।

(८) **'उठना' विशेषक क्रिया**—व्यावहारिक तौर पर क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु के साथ मिलने से अपना अर्थ खो बैठती है, और मुख्य क्रिया को व्यापार की पूर्णता और परिणाम की छाया के साथ व्यापार की तात्कालिकता की छाया भी प्रदान करती है। 'उठना' क्रिया का यह गुण सबसे ज़्यादा स्पष्ट आन्तरिक दशा की क्रियाओं के साथ मिलने से प्रकट होता है, उदाहरणार्थ : वह चौंक उठीं (१०, २०३), कुँवर साहब का हृदय काँप उठा (५६, ११७), औरतें भय से चीख उठीं (१०३, ३५४),...उसका दिल नाच उठा (७५, १६२), फिर कोई रो उठा (१०३, २१०),...ठंडी गड़गड़ाती हँसी हँस उठी (१०३, ३४२)।

तात्कालिकता की छाया स्पष्टतः तब प्रकट होती है जब वह दूसरे शब्दार्थक वर्गों की क्रियाओं के साथ आती है, उदाहरणार्थ : कुत्ता ज़ोर से भौंक उठा (६६, १८२), पापी का घर जल उठा (१०३, ३३२), सफ़ेद-सफ़ेद दाँत चमक उठे (१०३, ३५१),...दूसरे जहाज़ का भोंपू बज उठा (६६, २३), गाँव में हल्ला मच उठा (१०३, ३३२)।

जैसा कि दिये गये उदाहरणों से विदित है, 'उठना' विशेषक क्रिया मुख्यतः अकर्मक क्रियाओं के साथ मिलती है। सकर्मक क्रियाओं में से वह मुख्यतः उक्ति की क्रियाओं के साथ मिलती है, उदाहरणार्थ : बोल उठे...(६६, १५१), वह... कह उठी (१०३, २४८), जैसे वासना श्री...पूछ उठी कि (१०३, २०३)।

यह पक्ष-सम्बन्धी क्रिया अविधेय रूपों में लगभग नहीं आती, हालांकि कुछ अकेले-दुकेले उदाहरण पाये जाते हैं : भड़क उठने वाले विमल दादा को इतनी तीखी बात पर गुस्सा कोई नहीं आया (१०७, १५१)।

(९) **'बैठना' विशेषक क्रिया**—क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु के साथ मिलने से अपने अर्थ को खो बैठती है और मुख्य क्रिया को व्यापार के परिणाम और पूर्णता की छाया के अलावा मुख्य व्यापार की तरफ़ नकारात्मक सम्बन्ध व्यक्त करती है जो कि वक्ता की इच्छा के बिना हो रहा है या वक्ता जिसे अवांछनीय समझता है, उदाहरणार्थ : ऐसा मत कर बैठना विमल, नहीं तो तुम मां से कहीं ज्यादा अत्याचार भाभी पर कर बैठोगे (५६, ४२), दुर्भाग्य से मैं एक नाग औरत को रख बैठी थी (३६, ११६),...मैं अपना दिल तुझे दे बैठी (२५, ६८),...एक नौजवान...उसकी नौजवान लड़की को छेड़ बैठा (७५, ५८), मुझसे शरारत करोगे तो मार बैठूंगा (६५, ८५), आगे बढ़कर पूछ ही तो बैठी...(१०३, १८७),...उसकी हिम्मत उसका साथ छोड़ बैठी (५६, १६)।

'बैठना' क्रिया जब क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु से जो 'उठना' क्रिया से बनती है, मिलती है तो व्यापार की तात्कालिकता की छाया देती है, उदाहरणार्थ : मफ़तलाल उठ बैठा (१४३, १६), एक क्षण के बाद वह उठ बैठा (६६, ९६), कजरी बैठी हुई कुछ सोच रही थी। आवाज़ सुनते ही चौंककर उठ बैठी (१०३, १९१)।

कई बार जब 'बैठना' क्रिया 'उठना' क्रिया के साथ मिलती है तो मुख्य क्रिया के व्यापार की अपूर्णता की छाया देती है। तब यह पक्ष-सम्बन्धी क्रिया 'थोड़े उठने' या 'लेटी हुई स्थिति से उठकर बैठने' की छाया देती है, उदाहरणार्थ : सबसे छोटा सूर्यभानू चारपाई पर उठ बैठा (६६, १३७), यह सोचते हुए वह उठ बैठा, गजधर भी आग के पास पड़े हुए थे। कृष्णचन्द्र चुपके से उठे और गंगा तट की ओर चले (७३, १६२), मुकाबला कीजिये—'वह उठकर बैठ गई (१०३, ५३)' और 'तू उठकर तो बैठ...(१०३, ६६)'।

'बैठना' विशेषक क्रिया जब 'चढ़ना' क्रिया के साथ मिलती है तो अपना अर्थ सुरक्षित रखती है, उदाहरणार्थ : ...तो भूमि में धँसे हुए गन्ने के बेलन पर चढ़ बैठे और निकट ही पड़े वृक्षों के तने पर बैठ गये (७५, २४-२५), ...वह...मेरे सिर पर चढ़ बैठेगा (५६, १९)।

(१०) **'डालना' विशेषक क्रिया** जब क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु से मिलती

है तो अपना अर्थ खो बैठती है और मुख्य क्रिया को व्यापार की पूर्णता और परिणाम की छाया के अलावा व्यापार की असीम अवधारणता की छाया प्रदान करती है, जो कि व्यावहारिक तौर पर पल भर में होता है। 'डालना' क्रिया इस प्रकार्य को सबसे ज़्यादा काल के पूर्णतावाची रूपों में पूर्णत: प्रकट करती है, उदाहरणार्थ :...लेकिन 'बैंगन का पौधा' तो मैंने एक ही बैठक में लिख डाला (९, २०), ...उसी ने बच्चे को मार डाला (९९, ९९), उस छोटे सेठ की गर्दन तो मैंने मरोड़ डाली (७५, १८०), अपने प्यारे का सिर काट डाला (४, २०७), ...सड़कें, पुल, मार्ग सब तोड़ डाले (७, ६९), और चेतन ने सारी कहानी अनन्त को सुना डाली (१७, ३२), ...उसने...कमरे का हर एक कोना-अटारा देख डाला (८, २३)।

'डालना' क्रिया का यही प्रकार्य सामान्य भविष्यत् काल में भी रहता है, उदाहरणार्थ : दरवाज़ा खोलो...नहीं तो तोड़ डालेंगे (७५, ११२), नहीं तो अभी काट डालूंगा (९६, ५०), ...वह अपना ईमान बेच डालेगा (६९, १७९), तुम मुझे पागल कर डालोगे ? (६९, २०४)।

'डालना' विशेषक क्रिया काल के अपूर्णतावाची रूपों में व्यापार के करने की तात्कालिकता की छाया प्रदान नहीं करती, उदाहरणार्थ : थोड़े से स्वार्थ के लिए भाई-भाई की हत्या कर डालता है, बेटा बाप की हत्या कर डालता है (६४, २६), ...वही दाँव, जिससे पहाड़ी लोग...पेड़ की मोटी डाल एक हाथ में काट डालते हैं (९६, ४९)।

जैसा कि उदाहरणों से विदित है, 'डालना' क्रिया सिर्फ़ सकर्मक क्रियाओं के साथ आती है।

अविधेय रूपों में यह पक्ष-सम्बन्धी क्रिया बहुत कम आती है और मुख्यत: तुमर्थ क्रिया के रूप में आती है। उदाहरणार्थ : वह एक दस्ती बम ले जाकर उनको मार डालने की बात सोचता है (११६, ५६)।

(११) **'निकलना' विशेषक क्रिया** जब क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त धातु से मिलती है तो अपना अर्थ व्यावहारिक तौर पर खो बैठती है, और मुख्य क्रिया को व्यापार की पूर्णता और परिणाम की छाया के अलावा व्यापार की तीव्र शुरुआत की छाया देती है। यह बात विशेष कर स्पष्टत: काल पूर्णतावाची रूपों में प्रकट होती है, उदाहरणार्थ : ...आँखों से आँसू बह निकले (१४२, १०),...वह चोर-दरवाज़े से भाग निकला (२, ११२), दुकान चल निकली (१, १२५), पर अब तो मेरा यही नाम चल निकला है (८, १४), ...नगर-गाँव में हैज़ा फूट निकला (४, २२७)।

जैसा कि दिये गये उदाहरणों से विदित है, 'निकलना' विशेषक क्रिया मुख्यत: दिशासूचक अकर्मक क्रियाओं के साथ मिलती है।

अविधेय रूपों में यह पक्ष-सम्बन्धी क्रिया बहुत कम आती है और ज़्यादातर तुमर्थ क्रिया के रूप में आती है, उदाहरणार्थ : यहां से भाग निकलना तो असंभव था (१०३, ४३८)।

(१२) **'चलना' विशेषक क्रिया** जब क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु से मिलती है तो कुछ हद तक अपना अर्थ सुरक्षित रखती है, और मुख्य क्रिया को व्यापार की पूर्णता और परिणाम की छाया के अलावा व्यापार की तीव्र शुरूआत या सातत्य की छाया भी देती है जो कि काल के पूर्णतावाची रूपों में विशेषकर स्पष्टतः प्रकट होती है, उदाहरणार्थ : नैकस भाग चला (१०३, १७४), कार ठंडी हवा को चीरती हुई दौड़ चली (६६, १०),...वह गन्तव्य स्थान की ओर उड़ चला (६६, ११), क्योंकि सिर से खून की धारें बह चलीं (८३, १५), गीत गुंजार बनकर डूब चले...(१०३, २४१), ...आख़िर जी में मरने की टंकार मेरे साथ लग चली (२४, १२६)।

'चलना' विशेषक क्रिया जब 'होना' क्रिया के साथ मिलती है तो सिर्फ़ व्यापार की पूर्णता या परिणाम की छाया प्रदान करती है, उदाहरणार्थ : वह जोश अब ठंडा हो चला है (६६, ८६), काले बाल अब सफ़ेद हो चले (२४, ८), तुरैया की बात पर अब मुझे विश्वास हो चला था (६६, २०३)।

जैसा कि दिये गये उदाहरणों से विदित है 'चलना' क्रिया मुख्यतः दिशासूचक या स्थानान्तर की अकर्मक क्रियाओं के साथ मिलती है। सकर्मक क्रियाओं में से सिर्फ़ 'लेना' ही से वह मिलती है। उदाहरणार्थ : ...मुझे उसी ओर ले चलें (६६, १६१), उसने झपटकर मुझे अपने पंजों में दबोचा और...ले चला घोंसला की तरफ़ (१०७, २६)।

यह पक्ष-सम्बन्धी क्रिया अविधेय रूपों में द्वितीय कृदन्त या तुमर्थ क्रिया के रूप में काफ़ी कम पायी जाती है, उदाहरणार्थ : क्षण-भर के लिए वे अपनी फूल चली साँस को दम लेने के लिए रुके...(५६, २३), जड़ हो चली आँखों से वह... देखती रही...(५६, ६), कैकेयी, भरत, मंत्री तथा गुरु आदि ने राम से घर लौट चलने की प्रार्थना की...(२८, ८६), तो यहां से क्या-क्या ले चलने को आवश्यकता होगी (७३, १०५)।

(१३) **'मारना' विशेषक क्रिया** क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु के साथ मिलकर अपना अर्थ (क) सुरक्षित रख सकती है, और (ख) खो भी सकती है।

'मारना' क्रिया जब अपना अर्थ सुरक्षित रखती है तो मुख्य क्रिया को व्यापार के परिणाम या पूर्णता की छाया देती है, उदाहरणार्थ : पोघर ने खिसियाकर जूता खींच मारा (१७, ७६),...इस अत्याचारी ने मुझ पर खड़ाऊ फेंक मारी (६६, १४७),...मां ने मेरे किशोर गालों पर थप्पड़ दे मारा...(८, ७७)।

'मारना' क्रिया अपना अर्थ खोकर व्यापार के परिणाम या पूर्णता की छाया

के अलावा मुख्य क्रिया को नकारात्मक छाया देती है, उदाहरणार्थ : आपने अख़बार में यह क्या लिख मारा है? (४२, ८२), मैंने भी देवीजी को दस मन अपशब्द कह मारे (७६, ३६)।

जैसा कि दिये गये उदाहरणों से विदित है, 'मारना' क्रिया सिर्फ़ सकर्मक क्रिया के साथ मिलती है।

(१४) **'मरना' विशेषक क्रिया** जब क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु से मिलती है तो बहुधा अपना अर्थ सुरक्षित रखती है और मुख्य क्रिया को व्यापार की पूर्णता तथा परिणाम की छाया प्रदान करती है, उदाहरणार्थ : ...जो प्रथम विश्वयुद्ध में गाजर-मूली की तरह कट मरे (१४२, ११५), स्त्रियां अपनी मानरक्षा के लिए कभी-कभी सैकड़ों की संख्या में एक साथ जल मरती थीं (२, ८५), वे...छोटी-छोटी बात पर लड़ मरते हैं (१२९, ७२-७३), इससे तो कहीं उत्तम यही है कि डूब मरूँ (७३, १५५)।

'मरना' विशेषक क्रिया जब 'आना' और 'जाना' क्रियाओं के साथ मिलती है तो मुख्य क्रिया को व्यापार की अवांछनीयता की छाया या हो चुके व्यापार के लिए क्षमा की छाया प्रदान करती है, उदाहरणार्थ : हाय मैं कहां आ मरी (९६, ३७)।

अविधेय रूपों में यह पक्ष-सम्बन्धी क्रिया बहुत कम आती है और मुख्यतः तुमर्थ क्रिया के रूप में आती है, उदाहरणार्थ : ...ऐसी अनजानी जगह आ मरने की अपनी मूर्खता पर पछताने लगा (९६, ४८), लोगों में क्रोध और जूझ मरने के भाव भरे हुए थे (४, ८५), ...उनका जल मरना ठीक नहीं (२५, १०६), तुम्हें चुल्लू-भर पानी में डूब मरना चाहिए (७३, १५९)।

जैसा कि दिये गये उदाहरणों से विदित है 'मरना' विशेषक क्रिया सिर्फ़ अकर्मक क्रियाओं के साथ आती है जो कि मुख्यतः एक दशा से दूसरी दशा में परिवर्तन व्यक्त करती हैं।

(१५) **'छोड़ना' विशेषक क्रिया** क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु के साथ मिलकर अपना अर्थ सुरक्षित रखती है और व्यापार के परिणाम और पूर्णता की छाया के साथ-साथ इस व्यापार से पूर्ण स्वतंत्रता की भी छाया देती है। 'छोड़ना' क्रिया आम तौर पर 'रखना', 'लाना' सकर्मक क्रियाओं के साथ आती है और फिर ऐसा लगता है कि वह पक्ष-सम्बन्धी क्रिया और दो स्वतंत्र पक्ष-रहित क्रियाओं के बीच का स्थान लेती है, उदाहरणार्थ : इसलिए इसके सूखे पत्ते को लोग अलमारियों या बक्सों में रख छोड़ते हैं (५०, १२५), अपनी गलती से कहानी का मसौदा उपन्यास में रख छोड़ा है (१३, १८२),...छाया ने तुम्हें ऐसी जगह ला छोड़ा है...(१०७, २२)।

(१६) **'ले जाना' विशेषक क्रिया** क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु से मिलकर

अपना अर्थ (क) सुरक्षित रख सकती है, और (ख) खो भी सकती है।

'ले जाना' क्रिया जब अपने अर्थ को सुरक्षित रखती है तो व्यापार के परिणाम और पूर्णता के साथ-साथ मुख्य व्यापार के स्थानान्तर की भी छाया देती है, उदाहरणार्थ : ...रत्तू की घरवाली को एक पंजाबी भगा ले गया (९६, ५२), वह ...भारी-से-भारी भैंस को खींच ले जाता है (१५०, २३),...सिपाही उसे...लड़ाई के मैदान से बाहर निकाल ले गया (२, ११०), वह उसे इस रण-भूमि से हटा भी ले गये (६९, १५९), यह नट पहले चुरा ले गया था (१०३, ३८२)।

'ले जाना' क्रिया अपना अर्थ खोकर, मुख्य क्रिया को व्यापार के परिणाम तथा पूर्णता के साथ-साथ इस व्यापार के सफलतापूर्वक पूरे होने की भी छाया देती है, उदाहरणार्थ : पर मैं होशियारी से अपनी हार को भी जीत में बदल ले गया (१०३, ३७), कभी-कभी क्रोधित शेर हाथी पर भयंकर आक्रमण करता है और माथे से मांस नोंच ले जाता है (१५०, २५), क्या आप उन लोगों को बाज़ी जीत ले जाने देंगे ? (६९, ३८), पिछले १४ वर्षों में तीन पश्चिमी तेल कम्पनियां...१०४८ करोड़ रुपये मार ले गयीं (IV, १२.११.१९७२), ...जो द्वार से बारात लौटा ले गये (७३, १५४)।

यहां 'ले जाना' क्रिया के साथ-साथ, 'ले चलना' क्रिया भी विशेषक क्रिया के प्रकार्य में आ सकती है, उदाहरणार्थ...मुझे अपने साथ भगा ले चलो (७५, १८४), प्रभो, आज उठा ले चलो (७३, १५५), मुझे पकड़ ले चलो...(६९, १८९)।

'लाना' क्रिया विशेषक क्रिया और स्वतंत्र क्रिया के बीच का स्थान रखती है जो अपना अर्थ स्वतंत्र रखती है और 'ले जाना' क्रिया का पर्याय शब्द होती है, उदाहरणार्थ : एक दिन कोई महात्मा चेतू को पकड़ लाये (७३, ८)—मुकाबला कीजिये, 'बड़ी मुश्किल से पकड़कर लायी हूं (१०३, २०२)', और 'पुलिस सबको पकड़कर ले जायेगी (१०३, १९४)',—कजरी पत्थर बटोर लायी (१०३, ३५४), लौटी तो बटेर मार लायी (१०३, २०५), एक डोल पानी खींच ला न कुएं से (१०३, २३७), उसे कन्धों में से भर लाया (१०३, २६८)।

× × ×

एक ही क्रिया कई रंजक क्रियाओं के साथ मिल सकती है, यह इस पर निर्भर करता है कि एक क्रिया कितने अर्थ दे सकती है, या वक्ता (या लेखक) की इच्छा पर क्रिया को किस अर्थ की छाया देनी है।

सकर्मक क्रियाएं, जो कि व्यापार की दिशा को स्पष्टत: व्यक्त नहीं करती विशेषक क्रियाओं 'लेना' और 'देना' से मिल सकती हैं। जब निजवाचक व्यापार को व्यक्त करना होता है तो वे 'लेना' क्रिया से मिलती हैं और जब व्यापार कर्म की ओर संकेत करता है या व्यापार कर्ता से दूर चला जाता है तो 'देना' के साथ मिलती हैं।

| लेना | देना |
|---|---|
| उसने दोनों हाथों से मुँह ढाँप लिया (४, ६१), | उन्होंने...शवों को ढाँप दिया (४, ६४), |
| तिलोत्तमा ने सुना तो सिर पीट लिया (६६, २६४), | ...यों ही वच्चे को पीट दिया (७, ६२), |
| ...पेटियां बाँध लीजिये (६६, ११) | और भाव पर पट्टी बाँध दी (४, ७६), |
| वन्दूक की आवाज़ें सुनकर कानों पर हाथ रख लेती थी (६६, १३) | इब्राहम की पीठ पर घोड़े ने टाप रख दी थी (६६, ५३), |
| मेरा भी नाम लिख लो (६६, ७७), | मैंने अपनी सारी जायदाद अपने भांजे जुम्मन के नाम लिख दी थी (६६, १५५), |
| उसे खींचकर अपने वक्ष पर डाल लिया (४, १६४), | उसने अपने को चौला के गोद में डाल दिया (४, २०७), |
| वर को सांप ने काट लिया (६६, २६१), | हमने इसी कूचे में उम्र काट दी है (७३, ६०), |
| देवीजी ने रास्ता रोक लिया (६६, ४५)। | अब्दुल लतीफ़ ने घोड़ा रोक दिया (७३, ६०)। |

क्रियाएं जो व्यापार की दिशा को रखती हैं, मुख्यतः ऊपर उल्लेखित क्रियाओं में से एक से मिलती हैं :

'लेना' क्रिया के साथ 'पकड़ना', 'छीनना', 'खींचना', 'समझना', 'सुनना', 'पाना', 'अपनाना', 'हथियाना', 'लूटना' आदि क्रियाएं मिलती हैं जिनमें व्यापार की स्पष्ट अभिव्यक्त आत्मार्थकता होती है, उदाहरणार्थ : दो सिपाहियों ने बढ़कर कोदई की बाँह पकड़ ली (६६, ७४),...बन्दूक उसके हाथ से छीन ली (६६, १७८), इन लोगों ने...रस्सी खींच ली (६६, १६१), घोघाबापा के मंसूबे को उसने समझ लिया (४, ६०), यदि तुमने उनकी वातें चुपचाप न सुन ली होतीं...(६६, ८८), ...इस बीच में चरखे ने खूब प्रचार पा लिया है (६६, ६६),...वह स्वयं कई बार लूट लिया गया था (२, ७८)।

'देना' क्रिया के साथ भी ऐसी क्रियाएं मिलती हैं, जैसे 'भेजना', 'फेंकना', 'छोड़ना', 'बेचना', 'भगाना', 'गिराना', 'सौंपना', 'पटकना' आदि जो कर्ता की ओर से व्यापार का स्पष्टतः अभिव्यक्त झुकाव रखती हैं, उदाहरणार्थ : खुदा का हुक्म हमने तुझे भेज दिया (४, ४७), उसने लाठी फेंक दी...(६६, ६८),...जुम्मन पर अपना घर छोड़ देते थे (६६, १५६), ...जिसने अपने को स्वार्थ के हाथों बेच दिया (६६, ७१), स्कन्द्रगुप्त ने उसको भी हराकर भगा दिया (२,६८), तो क्या

मां ने जान-बूझकर गिरा दिया ? (७३, ६५), चौधरी ने बोतल ज़मीन पर पटक दी (६९, ३७), ...लोगों को सूचनाएं दे दी गयीं (६६, ३५)।

अकर्मक क्रियाएं और कुछ सकर्मक क्रियाएं जो वक्ता की ओर या वक्ता की ओर से व्यापार का स्पष्टतः अभिव्यक्त झुकाव नहीं रखतीं, 'आना' और 'जाना' विशेषक क्रियाओं से मिल सकती हैं। अगर व्यापार वक्ता की ओर संकेतिक हो तो ये क्रियाएं 'आना' क्रिया के साथ मिलती हैं, अगर वक्ता (लेखक) से हटकर जाता है तो वे 'जाना' क्रिया से मिलती हैं :

| आना | जाना |
|---|---|
| नाश्ता करके जल्दी से बाहर निकल आया...(७३, ६६), | ...कोठरी से बाहर निकल गया (७, ७२), |
| जवान सैनिक गढ़ में घुस आये (४, ६४), | वे तीनों...जंगल में घुस गये (१०३, ३४०), |
| प्रो० साहब चुप से लौट आये (६९, २९६), | दूत चुपचाप पीछे लौट गया (४, ५९), |
| इतने में विट्ठल दास ऊपर से उतर आया (७३, ६४), | मुझे उतर जाने दीजिये (७३, ६०), |
| नाश्ता करके मैं पहले उठ आया (६६, २४), | ...बेग़म रशीद उठ गयीं...(७, ६६), |
| ...पत्नी बच्चे को उठाकर आया के पास छोड़ आयी...(७, ८८), | ...इसलिए हम अपना सारा सामान उसी में छोड़ गये (६६, २५), |
| साईकल का लैम्प तो वह घर पर ही भूल आये हैं (७, ११७), | ...वह उन्हें एकदम भूल गया (७, ११६), |
| नहीं, वचन दे आयी हूं (७३, ८२)। | देखिये वही औरत यह सोने की तावीज़ दे गयी है (६९, २००)। |

एक ही क्रियाओं का विभिन्न विशेषक क्रियाओं से मिलना न केवल व्यापार के झुकाव के साथ संबंधित है, बल्कि व्यापार की भिन्न स्तर की पूर्णता से भी संबंध रखता है। सकर्मक क्रिया से बने क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु का 'डालना' विशेषक क्रिया के साथ मिलना 'देना' और 'लेना' विशेषक क्रियाओं की अपेक्षा व्यापार को पूरी तरह हो चुकने की छाया लेकर व्यापार की उच्चतर स्तर की पूर्णता ज़ाहिर करता है। जब शारीरिक प्रभाव की क्रियाएं आती हैं। तो उनको व्यापार को नीचे की ओर जाने की छाया प्रदान की जाती है।

| देना | लेना | डालना |
|---|---|---|
| साहब ने उस पर लिख दिया...(६६, २८), | सचिव ने डायरी में लिख लिया (१४३, ६५), | हमने...एक मौलिक नाटक लिख डाला (१४२, १५३), |
| ...यों ही बच्चे को पीट दिया (७, ६२), | तिलोत्तमा ने सुना तो सिर पीट लिया (६६, २६८), | ...अपने प्यारे का सिर काट डाला (४, २०७), |
| इन लोगों ने...जख्मी बना दिया (६६, ४६); | ...उनको ब्राह्मणों ने सहर्ष हिन्दू बना लिया (२, ६१), | ...जूता व्यापारियों ने बहुत जूते बना डाले (१४३, ७१); |
| उन्होंने...पुल तोड़ दिया (४, ६५), | | ...पुल, मार्ग सब तोड़ डाले (४, ६६), |
| जान से मार दिया है? (७५, २१४), | | ...उसी ने बच्चे को मार डाला (६६, ६६), |
| ...जिन्होंने अपने को स्वार्थ के हाथों बेच दिया (६६, २१)। | | अपने सारे शहर में मेरा नाम बेच डाला (७३, ४६); |
| | उन्होंने पुस्तक देख ली (६६, ८१), | ...मैंने वे अमूल्य ग्रन्थ देख डाले हैं (५, ५०), |
| | उसने बहुत-सी मिट्टी खोद ली (४, २१४)। | ...उसके गुंडों ने...समूचे गर्भगृह खोद डाले (४, १८६)। |

अकर्मक क्रिया से बने क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु के साथ 'पड़ना' विशेषक क्रिया के मिलने से 'जाना' विशेषक क्रिया की अपेक्षा व्यापार की अधिक पूर्णता व्यक्त होती है, उसकी अन्त्य पूर्णता की छाया होती है, हालांकि दोनों विशेषक क्रियाओं में अन्तर न्यूनतम होता है :

| जाना | पड़ना |
|---|---|
| वे तीनों जंगल में घुस गये (१०२, ३४०), | वह सेना...महारण में घुस पड़ी (४, २३३), |
| ...तुर्क सवार...द्वार में धँस गये (४, १७६), | वे...अमीर की सेना में धँस पड़े (४, ७३-८६), |
| ...गाड़ी छूट गयी (७३, ६८), | बन्दूक भी हाथ से छूट पड़ी (६६, १७७), |

| | |
|---|---|
| दूत चुपचाप पीछे लौट गया (४, ५६), | तु या...लौट पड़ी (६६, १६७), |
| ...कोठरी से बाहर निकल गया (७, ७२)। | वह...घर से निकल पड़ा (६६, ४२)। |

सकर्मक क्रिया से बनी क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु जिसमें स्पष्टतः निजवाचक व्यापार अभिव्यक्त है, उसका 'लेना' के स्थान पर 'जाना' विशेषक क्रिया के साथ मिलन व्यापार के परिणाम तथा पूर्णता को बताता है और व्यापार की आत्मार्थकता तब थोड़ी प्रकट होती है :

| लेना | जाना |
|---|---|
| कदाचित मैं विष खा लेता (६६, ८४), | प्यारी फिर चोट खा गयी (१०३, १८५), |
| सबने जान लिया कि...(५, ११), | शायद तो किसी प्रकार जान गये हों कि...(७५, ११७), |
| घोघाबापा के मंसूबे को उसने समझ लिया (४, ६०), | दोनों समझ गये कि...(६६, ७१), |
| ...इस बीच चरखे ने खूब प्रचार पा लिया है (६६, ६६)। | अब मैं घर के कुछ काम-काज से छुट्टी पा गयी (६६, ८६)। |

इस तरह व्यापार की विभिन्न छायाओं को व्यक्त करने के लिए विशेषकर उसकी पूर्णता, परिणाम, दिशा की दृष्टि से कुछ क्रियाओं की क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातुएँ चार या ज़्यादा विशेषक क्रियाओं से मिल सकती हैं।

इस तरह 'होना' क्रिया से बनी क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु आठ विशेषक क्रियाओं से मिलती है : (१) 'जाना' क्रिया के साथ—इन दिनों खम्भात में बहुत भीड़ हो गयी थी (४, ६१), (२) 'आना' क्रिया के साथ—...उन्हें घटना का स्मरण हो आया (४, १७०), (३) 'उठना' क्रिया के साथ—लज्जा हो उठी (६६, ६५), (४) 'बैठना' क्रिया के साथ—अंत में शान्त मौन हो बैठा ! (४, १७६), (५) 'चलना' क्रिया के साथ—...द्वार अब टूटा, अब टूटा हो चला था (४, १७६), (६) 'लेना' क्रिया के साथ—बच्चू भी उनके साथ हो लिया था (१६६, २८५), (७) 'रहना' क्रिया के साथ—बच्चे...चुप हो रहे (१०३, २६३), (८) 'पड़ना' क्रिया के साथ—बात हो पड़ी कि...(४४, ४२)।

'करना' क्रिया से बनी क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु पाँच विशेषक क्रियाओं से मिल सकती है : (१) 'देना' क्रिया के साथ—दौलत खां ने अपने आपको दिल्ली का शासक घोषित कर दिया (२, १४८), (२) 'लेना' क्रिया के साथ—उसने प्रायः सारा पंजाब अपने वश में कर लिया (२, १४१), (३) 'डालना' क्रिया

के साथ—उसने अपनी सेना के कुल तीन भाग कर डाले (४, ७२), (४) 'जाना' क्रिया के साथ—अब उसे लगा कि वह गलती कर गया...(१०३, २२६), (५) 'बैठना' क्रिया के साथ—कोई गड़बड़ तो नहीं कर बैठा (१०३, २७६)।

'देना' क्रिया से बनी क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु छः विशेषक क्रियाओं से मिल सकती है : (१) 'देना' क्रिया के साथ—उसने किस तरह सब कुछ दे दिया है (६६, २३), (२) 'डालना' क्रिया के साथ—...मौलू ने एक अश्लील गाली अपनी लड़की को दे डाली (७, २२), (३) 'मारना' क्रिया के साथ—तभी तीसरे आदमी ने उसे पटक के दे मारा (१०३, २६१), (४) 'रखना' क्रिया के साथ—उसने आज्ञा दे रखी थी कि...(१२, ४८), (५) 'जाना' क्रिया के साथ—देखिये वही औरत यह सोने की तावीज़ दे गयी थी (६६, २००), (६) 'आना' क्रिया के साथ—नहीं, वचन दे आयी हूं (७३, ८२)।

'रोना' क्रिया से बनी क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु पाँच विशेषक क्रियाओं से मिल सकती है : (१) 'देना' क्रिया के साथ—वह भी रो दिया (१०३, ४६०), (२) 'पड़ना' क्रिया के साथ—वह रो पड़ी (१०३, ७५), (३) 'उठना' क्रिया के साथ—नौकरानी रो उठी (११६, १२७), (४) 'लेना' क्रिया के साथ—रो ले री, रो ले (१०३, ७५), (५) 'आना' क्रिया के साथ—अपनी विपत्ति से सबके आगे रो आयी (६६, १५४)।

'कहना' क्रिया से बनी क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु छः विशेषक क्रियाओं से मिल सकती है : (१) 'देना' क्रिया के साथ—पिताजी ने साफ़ कह दिया है कि...(१४३, ३२), (२) 'उठना' क्रिया के साथ—वह कह उठी (१०३, २४८), (३) 'डालना' क्रिया के साथ—आज मैंने निश्चय कर लिया है कि कह ही डालूँ (६६, ६३), (४) 'जाना' क्रिया के साथ—आज डाक्टर जाने क्या कह गया ! (११६, ११६), (५) 'मारना' क्रिया के साथ—मैंने भी...देवी जी को दस मन अपशब्द कह मारे (७३, ३६), (६) 'बैठना' क्रिया के साथ—जिसमें वह माता को कुछ कह न बैठे (७३, १०२)।

'बोलना' क्रिया से बनी क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु चार विशेषक क्रियाओं से मिल सकती है : (१) 'उठना' क्रिया के साथ—मफ़तलाल बोल उठा...(१४३, ३७), (२) 'देना' क्रिया के साथ—...उसने...धावा बोल दिया (४, २३२), (३) 'लेना' क्रिया के साथ—अंग्रेज़ी मज़े में बोल लेती थी (६६, २२), (४) 'जाना' क्रिया के साथ—और इस पर भी तुम्हारी पिट्टी बोल गयी (७५, ८५)।

'देखना' क्रिया से बनी क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु चार विशेषक क्रियाओं से मिल सकती है : (१) 'लेना' क्रिया के साथ—उन्होंने पुस्तक देख ली (६६, ८१), (२) 'डालना' क्रिया के साथ—...मैंने वे अमूल्य ग्रन्थ देख डाले हैं (५,

५०), (३) 'रखना' क्रिया के साथ—मैंने यह नाटक देख रखा (१४२, ४२), (४) 'पड़ना' क्रिया के साथ—बाबूजी सन्तुष्ट देख पड़ते हैं (६६, ६५)।

'चलना' क्रिया से बनी क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु चार विशेषक क्रियाओं से मिल सकती है : (१) 'देना' क्रिया के साथ—मैं तुरैया के साथ चल दिया (६६, १६६), (२) 'पड़ना' क्रिया के साथ—हातिम...कोहकाफ़ की तरफ़ चल पड़ा (२५, ६६), (३) 'निकलना' क्रिया के साथ—दुकान चल निकली (१, १२५), (४) 'जाना' क्रिया के साथ—हैदराबाद में उर्दू से काम चल गया (६६, १०३)।

'लौटना' क्रिया से बनी क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु चार विशेषक क्रियाओं से मिल सकती है : (१) 'जाना' क्रिया के साथ—दूत चुपचाप पीछे लौट गया (४, ५६), (२) 'आना' क्रिया के साथ—प्रो० साहब चुपके से लौट आये (६६, २६६), (३) 'चलना' क्रिया के साथ—अमीर के सैनिक लौट चले (४, (२३५), (४) 'पड़ना' क्रिया के साथ—तुरैया...लौट पड़ी (६६, १६७)।

'भागना' क्रिया से बनी क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु चार विशेषक क्रियाओं से मिल सकती है : (१) 'जाना' क्रिया के साथ—राजा...भाग गया (४, ५२), (२) 'आना' क्रिया के साथ—कच्चा-पक्का खाना बनाकर फिर भाग आती...(७३, २८), (३) 'चलना' क्रिया के साथ—नैकस भाग चला (१०३, १७४), (४) 'निकलना' क्रिया के साथ—एक दिन चुपके भाग निकले (६७, ६७)।

'बनाना' क्रिया से बनी क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु चार विशेषक क्रियाओं से मिल सकती है : (१) 'देना' क्रिया के साथ—इन लोगों ने...ज़ख्मी बना दिया (६६, ४०), (२) 'लेना' क्रिया के साथ—उनको ब्राह्मणों ने सहर्ष हिन्दू बना लिया (२, ६१), (३) 'डालना' क्रिया के साथ—...जूता-व्यापारियों ने बहुत जूते बना डाले (१४३, ७१), (४) 'रखना' क्रिया के साथ—कारीगरों ने भी अपने गान बना रखे थे (२, ५७)।

'लिखना' क्रिया से बनी क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु चार विशेषक क्रियाओं से मिल सकती है : (१) 'लेना' क्रिया के साथ—सचिव ने डायरी में लिख लिया (१४३, ६५), (२) 'देना' क्रिया के साथ—साहब ने ऊपर लिख दिया...(६६, २८), (३) 'डालना' क्रिया के साथ—हमने...मौलिक नाटक लिख डाला...(१४२, १५३), (४) 'मारना' क्रिया के साथ—आपने अख़बार में यह क्या लिख मारा है? (१४२, ८२)।

'रखना' क्रिया से बनी क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु चार विशेषक क्रियाओं के साथ मिल सकती है : (१) 'देना' क्रिया के साथ—इब्राहीम की पीठ पर घोड़े ने टाप रख दी थी (६६, ५३), (२) 'लेना' क्रिया के साथ—बन्दूक की आवाज़ें सुनकर कानों पर हाथ रख लेती थी (६६, १३), (३) 'रखना' क्रिया के साथ—

कपड़ों के ढेर के नीचे मिस पाल ने अपने बनाये हुए खाके रख रखे हैं (५२, १३७), (४) 'बैठना' क्रिया के साथ—दुर्भाग्य से मैं एक नाग औरत को नौकर रख बैठी थी (३६, १६६)।

'मारना' क्रिया से बनी क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु चार विशेषक क्रियाओं के साथ मिल सकती है : (१) 'डालना' क्रिया के साथ—कल मैं मार डाला जाऊंगा (६६, १६४), (२) 'देना' क्रिया के साथ—जान से ही मार दिया है ? (७५, २१४), (३) 'बैठना' क्रिया के साथ—मुझसे शरारत करोगे तो मार बैठूंगा (६५, ८५), (४) 'लेना' क्रिया के साथ—...ये शेर को तो मार ही लेते हैं (१५०, ४८)।

## (११) व्यापार का निश्चयबोधक पक्ष

यह पक्ष विश्लेषणात्मक क्रियाओं से व्यक्त होता है, जो कि सरल द्वितीय क्रियाविशेषण कृदन्त (आम तौर पर सकर्मक क्रियाओं से बने) और 'देना', 'लेना', 'डालना' विशेषक क्रियाओं के मिलन से बनती हैं, और ये आम तौर पर पुरुष-वाचक रचनाओं में आती हैं। 'देना', 'लेना', 'डालना' क्रियाएं काल-प्रक्रिया की अपूर्ण रूपतालिका को रखतीं हैं : वे वर्तमान तथा भूतकाल के अपूर्णतावाची और संतत रूपों में आती हैं।

ये पक्ष-सम्बन्धी क्रियाएं उन क्रियाओं से मिलती हैं जो कि व्यापार के अवधारणबोधक पक्ष को व्यक्त करती हैं, लेकिन इन दोनों में भिन्नता यह है कि एक तरफ़ तो वे निकट भविष्य में होने वाले व्यापार की अवश्यम्भावी क्रियान्विति की ओर संकेत देती हैं, और दूसरी तरफ़ घटमान व्यापार की नित्यता और अपूर्णता बताती हैं, जो भूतकाल में शुरू हो चुका था और अभी भी जारी है।

व्यापार जो कि निकट भविष्य में होगा उसको व्यक्त करते समय, उल्लेखित विशेषक क्रियाएं वर्तमान काल के अपूर्णतावाची और संतत रूपों में आती हैं, उदाहरणार्थ : अभी नहीं किया तो एक क्षण में किये लेता हूं (६५, १७४), सादे लिफ़ाफ़े और पैड आपको दिये दे रहा हूं (५६, ११४), बैठने की जगह मैं अभी बनाये देती हूं (५२, १३७), अरे ठहरो, मैं पकड़े लेता हूं, ज़रा कुर्ता उतार लूं (७५, १३७),...मैं कल ही...साईनबोर्ड बनवाये डालता हूं (१, १५७)।

व्यापार की नित्यता और अपूर्णता को व्यक्त करते हुए ये विशेषक क्रियाएं वर्तमान तथा भूतकाल के अपूर्णतावाची तथा संतत रूपों में आती हैं, उदाहरणार्थ : ...यह पथ्य मुझे मारे डालता है (६३, १८८),...एक भारी बड़ा पत्थर मेरे सीने को दबोचे डाल रहा है (८०, ७४), चिन्ता और ग्लानि उसके हृदय को कुचले डालती थी (६५, २७),...लेकिन तुम अभी से चेतावनी दिये देती हो (६५, १८५), फाँसी लगेगी कहे देती हूं...(१४७, ६२,) मेंढकों की

भैरव...उस एकान्त को अत्यन्त शब्दपूर्ण किये दे रही थी (६६, ७८), वायु की यह शीतलता जो सैकड़ों मुसाफ़िरों के प्राण खींचे ले रही है, सेठी को फुर्ती दे रही थी (६६, ७),...लेकिन एक ताकत थी जो मुझे उस तरफ़ खींचे लिए जा रही थी (३१, ११३-११४)।

जैसा कि दिये गये उदाहरणों से विदित है, निकट भविष्य के अर्थ में अकसर 'लेना' और 'देना' क्रियाएं ही आती हैं और नित्यता तथा अपूर्णता के अर्थ में 'डालना' क्रिया आती है।

'देना' और 'लेना' विशेषक क्रियाएं व्यापार के इस पक्ष में वही भिन्नता सुरक्षित रखती हैं जो कि व्यापार का अवधारणबोधक पक्ष रखता है, हालांकि यहां यह भिन्नता कम स्पष्ट होती है, उदाहरणार्थ : '...मैं अभी सारे बर्तनों को साफ़ किये देती हूं (५६, ३६)', और '...मैं तब तक इन बर्तनों को साफ़ किये लेती हूं (५६, ३६)'।

## (१२) व्यापार का योग्यताबोधक पक्ष

व्यापार के इस पक्ष को उन विश्लेषणात्मक क्रियाओं से व्यक्त करते हैं जो कि सरल प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त और 'बनना' विशेषक क्रिया के साथ मिलने से बनती हैं और सिर्फ़ पुरुषवाचक रचनाओं में आती हैं। इन पक्ष-सम्बन्धी क्रियाओं का व्यापार का कर्ता यहां हमेशा परसर्गीय-अप्रत्यक्ष कारक में प्रयोग में आता है जो 'से' और 'को' परसर्ग से आता है, इसलिए 'बनना' क्रिया की काल-प्रक्रिया की अपूर्ण रूपतालिका होती है, चूंकि वह व्यापार के कर्म के साथ समानाश्रित होती है, जो कि वाक्य का उद्देश्य होता है और जब उद्देश्य नहीं होता तो भाववाचक रचना में आती है। 'बनना' क्रिया इन कारणों से हालांकि व्यावहारिक तौर पर लगभग सभी नियमित काल रूपों में प्रयोग होती है, वह विशेषकर सिर्फ़ कर्म-सम्बन्धी रचना में एकवचन तथा बहुवचन अन्य पुरुष में और भाववाचक रचना में एकवचन अन्य पुरुष में ही आती है।

ये पक्ष-सम्बन्धी क्रियाएं कर्ता के व्यापार होने की गुप्त संभावना को व्यक्त करती हैं और निषेधात्मक वाक्यों में कर्ता के व्यापार होने की गुप्त असंभावना को व्यक्त करती हैं। ये क्रियाएं व्यापार को करने की विवश आवश्यकता की ओर कम ही संकेत देती हैं।

जब व्यापार करने की गुप्त संभावना (असंभावना) व्यक्त होती है तो व्यापार का कर्ता 'से' परसर्ग के साथ आता है, उदाहरणार्थ : साले और ससुर से जो भी करते बना उन्होंने किया (८३, ४३), तुमसे अदा करते नहीं बनता (५१, ६४), ...घूर लेंगे जितना उनसे घूरते बनेगा (६६, १३८), ब्रजनाथ से कोई जवाब न देते बन पड़ा (६८, १३०), ...जितना खाते बने खाओ (७३, २२४)।

जब वाक्य में कर्ता नहीं होता तब आम तौर पर वाक्य का कर्म उद्देश्य होता है, उदाहरणार्थ : लेकिन ये दोनों बातें करते न बन पड़ीं (१४२, ५२), ...जितना परिश्रम करते बनता है, करता हूं (६५, ७८), ...पर आपकी बात नहीं टालते बनती (६५, ६०)।

व्यापार का कर्ता 'को' परसर्ग के साथ आता है जब व्यापार के करने की विवश आवश्यकता व्यक्त होती है, उदाहरणार्थ : उसे क्लर्क को छुट्टी देते ही बनी (३२, ११६), उसकी डाँट खाकर बुढ़िया को वहां से हटते ही बना (५८, ७७), ...यदि वे लड़ भी पड़ें तो उन्हें भागते ही बनेगी (७५, १६८)।

बहुत कम स्थितियों में इस रचना में प्रथम क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त की जगह सरल द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त आता है, उदाहरणार्थ : ज़िन्दा से अब कुछ कहे न बन आता था (७५, १४६)।

## (१३) व्यापार का इच्छाबोधक पक्ष

व्यापार का यह पक्ष विश्लेषणात्मक क्रियाओं द्वारा व्यक्त होता है, जो कि 'चाहना' विशेषक क्रिया के साथ सरल द्वितीय कृदन्त की समाकार कृदन्तपरक संज्ञा से मिलकर बनती हैं, और सिर्फ़ पुरुषवाचक रचनाओं में आती हैं। 'चाहना' क्रिया की काल-प्रक्रिया की अपूर्ण रूपतालिका होती है : वह मुख्यतः वर्तमान तथा भूतकाल के अपूर्णतावाची रूपों में आती है।

ये पक्ष-सम्बन्धी क्रियाएं इस बात का संकेत देती हैं कि व्यापार निकट भविष्य में होना चाहिए था, उसके होने की इच्छा है, उदाहरणार्थ : बुढ़िया... औंधे मुँह गिरा चाहती थी कि कोदई ने लपककर उसे संभाल लिया (६६, ७३), राम...घर से निकला ही चाहता था कि जालपा आयी (६५, ११५), ...समझ गयी कि आग भड़का ही चाहती है...(७३, २४), दर्शकों ने देखा कि जयराम पर मार पड़ा चाहता है (६६, ४०)।

जब व्यापार को करने की इच्छा व्यक्त करते हैं तो 'चाहना' क्रिया मुख्यतः वर्तमान काल के अपूर्णतावाची रूप में आती है, उदाहरणार्थ : बसरे का सफ़र किया चाहता हूं (२४, ४१), क्या तुम एक संभ्रान्त घर की महिला का सर्वनाश किया चाहते हो? (५, ६३),...अब तू जान-बूझकर कुएँ में गिरा चाहता है तो तेरी मर्ज़ी (२४, १४२)। यहां भूतकाल के अपूर्णतावाची और संतत रूप कम ही आते हैं, उदाहरणार्थ : देव प्रकाश उससे यही कहलाया चाहते थे कि पहले सत्य प्रकाश का विवाह करना उचित है...(७०, ८८), यह महत्वाकांक्षी विद्वान राजा सिंघनाद के मुहाने तक समुद्र को छूता हुआ अपना साम्राज्य स्थापित किया चाह रहा था (४, ८८)।

## (१४) व्यापार का गुणार्थक पक्ष

व्यापार का यह पक्ष विश्लेषणात्मक क्रियाओं द्वारा व्यक्त होता है जो कि सकर्मक क्रिया के सरल द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त तथा एकमूलीय अकर्मक क्रिया के मेल से बनती हैं और सिर्फ़ पुरुपवाचक रचनाओं में आती हैं। विशेषक क्रिया की काल-प्रक्रिया की पूर्ण रूपतालिका होती है परन्तु यह अक़सर वर्तमान तथा भूतकाल (कम) के अपूर्णतावाची रूपों में आती है।

ये पक्ष-सम्बन्धी क्रियाएं हमेशा निषेधात्मक वाक्यों में आती हैं और उस अभ्यासबोधक व्यापार को व्यक्त करती हैं जो कि उसकी कार्यान्विति के सब प्रयत्नों के बावजूद पूर्ण नहीं हो सकता, उदाहरणार्थ : लेकिन उस तरह की वारदातें छिपाये नहीं छिपती हैं (८३, ११५), यह...इतनी बड़ी पहेली है कि सुलझाये नहीं सुलझती (२०, १३७), बोरा बहुत भारी था, उठाये न उठा (८०, ३९), क्रोध संभाले नहीं संभलता (१४२, १०), उस गाय की याद तो अलग हटाये नहीं हटती (११६, ९७)।

द्वितीय क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त का कर्ता व्यक्त हो सकता है : (क) संज्ञाओं या सार्वनामिक संज्ञा से जिसके साथ 'से' परसर्ग आता है, उदाहरणार्थ : वह दिन उससे काटे नहीं कटता (५, ४४), सोना तो यों ही पड़ा है कि उससे उठाये न उठा (१०३, १०५); (ख) 'के' परसर्ग के साथ संज्ञा से, उदाहरणार्थ : ...ईश्वर के बचाये भी नहीं बचते (५१, ७८),...रंजा भाइयों के मनाये नहीं मानता...(१४०, १८); (ग) सम्बन्धवाचक सार्वनामिक विशेषण द्वारा, उदाहरणार्थ : जो भाव मन में हैं उसके लिए संज्ञा मेरे जुटाये जुटती नहीं (४४, १२५), साड़ी की चुन्नट गरारा-सा बनकर हवा में उड़ रही थी और हमारे संभाले नहीं संभल रही थी (१२३, ११)।

बहुत ही कम स्थितियों में इन पक्ष-सम्बन्धी क्रियाओं के सरल द्वितीय क्रिया-विशेषणात्मक कृदन्त के स्थान पर सरल द्वितीय कृदन्त आते हैं, उदाहरणार्थ : ऐसा बन्धन है जो उखाड़ा नहीं उखड़ता (३१, २३)।

## (१५) व्यापार के मिश्रित पक्ष

व्यापार के मिश्रित पक्ष अन्य (तीसरे) विशेषक क्रिया द्वारा व्यक्त होते हैं जो पक्ष-सम्बन्धी क्रिया के साथ मिलकर व्यापार के एक और अतिरिक्त पहलू को बताती है। अन्य विशेषक क्रिया के तौर पर व्यापार के संभाव्य, अभ्यासबोधक और घटमान-पूर्णपरिणामी पक्ष की क्रियाएं होती हैं तथा व्यापार के अवधारण-बोधक पक्ष की विशेषक क्रियाएं भी हो सकती हैं जो कि ऊपर बयान की गयी विशेषक क्रियाओं के विपरीत मुख्य क्रिया तथा विशेषक क्रिया दोनों से मिल

सकती हैं। इस तरह व्यापार के मिश्रित पक्षों को संरचनात्मक तौर पर इस जैसे बता सकते हैं : (मुख्य क्रिया + विशेषक क्रिया) + विशेषक क्रिया; मुख्य क्रिया + (विशेषक क्रिया + विशेषक क्रिया)। आइये, अब क्रमशः इन बहुघटकीय रचनाओं का अध्ययन करें :

(१) अन्य क्रिया—व्यापार के संभाव्य पक्ष की विशेषक क्रिया—...इच्छा को मैं कैसे रोके रख पाया...(१०८, ५३), और राजकन्या क्या सचमुच खूब खूब खेलती रह सकी ? (४४, १०), बिलकुल मुमकिन है कि मुख्यमंत्री उस पद पर चिपके रह सकना मुश्किल पायें (IV, १७.६.१९७३);

(२) अन्य क्रिया—व्यापार के अभ्यासबोधक पक्ष की विशेषक क्रिया : कभी-कभी मिलते रहा करो हेम (११२, ३८), मैं थोड़ी देर बैठी रहा करूँगी...(६५, २३०), तुम मां को मार-पीटकर उसके गहने छीन ले दिया करते थे, उन्हें जुए या शराब में फूँक डाला करता होगा (१०७, १५)।

(३) अन्य क्रिया—व्यापार के घटमान-पूर्णपरिणामी पक्ष की विशेषक क्रिया—वे उस औरत को किसी गाँव से पकड़े लिये जा रहे थे (५४, ३७), माता ने उसको और भी चिमटा लिया, मानो कोई उसके हाथ से उसे छीने लिये जाता था (६६, १४५), इन लेडियों की रीति-नीति में एक आकर्षक शक्ति थी जो मुझे खींचे लिये जाती थी (६९, ३७)।

(४) पक्ष-सम्बन्धी क्रिया के घटकों में से एक व्यापार के अवधारणबोधक पक्ष की विशेषक क्रिया से जटिल हो जाता है—कुम्हार घर छोड़कर भाग जाया करता था (६९, ६६), ब्रजनाथ से कोई जवाब न देते बन पड़ा (६९, १३०)।

आधुनिक हिन्दी में जब व्यापार के पक्ष की श्रेणियों का निचोड़ रखते हैं तो यह कहना उचित होगा कि कुछ विशेषक क्रियाएं अपने द्रव्यवाचक अर्थों को पूर्णतः नहीं खोतीं और सम्पूर्ण विश्लेषणात्मक पक्ष-सम्बन्धी क्रिया अपने स्वतंत्र शब्द-समुदाय के साथ जिससे वे बनती है, स्पष्ट आनुवांशिक सम्बन्ध रखती है। परिणामस्वरूप आधुनिक हिन्दी में ऐसी रचनाएं मिलती हैं, जो कि संरचनात्मक तौर पर विश्लेषणात्मक पक्ष-सम्बन्धी क्रियाओं के समान होती हैं, जो दूसरे घटक के द्रव्यवाचक अर्थ को पूर्णतः सुरक्षित रखती हैं। यही कारण है कि उनको स्वतंत्र वाक्यात्मक शब्द-समुदायों (वाक्यांशों) की तरह देख सकते हैं।

'कृदन्त' + 'आना' रचनाएं दूसरे घटक की अधिकतम स्वतंत्रता में भिन्न होती हैं। यह बात निम्नलिखित उदाहरणों से प्रमाणित होती है : जो कभी नकदी के रूप में आते हैं, कभी आभूषणों के रूप में आते हैं, कभी मकान, दुकान या ज़मीन के रूप में आते हैं, जो कभी रोते आते हैं, गिड़गिड़ाते आते हैं, पैर पकड़ते आते हैं, पर आते रहते हैं (१५१, २८), बहुत से आँसू आते हैं। वे झड़ी लगाये आते हैं और बाढ़ की तरह उमड़ते आते हैं (१५१, ६४),...लच्छमा को साथ ही

लेते आये (१७, ११८)।

दूसरे घटक में कम स्वतंत्रता उस रचना की होती है, जिसमें 'कृदन्त + 'जाना' आता है, चूंकि 'जाना' क्रिया बहुत-सी स्थितियों में अपने द्रव्यवाचक अर्थ को खो बैठती है, किन्तु ऐसा भी होता है कि द्रव्यवाचक अर्थ सुरक्षित रहता है, उदाहरणार्थ : ...बाबूजी ने हेमी की ड्यूटी लगा दी कि वह यूनिवर्सिटी जाता हुआ रास्ते में हमें छोड़ता जाये (१३, १७), दिल्ली तक सोता गया था (१२, ३०), इसे घर लेते जाइये (५६, २१)।

'पड़ना' क्रिया भी अपने द्रव्यवाचक अर्थ को सुरक्षित रख सकती है, जब वह 'कृदन्त + 'पड़ना' के दूसरे घटक की हैसियत से आती है, उदाहरणार्थ : ...किवाड़ों के बीच में ठेकेदार की देह बिंधी पड़ी थी (६६, ६४),...पेड़ गिरा पड़ा था (१७, २५३),...कोठरी में खून से भीगा हुआ माधो मरा पड़ा था (१०२, १३२)।

'चाहना' क्रिया भी अपने द्रव्यवाचक अर्थ को सुरक्षित रखती है जो कि कृदन्तपरक संज्ञा के साथ की रचना में आती है और उस व्यापार के करने की इच्छा व्यक्त करती है, जो कृदन्तपरक संज्ञा द्वारा व्यक्त होता है। यह रचनाएं विश्लेषणात्मक पक्ष-सम्बन्धी क्रियाओं और स्वतंत्र वाक्यात्मक पदबन्ध के बीच का स्थान रखती हैं चूँकि कृदन्तपरक संज्ञा आधुनिक हिन्दी में अपने आप प्रयोग नहीं हो सकती। यह हमेशा विशेपक क्रिया के साथ आती है जो कि पूर्णतया अपने द्रव्यवाचक अर्थ को खो बैठती है ('करना' विशेषक क्रिया व्यापार के अभ्यासबोधक पक्ष में) और अपने अर्थ को आंशिक रूप से सुरक्षित रखती है ('चाहना' विशेषक क्रिया जब किसी व्यापार को करने की इच्छा व्यापार के इच्छाबोधक पक्ष में व्यक्त करते हैं), उदाहरणार्थ : ...हम मित्रता किया चाहते हैं (४, ६), तलवार खींचकर सिर पर आ पहुंचा चाहता था कि हमला करे...(२४, ३३)।

जब घटकों का स्थानीय विभाजन होता है तो उनकी स्वतंत्रता अर्थात् दोनों घटकों द्वारा अपने द्रव्यवाचक अर्थ को सुरक्षित रखना पूर्ण रहता है, उदाहरणार्थ : बीच आसमान में लटकता मैं चला जा रहा था (१०७, २८), बस, सिरकी, काँस-पतवार पानी में बड़ी तेज़ी के साथ भागते भंवरों में नाचते आगे बढ़े चले जा रहे हैं (१, २५१)।

घटकों की पूर्ण स्वतंत्रता उन शब्द-समुदायों द्वारा वर्णित होती है जो कि 'जाना' और 'आना' क्रियाओं की क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु तथा कुछ दूसरी क्रियाओं के मेल से बनते हैं। ऐसे शब्द-समुदायों के बारे में पहले ही उल्लेख हो चुका है जब व्यापार के अवधारणबोधक पक्ष के बारे में बताया गया था। यहां, इसीलिए सिर्फ़ ऐसे शब्द-समुदायों के दूसरे घटकों को गिनवाएंगे।

'आना' और 'जाना' क्रियाओं के साथ अकर्मक क्रियाओं में से मिलती हैं :

(१) 'पहुंचना' क्रिया—...वे...साहब को सलाम करने आ पहुंचे (७, ५४),

आज ही वह अपने अफ़सर के यहां हाज़िरी देने जा पहुँचा था (१, ३३);

(२) 'जमना' क्रिया—...राजपूत योद्धा भी...अपने-अपने मोर्चों पर जा जमे...धीरे-धीरे अमीर की सेना का सारा भार मध्य द्वार पर आ जमा (४, १५२);

(३) 'बैठना' क्रिया—...सेठजी आ जाते, ज़ोहरा के पास जा बैठते (७, ८७),...अपनी पत्नी के साथ आ बैठा (७, २३);

(४) 'टिकना' क्रिया—उसकी दृष्टि...उसके पाँवों पर आ टिकी (७, ४५), क्षण-भर में ही दृष्टि...नीचे मैदानों पर जा टिकती है (१६१, ५४);

(५) 'डटना' क्रिया—लोग...निर्धारित मोर्चों पर जा डटे (४, १३२);

(६) 'डूबना' क्रिया—वह गीत न जाने विस्मृति के किस गर्त में जा डूबा था (७, १२५);

(७) 'रहना' क्रिया—...तुम यहां रहोगे, तो हम वहां जा रहेंगे (१०७, (४७);

(८) 'धमकना' क्रिया—वे सिंह की भाँति घोड़ा उड़ाते अमीर के सम्मुख जा धमके (४, ७७), जूनागढ़ के राव···पटना में आ धमके (४, १००);

(९) 'मिलना' क्रिया—महाराज...उनसे जा मिले हैं (४, १९५),...साठ हज़ार सैन्य...उससे आ मिले (४, २४८);

(१०) 'लगना' क्रिया—मैं अपने अधूरे चित्र पर जा लगा (११६, १२१),... एक पत्थर उसकी छाती में आ लगा (४, ७६);

(११) 'गिरना' क्रिया—...तुर्क के साथ दद्दा भी खाई में जा गिरे (४, १७५),...सिर काटकर उसके चरणों में आ गिरा (४, २०६);

(१२) 'जुटना' क्रिया—...सैनिक...महाराज के चारों ओर आ जुटे (४, ८२);

(१३) 'चढ़ना' क्रिया—...अमीर के कन्धे पर जा चढ़ा (४, २०२);

(१४) 'रुकना' क्रिया—...सन्दानी सुरसागर के तीर पर जा रुकी (४, २४६);

(१५) 'लेटना' क्रिया—...उसकी इच्छा हो रही थी कि...बिस्तर में जा लेटे (७, ८९), यही लड़की स्वप्न में उसके साथ आ लेटी थी (७, ६९);

(१६) 'टकराना' क्रिया—...उसका सिर ऊपर छत पर जा टकराया (४, १६७);

(१७) 'पड़ना' क्रिया—इस बात की भनक ज़िंदों के कान में जा पड़ी (७५, १९२),...अमीर घोड़े पर से नीचे आ पड़ा (४, ७६)—मुकाबला कीजिये—पक्ष-सम्बन्धी क्रियाएं जब 'पड़ना' विशेषक क्रिया के साथ आती हैं जो कि संलीन व्यापार करती हैं;

(१८) 'घुसना' क्रिया—महमूद...अजमेर की सीमा में आ घुसा (८, ६६);

(१६) 'फँसना' क्रिया—आप यहां कैसे आ फँसे ? (७३, ६४);

(२०) 'छिपना' क्रिया—...सब...अपने-अपने घरों में जा छिपे (१०३, ४४४);

(२१) 'निकलना' क्रिया—...इतने में हुस्नबानो का पुराना मुनीम...उधर से आ निकला (२५, १३), ...रसोईघर में जा निकला (२४, २२);

(२२) 'लटकना' क्रिया—...बेशुमार कटे सिर...पेड़ की अलग-अलग डालों से जा लटके...(२५, ८२);

(२३) 'बसना' क्रिया—...मुसलमान भी फिर भारत में आ बसे (२, ३७२);

(२४) 'अटकना' क्रिया—...तेरी कसम जान गले में आ अटकती है (१०३, १०२);

(२५) 'टपकना' क्रिया—...यह विचार मेरे दिमाग में आ टपका कि... (१३६, ५८);

(२६) 'जुड़ना' क्रिया—...साँस फिर से आ जुड़ने पर कहा...(१०३, ६५);

(२७) 'जूझना' क्रिया—जो राजपूत बचे थे वही आ जूझे...(४, ८२)।

सकर्मक क्रियाओं के साथ 'आना' और 'जाना' क्रियाओं के मेल से :

(१) 'दबाना' क्रिया—रास्ते में लड़कों को बुखार ने आ दबाया (७, ३३), ...बच्चों को काली खाँसी ने आ दबाया (११७, ७३);

(२) 'लेना' क्रिया—हमने आगे जाने वाली बस को जा लिया था (६, ११६);

(३) 'सुनाना' क्रिया—महात्मा ने...सारा विवरण उन्हें...जा सुनाया (४, १६६);

(४) 'घेरना' क्रिया—डाकुओं ने उन्हें आ घेरा (१७, ४७);

(५) 'दबोचना' क्रिया—उसने उछलकर उन दोनों को जा दबोचा (२५, २५);

(६) 'बिठाना' क्रिया—परन्तु जो बात उसे अलौकिक उच्चता पर जा बैठाती है...(१६१, ५४);

(७) 'गिराना' क्रिया—परन्तु जो बात इसे...नर्क या पाताल में जा गिराती है।

घटकों की पूर्ण स्वतंत्रता उन शब्द-समुदायों (वाक्यांशों) से भी वर्णित होती है जो कि 'लेना' क्रिया की क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु से तथा दूसरी अकर्मक दशा-सूचक तथा गतिसूचक क्रियाओं से बनते हैं, उदाहरणार्थ : ...शोभना भी महाराजा

के चरणों को गोद में ले बैठी (४, १९३), जूनागढ़ के राव तो पहले ही ले जमे थे (४, १०३), वे उसे...ले दौड़े (४, ९२), चुने हुए सरदार अमीर को पालकी में डालकर शिविर में ले भागे (४, ७७), उसका घोड़ा...उसे ले उड़ा (४, २४३), यह अभागिनी सुमन बेचारी शान्ता को भी ले डूबी (७३, ११५)।

ये शब्द-समुदाय एकल सकर्मक विश्लेषणात्मक क्रिया नहीं होते, जैसा कि 'लेना' से बनी क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त-धातु 'जाना', 'आना' और 'चलना' विशेषक क्रियाओं के मिलन में होता है। वे कर्मवाच्य नहीं बना सकते, जबकि 'ले जाना', 'ले आना' और 'ले चलना' विश्लेषणात्मक पक्ष-सम्बन्धी क्रियाएं कर्म-वाच्य सब सकर्मक पक्ष-सम्बन्धी क्रियाओं की तरह बनाती हैं, उदाहरणार्थ : ... हातिम को भी महल में ले जाया गया...(२५, ४५), ये निमंत्रण गज़नी के प्रधान मुल्लाओं द्वारा ले जाये गये थे (४, ४२),...सरकार को वहां से उठाकर मार्च सन् १९१८ में मास्को ले आया गया (७९, ३६)।

घटकों की पूर्ण स्वतंत्रता उन शब्द-समुदायों द्वारा भी व्यक्त होती है जो कि दो सकर्मक क्रियाओं द्वारा बनते हैं, जिनमें से एक क्रियाविशेषणात्मक कृदंत-धातु के रूप में आता है, उदाहरणार्थ : युवकों ने...कहानी कह सुनायी (४, १३९), इसका बेटा अमीर को मार भागा (४, ६८),...सुलतान महमूद को उसने खोज निकाला (४, २४५), नन्दीदत्त ने बड़े यत्न से धोधाराना का शव शवों के ढेर से ढूंढ़ निकाला (४, ६४),...जिन्होंने उपनिवेशिक...जुए को उतार फेंका है (१४१, ४१)। ये शब्द-समुदाय पदबन्धित प्रकृति की स्थिर शाब्दिक रचनाएं ज़्यादा होते हैं बनिस्बत व्याकरणिक इकाइयों के—विश्लेषणात्मक, पक्ष-सम्बन्धी क्रियाओं के।

# परिशिष्ट

# परिशिष्ट

## पारिभाषिक शब्दावली

| | |
|---|---|
| अंतरित | distant, non-contiguous |
| अंतर्भावी | inclusive |
| अंत्यलुप्त | apocopated |
| अंत्यलोप | apocope |
| अंशतः उद्देश्य | quasi-subject |
| अकर्मक | 1) intransitive, 2) objectless |
| अकर्मकता | intransitivity |
| अकार्त्रिक | subjectless |
| अखंड क्रियार्थक इकाई | verbal unit |
| अचिह्नित | unmarked |
| अनान्वित | uncoordinated |
| अनावर्ती | unrepeated |
| अनाश्रित | independent |
| अनाश्रितता | autonomy |
| अनियमित | irregular |
| अनिर्दिष्ट काल | aorist |
| अनिश्चित भूत | aorist |
| अनुक्रम | sequence |
| अनुमतिवाचक | concessive |
| अनुवर्ती | consequent |
| अन्योन्याश्रित | interdependent |

| | |
|---|---|
| अन्वय | 1) agreement, 2) concordance |
| अन्वादेशक | anaphoric |
| अन्वित | coordinated |
| अन्विति | 1) agreement, 2) concord |
| अपूर्ण | incomplete, imperfective |
| अपूर्णता | incompletability |
| अपूर्णतावाची | imperfective |
| अपूर्णसूचक क्रिया | verb of incomplete predication |
| अप्रचलित | fossilized |
| अप्रत्यक्ष | indirect |
| अप्रत्यक्ष कर्तृकारक | ergative (case) |
| अप्रयुक्त (शब्द) | archaic (word) |
| अमूर्त | abstract |
| अर्थ-पूरक | semantic complement (filling) |
| अर्थपूर्ण | autonomous |
| अर्थ-लुप्त | desemantised |
| अर्थ-लोप | desemantisation |
| अर्थविज्ञान | semantics |
| अर्थसूचक | semantic indicator |
| अर्द्धविकारी | semi-inflected |
| अर्द्धसंयोजक | semi-copula |
| अर्द्धस्वतंत्र | semi-independent |
| अर्द्धसहायक | semi-auxiliary |
| अवधारक (पक्ष) | intensive (aspect) |
| अवधारणबोधक (पक्ष) | intensive (aspect) |
| अवधारणा | intensity |
| अवश्यकताबोधक | debitive |
| अवस्था | state |
| अवास्तविक | 1) unreal, 2) non-actual |
| अवास्तविकता | unreality |
| अविकारी | 1) indeclinable, 2) invariable |
| अविकारी क्रियात्मक संज्ञा | supine |
| अविकारी तुमर्थ | supine |
| अविधेय क्रियार्थक वाक्यांश (शब्द-समूह) | non-finite verb form |

| | |
|---|---|
| अवैयक्तिक | impersonal |
| अव्याकरणिक | non-grammatical, agrammar |
| अव्याकरणिकता | agrammatism |
| असमापक | non-terminative |
| असीमित | unlocalized (time) |
| अस्थानीयकृत | unlocalized |
| अस्थायी | temporary |
| आज्ञार्थक उपदेशवाचक | imperative-preceptive |
| आज्ञार्थक निवेदनवाचक | imperative pleading |
| आत्मार्थक | reflexive |
| आत्मार्थकता | reflexity |
| आदेश (रूप) | substitute |
| आनुवंशिक | genetic |
| आभ्यासिक | habitual |
| आवर्ती | recurrent, recursive |
| आसन्न भूत | present perfect |
| इच्छाबोधक | intentive, volitive |
| उक्ति का क्षण | moment of speech |
| उत्तरकालीनता | posteriority |
| उद्देश्यरहित | subjectless |
| उद्देश्यवाचक | purpose |
| उद्देश्यहीन (वाक्य) | subjectless |
| उपसर्ग | prefix |
| उपलक्षित | implied |
| उपाधि | condition |
| उभयलिंग | epicene |
| एककालिक | synchronic |
| एक धातु का | same stem |
| एकमूलीय | single root, cognate |
| एकरूपता | identity |
| एकरूपी | non-varying |

| | |
|---|---|
| एकवचन मात्र | singularia tantum |
| एकांगी | mononuclear, one-member |
| कथन का क्षण | moment of speech |
| करण (कारक) | instrumental |
| (करण) निष्पादक (पक्ष) | (instrumental) potential (aspect) |
| कर्ता | agent |
| कर्तरि प्रयोग (voice) | active |
| कर्ता कारक | 1) direct, nominative (case), 2) active (case) |
| कर्तृगामी | reflexive |
| कर्तृगामी कर्मवाच्य | passive-reflexive |
| कर्तृवाचक | 1) agent, 2) active (voice) |
| कर्तृवाच्य | active (voice) |
| कर्तृ विभक्ति | active (ending) |
| कर्तृहीन | subjectless |
| कर्महीन | objectless |
| कल्पित | implied |
| कालक्रमिक | diachronic |
| काल-क्षण | moment of time |
| काल-खंड | piece of time |
| कालदोष | anachronism |
| कालदोषी | anachronic |
| कालनिरपेक्ष | 1) unlocalized (of time), 2) non-temporal |
| काल मर्यादा | time limit |
| कालवाचक | temporal, of time |
| कालसंकलन | unity of time |
| कालसापेक्षता | temporality |
| कालान्तर | interval |
| कालान्विति | unity of time |
| कालावधि | period, time limit |
| काल्पनिक | hypothetical |

| | |
|---|---|
| कृदन्तपरक | participial |
| कृदन्तीकरण | participialization |
| कोटि | category |
| कोटिगत | categoric |
| कोशगत | lexical |
| कोशीय | lexical |
| क्रियाकरण | verbalization |
| क्रिया-नामिक वाक्यांश | non-finite verb form |
| क्रियाप्रधान | verbal |
| क्रियामूलक | verbal |
| क्रियारूप | conjugation |
| क्रियार्थक | verbal |
| क्रियार्थक संज्ञा | infinitive, verbal-noun |
| क्रियाविशेषणात्मक | adverbial |
| क्रियाविशेषणात्मक कृदन्त | adverbal participle |
| क्रियाविशेषणात्मक विशेषण | adverbial adjunct |
| क्रियाविशेषणीकरण | adverbialisation |
| क्रियाविशेषणीकृत | adverbialized |
| क्रिया-व्युत्पन्न | deverbative |
| क्रिया-साधित | deverbative |
| क्षण | moment |
| गुणवाचक | qualitative |
| गुणात्मक | qualitative |
| गुणार्थक | connotative |
| गौण | secondary |
| घटक | component |
| घटकांश | constituent |
| घटमान | progressive |
| घटमान-पूर्णपरिणामी | progressive-terminative |
| चिह्नक | marker |

| | |
|---|---|
| जटिल | complex |
| तिङन्ती | conjugated |
| तद्‌रूप | identical |
| तिनांगी | three-member |
| तुमर्थ | infinitive |
| तुलनात्मक | comparative |
| त्रिघटकीय | three-component |
| दुअंगी | two-member |
| दूरवर्ती | distant, non-contiguous |
| दो-अंगी | binominal |
| द्रव्यवाचक | material |
| द्वि-अंगी | two-member |
| द्विघटकीय | bicomponental |
| द्वितत्वी | binominal |
| द्वित्तक | doublet |
| धातु | stem |
| धातुरूपी क्रिया | stem verb |
| नवरचना | innovation |
| नामजात | denominative |
| नामधातुज | denominative |
| नामबोधक संयुक्त क्रिया | compound denominative |
| नामिक | nominal |
| नामिकीकृत | substantivized |
| नामिकीकरण | substantivization |
| नासिकीकरण | nasalization |
| नासिकीकृत | nasalized |
| निजवाचक | reflexive |
| निजवाचक कर्मवाच्य | passive reflexive |
| नित्यताबोधक | continuous |
| नित्यताबोधक सीमित | continuous limiting |

| | |
|---|---|
| नित्यताबोधक पूर्णपरिणामी | continuous-terminative |
| नित्यसम्बन्धी | correlative |
| निपात | particle |
| निपात-विशेषक | modifying particle |
| नियंत्रक | determinative |
| नियंत्रण | government |
| नियमन | government |
| नियमित | 1) regular, 2) strong |
| नियमित आवर्ती | regular repetition |
| नियमित रूप से आवर्ती अपूर्ण काल | regular recurrent imperfect |
| नियमितता | regularity |
| नियामक | governing member |
| निरपेक्ष | absolute |
| निरपेक्ष रचना | absolute construction |
| निर्णायक | determinant |
| निर्धारक | determinant |
| निर्धारित | determined |
| निश्चयात्मक | affirmative |
| निषेध | prohibition, negation |
| निषेधात्मक | negative |
| निष्पक्ष | non-aspect |
| निहितार्थ | implication |
| | |
| पक्ष | aspect |
| पद | word form, inflected word |
| पदबंध | phrase |
| पदबंध संरचना | phrase structure |
| पदार्थवाचक | material |
| परप्रत्यय | postfix |
| परम्परावाद | traditionalism |
| परवर्तिता | posteriority |
| परसर्गरहित | postpositionless |
| परसर्गहीन | postpositionless |
| परसर्गीय | postpositional |

| | |
|---|---|
| परसर्गीय कारक | postpositional case |
| परस्थित | postpositional |
| परस्थिति | postposition |
| परिणामवाचक | consecutive |
| परिणामी | resultative |
| परिमाणात्मक | quantitative |
| परिवर्तक | modificator |
| परिवर्तन | conversion |
| परिवर्तित | converted |
| परोक्ष | indirect |
| पश्चसंकेती शब्द | anaphoric, word |
| पार्श्वस्थान | postposition |
| पुनरावर्ती | recurrent |
| पुनरुक्त | reduplicative |
| पुनरुक्ति | reduplication |
| पुरुषवाचक | personal |
| पुरुषवाचक-लैंगिक | personal-sexuated |
| पुरुषशून्य | impersonal |
| पूर्ण | 1) perfective, 2) complete |
| पूर्णकालिक | perfective |
| पूर्णताबोधक | completive |
| पूर्णताबोधक पक्ष | effective aspect |
| पूर्णतावाचक | 1) resultative, 2) perfective |
| पूर्णतावाची | completive |
| पूर्णतावाची काल | perfectum |
| पूर्ण भविष्यत् | perfect future |
| पूर्ण भूत | past perfect |
| पूर्ण वर्तमान | present perfect |
| पूरक | complement |
| पूर्वकालिक | anterior (of time) |
| पूर्वकालिनता | anteriority |
| पूर्वगामी (शब्द) | antecedent |
| पूर्वपद | antecedent |
| पूर्वप्रत्यय | prefix |

| | |
|---|---|
| पूर्ववर्तिता | anteriority |
| पूर्ववर्ती | anterior |
| पूर्ववर्ती सर्वनाम | antecedent |
| पूर्वस्थान | anterior position, anteriority |
| पूर्वस्थानीय | anterior (of position) |
| पृथक्कृत | isolated |
| पौन: पुनिक पक्ष | frequentative aspect |
| पौन: पुन्य पक्ष | frequentative aspect |
| प्रकार | aspect |
| प्रकार-सम्बन्धी | aspectual |
| प्रकारता | modality |
| प्रकार्य | fuction |
| प्रकार्यात्मक | fuctional |
| प्रक्रिया | process |
| प्रक्रियात्मकता | processuality |
| प्रतियोग | opposition |
| प्रत्यक्ष | direct |
| प्रत्यक्षीकरण | actualization |
| प्रत्यय | affix |
| प्रत्यययोजन | affixation |
| प्रभावी | resultative |
| प्रभावी/प्रभावक पक्ष | effective aspect |
| प्रसंग | context |
| प्राकारिक | aspectual |
| प्राकारिकता | aspectuality |
| प्रातिपदिक | stem |
| प्रातिबंधिक | conditional |
| प्रासंगिक | occasional |
| | |
| फ़ार्मेंट | formant |
| | |
| बहुघटक | multicomponent |
| बहुप्राकारिक | multi-aspectual |
| बहुरूपी परिवर्तन | varying change |

| | |
|---|---|
| बहुवचन मात्र | pluralin tantum |
| बहुविश्लेषणात्मक | polyanalytical |
| बहुवर्धक | polysemantic |
| भाववाचक | 1) abstract,<br>2) impersonal |
| भावबोधक | impersonal |
| भाववाच्य | impersonal voice |
| भावार्थक वृत्ति | impersonal mood |
| भावे प्रयोग | impersonal voice |
| भाषायी | linguistic |
| भाषागत | linguistic |
| भाषिक | linguistic |
| भिन्न मूलों का | of different roots |
| भिन्न रूप | variant |
| भिन्नार्थक | of different meaning |
| मात्रिक | quantitative |
| मानकित | standardised |
| मानकीकृत | standardised |
| मार्कर | marker |
| मिश्रण | contamination |
| मूर्त | concrete |
| मूलाधार | underlying |
| योग्यताबोधक (पक्ष) | possibilative (aspect) |
| योजक | copula |
| रंजक | modifier verb |
| रचना | 1) structure,<br>2) construction |
| रचनांतरण | transformation |
| रचनान्तरणपरक | transformational |
| रूप-तालिका | paradigm |

| | |
|---|---|
| रूपनिर्माणविषयक | formbuilding |
| रूपप्रक्रिया | 1) accidence, 2) morphology |
| रूपप्रक्रियात्मक | morphological |
| रूपबद्ध | formal |
| रूपविज्ञान | morphology |
| रूपशब्दीय | lexical-morphological |
| रूपस्वप्नप्रक्रिया | morphophonology |
| रूपस्वप्रक्रियात्मक | morphophonological |
| रूपांतर | 1) inflection, 2) variant |
| रूपात्मक | morphological |
| रूपात्मक-वाक्यविन्यासात्मक | morphological-syntactical |
| रूपावली | 1) paradigm, 2) accidence |
| | |
| लक्षण | marker |
| लक्षणरहित | unmarked |
| लक्षणान्वित | marked |
| लाक्षणिक | metaphorical |
| लुङ्लकार | aorist |
| लुप्त | elliptical |
| लोप | ellipsis |
| | |
| वर्णनात्मक | descriptive |
| वाक्यविन्यासात्मक | syntactic |
| वाक्यांश | phrase |
| वाक्यात्मक | syntactic |
| वास्तविक | actual |
| वास्तविकीकरण | actualization |
| विकल्पी | facultative, optional |
| विकार | modification |
| विकारक | modificator |
| विकारी | inflected |
| विकृत | inflected |
| विकृति | modification |
| विखंडन | splitting |

| | |
|---|---|
| विद्यर्थक | potential |
| विधेय | predicate |
| विधेय क्रिया | finite verb |
| विधेयन | predication |
| विधेयवाचक | predicative |
| विभक्ति | inflexion |
| विभक्तिग्राही | flexible |
| विभक्तिपरक | inflexional |
| विभक्ति प्रत्यय | inflectional ending |
| विरोध | opposition |
| विवरणात्मक | narrative |
| विशेषक | 1) attributive, 2) modifier, 3) qualificative |
| विशेषक विधेय | qualificative predicate |
| विशेषण | 1) qualitative, 2) adjective |
| विशेषण-क्रियाविशेषण | adjective-adverb |
| विशेषता | attributiveness |
| विशेषणपरकता | attributiveness |
| विशेषणवाचक | attributive |
| विशेषणात्मक | attributive |
| विशेषणवाचक-कालवाचक | attributive-temporal |
| विशेषणात्मक-गुणवाचक | attributive-qualitative |
| विशेषणात्मकता | attributiveness |
| विशेषणीकृत | adjectivized |
| विशेषणीकरण | adjectivization |
| विश्लेषणात्मक | analytic |
| वृतित्व | modality |
| वृतिवाचक | modal |
| वृतिवाचक छाया | modal colour |
| वृतिवाचक झुकाव | modal trend |
| वैकल्पिक | facultative optional |
| व्यक्तिनिष्ठ वृतिवाचक | subjective modal |
| व्यक्तिवाचक (नाम) | proper (name) |
| व्याकरणिक | grammatical |

| | |
|---|---|
| व्याकरणिकीकरण | grammaticalization |
| व्याकरणिकीकृत | grammaticalized |
| व्याख्यात्मक | explanatory |
| व्यापार | action |
| व्युत्पन्न | derivative |
| | |
| शब्द-रूप | word-form |
| शब्द-समुदाय | word-combination, word-group |
| शब्द-समूह | word-combination, word-group |
| शब्दात | lexical |
| शब्दार्थक | semantic |
| शब्दार्थ सूचक | semantic indicator |
| शब्दिम | lexeme |
| शाब्दिक | lexical |
| शाब्दिक-आर्थिक | lexical-semantical |
| शाब्दिक-रूपप्रक्रियात्मक | lexical-morphological |
| शाब्दिक-वाक्यविन्यासात्मक | lexical-syntactical |
| शाब्दिक-व्याकरणिक | lexical-grammatical |
| श्रेणी | category |
| | |
| संकल्प | will |
| संकालिक | synchronic |
| संकेतवाचक | conditional, hypothetical |
| संघटक | component |
| संज्ञात्मक | substantival |
| संज्ञापरक | substantivized |
| संज्ञार्थक | substantival |
| संज्ञावाचक | nominal |
| संज्ञा संलग्न | adnominal |
| संतत | durative, processive |
| संबंध | 1) combination, 2) relation |

| | |
|---|---|
| संबंधवाचक | relative |
| संभवता | possibility |
| संभाव्य | potential |
| संयुक्त | 1) compound, 2) periphrastic |
| संयोग | combination |
| संयोजक | 1) connecting, 2) copulative 3) conjunctive |
| संयोजकहीन समन्वय | parataxis |
| संयोजनक्षमता | valency |
| संयोजी | connected, conjunctive |
| संरचना | structure |
| संरचनात्मक | structural |
| संवर्ग | category |
| संश्लिष्ट | synthetic |
| संश्लेषणात्मक | synthetic |
| सजातीय | homogeneous |
| सन्निहित | contiguous |
| सप्रतिबंध | conditional |
| समक्षणिकता | simultaneity |
| समगम | homonym |
| समन्वयी | coordinating |
| समपाती | coincidental |
| समयनिरपेक्ष | non-temporal |
| समस्त | compound |
| समस्त क्रियार्थक | compound varbal |
| समस्त नामिक | compound nominal |
| समाकार | omoform |
| समानाधिकरण | 1) apposition, 2) coordination |
| समानाधिकरणिक | appositive |
| समानाधिकृत | coordinated |
| समान्येतर काल | secondary tense |
| समापक (पक्ष) | terminative (aspect) |
| समापक (रूप) | finite (form) |
| समापिका क्रिया | finite verb |

| | |
|---|---|
| समावेशक | incorporating |
| समावेशन | incorporation |
| समावेशी | inclusive |
| सम्मिलन | combination |
| सम्मिश्र | complex |
| सर्वसम | identical |
| सर्वादेश | suppletion |
| सर्वादेशी (रूप) | suppletive (form) |
| सहकारिता | simultaneity |
| सहकारी | formating |
| सहकालिक | simultaneous |
| सहकालिकता | simultaneity |
| सहसंबंधी | coorelative |
| सहायक | 1) accessory, 2) auxiliary |
| सांतत्य | duration |
| सांतत्वबोधक (पक्ष) | durative (aspect) |
| सांदर्भिक | contextual |
| साधक (कारक) | ergative (case) |
| साधित | derivative |
| सापेक्ष | relative |
| सामान्य भूत | 1) preterite, 2) aorist |
| सार्वनामिक विशेषण | pronominal adjective |
| सार्वनामिक संज्ञा | pronominal substantive |
| साव्यय | flexible |
| सिन्टेग्मी | syntagme |
| सुपाइन | supine |
| सुश्राव्य | suphonic |
| स्थानाश्रित | positional |
| स्थानीय | positional |
| स्थिति | 1) position, 2) situation |
| स्थितिक | situational |
| स्थितिपरक | stiuational |
| स्थैतिक | statical, Static |
| स्वतःपदायोग्य | syncategorematic |

## साहित्यिक कृतियां, जिनसे उदाहरण लिये गये हैं


१. अमृतलाल नागर, अमृत और विष, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, १९६६।
२. अवधबिहारी पाण्डेय, भारतवर्ष का इतिहास, नन्दकिशोर एण्ड संस, वाराणसी, १९६०।
३. आचार्य चतुरसेन शास्त्री, धर्मपुत्र, हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली, १९५-।
४. आचार्य चतुरसेन शास्त्री, सोमनाथ, हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली, १९६-।
५. आचार्य चतुरसेन शास्त्री, हृदय की परख, हिन्द पॉकेट बुक्स, १९६-।
६. ईसप कथा, हेमकुण्ट प्रेस, दिल्ली, १९६२।
७. उपेन्द्रनाथ अश्क, 'अश्क' की श्रेष्ठ कहानियां, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९६१।
८. उपेन्द्रनाथ अश्क, आकाशचारी, नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद, १९६६।
९. उपेन्द्रनाथ अश्क, कहानी लेखिका और जेहलम के सात पुल, नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद, १९५७।
१०. उपेन्द्रनाथ अश्क, काले साहब, नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद, १९६१।
११. उपेन्द्रनाथ अश्क, गिरती दीवारें, नीलाभ प्रकाशन, प्रयाग, १९५७।
१२. उपेन्द्रनाथ अश्क, छींटे, भारती भण्डार, इलाहाबाद, संवत् २००६।
१३. उपेन्द्रनाथ अश्क, पलंग, नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद, १९६१।
१४. उपेन्द्रनाथ अश्क, पिंजरा, नीलाभ प्रकाशन, प्रयाग, १९५७।
१५. उपेन्द्रनाथ अश्क, बर्फ़ का दर्द, हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली, १९६-।
१६. उपेन्द्रनाथ अश्क, बैंगन का पौधा, इलाहाबाद, १९५२।
१७. उपेन्द्रनाथ अश्क, शहर में घूमता आईना, नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद, १९६३।

१८. उपेन्द्रनाथ अश्क, हिन्दी कहानियां और फ़ैशन, नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद, १९६४।
१९. कन्हैयालाल कपूर, नरम-गरम, हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली, १९६-।
२०. कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर', बाजे पायलिया के घूंघरू, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी, १९५७।
२१. कमलप्रसाद 'कमल', आज के फूल, पंकज प्रकाशन, हैदराबाद, संवत् २०१७।
२२. कामताप्रसाद गुरु, हिन्दी व्याकरण, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, संवत् २००९।
२३. किशोरीदास वाजपेयी, हिन्दी शब्दानुशासन, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी संवत् २०१४।
२४. किस्सा चार दरवेश, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९६१।
२५. किस्सा हातिमताई, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९६१।
२६. कुलभूषण, पगडंडी और परछाइयां, दिल्ली, १९५५।
२७. कृशन चंदर, एक गधे की आत्मकथा, हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली, १९६२।
२८. कृशन चंदर, एक वायलिन समंदर के किनारे, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९६२।
२९. कृशन चंदर, काँच के टुकड़े, हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली, १९६-।
३०. कृशन चंदर, कृशन चंदर की श्रेष्ठ कहानियां, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९६१।
३१. कृशन चंदर, गद्दार, हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली, १९६-।
३२. कृशन चंदर, घूंघट में गोरी जले, हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली, १९६-।
३३. कृष्णचन्द्र शर्मा 'भिक्खु', भंवरजाल, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, १९६२।
३४. ख़्वाजा अहमद अब्बास, अंधेरा-उजाला, हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली, १९६-।
३५. गुणाकर मुले, गणित की पहेलियां, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९६१।
३६. गुरुदत्त, वनवासी, हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली, १९६-।
३७. गुलाब राय, हिन्दी लोकोक्तियां और मुहावरे, भारती साहित्य मन्दिर, दिल्ली, १९५७।
३८. चन्द्रगुप्त विद्यालंकार, अशोक (नाटक), राजपाल एण्ड संज़, दिल्ली, १९६-।
३९. जयशंकर प्रसाद, इन्द्रजाल, भारती भंडार, इलाहाबाद, १९५७।
४०. जयशंकर प्रसाद, कामायनी, भारती भण्डार, इलाहाबाद, संवत् २०१८।
४१. जवाहरलाल नेहरू, भारत की बुनियादी एकता, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, १९६२।

४२. जानने की बातें, दिल्ली, १९५६।
४३. जैन ज० च०, संस्कृति के चार अध्याय, नया पथ, अंक ८-९, १९५७।
४४. जैनेन्द्र कुमार, जैनेन्द्र की श्रेष्ठ कहानियां, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९६०।
४५. जैनेन्द्र कुमार, पूरा संग्रह, भाग १, बनारस, १९५६।
४६. जैनेन्द्र कुमार, पूरा संग्रह, भाग ३, बनारस, १९५६।
४७. ठाकुर घनश्याम नारायण सिंह, पिंडारी, ठग और डाकू, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९६२।
४८. ताजवर सामरी, एक था शहर, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, १९५५।
४९. नागार्जुन, बाबा बटेसरनाथ, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९६०।
५०. नारायण सिंह, हमारे वृक्ष, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, दिल्ली, १९६०।
५१. निराला, काले कारनामे, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी, १९६०।
५२. पाँच लम्बी कहानियां (कहानी-संग्रह), संग्रहकर्ता मोहन राकेश, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९६०।
५३. पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र', 'उग्र' की श्रेष्ठ कहानियां, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९६१।
५४. पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र', सरकार तुम्हारी आंखों में, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९६०।
५५. पारिभाषिक शब्दकोश, सम्पादक मुकुन्दीलाल श्रीवास्तव, बनारस, २०१०।
५६. पारिभाषिक शब्द संग्रह, गवर्नमेंट ऑफ़ इंडिया, १९६२।
५७. पूर्ण स्वाधीनता का घोषणापत्र, जनयुग विशेषांक, अंक १३-१४, १९५८।
५८. पौ फटेगी...(कहानी-संग्रह), भारतीय साहित्य सदन, नयी दिल्ली, १९६-।
५९. प्यारेलाल 'आवारा', दरारें, रूपसी प्रेस एवं प्रकाशन, इलाहाबाद, १९५६।
६०. प्रकाश दीक्षित, काठ के ताबूत और ज़िन्दा लाशें, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी, १९६०।
६१. प्रतिनिधि हास्य कहानियां, सम्पादक—मनमोहन सरल : श्रीकृष्ण, आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली, १९६०।
६२. प्राचीन हिन्दी कविता, सम्पादक—गिरिराज किशोर, अम्बाशंकर नागर, गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद, १९५८।
६३. प्रेमचन्द, कफ़न, सरस्वती प्रेस, बनारस, १९५१।
६४. प्रेमचन्द, कुछ विचार, सरस्वती प्रेस, बनारस, १९४९।
६५. प्रेमचन्द, गबन, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, १९५-।
६६. प्रेमचन्द, निर्मला, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, १९५-।

६७. प्रेमचन्द, प्रेमाश्रम, सरस्वती प्रेस, बनारस, १९५२।
६८. प्रेमचन्द, मानसरोवर, भाग ४, सरस्वती प्रेस, बनारस, १९५५।
६९. प्रेमचन्द, मानसरोवर, भाग ७, सरस्वती प्रेस, बनारस, १९५५।
७०. प्रेमचन्द, सप्त सुमन, नया हिन्द प्रेस, इलाहाबाद, १९५४।
७१. प्रेमचन्द, समर-यात्रा, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, १९५३।
७२. प्रेमचन्द, सेवा सदन, सरस्वती प्रेस, बनारस, १९५-।
७३. प्रेमचन्द, सेवा सदन, सरस्वती प्रेस, बनारस, १९६२।
७४. 'बच्चन', सिसिफस बरकस हनुमान, आजकल, अंक ११, १९६५।
७५. बलवन्त सिंह, रात, चोर और चांद, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९६१।
७६. बाबूलाल बर्मा, भारतीय जनता के स्वातंत्र्य आंदोलन की एक झांकी, जनयुग विशेषांक, अंक १३-१४, १९५८।
७७. बालमुकुंद 'अर्श' मलसियानी, मुहावरे और कहावतें, विद्या प्रकाशन, दिल्ली, १९५७।
७८. बुखारी ए० एस०, पतरस के मज़ामीन, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९६१।
७९. ब्रजकिशोर नारायण, नाना की नज़र में, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९६१।
८०. भगवतस्वरूप चतुर्वेदी, चुम्बकों का घर, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९६१।
८१. भारत के तीर्थ-स्थान, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९५९।
८२. भारत के त्योहार, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९५७।
८३. भैरवप्रसाद गुप्त, गंगा मैया, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९६०।
८४. भोलानाथ तिवारी, भारतीय पौराणिक कथाएं, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९६१।
८५. भोलानाथ तिवारी, हिन्दी मुहावरा कोश, किताब महल, इलाहाबाद, १९६४।
८६. भोलानाथ तिवारी, हिन्दी भाषा, किताब महल, इलाहाबाद, १९६६।
८७. मजुमदार प्र० क०, सममामयिक बंगला साहित्य का असंतुलित विवरण, नया पथ, अंक ८, १९५७।
८८. मारशीक ए०, पृथ्वी और अंतरिक्ष, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९६१।
९०. मुल्कराज आनन्द, हिन्दुस्तान की कहानी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९५८।
९१. मैथिलीशरण गुप्त, भारत भारती, आजकल, अंक ११, १९६५।
९२. यज्ञदत्त शर्मा, आदर्श पत्र-लेखन, आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली, १९५३।

९३. यशपाल, जैनेन्द्रजी का जयवर्धन, नया पथ, अंक २, १९५८।
९४. यशपाल, पूर्वी जर्मनी में, नया पथ, अंक १०, १९५६।
९५. यशपाल, उर्दू का विरोधी जिहाद, नया पथ, अंक ७, १९५८।
९६. यशपाल, यशपाल की श्रेष्ठ कहानियां, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९६०।
९७. यशपाल, वे तूफ़ानी दिन, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९६९।
९८. यशपाल, लेखकों की स्वतंत्रता का प्रश्न, नया पथ, अंक २, १९५७।
९९. यशपाल जैन, रूस में छियालीस दिन, सस्ता साहित्य मंडल, दिल्ली, १९५-।
१००. यामिनीकांत सोम, बच्चों के रवीन्द्रनाथ, कलकत्ता, १९५-।
१०१. रघुवीरशरण गुप्ता, आधुनिक वाणिज्य प्रणाली, प्रथम भाग, दिल्ली, १९६२।
१०२. रांगेय राघव, आग की प्यास, अशोक पॉकेट बुक्स, दिल्ली, १९६-।
१०३. रांगेय राघव, कब तक पुकारूं ?, राजपाल एण्ड संज़, दिल्ली, १९६१।
१०४. राजीव सक्सेना, आधुनिक कविता की समस्याएं, नया पथ, अंक ८-९, १९५७।
१०५. राजीव सक्सेना, भारतीय जनता का महान् अभियान, जनयुग गणतंत्र विशेषांक, १९५८।
१०६. राजीव सक्सेना, विश्वशान्ति के संघर्ष की नयी मंज़िल, जनयुग गणतंत्र विशेषांक, १९५८।
१०७. राजेन्द्र यादव, अभिमन्यु की आत्महत्या, विश्व साहित्य, आगरा, १९५९।
१०८. राजेन्द्र यादव, सारा आकाश, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९६०।
१०९. राजेन्द्र यादव : मन्नू भंडारी, अकेली, हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली, १९६-।
११०. राजेन्द्र यादव : मन्नू भंडारी, एक इंच मुस्कान, राजपाल एण्ड संज़, दिल्ली, १९६३।
१११. राधाकृष्ण प्रसाद, हम सब गुनाहगार, हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली, १९६-।
११२. रामकुमार, वापिसी, हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली, १९६-।
११३. रामकुमार 'भ्रमर', बेगम और गुलाम, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी, १९६१।
११४. रामचन्द्र वर्मा, अच्छी हिन्दी, साहित्य रत्न माला, बनारस, १९५२।
११५. रामप्रसाद किचलू, आधुनिक निबन्ध, राजकिशोर प्रकाशन, इलाहाबाद, १९६३।
११६. रामप्रसाद घिल्डियाल 'पहाड़ी', 'पहाड़ी' की श्रेष्ठ कहानियां, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९६१।
११७. रामबहोरी शुक्ल : भगीरथ मिश्र, हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास,

हिन्दी भवन, जालंधर और इलाहाबाद, १९५६।
११८. रामेश्वरी नेहरू, मानव-विकास की झलक, साहित्य केन्द्र, वाराणसी, १९६२।
११९. राहुल सांकृत्यायन, कप्तान लाल, राजपाल एण्ड संज़, दिल्ली, १९६१।
१२०. लक्ष्मीनारायण लाल, धरती की आंखें, हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली, १९६-।
१२१. विद्यानिवास मिश्र, आंगन का पंछी और बनजारा मन, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी, १९६२।
१२२. विनोबा, गीता-प्रवचन, सर्व सेवा संघ, वाराणसी, १९६४।
१२३. विमला कपूर, अजाने देशों में, साधना प्रकाशन, कानपुर, १९५५।
१२४. विल्लम अग्रवाल, अमावस, अग्रवाल प्रिंटिंग प्रेस, फ़र्रुखाबाद, १९५-।
१२५. विष्णु प्रभाकर, संघर्ष के बाद, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी, १९५३।
१२६. वृन्दावनलाल वर्मा, झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, दिल्ली, १९५-।
१२७. शचीरानी गुर्टू, विश्व की महान् महिलाएं, अजमेर, १९५५।
१२८. शिवनारायण श्रीवास्तव, हिन्दी के प्रमुख साहित्यकार, सरस्वती मन्दिर, बनारस, १९४९।
१२९. शिवप्रसाद मिश्र 'रुद्र', बहती गंगा, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९६१।
१३०. श्रीमद्भगवद्गीता, साधारण भाषा टीका सहित, गीता प्रेस गोरखपुर, संवत् २०१२।
१३१. संकेत (कहानी-संग्रह), इलाहाबाद, १९५-।
१३२. संक्षिप्त तीसरी पंचवर्षीय योजना, योजना आयोग, भारत सरकार, दिल्ली, १९६०।
१३३. सत्यदेव देराश्री, रघुराज सिंह दीक्षित, सरल अर्थशास्त्र प्रवेशिका, भाग १, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा, १९७०।
१३४. सरल भारतीय अर्थशास्त्र, भारती निकेतन, दिल्ली, १९६२।
१३५. सरहिंदी आर० जे०, हिंदी मुहावरा-कोश, इलाहाबाद, १९६३।
१३६. सआदत हसन मंटो, मीना बाज़ार, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९६२।
१३७. सिंह आर० के०, हास-परिहास, हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली १९६-।
१३८. सिद्धनाथ सिंह, रामराज्य (नाटक), भारती ग्रन्थागार, वाराणसी, संवत् २०१४।
१३९. सुदर्शन, तीर्थ-यात्रा, सरस्वती प्रेस, बनारस, १९५१।
१४०. सैयद वारिस शाह, हीर रांझा, अशोक पॉकेट बुक्स, दिल्ली, १९६-।
१४१. सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी का कार्यक्रम, सोवियत भूमि पुस्तिका, दिल्ली, १९६१।
१४२. हंसराज रहबर, आंके-बांके, पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, १९६०।

१४३. हरिशंकर परसाई, रानी नागफनी की कहानी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९६० ।
१४४. हर्षदेव मालवीय, रूस की यात्रा, भारती साहित्य मंदिर, दिल्ली, १९५९ ।
१४५. हुकुम सिंह, आज का रूस, पंजाबी पब्लिशर्स, जालंधर और नयी दिल्ली, १९६७ ।
१४६. हिन्दी शब्द सागर, मूल सम्पादक श्यामसुन्दरदास, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी ।

## पत्र-पत्रिकाएं

I आजकल (पत्रिका)
II आर्थिक समीक्षा (पत्रिका)
III गवेषणा (पत्रिका)
IV जनयुग (समाचारपत्र)
V नई कहानियां (पत्रिका)
VI प्रकाशन समाचार
VII भारतीय समाचार (पत्रिका)
VIII भाषा (पत्रिका)
IX समन्वय (पत्रिका)
X स्वास्थ्य सुरक्षा (पर्ची)
XI हिन्दुस्तान (समाचारपत्र) ।

# भाषा-वैज्ञानिक कृतियां, जिनसे सहायता ली गयी है

१. अंबाप्रसाद 'सुमन', आधुनिक ब्रजभाषा में संयुक्त क्रियाओं का स्वरूप, भाषा, अंक ३, १९६५।
२. अंबाप्रसाद 'सुमन', हिन्दी और उसकी उपभाषाओं का स्वरूप, प्रयाग, १९६६।
३. अंबाप्रसाद 'सुमन', हिन्दी की आकारांत संज्ञाएं और उनके विकल्प, भाषा, अंक २, १९६१।
४. अंबाप्रसाद 'सुमन', हिन्दी के अनुस्वार-प्रयोग : सुझाव और समाधान, भाषा, अंक ३, १९६८।
५. अंबिकाप्रसाद वाजपेयी, हिन्दी पर फ़ारसी का प्रभाव, प्रयाग, २००५।
६. अभिनव हिन्दी व्याकरण तथा निबन्ध रचना, आशा प्रकाशन गृह, दिल्ली, १९६३।
७. आचार्य धर्मेन्द्र, विद्याभास्कर श्रुतिकांत शास्त्री, आधुनिक हिदी व्याकरण तथा रचना, देहरादून, १९५१।
८. आनन्द ज० एच०, हिन्दी भाषा का प्रथम व्याकरण, भाषा, अंक १, १९६३।
९. उदयनारायण तिवारी, हिन्दी भाषा का उद्भव और विकास, प्रयाग, २०१८।
१०. उलत्सिफ़ेरोव ओ० गे०, आधुनिक हिन्दी में वाक्यांश और उसके भेद, भाषा, अंक ४, १९६३।
११. उलत्सिफ़ेरोव ओ० गे०, हिन्दी में संश्लिष्ट समानाधिकरण वाक्य, भाषा, अंक ३, १९६४।
१२. ओमप्रकाश गुप्त, मुहावरा मीमांसा, पटना, १९६०।

१३. कपिलदेव द्विवेदी, अर्थविज्ञान और व्याकरणदर्शन, इलाहाबाद, १९५१।
१४. कमल मोहन, हिन्दी में ने, को, से, के द्वारा, के लिये, में, पर, का, की, के का प्रयोग, भाषा, अंक ४, १९६८।
१५. कामताप्रसाद गुरु, मध्य हिन्दी व्याकरण, काशी, २०२२।
१६. कामताप्रसाद गुरु, संक्षिप्त हिन्दी व्याकरण, काशी, २०१३।
१७. कामताप्रसाद गुरु, हिन्दी व्याकरण, काशी, २००६।
१८. काशीनाथ स्वामी सारंगमठ, 'ने'-दिव्यास्त्र, भाषा, अंक २, १९६३।
१९. किशोरीदास वाजपेयी, अच्छी हिन्दी का नमूना, कलकत्ता, १९४८।
२०. किशोरीदास वाजपेयी, ब्रजभाषा का व्याकरण, प्रयाग, १९४८।
२१. किशोरीदास वाजपेयी, भारतीय भाषा विज्ञान, वाराणसी, १९५९।
२२. किशोरीदास वाजपेयी, राष्ट्रभाषा का प्रथम व्याकरण, इलाहाबाद, १९४९।
२३. किशोरीदास वाजपेयी, हिन्दी शब्दानुशासन, काशी, २०१३।
२४. कैलाशचंद्र भाटिया, हिन्दी में अंग्रेज़ी आगत शब्दों का लिंग-निर्णय, भाषा, अंक ४, १९६३।
२५. कैलाशचंद्र भाटिया, हिन्दी में बलाघात और अक्षर का संबंध, भाषा, अंक २, १९६७।
२६. केशवदत्त मिश्र, हिन्दी के भाषाशास्त्रीय शोध-प्रबंध, भाषा, अंक ४, १९६४।
२७. कैरीयरज़ आज का हिन्दी व्याकरण तथा निबन्ध रचना, दिल्ली, १९५९।
२८. गोकुल प्रसाद शास्त्री, सरल संस्कृत व्याकरण, ग्वालियर, १९६२।
२९. गोपालचंद्र वैद, व्याकरण-रत्न तथा रचना, जालंधर, दिल्ली, १९६०।
३०. गोपाललाल खन्ना, हिन्दी का सरल भाषा विज्ञान, बनारस, २००४।
३१. गोर्युनोव व्ला० ई०, 'जो' योजक शब्द द्वारा जुड़े विशेषण उपवाक्य सहित मिश्र वाक्यों का वर्गीकरण, भाषा, अंक २, १९६८।
३२. चंद्रधर शर्मा गुलेरी, पुरानी हिन्दी, द्वितीय संस्करण, बनारस, २०१२।
३३. चतुर्भुज सहाय, हिन्दी की क्रियाएं (प्रयोग आवृति और रचना), केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा, १९६८।
३४. चतुर्भुज सहाय, हिन्दी क्रिया की काल रचना, गवेषणा, अंक ४, १९६४।
३५. चतुर्भुज सहाय, हिन्दी के अव्यय वाक्यांश, आगरा, १९७०।
३६. चेर्नीशोव व्ला० अ०, आधुनिक साहित्यिक हिन्दी के नामधातु और नामिक संयुक्त क्रियाएं, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, अंक १, २०१४।
३७. चेर्नीशोव व्ला० अ०, समानाधिकरण, हिन्दी-अनुशीलन, अंक १-२, १९६०।

३८. चेर्नीशोव व्ला० अ०, हिन्दी के साधारण वाक्य में स्वतंत्र कर्ता और असमापिका क्रिया वाले वाक्यांश, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, अंक २-३-४, २०१८।
३९. जगन्नाथन वी० रा०, हिन्दी परसर्ग, गवेषणा, अंक १३, १९६९।
४०. जगदेव सिंह, हिन्दी क्रिया पद, गवेषणा, अंक ६, १९६५।
४१. जयकृष्ण विद्यालंकार, हिन्दी क्रिया संरचना, गवेषणा, अंक १३, १९६९।
४२. जयकृष्ण विद्यालंकार, हिन्दी की क्रिया-पदों की संरचना, समन्वय, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा, १९६७-६८।
४३. जयकृष्ण विद्यालंकार, हिन्दी में सम्बन्ध प्रत्यय, गवेषणा, अंक ३, १९६४।
४४. जयकृष्ण विद्यालंकार, हिन्दी व्याकरण ग्रंथों की एक समीक्षा, गवेषणा, अंक ४, १९६४।
४५. ज्ञानशंकर पाण्डेय, हिन्दी की 'बनना' क्रिया, भाषा, अंक ३, १९६९।
४६. ज्ञानशंकर पाण्डेय, हिन्दी में संयुक्त क्रिया-अभिव्यक्ति की वैकालिक विद्या, भाषा, अंक २, १९६८।
४७. दीमशित्स ज़० म०, हिन्दी भाषा में आश्रित उपवाक्यों के भेद, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, अंक १, काशी, २०१९।
४८. दीमशित्स ज़० म०, हिन्दी भाषा में विधेयों का वर्गीकरण, हिन्दुस्तानी।
४९. दीमशित्स ज़० म०, हिन्दी व्याकरण की रूपरेखा, दिल्ली, १९६६।
५०. दुनीचंद, हिन्दी व्याकरण, होशियारपुर, १९५१।
५१. देवीप्रसाद शर्मा, हिन्दी की प्रथम मौलिक कहानी, भाषा, अंक ३, १९६९।
५२. देवेन्द्रकुमार शास्त्री, शब्द संरचना, भाषा, अंक २, १९६८।
५३. द्वारिकानाथ तिवारी, हिन्दी में लिंग व्यवस्था, भाषा, अंक ४, १९६६।
५४. धीरेन्द्र वर्मा, ग्रामीण हिन्दी, इलाहाबाद, १९५६।
५५. धीरेन्द्र वर्मा, ब्रजभाषा व्याकरण, इलाहाबाद, १९५४।
५६. धीरेन्द्र वर्मा, हिन्दी भाषा और लिपि, इलाहाबाद, १९६२।
५७. धीरेन्द्र वर्मा, हिन्दी भाषा का इतिहास, पंचम संस्करण, इलाहाबाद, १९५८।
५८. नामवर सिंह, हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योग, इलाहाबाद, १९६१।
५९. नेने गो० प०, द्वारकादास वैद, रामनारायण तिवारी, हिन्दी व्याकरण और रचना (प्रवेशिका), बम्बई, १९६६।
६०. नेने गो० प०, पटेल छ० का०, रामनारायण तिवारी, हिन्दी व्याकरण और रचना, भाग १-२-३-४, बम्बई, १९६६।
६१. पांडे चंद्रवली, राष्ट्रभाषा पर विचार, बनारस, १९५१।
६२. प्राचीन हिन्दी कविता, सम्पादक गिरिराजकिशोर, अंबाशंकर नागर,

अहमदाबाद, १९५८।
६३. फूलदेवसहाय वर्मा, हिन्दी में अपनाये गये अंग्रेजी शब्दों का लिंग-निर्णय, भाषा, अंक ४, दिल्ली, १९६२।
६४. बच्चूलाल अवस्थी 'ज्ञान', अनुस्वार का स्वरूप और प्रभावित विकार, भाषा, अंक ३, दिल्ली, १९६६।
६५. बाबूराम सक्सेना, दक्खिनी हिन्दी, इलाहाबाद, १९५१।
६६. बाबूराम सक्सेना, सामान्य भाषा विज्ञान, इलाहाबाद, १९६१।
६७. बारान्निकोव पी० ए०, हिन्दी भाषा का इतिहास : काल-निर्धारण की समस्या, भाषा, अंक २, १९६१।
६८. बारान्निकोव प० अ०, हिन्दी भाषा में संकर शब्द, भाषा, अंक ४, १९७२, अंक १, १९६२।
६९. वेस्कोवनी, हिन्दी में संयुक्त संज्ञार्थक धातुओं का प्रयोग, हिन्दी अनुशीलन, धीरेन्द्र वर्मा विशेषांक, प्रयाग, १९६०।
७०. ब्रजरत्नदास, खड़ी बोली हिन्दी साहित्य का इतिहास, बनारस, २००९।
७१. ब्रजवासीलाल श्रीवास्तव, विराम चिह्न और हिन्दी में उनका प्रयोग, भाषा, अंक ३, १९६३।
७२. भगवतीलाल, संक्षिप्त हिन्दी व्याकरण रस और अलंकार, वाराणसी, १९५६।
७३. भगीरथ मिश्र, काव्यशास्त्र, गोरखपुर, १९७७।
७४. भारत भूषण 'सरोज', श्रीमती सरोज, भाषा विज्ञान एवं हिन्दी भाषा का इतिहास, दिल्ली, १९६१।
७५. भिक्षु धर्मरक्षित, पालि व्याकरण, बनारस, २०१४।
७६. भूषण 'स्वामी' देशराजसिंह भाटी, हिन्दी भाषा का इतिहास, दिल्ली, १९६२।
७७. भोलानाथ तिवारी, शब्द : परिभाषा और वर्गीकरण, सम्मेलन पत्रिका, भाग ४८, संख्या १, १८८३ शक, प्रयाग।
७८. भोलानाथ तिवारी, शब्दों का जीवन, दिल्ली, १९५- ।
७९. भोलानाथ तिवारी, हिन्दी भाषा, इलाहाबाद, १९६६।
८०. भोलानाथ तिवारी, हिन्दी भाषा का सरल व्याकरण, दिल्ली, १९५८।
८१. मनमोहन गौतम, सरल भाषा-विज्ञान, दिल्ली, १९६२।
८२. मुरारी लाल उप्रेतिः, हिन्दी में प्रत्यय विचार, आगरा, १९६४।
८३. मोतीलाल गुप्त, ध्वनि विश्लेषण की यांत्रिक पद्धति, गवेषणा, अंक ८, १९६६।
८४. रमेशचन्द्र मेहरोत्रा, हिन्दी में गुरुता तथा लघुता के द्योतन का रचना-

विज्ञान, भाषा, अंक २, १९६८।
८५. रमेशचन्द्र मेहरोत्रा, हिन्दी में चल स्वर, भाषा, अंक १, १९६७।
८६. रमेशचन्द्र मेहरोत्रा, हिन्दी-संज्ञा के दस (या ग्यारह ?) रूप, भाषा, अंक ४, १९६२।
८७. राजगोपालन, हिन्दी के पदबंधात्मक शब्द रूप, गवेषण, अंक १३, १९६९।
८८. राजेन्द्र द्विवेदी, भाषाशास्त्र का पारिभाषिक शब्दकोश, दिल्ली, १९६३।
८९. राजेन्द्र सिंह गौड़, हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास, इलाहाबाद, २०१३।
९०. रामचन्द्र वर्मा, अच्छी हिन्दी, नवां संस्करण, बनारस, २००१।
९१. रामचन्द्र वर्मा, मानक हिन्दी व्याकरण, वाराणसी, १९६१।
९२. रामचन्द्र वर्मा, हिन्दी प्रयोग, बनारस, आठवां संस्करण, २०१७।
९३. रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, बनारस, २००९।
९४. रामनरेश शर्मा, हिन्दी व्याकरण : सरलीकरण और नवलेखन की समस्याएं भाषा, अंक ४, १९६४।
९५. रामप्रकाश कुलश्रेष्ठ, हिन्दी में अव्यय विचार, गवेषण, अंक ८, १९६६।
९६. रामबहोरी शुक्ल, भगीरथ मिश्र, हिन्दी साहित्य का उद्‌गम और विकास, जालंधर और इलाहाबाद, १९५६।
९७. रामलाल वर्मा, हिन्दी वाक्यगत उद्देश्य भाग का रूपात्मक विश्लेषण, गवेषण, अंक १३, १९६९।
९८. रामविलास शर्मा, भाषा और समाज, दिल्ली, १९६१।
९९. रामस्वरूप चतुर्वेदी, आगरा जिले की बोली, इलाहाबाद, १९६१।
१००. लखनलाल सिंह, 'प्रत्यय' विश्लेषण, भाषा, अंक २, १९६८।
१०१. लिपेरोवस्की वी० पी०, हिन्दी भाषा में संकेतार्थ, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, १, २०१८।
१०२. लिपेरोवस्की वी० पी०, हिन्दी भाषा में संदेहार्थ, सम्मेलन पत्रिका, भाग ४७, संख्या १, प्रयाग, १८८२ शक।
१०३. लिपेरोवस्की वी० पी०, हिन्दी में संभावनार्थ के रूपों का प्रयोग, हिन्दी अनुशीलन, धीरेन्द्र वर्मा विशेषांक, प्रयाग, १९६०।
१०४. लिपेरोवस्की वी० पी०, हिन्दी भाषा की एक वाक्य-रचना, भाषा, अंक २, १९६८।
१०५. वंशीधर, धर्मपाल शास्त्री, सुगम हिन्दी व्याकरण, दिल्ली, १९६-।
१०६. वासुदेव शास्त्री, कृष्णचन्द्र 'उम्मीद', रत्न-हिन्दी-व्याकरण, षष्ठ संस्करण, दिल्ली, १९६२।
१०७. विश्वनाथ अय्यर, हिन्दी के विशिष्ट विभक्ति प्रयोग; पुनर्विचार, भाषा,

अंक ३, १९६५।
१०८. शमशेर सिंह नरूला, हिन्दी और प्रादेशिक भाषाओं का वैज्ञानिक इतिहास, दिल्ली, १९५७।
१०९. शर्मा बी० बी०, नवीन हिन्दी व्याकरण, दिल्ली, १९५-।
११०. शिवनाथ, हिन्दी कारकों का विकास, काशी, २००५।
१११. शिवसागर त्रिपाठी, 'अक्षर' : एक अध्ययन, भाषा, अंक ३, १९६८।
११२. श्यामसुन्दरदास, पद्मनारायण आचार्य, हिन्दी रहस्य, प्रयाग, २०१३।
११३. श्यामसुन्दरदास, भाषा-विज्ञान, सप्तम संस्करण, प्रयाग, २०१४।
११४. श्यामसुन्दरदास, हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण, काशी, १९५०।
११५. श्यामसुन्दरदास, हिन्दी भाषा, प्रयाग, १९६१।
११६. श्यामसुन्दरदास, हिन्दी भाषा का विकास, बनारस, २००७।
११७. श्रीप्रकाश कुर्ल, 'चाहिये', भाषा, अंक ३, दिल्ली, १९७०।
११८. श्रीप्रकाश कुर्ल, हिन्दी में आगत अंग्रेज़ी शब्दों की लिंग व्यवस्था, भाषा, अंक ४, १९६९।
११९. श्रीवास्तव जी० पी०, प्राचीन भारतीय व्याकरण और भाषाविज्ञान, भाषा, अंक २, १९६५।
१२०. संत गोकुलचन्द्र शास्त्री, आदर्श हिन्दी-व्याकरण तथा रचना, देहली, आठवां संस्करण, १९५-।
१२१. संत गोकुलचन्द्र शास्त्री, हिन्दी व्याकरण तथा रचना, दिल्ली, १९६०।
१२२. सत्यदेव चौधरी, वाक्य, भाषा, अंक १, १९६२।
१२३. सरायू प्रसाद अग्रवाल, प्रकृत-विमर्श, लखनऊ, २००९।
१२४. सरायू प्रसाद अग्रवाल, भाषा विज्ञान और हिन्दी, इलाहाबाद, १९५७।
१२५. सावित्री वर्मा, अरुण हिन्दी-व्याकरण, दिल्ली, १९६१।
१२६. सिंहासन राय 'सिद्धेश', सुबोध हिन्दी व्याकरण, कलकत्ता, १९६२।
१२७. सिंहासन राय 'सिद्धेश', आदर्श व्याकरण और रचना, कलकत्ता, १९५-।
१२८. सीताराम चतुर्वेदी आचार्य, हिन्दी का अपभ्रंश से कोई संबंध नहीं है, भाषा, अंक २, १९६२।
१२९. सुधीर कुमार माथुर, हिन्दी परसर्ग, आगरा, १९६८।
१३०. सुधा, हिन्दी कारक—वाक्य विन्यास, भाषा, अंक १, १९६६।
१३१. सुधा गुप्त, हिन्दी 'आप', भाषा, अंक ३, दिल्ली, १९६९।
१३२. सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या, भारत की भाषाएं और भाषा संबंधी समस्याएं, जालंधर और इलाहाबाद, १९५७।
१३३. सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या, भारतीय आर्य भाषा और हिन्दी, दिल्ली, १९५७।

१३४ सूर्यकान्त, टकसाली हिन्दी, दिल्ली, १९५० ।
१३५. सूर्यकान्त, सूर्य हिन्दी व्याकरण, दिल्ली, १९६२ ।
१३६. सोखीलाल झा, हिन्दी रचना, पटना, १९६६ ।
१३७. स्वर्णलता अग्रवाल, हिन्दी भाषा और नगरी लिपि, इलाहाबाद, १९५४ ।
१३८. हरदेव बाहरी, ग्रामीण हिन्दी बोलियां, इलाहाबाद, १९- ।
१३९. हरदेव बाहरी, शुद्ध हिन्दी, इलाहाबाद, १९६५ ।
१४०. हरदेव बाहरी, हिन्दी उद्भव, विकास और रूप, इलाहाबाद, १९- ।
१४१. हरिशंकर शर्मा, हिन्दी के पुरुषवाचक सर्वनाम, भाषा, अंक, १९६८ ।
१४२. हेमचन्द्र आचार्य, अपभ्रंश-व्याकरण, दिल्ली, १९५८ ।
१४३. हेमदेव शर्मा, शिवशंकर सारस्वत, भाषा-विज्ञान समीक्षा, दिल्ली, १९६३ ।
144. Allen W. S., A study in the analysis of Hindi sentence structure, (Acta Linguistica, v. VI, Pasc. 2-3, Copenhague).
145. Bahri Hardev, Hindi semantics, Allahabad, 1959.
146. Bailey T. G., Industant (Urdu) grammar, N.Y. 195-.
147. Bailey T. G., Stu. ies in North Indian Languages, L. 1938.
148. Bailey T. G., The four classes of Urdu verbs, BSOS, v. VII, p. I, 1934.
149. Bailey T. G., The meaning and usage of casual verbs in Urdu, Hindi and Panjabi, BSOS, v. V, p. 3, 1929.
150. Bailey T. G., Urdu. L. 1950.
151. A Basic grammar of modern Hindi, English version, Delhi, 1958.
152. Basu D. N., The parts of speech, Indian linguistics, Vol. XV, p. 3—8, Calc., 1955-56.
153. Beames J , A comparative grammar of the Arian languages of India, book II, book III, Delhi, 1966.
154. Biese V., Some notes on the formation and use of nominal compounds in the Rigveda, Helsingforsiac, 1945.
155. Bloomfield, L., Language, N.Y. 1933.
156. Burrow T., The Sanskrit language, L., 1955.
157. Burton Page J., Compound and conjunct verbs in Hindi, BSOAS, v. XIX, p. 3, 1957, L.
158 Burton—Page J., The syntax of participial forms in Hindi, BSOAS, v. XIX, p. I., L., 1957.
159. Chapman F. R. H., How to learn Hindustani, L., 1918.
160. Chatterji S. K., Indo-Aryan and Hindi (Eight Lectures).

Ahmedabad, 1942, 2 d ed. Calc., 1960.
161. Chomsky N., On the Notion 'Rule of Grammar', Proceedings of Simposia of Applied Mathematics, v. 12.
162. Chomsky N., Topics in the theory of generative grammar, Mouton, 1966.
163. Chowdhury N. R., Essentials of Hindi grammar and composition, Sindri, 1956.
164. Clair—Tisdal N. S., A conversation grammar of the Hindustani language, L., 1911.
165. Curme G. O., A grammar of the English language, v. 3, Syntax, Boston, 1931.
166. Davane G. V., Nominal composition in middle Indo-Aryan, Poona, 1956.
167. Eastiwick E. B., A concise grammar of the Hindustani language to which are added selections for reading, 2-d ed., L. 1958.
168. Fairbanks G. H., Hindi exercises and readings, Ithaca (NV) 1955.
169. Fairbanks G. H., Misra B. C., Spoken and written Hindi, N.Y. 1966.
170. Forbes D., A grammar of the Hindustani language, L., 1855.
171. Forbes D., The Hindustani Manual, L., 190—.
172. Gaeffke P., Untersuchungen Zur Syntax des Hindi, The Hague-Paris, Mouton, 1967.
173. Gilchrist J. B., Dialogues English and Hindoostani, L., 1899.
174. Gilchrist J. B, The oriental linguist. An easy and familiar introduction to the popular language of Hindustan, Calc., 1798.
175. Greaves E., Hindi grammar, Allahabad. 1933.
176. Green A., A practical grammar of the Hindustani language, Oxford., 1895.
Grierson G. A., Linguistic survey of India, v. IX, Calc., 1966.
177. Grimm J., Deutsche Grammatik, IV Gottingen, 1937.
178. Grimm J. and W., Deutsches Vörterbuch, Bd. I, Leipzig, 1854.
179. de Groote A. W., Classification of World Groups, Lingua, v. VI, 2, 1957.

180. de Croote A. W., Structural Linguistics and Syntactic Laws; Word, v. 5, Ny, 1949.
181. Hacker P., On the problem of a Method for Treating the Compound and Conjunct verbs in Hindi, BSOAS, XXIV, p. 3, L., 1961.
182. Haidari, The Munshi, A standard Hindustani grammar, Lekhi, 1932.
183. Harley A. H, Colloquial Hindustani, L., 1955.
184. Hendriksen H., Syntax of the infinite verb-forms of Pali, Copenhagen, 1944.
185. Hoernle R., A comparative grammar of the Gaudian languages, L., 1880.
186. Yespersen O., A modern English Grammar, p. II, Heidelberg, 1914, p. V, Copenhagen, 1940.
187. Kellogg S. H., A grammar of the Hindi language, 3rd ed, L, 1955.
188. Kempson M., The syntax and idioms of Hindustani, L., 1922.
189. Khanna J., Current Hindi self taught (Basic), Delhi, 1957.
190. Klemensiewicz Z., Zarys skladni, polskiey, Warszawa, 1957.
191. Kruisinga E., A Handbook of Present Day English, Groningen, 1932, p. II, 2, 3, I.
192. Liehard S., Tempusgebr auch and Aktionsarten Bildung in der modern Hindi, Stockholm, 1961.
193. Lyall C. J., A sketch of the Hindustani language, Edinburg, 1880.
194. Macdonell A A., A vedic grammar for students, Oxford, 1955.
195. Mathews W. R., The ergative construction in modern Indo-Aryan, dinyua, VIII, N 4.
196. Miltner V., Early Hindi Morphology and Syntax, Academia, Prague, 1966.
Miltner V, The Hindi sentence structure, JAOS, v. 85, N 3, 1965.
197. Mueller Max, Max Mueller's Sanskrit Grammar, L. 1870.
198. Muller D., Studies in modern English syntax, Keller, 1957.

199. Narula S. S , Scientific history of the Hindi language, Delhi, 1956.
200. Ojha G. K., Universal self Hindi teacher, Delhi, 1955.
201. Pahva Th , The modern Hindustani scholar or the pucca munshi, Calc , 1919.
202. Phillott D. C., Hindustani manual, Calc., 1918.
203. Phillott D. C , Hindustani stepping stones, Allahabad, 1908.
204. Phillott D. C., Hindustani stumbling blocks, L., 1909.
205. Phillott D. C., Note on the statical and some other participles in Hindustani, BSOS, v. IV, p. I, 1916.
206. Phonemic and morphemic frequencies in Hindi, edited by A. M. Ghatage, Poona, 1964.
207. Pincott F., Hindi Manual, L., 1890.
208. Platts J., A grammar of the Hindustani or Urdu Language, 7th ed., L., 1914.
209. Porizka V., Hindi participle used as substantives, Archiv Orientalni, v. XVIII, N 4, Praha, 1950.
210. Porizka V., Hindustani (Hindi Language Course), p. I, Praha, 1963.
211. Porizka V., The adjectival and adverbial participles in Hindi syntax, Archiv Orientalni, v. XX, N 3-4, Praha, 1952.
212. Ries Y., Was Syntax? Einstkritischer Versuch, Marburg, 1894.
213. Ries Y., Zur Wortgruppenlechre, Prag, 1928.
214. Saighal M. C , Saighal's Hindustani grammar, Simla, (II ed.) 1953-54. (II ed.).
215. Sastri S. R., Apte B. Ch., Hindi grammar, Madras, 1960.
216. Scholberg H. C., Concise grammar of the Hindi language, L., 1955.
217. Sen S., Historical syntax of middle Indo-Aryan, Cad., 1953.
218. Shakespeare J., A grammar of the Hindustani Language, L., 1826.
219. Sharma S. N., Hindi grammar and translation, Bombay, 1956.
220. Singh M. J., The Urdu teacher, Amritsar, 1894.
221. Speyer Y. S., Sanskrit syntax, Brill, 1886,

222. Tagare G. V., Historical grammar of Apabhramsa, Poona, 1948.
223. Thimm C. A., Hindustani grammar selftaught, L., 1916.
224. Travnicek F. T., Mluvnice spisovné cestime, c. II, Skladba, Praha, 1951.
225. Trubetzkoy N. S., Le rappot entre le determine le determinant et le defini, 'Melanges de linguistique offerts a Charles Bally', Geneve, 1939.
226. Tweedie J., Hindustani as ought to be spoken, Calc., 1900.
227. Vale R. N., Verbal composition in Indo-Aryan, Poona, 1948.
228. Warriner J. E., English grammar and composition, N Y.-Chicago, 1957.
229. Williams M., A practical Hindustani grammar, 2nd ed., L., 1887.
230. Wilson H. H., Introduction to the Grammar of the Sanskrit language, L , 1841.
231. Yates W., Introduction to the Hindoostanee Language, Calc., 1827.